आर्थिक विचारों का इतिहास

(History of Economic Thought)

लेखक

एच. आर. गोदारा

प्रवक्ता-एम ए अर्थशास्त्र, एम कॉम (वित्तीय प्रबन्ध)

श्री कल्याण राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

सीकर

कॉलेज बुक हाउस

चौड़ा रास्ता, जयपुर - 3

आमुख

मनुष्य अपनी प्रकृति से विचारशील एव जिज्ञासु है। वह अनादिकाल से सोचता आया है और उसकी जिजीविषा ने उसे निरन्तर इस हेतु उत्प्रेरित किया है। वास्तविकता तो यह है कि न केवल जागते अपितु मानव मस्तिष्क तो नींद मे भी सोचता रहता है। अपनी ऐसी प्रकृति एव प्रवृति के बल पर ही मनुष्य ने अपना आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, सास्कृतिक एव धार्मिक परिवेश बनाया है। मनुष्य के विचारो के नाना पक्ष एव प्रकार है, जिनमे आर्थिक विचार न केवल सबसे महत्वपूर्ण अपितु उसके जिवन की एक ऐसी धुरी है जिसके चारो ओर उसका सम्पूर्ण जिवन चक्कर लगाता है। इन्ही विचारो ने आर्थिक एव सामाजिक रूपान्तरण के जरिये मानव समाज का आर्थिक परिवेश निर्धारित कर उसके उत्तरोत्तर विकास का मार्ग-प्रशस्त किया है।

वस्तुत हम आज जिस आर्थिक परिवेश मे रह रहे है वह आर्थिक विचारो, नियमो, सिद्धान्तो एव सस्थाओ की एक अमूल्य देन है। इन सबके उद्भव एव विकास की सही जानकारी प्राप्त करने मे 'आर्थिक विचारो के इतिहास' की भूमिका एव महत्ता स्वयसिद्ध है। यह विषय न केवल विद्यार्थियो, शोधकर्त्ताओ एव शिक्षको के लिए बल्कि सामान्य नागरिको, राजनीतिज्ञो, समाज सुधारको एव स्वय अर्थशास्त्रियो के लिए भी बहुत उपयोगी है। वस्तुत सदियो से चले आ रहे सामाजार्थिक रूपान्तरण की विश्वसनीय जानकारी का सर्वोत्तम स्रोत यही है। आँग्ल भाषा मे इस विषय पर अनेक अच्छी एव मौलिक रचनाये है; किन्तु, हिन्दी भाषा मे तुलनात्मक दृष्टि से एक तो इनका अभाव है और दूसरे, उनमे विसगतियो एव विरोधाभासो के साथ–साथ विषय–सामग्री की सम्पूर्णता का अभाव है। प्रस्तुत रचना मे मैने इन कमियो को दूर करने का प्रयास किया है और स्नातक, स्नातकोत्तर, ऑनर्स एव शोध छात्रो की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर अधिकतम उपयोगी-सामग्री सम्मिलित करने का प्रयास किया है। इसके लेखन मे मेरी लगातार यह चेष्टा रही है कि प्रस्तुतीकरण मे मूल विचारको के चितन की नियमबद्धता एव क्रमबद्धता बनी रहे और मै उनके चितन के प्रमुख बिन्दुओ को सरल एव बोधगम्य भाषा मे अभिव्यक्त कर सकू। इस हेतु मैने इस कृति मे विभिन्न विद्वानो के चितन के प्रस्तुतीकरण का सगठनात्मक ढाँचा लगभग समरूप रखा है।

इस विषय पर लेखन मे मेरा यह प्रथम प्रयास है; अत सम्भव है मेरे इस प्रयास मे कुछ खामिया रही हो। मै उन पाठको का विशेषत आभारी रहूगा जो उनकी ओर ध्यान दिलाकर उनके निराकरण हेतु मेरा मार्ग–दर्शन एव उत्साहवर्द्धन करेगे। मै अपने उन सभी साथियो के प्रति आभारी हूँ जिन्होने मुझे इसके लेखन हेतु निरन्तर प्रेरित किया। मै कॉलेज बुक हाउस, जयपुर के प्रति भी कृतज्ञ हूँ जिसने इसके यथासमय प्रकाशन की व्यवस्था की।

अन्त मे, मै उन सभी लेखको एव साथियो का ऋणी हूँ जिनकी रचनाओ एव परामर्शों के सहयोग से मैने अपनी यह रचना पूर्ण की है।

गोदारा भवन,
सुन्दर मार्ग, पिपराली रोड,
सीकर– 332001

एच आर गोदारा

विषय-सूची

अध्याय पृष्ठ-संख्या

5 **समाजवादी सम्प्रदाय I सिसमण्डी**

(The Socialist School I Sismondi)

परिचय, संक्षिप्त जीवन परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, प्रमुख कृतियाँ, रचनाओ पर एक टिप्पणी, प्रमुख आर्थिक विचार, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

6 **समाजवादी सम्प्रदाय II : रोबर्ट ओवन**

(The Socialist School II Robert Owen)

परिचय, संक्षिप्त जीवन परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, प्रमुख कृतियाँ, प्रमुख आर्थिक विचार, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

7 **समाजवादी सम्प्रदाय III : कार्ल मार्क्स**

(The Socialist School III Karl Marx)

परिचय, संक्षिप्त जीवन परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, प्रमुख कृतियाँ, प्रमुख रचनाओ पर एक टिप्पणी, प्रमुख आर्थिक विचार, 'मार्क्सवाद' पर एक टिप्पणी, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

8 **ऐतिहासिक सम्प्रदाय जर्मन एवं ब्रिटिश ऐतिहासिक आलोचक**

(The Historical School German & British Historical Critics)

परिचय, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, वर्गीकरण एव विकास, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय परिचय, प्रमुख विशेषताये, प्रमुख विचारक एव उनका चिंतन, निष्कर्ष, प्रश्न ।

9 **राष्ट्रवादी सम्प्रदाय : फ्रेड्रिक लिस्ट**

(The Nationalist School Friedrich List)

परिचय, संक्षिप्त जीवन परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, प्रमुख कृतियाँ, प्रमुख आर्थिक विचार, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

10 **आस्ट्रियन सम्प्रदाय : मेंजर, वीजर और बाम बावर्क**

(The Austrian School Menger, Wieser and Bohm Bawerk

परिचय, विषयगतवाद की प्रकृति, प्रमुख विशेषताएँ, कार्ल मेजर, वीजर, बाम, बावर्क परिचय, कृतियाँ, प्रमुख आर्थिक विचार, मूल्याकन, आष्ट्रियन सम्प्रदाय का आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

11 **नव-प्रतिष्ठित सम्प्रदाय : अल्फ्रेड मार्शल**

(The Neo-Classical School Alfred Marshall)

परिचय, सक्षिप्त जीवन परिचय, प्रभावित करने वाले घटक, प्रमुख कृतियाँ, 'प्रिन्सिपल्स् ऑफ इकॉनामिक्स' पर एक टिप्पणी, प्रमुख आर्थिक विचार, आलोचनात्मक मूल्याकन, आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान, प्रश्न ।

1

आर्थिक विचारों का इतिहास : प्रकृति एवं महत्त्व

(History of Economic Thought : Nature and Significance)

> **"विचारो के इतिहास का अध्ययन मस्तिष्क के विकास की एक प्राथमिक आवश्यकता है ।"**[1]–प्रो कीन्स जे एम ।

परिचय (Introduction)

मनुष्य एक जिज्ञासु (Curious) एव चिंतनशील (thoughtful) प्राणी है । इसकी नयी–नयी बाते सीखने की इच्छा एव सतत चिंतन से ज्ञान की जिन शाखाओ का विकास हुआ है उनमे अर्थशास्त्र अथवा आर्थिक विज्ञान भी एक है । अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है । इसमे मनुष्य के आर्थिक चिंतन सम्बन्धी उन सभी नियमो, मतो, सामान्यीकरणो एव सिद्धान्तो को सम्मिलित किया जाता है जो मानव जीवन का आर्थिक पक्ष एव व्यवहार समझने से सम्बन्ध रखते है ।[2] यद्यपि आधुनिक अर्थशास्त्र (जिसका जन्म सन् 1776 मे आँग्ल अर्थशास्त्री **एडम स्मिथ** की ऐतिहासिक रचना 'Wealth of Nations' के प्रकाशन के साथ हुआ और फलत **एडम स्मिथ** को 'अर्थशास्त्र के जनक' अर्थात् 'Father of Economics' कहलाने का सम्मान मिला) एक नवविकसित विज्ञान है, किन्तु मनुष्य का आर्थिक चिंतन बहुत पुराना है । **प्रो. अलेक्जेण्डर ग्रे** (A. Gray) के मतानुसार आर्थिक व्यवहार सम्बन्धी चिन्तन तभी से चला आ रहा है जबसे मानव ने विचार करना आरम्भ किया था । इससे शनै –शनै अर्थशास्त्र की जिन शाखाओ का विकास हुआ है, उनमे एक अति महत्त्वपूर्ण शाखा 'आर्थिक विचारो का इतिहास' है ।

---

1 "The study of the history of opinion is a necessary preliminary to the emancipation of the mind" -Keynes J M

2 'Economics studies all those laws doctrines, generalizations and principles which deal with economic phenomena of our life

आर्थिक विचारों के इतिहास का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and definition of History of Economic thought)

किसी समय विशेष के आर्थिक चिंतन को उस समय के आर्थिक विचार कहते है । मानव समाज एव आर्थिक व्यवहार गतिशील एव परिवर्तनशील हैं । देश एव काल की परिस्थितियो मे परिवर्तन के साथ-साथ मनुष्य के आर्थिक चिंतन एव व्यवहार मे परिवर्तन हुआ है । वस्तुत , सरलतम शब्दो म, 'आर्थिक विचारो का इतिहास मनुष्य के आर्थिक चितन का इतिहास है' ।[3] यह आर्थिक विचारो का कालक्रमानुसार व्यवस्थित एव श्रृंखलाबद्ध अध्ययन है। प्रो. बेल (Bell) ने जहा इसे 'आर्थिक विचारको की लगभग ढाई हजार वर्षों की विरासत का अध्ययन'[4] बताया है वहा एडमण्ड व्हिट्टकर (E Whittaker) ने इसे 'मानव-जाति के चिंतन की मुख्य धारा का एक पहलू'[5] बताया है । प्रो. हैने (Haney) के मतानुसार, ''आर्थिक विचारो का इतिहास आर्थिक चिंतन के विकास का आलोचनात्मक वृत्तान्त है जिसमे आर्थिक विचारो के उद्गम स्रोतो, अन्तर्सम्बन्धो और अभिव्यक्ति की खोज की जाती है ।''[6]

उपर्युक्त परिभाषाओ से स्पष्ट है कि आर्थिक विचारो का इतिहास मनुष्य के आर्थिक चिंतन का एक लिपिबद्ध सग्रह है और इसकी जड़े अतीत मे उतनी ही गहरी हैं जितनी स्वय मानव समाज की । मानव समाज ने अपने वर्तमान स्वरूप मे पहुँचने मे एक लम्बा सफ़र तय किया है । आर्थिक विकास के विभिन्न युगो एव चरणो मे समकालीन विचारको द्वारा जो आर्थिक विचार व्यक्त किये गये है, उनका एकीकृत एव समन्वित रूप ही आर्थिक विचारो का इतिहास है । यह अर्थशास्त्र, इतिहास एव चिन्तन-तीनो के मेल से विकसित हुई ज्ञान की एक शाखा है ।[7]

आर्थिक, इतिहास, अर्थशास्त्र का इतिहास एवं आर्थिक विचारों का इतिहास
(Economic History, History of Economics and History of Economic thought)

कई बार इन तीनो के एक समान होने का भ्रम उत्पन्न होता है । किन्तु, ये तीनो परस्पर सम्बद्ध होते हुए भी एक दूसरे से भिन्न है । अत आर्थिक

---

3 History of Economic thought is a history of men s economic thinking

4 *"The History of Economic thought is a study of the heritage left by writers on economic subjects over a period of about 2500 years "* Bell J F

5 "One aspect of the broad current of men's thinking" -Whittaker E.

6 "The history of Economic thought may be defined as a critical account of the development of economic ideas, searching into their origins inter relations and *manifestations* " *-Haney L. H*

7 'Histroy of Economic thought is a composition of economics History and Thought'

विचारो के इतिहास एव उसकी प्रकृति को भली–भाँति समझने के लिये शेष दोनों का आशय एव आर्थिक विचारो के इतिहास से इनका अन्तर जानना नितान्त आवश्यक है–

आर्थिक इतिहास–आर्थिक इतिहास किसी समाज विशेष के लोगो की आर्थिक प्रगति का एक अभिलेख है । अपने इस रूप मे यह किसी समाज विशेष के लोगो के आर्थिक जीवन मे परिवर्तन एव विकास का एक वस्तुगत अध्ययन (Objective study) है । विभिन्न समाजो अथवा देशो के आर्थिक इतिहास के स्वरूप एव स्तर मे भिन्नता पायी जाती है । अत आर्थिक इतिहास का क्षेत्र काफी व्यापक है और इसकी परिधि मे, विश्व के विभिन्न भागो एव समयावधियो मे घटित, आर्थिक घटनाओ का एक लिपिबद्ध एव श्रृंखलाबद्ध अध्ययन सम्मिलित होता है । **प्रो. हैने** के शब्दो मे, ''आर्थिक इतिहास का सम्बन्ध वाणिज्य, विनिर्माणो एव अन्य आर्थिक घटनाओ के इतिहास से है जो उन तरीको का यथार्थपरक विवेचन करता है जिनसे लोग अपनी जीविका चलाते है ।[8] इससे हमे उन सभी सस्थाओ (यथा–मुद्रा, बैंकिंग, विनिमय, व्यापार, वाणिज्य, उद्योग, यातायात के साधन आदि) के क्रमिक विकास की जानकारी मिलती है जिनके सहयोग से मानव समाज अपनी आदिम अवस्था से निकलकर वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय एव औद्योगिक अर्थव्यवस्था मे पहुचा है । इसीलिए इसे 'औद्योगिक इतिहास' (Industrial History) भी कहते है । इसकी जानकारी, एक ओर जहा, वर्तमान की आर्थिक समस्याओ के समाधान के लिये आवश्यक उपयोगी सामग्री प्रदान करती है, वही दूसरी ओर भावी सम्भावनाओ का पूर्वानुमान लगाने मे सहायक बनती है । आर्थिक विचारो के इतिहास से इसका प्रमुख अन्तर यह है कि आर्थिक इतिहास की विषय–सामग्री जहा वस्तुगत (objective) है वहा आर्थिक विचारो के इतिहास की विषय–सामग्री विषयगत (subjective) है । दूसरे शब्दो मे, आर्थिक इतिहास का सम्बन्ध तथ्यो (facts) से है जबकि आर्थिक विचारो का इतिहास इन तथ्यो की सैद्धान्तिक व्याख्या से सम्बन्ध रखता है ।

अध्ययन की दो पृथक्–पृथक् शाखाये होने के बावजूद आर्थिक इतिहास एव आर्थिक विचारो के इतिहास मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है । किसी अवधि विशेष के आर्थिक विचारो का उत्पत्ति स्रोत हमे उस युग के आर्थिक इतिहास मे ही मिलता है । इसके अलावा किसी अवधि विशेष के आर्थिक विचारो पर अनिवार्यत उस अवधि की आर्थिक सस्थाओ का प्रभाव पड़ता है

8 "The Economic History concerns itself with the history of commerce, manufacturers and other economic phenomena dealing, objectively, with the way in which men get their lives " Haney L. H.

जिनकी समुचित जानकारी हमे उस युग के आर्थिक इतिहास मे मिलती है, जो आर्थिक विचारो के इतिहास से कही अधिक व्यापक है। वास्तविकता तो यह है कि आर्थिक विचारो का इतिहास, आर्थिक इतिहास का ही एक महत्त्वपूर्ण भाग है।

किन्तु, एक अन्य दृष्टिकोण से आर्थिक इतिहास का क्षेत्र आर्थिक विचारो के इतिहास के क्षेत्र से काफी सकीर्ण प्रतीत होता है। किसी देश व समाज के आर्थिक इतिहास का सम्बन्ध वहा की भौतिक सभ्यता के विकास से होता है। इस अधार पर विभिन्न देशो मे भौतिक सभ्यता के विकास के स्तर मे अन्तर पाया जाता है। अत विभिन्न देशो के आर्थिक इतिहास मे परस्पर व्यापक असमानताये है। उदाहरणार्थ, भारत का आर्थिक इतिहास सयुक्त राज्य अमरीका अथवा जापान के आर्थिक इतिहास से सर्वथा भिन्न है। किन्तु, इस आधार पर आर्थिक विचारो के इतिहास मे कोई भेद करना सम्भव नही है। आर्थिक विचारो के इतिहास मे ऐसा राष्ट्रीय पूर्वग्रह (national bias) नही है। इसमे सभी देशो एव समयावधियो के आर्थिक विचारो एव सस्थाओ के विकास का तुलनात्मक अध्ययन सम्मिलित किया जाता है।

अर्थशास्त्र का इतिहास-यह स्वय अर्थशास्त्र के विकास का इतिहास है। यह ज्ञान की अपेक्षाकृत एक नव विकसित शाखा है। इसका विकास मुख्यत सन् 1776 मे एडम स्मिथ के हाथो आधुनिक अर्थशास्त्र के जन्म के पश्चात् आरम्भ हुआ है। किन्तु, इसका आशय यह नही है कि इससे पूर्व आर्थिक चिंतन, व्यवहार एव आर्थिक विचारक नही थे। न केवल सन् 1776 से पूर्व प्रकृतिवादी एव वणिकवादी अर्थशास्त्रियो, अपितु ईसा से कई सहस्र वर्ष पूर्व भारत मे कौटिल्य (Kautilya) एव यूनान मे प्लेटो (Plato) और अरस्तू (Aristotle) ने अनेक आर्थिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया था। किन्तु, इन सभी के विचार एक तो, क्रमबद्ध नही थे, दूसरे, असगठित थे, और तीसरे, ये विशुद्ध रूप से आर्थिक नहीं थे। अत इन्हे आधुनिक अर्थशास्त्र से बाहर रखा जाता है। अत यह कहा जा सकता है कि आर्थिक विचारो का इतिहास एवं मानवीय आर्थिक चिंतन जहा बहुत प्राचीन है वहा अर्थशास्त्र का इतिहास मात्र 200–225 वर्ष पुराना है और केवल क्रमबद्ध आर्थिक विचारों के इतिहास को ही अर्थशास्त्र का इतिहास माना जाता है। इसीलिये प्राचीन एवं *मध्ययुगीन अर्थात् सन् 1776 ई से पूर्व के आर्थिक विचार जहा आर्थिक* विचारो के इतिहास को जोड़ने वाली अनमोल कड़िया है, अर्थशास्त्र के इतिहास की दृष्टि से महत्त्वहीन है। इसके अलावा आर्थिक विचारो के इतिहास का क्षेत्र अर्थशास्त्र के इतिहास के क्षेत्र से कही अधिक व्यापक है। वास्तविकता तो यह है कि अर्थशास्त्र का इतिहास, आर्थिक विचारो के इतिहास का ही एक भाग है। आर्थिक इतिहास, अर्थशास्त्र, के इतिहास एवं

आर्थिक विचारो के इतिहास के पारस्परिक सम्बन्ध, फैलाव (coverage) एव व्यापकता के एक पहलू को सलग्न रेखाचित्र मे प्रदर्शित किया गया है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक विचारो का इतिहास शेष दो के मध्य स्थित है । किन्तु, मनुष्य का आर्थिक चिंतन अनादि काल से चला आ रहा है ऋग्वेद, जो विश्व की प्राचीनतम एव श्रेष्ठतम साहित्यिक कृति है, मे पर्याप्त मात्रा मे आर्थिक चिन्तन एव आर्थिक सस्थाओ का उल्लेख किया गया है । इसके अलावा जैसे–जैसे विश्व की प्राचीन सभ्यताओ एव सस्कृतियो की खोज होती जा रही है, आर्थिक विचारो के इतिहास की जड़े सुदूर अतीत मे फैलती जा रही है । आज हम बहुत सी ऐसी आर्थिक सस्थाओ (यथा–मुद्रा, बैकिग आदि) का लाभ ले रहे है जिनके बारे मे हमे कोई जानकारी नही है कि ये किसने और कब बनायी ? नि सदेह, आर्थिक विचारो के इतिहास की गहराइयो मे ही हमे इनके बारे मे कुछ कामचलाऊ जानकारी मिल सकती है ।
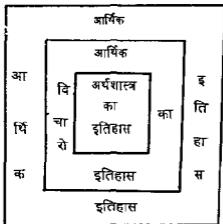
रेखाचित्र – 1

आर्थिक विचारों के इतिहास की प्रकृति

(Nature of the History of Economic Thought)

प्रकृति से हमारा अभिप्राय किसी वस्तु की उन प्रमुख विशेषताओ से होता है जो उसे 'वह जिस रूप मे है' बनाती है ।[9] इस दृष्टि से आर्थिक विचारो के इतिहास की प्रकृति से हमारा आशय इसकी उन विशेषताओ से है जो उसे 'आर्थिक विचारो का इतिहास जिस रूप मे है' बनाती है । इस आधार पर इसकी प्रकृति सम्बन्धी विवेचन मे निम्नाकित बिन्दु सम्मिलित किये जाते है–

1 क्या 'आर्थिक विचारो का इतिहास' एक विज्ञान है ?
2. यदि हाँ, तो यह कैसा विज्ञान है– वास्तविक विज्ञान अथवा आदर्श विज्ञान अथवा दोनो ?
3. क्या यह एक कला भी है ? और

9 By nature we mean qualities of anything which make it 'what it is'

4. क्या यह विज्ञान और कला दोनो है ?

आर्थिक विचारो के इतिहास की प्रकृति को भली–भाति समझने के लिये अब हम, सक्षेप मे, इन चारो बिन्दुओ पर क्रमशः विचार करेगे–

1. क्या 'आर्थिक विचारों का इतिहास' एक विज्ञान है ? (Is History of Economic thought a science ?) :-

आर्थिक विचारो का इतिहास एक विज्ञान है अथवा नही ? का विवेचन करने से पूर्व सक्षेप मे यह जनाना भी आवश्यक है कि विज्ञान किसे कहते है ? नपे–तुले शब्दो मे 'ज्ञान की किसी नियमबद्ध एव क्रमबद्ध शाखा को विज्ञान कहते है ।[10] इस परिभाषा के आधार पर सहज ही मे यह कहा जा सकता है कि आर्थिक विचारो का इतिहास भी एक विज्ञान है । इसकी एक सुपरिभाषित एव सुनिश्चित विषय–सामग्री है, जिसमे मानव के आर्थिक चिन्तन को सम्मिलित किया जाता है । यह अपनी सम्पूर्ण विषय–सामग्री का एक निश्चित कालक्रमानुसार नियमबद्ध अध्ययन और विवेचन करता है । इसके अपने विश्लेषणात्मक उपकरण (Analytical tools) हैं, जिनका विवेचन इसी अध्ययन मे आगे 'आर्थिक विचारो के इतिहास की अध्ययन रीतिया' शीर्षक के अधीन किया गया है । प्रारम्भ मे जरूर इस प्रसंग को लेकर मतभेद था कि यह एक विज्ञान है अथवा नही, किन्तु अब यह विवाद समाप्त हो चुका है। अत. आज सभी विशेषज्ञ इसे एक विज्ञान मानते हैं ।

2. यह कैसा विज्ञान है– वास्तविक अथवा आदर्श विज्ञान ? (What type of science it is–A Positive science or a Normative science ?) :-

वास्तविक एव आदर्श विज्ञान का अर्थ एवं विशेषताये जानने के उपरात ही यह जाना जा सकता है कि आर्थिक विचारो का इतिहास कैसा विज्ञान है ? ज्ञातव्य है कि, विज्ञान के दो प्रमुख रूप हैं– (i) वास्तविक विज्ञान और (ii) आदर्श विज्ञान । वास्तविक विज्ञान को यथार्थ विज्ञान अथवा पदार्थ विज्ञान भी कहते है । इसकी विषय–सामग्री 'क्या है' (What is) है अर्थात् विज्ञान का यह रूप किसी वस्तु का 'वह जिस रूप मे है' उसका उसी रूप मे विवेचन करता है। 'भौतिक शास्त्र' और 'रसायन शास्त्र' प्रतिनिधि वास्तविक विज्ञान है । इन्हे विशुद्ध विज्ञान (Pure science) भी कहते है । इनमे जड़ पदार्थों द्वारा 'कारण' से 'परिणाम' अथवा 'कार्य' की उत्पत्ति होती है । अतः इनके निष्कर्ष ठोस, सुनिश्चित, सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक होते है । स्वयं अर्थशास्त्र एक पदार्थ विज्ञान अथवा विशुद्ध विज्ञान नही है बल्कि एक सामाजिक विज्ञान है । प्रत्येक सामाजिक विज्ञान मे मानवीय व्यवहार के किसी न किसी पहलू का विवेचन किया जाता है । आर्थशास्त्र मे मानवीय

10 'A systematized body of knowledge is called a science'.

व्यवहार के आर्थिक पहलू का विवेचन किया जाता है और क्योकि आर्थिक विचारो का इतिहास आवश्यक रूप से अर्थशास्त्र से सम्बद्ध है अत इसमे भी मानव जीवन के आर्थिक पक्ष की प्रधानता रहती है। क्योकि, सभी सामाजिक विज्ञानो को सामान्यतया कम ठोस एव कम निश्चित मानकर वास्तविक विज्ञान की परिधि से बाहर छोड़कर आदर्श विज्ञान ही कहा जाता है, अर्थशास्त्र और परिणामस्वरूप आर्थिक विचारो का इतिहास भी एक आदर्श विज्ञान है। आदर्श विज्ञान की विषय सामग्री 'क्या होना चाहिये' (what ought to be) है। इसके निष्कर्षो मे अनुसधानकर्त्ता अपनी ओर से परामर्श देता है। इसमे भी कारण' से 'परिणाम' अथवा 'कार्य की उत्पत्ति होती है किन्तु इसमे किसी प्रकार की गणितीय परिशुद्धता (mathematical accuracy) नही पायी जाती है। इसका सबसे प्रमुख कारण यह है कि जिज्ञासु एव विवेकशील मनुष्य का आर्थिक व्यवहार परिवर्तनशील एव गतिशील है, जिस पर अनेक ज्ञात एव अज्ञात तथा आर्थिक एव गैर–आर्थिक घटको का प्रभाव पड़ता है, जिनके बारे मे पहले से कोई भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं होता है। अत आर्थिक विचारो के इतिहास के वास्तविक विज्ञान होने मे कोई शका उत्पन्न हो सकती है किन्तु इसके 'आदर्श विज्ञान' होने पर सभी विशेषज्ञ एव विचारक एकमत है। फिर जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, आर्थिक विचारो का इतिहास मूलत अर्थशास्त्र (अर्थात् अर्थशास्त्र का इतिहास), इतिहास (अर्थात् आर्थिक इतिहास) और चिंतन का सयोजन है। ये तीनो ही सामाजिक विज्ञान है। इनमे 'तथ्यो' एव आकड़ो' की तुलना मे 'तर्क' की प्रधानता रहती है। अत आर्थिक विचारो का इतिहास भी एक सामाजिक एव आदर्श विज्ञान है।

किन्तु, आँग्ल अर्थशास्त्री रोबिन्स एव उनके समर्थक इसे स्वीकार करने को तैयार नही थे कि अर्थशास्त्र एक वास्तविक विज्ञान नही है। उन्होने कहा कि जब कल्पना का बोझ उठाकर अन्य सभी प्राकृतिक विज्ञानो के नियम ठोस और सार्वभौमिक हो सकते है तथा वे विज्ञान यथार्थ विज्ञान होने का दावा कर सकते है तो फिर अर्थशास्त्र क्यो नही ? अत उनके अनुयायी अर्थशास्त्र एव आर्थिक विचारो के इतिहास को यथार्थ विज्ञान ही मानते है। अत, निष्कर्ष रूप मे, हम यही कह सकते है कि आर्थिक विचारो के इतिहास के वास्तविक विज्ञानरूपी एव आदर्श विज्ञानरूपी दोनो ही स्वरूप माने जा सकते है।

3. क्या यह एक कला भी है ? (Is it an Art also ?) -

आर्थिक विचारो के इतिहास की प्रकृति के सम्बन्ध मे यह प्रश्न भी विचारणीय है कि यह एक 'कला' है अथवा नही। सरल शब्दो मे, 'कला' से आशय किसी कार्य को श्रेष्ठतम ढग से पूर्ण करने की तकनीक अथवा विधि से है ताकि वह सुन्दरतम दिखायी दे। इस दृष्टि से, आर्थिक विचारो का इतिहास भी एक कला है। इसमे विशेषज्ञो ने मानवीय आर्थिक चिन्तन को श्रेष्ठतम

रूप मे प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । 'कला' जीवन को पूर्ण बनाती है और मानव को अथाह सुख एव स्वर्गीय आनन्द प्रदान करती है । आर्थिक विचारो का इतिहास भी कुछ ऐसा ही है । जब आर्थिक सस्थाओ के उत्पत्ति स्रोतो की खोज मे कोई पाठक आर्थिक विचारो के अथाह सागर मे गोते लगाता है तो जैसे-जैसे वह गहराई मे बैठता जाता है, अपने पूर्वजो के कार्यो के बारे मे अधिकाधिक जानकर सुखानुभूति करता है । इसकी विषय-सामग्री का अध्ययन सगीत की लय के समान है जिसमे पाठक आत्मविभोर हो जाता है ।

4 **क्या यह विज्ञान और कला दोनों है ? (Is it a Science and an Art both ?):-**

उपर्युक्त विवेचन से, सहज ही मे, यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि आर्थिक विचारो का इतिहास विज्ञान (यथार्थ विज्ञान एव वास्तविक विज्ञान दोनो) एव कला दोनो है । कुछ आशका व्यक्त कर सकते है कि 'कला' मान लेने अथवा आदर्श विज्ञानरूपी स्वरूप स्वीकार कर लेने से यह तर्क-वितर्क के भँवरजाल मे फस कर अपने विकास का मार्ग अवरुद्ध कर लेगा । किन्तु, यह आशका निर्मूल है । इसके विज्ञान एव कला सम्बन्धी स्वरूप एक दूसरे को पूर्ण बनाने मे सहायक होते है । अत इनमे किसी प्रकार का पारस्परिक विरोध नही है । एक अन्य आधार पर भी इसके दोनो स्वरूप स्वीकार किये जा सकते है । इसके अनुसार यथार्थ विज्ञान के लोक एव आदर्श विज्ञान के लोक के बीच शून्य नही है, बल्कि 'कला लोक' है । अत. कला लोक अथवा कला यथार्थ विज्ञान एव आदर्श विज्ञान की विषय-सामग्री एव क्षेत्र को जोड़ने मे एक पुल का कार्य करती है । वास्तव मे, कलारो क यथार्थ विज्ञान के लोक की समाप्ति से पूर्व एव आदर्श विज्ञान के लोक के आरम्भ होने से पहले ही शुरू हो जाता है । अत आर्थिक विचारो के इतिहास की प्रकृति के सम्बन्ध मे यथार्थ विज्ञान, आदर्श विज्ञान एव कला सम्बन्धी तीनो ही पक्ष मजबूत है ।

उपर्युक्त विवेचन के साथ-साथ आर्थिक विचारो के इतिहास की मूलभूत प्रकृति सम्बन्धी निम्नलिखित बिन्दु भी उल्लेखनीय है-

1. तीन काल (Three Periods) :- आर्थिक विचारो के इतिहास के तीन सुनिश्चित एव सुपरिभाषित काल-प्राचीन युग, मध्य युग एव आधुनिक युग है। सामान्यतया ईसा पूर्व की अवधि को प्राचीन युग माना जाता है जिसमे भारतीय (कौटिल्य) एव यूनानी चिंतको (सुकरात, प्लाटो, अरस्तू आदि) के विचारो को सम्मिलित किया जाता है । आधुनिक युग मुख्यत सन् 1776 ई के पश्चात् का युग है जिसमे आधुनिक अर्थशास्त्र का विकास हुआ है । इन दोनो के बीच की लम्बी अवधि को मध्य युग के नाम से जानी जाता है । इसके अतिम चरण मे प्रकृतिवादियो एव वाणिकवादियो के आर्थिक विचार विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इतिहासकारो ने अब तक आर्थिक विचारो के इतिहास को लगभग 2500 वर्षों का इतिहास ही माना है । किन्तु, जैसे-जैसे विश्व की

प्राचीन सभ्यताओ की खोज होती जा रही है यह अवधि बढ़ती जा रही है। यदि ऋग्वेदकालीन आर्थिक दर्शन एव चिन्तन को सम्मिलित कर गणना करे तो यह अवधि 5000 वर्षों से भी अधिक की हो जाती है।

2. एकत्व का अभाव (Disunity or lack of oneness) :- आर्थिक विचारो के इतिहास को कहा से आरम्भ किया जाये ? के बारे मे इतिहासकार एव लेखक एकमत नही है। **प्रो. जीड एवं रिस्ट** (Gide & Rist) आर्थिक विचारो के इतिहास को प्रकृतिवादियो **(physiocrates)** से ही आरम्भ करते है अर्थात् वे न केवल प्राचीन एव मध्ययुगीन आर्थिक चिंतन को बल्कि वणिकवादियो (mercantilists) को भी इसमे स्थान नही देते है। इसी प्रकार एलेक्जेण्डर ग्रे (A Gray) न केवल अमरीकी सस्थागत अर्थशास्त्रियो (American institutional thinkers) को बल्कि प्रो मार्शल, पीगू एव जे एम कीन्स के योगदान को भी आर्थिक विचारो के इतिहास की परिधि अथवा सीमा–रेखा से बाहर छोड़ते है!

3. परिवर्तनशील (Changing) :- भूतकाल मे, जब तक किन्ही निश्चित सिद्धान्तो का प्रतिपादन नही किया गया, समाज मे अधकचरे आर्थिक व्यवहार (primitive economic practices) प्रचलन मे रहे। समय के साथ–साथ परिस्थितियो मे परिवर्तन से, इन व्यवहारो मे परिवर्तन, सशोधन एव सुधार हुआ। इससे आर्थिक चिन्तन मे परिशुद्धता आयी और आर्थिक विचारको के चिन्तन को नयी दिशा मिली। उदाहरणार्थ, भूतकाल मे जब तक ब्याज को सूदखोरी मानकर हेय दृष्टि से देखा जाता था, विचारको ने ब्याज की उपेक्षा, की; किन्तु जब बदले हुये आर्थिक परिवेश मे ब्याज को पूँजी का एक भुगतान मान लिया गया तो विचारको ने इसे अनिवार्य एव उचित बताकर इसके अनेक सिद्धान्तो का प्रतिपादन कर दिया।

4. नीतिशास्त्र एवं विधिशास्त्र का समावेश (Inclusion of Ethics and Jurisprudence) :- प्राचीन एव मध्यकालीन आर्थिक चिंतन को आर्थिक विचारो के इतिहास मे सम्मिलित कर लेने के पश्चात् इसमे नीतिशास्त्र एव विधिशास्त्र का भी समावेश हो गया।

5. चयनित एवं आदेश-सूचक (selective and imparative) :- आर्थिक विचार एव उनका इतिहास चयनित एव आदेश सूचक है। अर्थात् जिस विचारक को जो प्रसग मन भाया उसने उसी पर अपने विचार व्यक्त कर दिये। उदाहरण के लिये जहा माल्थस को जनसख्या का प्रसग मन भाया वहा डेविड रिकार्डो को भूमि विषयक प्रसग मन भाया और उन्होने लगान के सिद्धान्त का प्रतिपादन कर दिया।

6. आदर्श मूलक पहलू (Normative aspect) :- आर्थिक विचारको का चिंतन धीरे–धीरे वर्णनात्मक से आदर्श मूलक होता गया है। मध्ययुगीन विचारको ने जहा केवल अपनी समकालीन समस्याओ का वर्णनात्मक विवेचन

किया वहा आधुनिक अर्थशास्त्रियो ने न केवल समकालीन समस्याओ का ही वर्णन किया है अपितु उनके समाधान हेतु आवश्यक सुझाव भी प्रस्तुत किये है ।

7 **अनिश्चित (Indefinite)** - आर्थिक चितन, विश्लेषण के आर्थिक सिद्धान्तो अथवा उपकरणो और तकनीको का एक दिया हुआ एव सुनिश्चित ढाचा नही है । यह सैद्धान्तिकी (Metaphysics) से सम्बन्धित है, अत अनिश्चित है । इससे आर्थिक विचारो के इतिहास की विषय–सामग्री एव स्वरूप प्रभावित हुये है ।

8 **सहमति का अभाव (Lack of agreement)** अर्थव्यवस्था मे गतिशील एव जटिल सरचनाये है । फलत विभिन्न अर्थशास्त्रियो एव विचारको के निष्कर्षों मे एकरूपता का अभाव रहता है और किसी विषय पर आम सहमति नही बन पाती । पूजीवादी एव समाजवादी आर्थिक चिन्तन मे भिन्नता इसका ज्वलत उदाहरण है ।

9 **पृथक् विचारक एव इतिहासकार (Separate thinkers and historians)** आर्थिक विचारको के इतिहास मे विचारक और इतिहासकार अलग–अलग है । प्रो एरिक रोल जीड एव रिस्ट, हैने, अलेक्जेण्डर ग्रे आदि प्रमुख इतिहासकार है जिन्होने विभिन्न विचारको (जिनका नामोल्लेख अगले शीर्षक के अधीन किया गया है) के चिंतन की कडियाँ जोड़कर आर्थिक विचारो के इतिहास की रचना की है । इन इतिहासकारो ने इन चिंतको के कार्यो का आलोचनात्मक मूल्याकन भी किया है ।

आर्थिक विचारों के प्रमुख सम्प्रदाय एवं विचारक
(Major Schools of Economic thought and thinkers)

आर्थिक विचारो के उद्भव एव विकास मे बहुत से सम्प्रदायो (schools of thought) एव असख्य विचारको का योगदान रहा है । इसमे से कुछ विचारको का योगदान बहुत महत्त्वपूर्ण एव विशिष्ट रहा है तो कुछ का बहुत सामान्य । कुछ विचारक जहा विशुद्ध आर्थिक विचारक कहे जा सकते है वहा कुछ ने ज्ञान की अन्य शाखाओ से सम्बद्धता रखते हुए आर्थिक विचारो का प्रतिपादन किया है । यही कारण है कि जिस प्रकार अंतरिक्ष के कुछेक नक्षत्र ही देदीप्यमान होते है उसी प्रकार आर्थिक विचारो के इतिहास मे कुछेक विचारक ही चमकते सितारे है । किन्तु जिस प्रकार सुदूर अतरिक्ष मे सितारो की खोज की गयी है । उसी प्रकार मानवीय ज्ञान–पिपासा ने उन विचारको के योगदान को भी खोज निकालने के प्रयास किये हैं और किये जा रहे है जो कई पीढ़िया पहले इस भूलोक से चले गये और जो जीते जी या तो अपनी पहचान नहीं बना सके या विरासत मे कोई लिखित प्रमाण नही छोड़ सके । सक्षेप में,

आर्थिक विचारो के इतिहास मे प्रमुख सम्प्रदायो एव विचारको को निम्नाकित तालिका मे दर्शाया गया है–

तालिका – 1 आर्थिक विचारों के प्रमुख सम्प्रदाय एवं सम्बद्ध विचारक

	प्रमुख सम्प्रदाय	प्रमुख विचारक
A.	प्राचीन आर्थिक विचार	
	1 हेब्रू के आर्थिक विचार	1 हेब्रू।
	2 ग्रीक आर्थिक विचार	1 प्लेटो, 2 अरस्तु।
	3 रोमन आर्थिक विचार	1 सिसरो।
	4 भारतीय आर्थिक विचार	1 कोटिल्य।
B.	मध्ययुगीन आर्थिक विचार	
	1 सामन्तवादी योरोप के विचारक	एक्विनस।
	2 वणिकवादी सम्प्रदाय	
	(A) प्रतिनिधि वणिकवादी	1 थामस मन, 2 विलियम पैटी।
	(B) जर्मन वणिकवादी	1 होर्निक वॉन जस्टी।
	3 प्रकृतिवादी सम्प्रदाय	1 क्वेने, 2 मिराब्यू।
C	आधुनिक आर्थिक विचार	
	1 प्रतिष्ठित सम्प्रदाय	1 एडम स्मिथ, 2 माल्थस, 3 रिकार्डो।
	2 प्रतिष्ठित परम्परावादी सम्प्रदाय	
	(A) आँग्ल सम्प्रदाय	1 जे एस मिल, 2 विलियम नार्सो सीनियर।
	(B) फ्रांसीसी सम्प्रदाय	1 जे बी से, 2 बस्तियत।
	(C) जर्मन सम्प्रदाय	1 वानथुनन, 2 हरमन।
	(D) अमरीकन सम्प्रदाय	1 कैरे।

3 समाजवादी सम्प्रदाय	1 सिसमण्डी, 2 रॉबर्ट ओवन, 3 कार्ल मार्क्स, 4 महात्मा गाधी ।
4 वैयक्तिक राष्ट्रवादी सम्प्रदाय	1 फ्रेडरिक लिस्ट ।
5 ऐतिहासिक सम्प्रदाय	
(A) जर्मन सम्प्रदाय	1 रोशर, 2 कार्लनीज 3 हिल्डी ब्रैण्ड।
(B) आँग्ल सम्प्रदाय	1 रिचर्ड ज्नेन्स, 2 क्लिफलैसली ।
6 मनोविज्ञानवादी सम्प्रदाय (आष्ट्रियन सम्प्रदाय)	1 मेजर, 2 वीजर, 3 बॉम बावर्क ।
7 गणितिय सम्प्रदाय	1 जेवन्स, 2 वालरास, 3 पैरेटो ।
8 स्वेडीस सम्प्रदाय	1 गस्टव कैसेल, 2 नट विकसेल ।
9 नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदाय	1 मार्शल ।
10 सस्थागत सम्प्रदाय	1 वेब्लेन, 2 मिचैल ।
11 कल्याणकारी सम्प्रदाय	1 पीगू, 2 हाब्सन ।
12 आधुनिक विचारक	1 जे एम कीन्स, 2 जे आर हिक्स, 3 शुम्पीटर, 4 क्लार्क, 5 हेन्सन ।

आर्थिक विचारों के इतिहास का क्षेत्र
(Scope of the History of Economic Thought)

आर्थिक विचारो के इतिहास का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसके क्षेत्र मे मुख्यत. निम्नालिखित बाते सम्मिलित की जाती है, जिन पर न्यूनाधिक मात्रा मे सभी विशेषज्ञ इतिहासकार एकमत है–

1. आर्थिक चिन्तन (Economic Thought) :- आर्थिक विचारो के इतिहास मे अनादि काल से लेकर आज तक के मानवीय आर्थिक विचार सम्मिलित किये जाते है। हाँ, यह तथ्य अलग है कि इतिहासकारो के लिये 2500-3000 वर्ष से अधिक प्राचीन आर्थिक विचारो को खोजना सम्भव नही हो रहा है। विशुद्ध आर्थिक रचनाये लिखी जाने से पूर्व के ऐसे सभी विचार जहा–तहा बिखरे पड़े है। इन्हे किसी काल विशेष की साहित्यिक रचनाओ, कानूनो, पेशो, प्रचलित रीतिरिवाजो एव परम्पराओ से एकत्रित किया जा सकता है। विश्व की प्राचीनतम सस्कृतियो, जिनमे या तो लेखन कला का आविष्कार ही नही हुआ था अथवा जिनकी लिपि पढ़ी नही जा रही है, के आर्थिक चिन्तन की जानकारी खुदाई से प्राप्त अवशेषो से ही प्राप्त की जा सकती है। यह जानकारी मुख्यत अनुमानो पर आधारित है।

2. आर्थिक चिन्तन का विकास (Development of Economic Thought):- जैसे–जैसे सभ्यता एव सस्कृति का विकास हुआ है, मानव अपनी आदिम अवस्था त्याग कर विकास के विभिन्न सोपान पार करता हुआ अपने वर्तमान स्वरूप मे पहुचा है। इसमे कई शताब्दिया लगी है, जिनमे आर्थिक चिंतन का उत्तरोत्तर विकास होता गया है। विकास की इस गाथा की जानकारी हमे आर्थिक विचारो के इतिहास से ही मिलती है; अत यह उसकी विषय–सामग्री का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। आर्थिक विकास की विभिन्न अवस्थाओ, यथा– आखेट, पशुपालन, कृषि एव औद्योगिक अवस्था आदि मे मानव का आर्थिक चिन्तन उत्तरोत्तर विस्तृत एव परिष्कृत होता गया है। तिथिक्रमानुसार इसकी जानकारी आर्थिक विचारो के इतिहास से ही प्राप्त की जा सकती है।

3. आर्थिक सिद्धान्तों की रचना एवं विकास (Formulation and development of Economic Theories) :- आर्थिक सिद्धान्तो की रचना एव विकास भी आर्थिक विचारो के इतिहास के क्षेत्राधिकार का विषय है। मनुष्य के आर्थिक व्यवहार को सुनिश्चितता प्रदान करने के लिए विशेषज्ञो ने अनेक नियमो एव सिद्धान्तो का प्रतिपादन 'कारण' एव 'कार्य' के पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर किया है। ज्ञान की किसी शाखा की प्रगति इनकी सख्या और सुनिश्चिता पर निर्भर करती है।[11] इन सिद्धान्तो व नियमो का प्रतिपादन

---

11 "A science progresses with the number and exactness of its laws" - Marshall .A

किसी एक विचारक ने नही किया है । जनसख्या, ब्याज, लगान, मजदूरी–निर्धारण, साधन पारिश्रमिक–निर्धारण, लाभ वस्तु कीमत–निर्धारण रोजगार, उपभोक्ता–सतुलन एव उत्पादक–सतुलन के सिद्धान्तो ने अपने वर्तमान स्वरूप मे पहुचने मे कई शताब्दिया लगायी है । इन सिद्धान्तो के क्रमिक विकास की विषय–सामग्री पाठको को आर्थिक विचारो के इतिहास से ही उपलब्ध होती है ।

4. आर्थिक विचारों की आलोचना (Criticism of Economic thought) : आर्थिक चिन्तन आलोचना एव प्रत्यालोचना से परिष्कृत हुआ है । एक उदाहरण के रूप मे, प्रो मार्शल ने अर्थशास्त्र को सामाजिक विज्ञानो के बीच प्रतिष्ठा दिलाने और अर्थशास्त्र को सामाजिक भलाई का एक इजिन (an engine to the social betterment) बनाने के लिये उसकी कल्याणप्रधान (welfare oriented) की परिभाषा दी । किन्तु, आलोचको (अर्थात् प्रो रोबिन्स और उनके समर्थक) ने इसकी कटु आलोचना करते हुए यह कह दिया कि 'अर्थशास्त्र का सम्बन्ध अन्य किसी भी विषय से हो सकता है किन्तु कल्याण से कदापि नही हो सकता ।[12] और उन्होने अर्थशास्त्र की एक नवीन एव दुर्लभता प्रधान (scarcity oriented) परिभाषा दे दी । किन्तु, बात यही खत्म नही हुई । प्रत्युत्तर मे मार्शल के समर्थको ने रोबिन्स की परिभाषा के एक–एक शब्द की कटु आलोचना कर डाली । इसी प्रकार आलोचनाओ के सहारे अर्थशास्त्र के अन्य सिद्धान्तो का परिमार्जन एव शुद्धिकरण हुआ है । यदि माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त, रिकार्डो के लगान सिद्धान्त और प्रो मार्शल के उपभोक्ता के उपयोगितावादी साम्य–विश्लेषण की आलोचना न होती तो क्रमश. अनुकूलतम जनसख्या सिद्धान्त (Theory of optimum population), लगान के आधुनिक सिद्धान्त और उपभोक्ता–साम्य के उदासीनता वक्रो द्वारा विश्लेषण का विकास नही हुआ होता । विभिन्न सम्प्रदायो (schools of thoughts) के विचारको एव विभिन्न आर्थिक प्रणालियो के समर्थको ने आलोचनाओ के सहारे आर्थिक विचारो को आगे बढ़ाया है । अत. आर्थिक चितन सम्बन्धी आलोचना भी आर्थिक विचारो के इतिहास की विषय–सामग्री का एक भाग है ।

5. आर्थिक प्रणालियों का विकास (Development of Economic Systems) :- विश्व के आर्थिक इतिहास मे अनेक आर्थिक प्रणालिया विकसित हुई है । इनमे पूजीवादी, समाजवादी और मिश्रित अर्थव्यवस्थाओ की आर्थिक प्रणालिया विशेषरूप से उल्लेखनीय है । समाजवादी आर्थिक प्रणालियो के अनेक उप–विभाजन किये जा सकते है, जिनमे रिकार्डियन समाजवाद

---

12. "Whatever Economics is concerned with, it is not concerned with material welfare as such." - Robbins L.

(Recardian socialism) राज्य समाजवाद (State socialism), मार्क्सवाद (Marxism), जनतात्रिक समाजवाद (Democratic socialism), साम्यवाद (Communism) फासीवाद (Facism) माओवाद (Maoism) और गाधीवाद (Gandhism) उल्लेखनीय है । इन प्रणालियो का विकास आर्थिक विचारो के इतिहास के क्षेत्र मे आता है । इनके विकास मे काफी समय लगा है और चितन के अनेक सोपान पार करने के पश्चात् विभिन्न आर्थिक प्रणालिया स्वीकार की गयी है । इन सभी प्रणालियो के सदर्भ मे आर्थिक चितन आज भी एक खुला अध्याय (open chapter) है । हाल ही मे, सोवियत सघ का समापन और समाजवादी प्रणाली से वहा के लोगो का मोह भग होना इस प्रणाली के बारे मे आर्थिक विचारको को आवश्यक रूप से सोचने के लिए मजबूर करेगा ।

6. अध्ययन पद्धतियां (Methods of Study) :- जिन तरीको द्वारा किसी शास्त्र मे 'कारण' एव 'परिणाम' अथवा 'कार्य' के मध्य आपसी सम्बन्ध की जाच कर सत्य का प्रतिपादन किया जाता है, उन्हे उस शास्त्र की अध्ययन पद्धतिया कहा जाता है । आर्थिक विचारो के इतिहास की व्याख्या एव अध्ययन मे इन पद्धतियो का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, अत इन्हे इसके क्षेत्र मे सम्मिलित किया जाता है । इनका विस्तृत विवेचन अगले शीर्षक के अधीन किया जा रहा है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आर्थिक विचारो के इतिहास का क्षेत्र न केवल व्यापक है अपितु इसमे विविधता भी है । यह ज्ञान की एक वर्द्धमान (developing) एव अपरिपूर्ण (unfinished) शाखा है जिसका क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता जा रहा है । यद्यपि, मनुष्य की प्रकृति मे कोई आधारभूत परिवर्तन नही होता है, किन्तु उसके चितन एव जीवन–दर्शन मे सम–सामयिक परिवर्तन होते रहे है और होते रहेगे । अत आर्थिक चिन्तन का क्षेत्र उत्तरोत्तर व्यापक होता रहेगा ।

आर्थिक विचारों के इतिहास की अध्ययन रीतियां अथवा अभिगम
(Approaches to the study of History of Economic thought)

आर्थिक विचारो के इतिहास की प्रमुख अध्ययन रीतिया निम्नाकित है–

1. कालानुसार रीति (Cronological Approach) :-

यह आर्थिक विचारो के इतिहास की परम्परागत ऐतिहासिक रीति (traditional historical method) है । इस रीति द्वारा विभिन्न विचारको एव सम्प्रदायो के आर्थिक चिंतन का अध्ययन निश्चित कालक्रमानुसार किया जाता है । इस रीति के अनुसार सबसे पहले प्राचीनतम और सबसे अन्त मे आज के आर्थिक चिंतन का अध्ययन किया जाता है । इसी अध्ययन मे हम आर्थिक विचारो के इतिहास के प्रमुख कालो, सम्प्रदायो एव विचारको की सूची प्रस्तुत

कर चुके है। यह सूची इसके अध्ययन की कालानुसार रीति की सूचक है।

इस विधि द्वारा आर्थिक सिद्धान्तो, संस्थाओ एव सम्प्रदायो के विकास की जानकारी मिल जाती है और यह पता चल जाता है कि आज के युग के आर्थिक विचार किस प्रकार श्रृंखलाबद्ध तरीके से प्राचीनतम आर्थिक चिन्तन मे जुडे हुए है। दूसरे शब्दो मे, इस रीति द्वारा आर्थिक विचारो की निरंतरता (continuity) की जानकारी मिल जाती है और **एलेक्जेण्डर ग्रे** के इस कथन की पुष्टि हो जाती है कि "प्राचीन मत कभी नही मरते, वे केवल फीके पड़ते है और अनुकूल वातावरण मे पुन मान्य हो जाते है।"[13]

आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन की यह रीति अपेक्षाकृत एक सरल एव प्राचीन रीति है। जीड एव रिस्ट तथा हैने जैसे इतिहासकारो ने अपनी रचनाओ मे इसी रीति का प्रयोग किया है।

2 वैचारिक रीति (*Conceptual Approach*) :-

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास की विचारधारानुसार रीति (ideological method) भी कहते है। इस विधि द्वारा आर्थिक अवधारणाओ एव विचारो के विकास का अध्ययन किया जाता है। अर्थात् इस रीति मे कालक्रम एव विचारक की अपेक्षा किसी आर्थिक अवधारणा (जैसे लगान, मूल्य, ब्याज रोजगार आदि) पर अधिक बल देकर उसके क्रमिक विकास के आधार पर आर्थिक विचारो के इतिहास का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार इस विधि मे आर्थिक विचारो के इतिहास की कालानुसार श्रृंखलाबद्धता एव निरंतरता नही रहती है। एडमण्ड बिठाकर ने अपनी रचना मे अध्ययन की यही रीति अपनायी है। किन्तु, विचारको के बीच यह रीति अधिक लोकप्रिय नही रही है।

3. अभिप्रेरणात्मक रीति (Motivational Approach) :-

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास की *भौतिकवादी व्याख्या* रीति (materialistic interpretation method) भी कहते है। इसके अनुसार *आर्थिक विचारो का इतिहास वर्ग–सघर्ष (class struggle) का इतिहास है तथा आर्थिक* चिंतन सामाजार्थिक (socio-economic) प्रगति का सूचक है। इस विधि द्वारा आर्थिक प्रेरणाओ की भौतिकवादी व्याख्या की जाती है। पहले डेविड रिकार्डो ने और आगे चलकर कार्ल मार्क्स ने इस रीति का प्रयोग किया। मार्क्स के *अनुसार इतिहास वर्ग–सघर्ष की एक कहानी है क्योकि समाज मे सदैव* वर्ग–सघर्ष चलता रहता है। राष्ट्रीय आय अथवा सामूहिक उत्पादन मे से

---

13 "Old doctrines never die they only fade away with a strange power of recuperation in an appropriate environment." **Gray A**

उत्पादन का प्रत्येक साधन अधिक से अधिक हिस्सा प्राप्त करने के लिए सघर्ष करता रहता है। इनके अनुसार समाज के कम से कम तीन वर्ग–भूस्वामी, श्रमिक एव पूँजीपति, सदा एक–दूसरे से झगड़ते रहते है। सरल शब्दो मे, इस विधि के अनुसार समाज मे वर्ग–सघर्ष के अध्ययन द्वारा आर्थिक विचारो के इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है।

4 दार्शनिक रीति (Philosophical Approach)

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास की सैद्धान्तिक रीति (Theoretical method) भी कहते है। यह आर्थिक चितन की सबसे प्राचीन विधि है इसका प्रयोग सर्व–प्रथम ईसा पूर्व ग्रीक दार्शनिक **प्लेटो** ने अपनी रचना 'दि रिपब्लिक' मे किया, जो बाद मे सन् 1776 ई मे **एडम स्मिथ** की रचना 'Wealth of Nations' के प्रकाशन तक लोकप्रिय बनी रही। इस रीति मे आर्थिक चितन पर नैतिक, चारित्रिक एव धार्मिक मूल्यो को प्रधानता दी जाती है। दूसरे शब्दो मे, आर्थिक चितन नैतिक धरातल पर आधारित होता है।

5 निगमन रीति (Deductive Approach)

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास की काल्पनिक (hypothetical) अमूर्त (abstract) विश्लेषणात्मक (analytical) तार्किक (logical) अथवा गणितीय विधि (mathematical method) के नाम से भी जाना जाता है। प्रो बोल्डिग (Boulding) ने इसे बौद्धिक प्रयोग की विधि (method of intellectual experiment) कहा है। इस विधि मे एक अनुभूत (empirical) एव सर्वमान्य सत्य (universal truth) के आधार पर 'विशिष्ट' निष्कर्ष निकाले जाते है। इस प्रकार इस रीति द्वारा अनुसधान के कार्य मे समान्यतया 'सामान्य से विशिष्ट की ओर' (from general to particular) जाते है। रिकार्डो से लेकर केयरनीज तक प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो एव विचारको ने अपने आर्थिक चितन मे इसी रीति का प्रयोग किया। इसमे तर्क–वितर्क द्वारा निष्कर्ष निकाले जाते है।

6 ऐतिहासिक रीति (Historical Approach)

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन की आगमन रीति (inductive method) भी कहते है। यह रीति निगमन रीति से बिल्कुल भिन्न है। इसमे 'तर्क' के स्थान पर तथ्यो एवं आकड़ो अर्थात् साख्यिकीय सामग्री की महत्ता अधिक रहती है, अत इसे साख्यिकीय रीति (statistical method) के नाम से भी जाना जाता है। इसमे अनुसधान का कार्य 'विशिष्ट से सामान्य की ओर' (from particular to general) चलता है। जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो–कार्लनीज, रोशर, हिल्डीब्रैण्ड आदि ने इसी रीति का प्रयोग किया था। इसमे साख्यिकीय सामग्री की सहायता से सार्थक निष्कर्षों पर पहुँचा जाता है।

7. नव-प्रतिष्ठित रीति (Neo-classical Approach) :-

यह रीति उपर वर्णित निगमन एव आगमन रीतियो के मिश्रित प्रयोग की विधि है । इस रीति के अनुसार मानवीय व्यवहार के जिस भाग मे सांख्यिकीय सामग्री का अभाव रहता है तथा भावनाओ की प्रधानता रहती है, वहा निगमन प्रणाली द्वारा तर्क की सहायता से निष्कर्ष निकाले जाते है जबकि शेष व्यवहार की जाच आगमन विधि की सहायता से की जाती है । यही नही इस रीति मे निगमन रीति के निष्कर्षो की जाच आगमन रीति से और आगमन रीति के निष्कर्षो की जाच निगमन रीति द्वारा की जाती है । प्रो. मार्शल एव उनके समर्थको ने आर्थिक अनुसधान की इसी रीति का प्रयोग किया । इसे आधुनिक अथवा वैज्ञानिक विधि भी कहा जाता है ।

8. कल्याणवादी रीति (Welfare Approach) :-

इसे आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन की गुणात्मक विधि *(qualitative method)* भी कहते है । प्रो पीगू एव उनके समर्थको ने आर्थिक चितन मे इसी रीति का प्रयोग किया है । यह रीति अधिकतम सामाजिक कल्याण के लक्ष्य पर बल देती हैं ।

9. संस्थागत रीति (Institutional Approach) :-

आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन की यह अपेक्षाकृत एक नयी रीति है । इसका विकास मुख्यत. आधुनिक अमरीकी अर्थशास्त्रियो ने किया है, जिनमे थोरस्टिन वेब्लेन *(Thorstein Veblen)* अग्रणी है । इस रीति के अनुसार क्योकि आर्थिक क्रियाये विद्यमान सस्थाओ से शासित होती है । अत: आर्थिक विचारो के इतिहास मे इन सस्थाओ की भूमिका अग्रणी रहती है । यह रीति आर्थिक क्रियाओ को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक एव जैविकीय घटको पर अधिक बल देती है ।

10. कीन्सियन रीति (Keynesian Approach)

आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन की यह रीति प्रसिद्ध आँग्ल अर्थशास्त्री प्रो. जे एम. कीन्स के नाम के साथ जुडी हुई है । यह रीति आर्थिक मदी, व्यापार-चक्र, राष्ट्रीय आय, रोजगार, आर्थिक क्रियाओ मे राजकीय हस्तक्षेप आदि विषयो की व्याख्या, वैकल्पिक आय स्तरो पर बचत एव विनियोग के साम्य द्वारा करती है । अर्थात् कीन्स के अनुसार आर्थिक चिन्तन का केन्द्र बिन्दु आय, उत्पादन अथवा रोजगार स्तर है । अत उसी के सदर्भ मे आर्थिक चितन के इतिहास का अध्ययन किया जाना चाहिये ।

आर्थिक विचारों के इतिहास की महत्ता

(Significance of History of Economic thought) :

आर्थिक विचारो का प्रामाणिक इतिहास मानव जाति के 2500-3000

वर्षों के आर्थिक चिंतन एव उसके सग्रह का इतिहास है। एक तो, विभिन्न विचारको मे मतभेद रहे है और दूसरे, बहुत से आर्थिक विचार समय बीतने के साथ–साथ अपनी व्यावहारिक उपयोगिता खो अथवा कम कर चुके है, अत. कुछ लोग आर्थिक विचारो के इतिहास एव उसके अध्ययन को अनुपयोगी मान सकते है। किन्तु, उनका यह निष्कर्ष सत्य से काफी दूर है। वास्तव मे, आर्थिक विचारो का इतिहास न केवल उपयोगी है अपितु इसकी महत्ता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। सक्षेप मे, इसकी महत्ता के बारे मे निम्नाकित बाते कही जा सकती है–

1. आर्थिक सिद्धान्तों की उत्पत्ति, विकास, उन्नति एवं प्रकृति की जानकारी में सहायक (Assists in tracing the origin, evolution, development and nature of economic theory) :-

ज्ञान की स्वतत्र शाखा के रूप मे अर्थशास्त्र नया है, किन्तु आर्थिक सिद्धान्त उतने ही पुराने है जितना मानव का आर्थिक चिंतन। हमे इस तथ्य की जानकारी आर्थिक विचारो का इतिहास ही देता है कि अर्थशास्त्र किस प्रकार धर्म, दर्शन, राजनीति, नीतिशास्त्र एव विधिशास्त्र के साथ मिलकर धीरे–धीरे अपने वर्तमान स्वरूप मे आया है ? कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे ये सभी विषय अर्थशास्त्र मे सम्मिलित थे। जैसा कि प्रो. हैने ने कहा है, ''प्राचीन विचारको के चिंतन मे विशुद्ध आर्थिक विचार थे, किन्तु जिन्होने इन्हे प्रतिपादित किया वे पृथक् नही किये जा सकते।''[14] इनके चिंतन से हमे उस युग के निवासियो के आर्थिक जीवन की जानकारी मिलती है। सन् 1890 ई. मे प्रो मार्शल की रचना 'अर्थशास्त्र के सिद्धान्त' (Principles of Economics) के प्रकाशन तक अर्थशास्त्र को 'राजनीतिक अर्थशास्त्र' (Political Economy) कहकर पुकारा जाता था। इसके अलावा अर्थशास्त्र की अन्य सामाजिक विज्ञानो के साथ सम्बद्धता और परिणामस्वरूप अर्थशास्त्र के एक सामाजिक विज्ञान का निष्कर्ष प्रतिपादित करने मे भी हमे आर्थिक विचारो के इतिहास की तह मे जाना पडता है। इसी से हमे यह जानकारी मिलती है कि अर्थशास्त्र न केवल यथार्थ विज्ञान बल्कि इसके साथ–साथ एक आदर्श विज्ञान और कला भी है।

आर्थिक विचारो के इतिहास से हमे विभिन्न आर्थिक सिद्धान्तो के क्रमिक विकास की जानकारी मिलती है। उदाहरणार्थ, हमे यह जानकारी आर्थिक विचारो का इतिहास ही देता है कि श्रम–विभाजन एव विशिष्टीकरण (जो आधुनिक बडे पैमाने पर उत्पादन के ढाचे की एक महत्वपूर्ण तकनीक

---

14. "In the thought of ancients, purely economic ideas may be apparent to us, but the men who had them did not differentiate." -Haney L. H

है) एव कीन्सियन अर्थशास्त्र की जड़े क्रमश अरस्तू के 'मानवीय श्रम के सिद्धान्त' एव माल्थस के 'सकट के सिद्धान्त' (Theory of Cnsis) मे निहित हैं।

2. *आर्थिक सिद्धान्तों के ऐतिहासिक विकास की जानकारी देना (Reveals* **historical development of economic doctrines)**

आधुनिक सिद्धान्त किसी एक विचारक की बपौती नही है । इनके विकास मे अनेक विचारको का योगदान रहा है । उदाहरणार्थ, उपभोक्ता--व्यवहार, उत्पादक-व्यवहार, जनसख्या, वस्तु कीमत-निर्धारण, साधन कीमत-निर्धारण, रोजगार, मुद्रा मूल्य-निर्धारण आदि के आधुनिक सिद्धान्तो का क्रमिक विकास हुआ है, जिसकी समुचित जानकारी आर्थिक विचारो के इतिहास से ही मिलती है ।

3. **प्राचीन एवं मध्ययुगीन निवासियों के 'आर्थिक जीवन एवं चिंतन की निरंतरता की** *जानकारी देना (Reveals the continuity of economic life and thinking* **of ancients and medievals) :-**

कुछ लोग यह मान सकते है कि प्राचीन एव विशेषत मध्ययुगीन मे आर्थिक जीवन स्थैतिक हो गया और आर्थिक चितन रुक गया । किन्तु, आर्थिक विचारो के इतिहास के अध्ययन से न केवल यह भ्राति निर्मूल हो जाती है बल्कि यह भी सिद्ध हो जाता है कि आर्थिक चिंतन मे विकास की प्रक्रिया निरन्तर जारी रही है । इन युगो मे अनेक ऐसी वैचारिक कड़िया है जो प्राचीन एव वर्तमान आर्थिक चिंतन को जोड़ देती है ।

4. **प्राचीन एवं मध्ययुगीन आर्थिक चिंतन का औचित्य सिद्ध करना (Justifies ancient and medieval economic thought) :-**

यद्यपि, आज के सदर्भ मे प्राचीन एव मध्ययुगीन चिंतन अपरिपक्व, अनुपयोगी और महत्त्वहीन जान पड़ता है । किन्तु, आर्थिक विचारो के इतिहास से इसकी भली-भाति पुष्टि हो जाती है कि उस काल की परिस्थितियो मे उनका चितन सही था । यही नही, आर्थिक विचारो के इतिहास का अध्ययन यह सकेत भी दे देता है कि आज जो चिंतन सही है वह भविष्य मे महत्त्वहीन हो जायेगा ।

5. **आर्थिक चिंतन की व्यापकता की जानकारी देना (Briefs about comprehensiveness of economic thought) :-**

आर्थिक विचारो का इतिहास इसकी पुष्टि करता है कि आर्थिक चिंतन पर किसी एक व्यक्ति, समाज, समय अथवा राष्ट्र का अधिकार नही है । एक बार चिंतन की जो प्रक्रिया एव दिशा आरम्भ हो जाती है वह लम्बे समय तक वाद-विवादो एव मत-मतान्तरो की आच मे तपकर परिष्कृत होती जाती

है। आर्थिक चिंतन मे परिवर्तन से मानवीय आर्थिक व्यवहार, आर्थिक प्रणालियो एव अर्थव्यवस्थाओ मे परिवर्तन आता है। इसीलिये आर्थिक चिंतन की कहानी स्वय मानव के आर्थिक विकास की कहानी हो गयी है।

6. **अतीत, वर्तमान एवं भविष्य के सम्बन्ध की जानकारी में सहायक (Helpful in knowing the relationship between past, present and future)**

इन तीनो के बीच घनिष्ट सम्बन्ध है। वर्तमान सदैव भूतकाल का ऋणी रहता है क्योकि, आज जो कुछ दिखायी दे रहा है, वह भूतकाल की ही देन है। इसी प्रकार वर्तमान भविष्य का पथ–प्रदर्शक एव दीप–स्तम्भ है। एक कहावत है कि 'इतिहास अपने आपको दोहराता है' (history repeats itself)। अत भूतकाल के अनुभवो से सीखकर भविष्य के लिये व्यूह–रचना तैयार की जा सकती है। कभी स्वतत्र व्यापार का समर्थन किया जाता था, किन्तु कालान्तर मे सरक्षण उसका विकल्प बन गया। आज फिर विश्वस्तर पर व्यापार को नियत्रणो से मुक्त करने पर जोर दिया जा रहा है। इसी प्रकार पूजीवाद को समूल नष्ट कर सोवियत सघ ने साम्यवादी आर्थिक प्रणाली अपनायी। किन्तु, आज न केवल सोवियत सघ टूट गया है बल्कि वहा पूजीवादी स्वतत्र बाजार व्यवस्था की स्थापना भी हो गयी है। इन परिवर्तनो की प्रक्रिया एव औचित्य सिद्ध करने के साथ–साथ, आर्थिक विचारो का इतिहास व्यावहारिक जीवन की सामाजार्थिक (socio-economic) वास्तविक समस्याओ की प्रकृति समझाकर उनके समाधान के लिये, यद्यपि बने बनाये नुसखे (readymade solutions) तो प्रदान नही करता किन्तु, आवश्यक दिशा–निर्देश अवश्य प्रदान करता है। इस दृष्टि से आर्थिक विचारो का इतिहास 'ज्ञान का एक अपरिहार्य उपकरण' (an indispensable tool of knowledge) है।

7. **अर्थशास्त्र एवं अर्थशास्त्री के बीच भेद की जानकारी देना (Enables to realise that economics and economists are separate entities) :-**

आर्थिक विचारो का इतिहास यह सिद्ध कर देता है कि अर्थशास्त्र, एक विज्ञान के रूप मे, विभिन्न अर्थशास्त्रियो के चिंतन का एक क्रमबद्ध सग्रह होने के बावजूद उन सबसे भिन्न है। अर्थशास्त्रियो मे मतैक्य नही रहता किन्तु, अर्थशास्त्र एक है। यह किसी अर्थशास्त्री विशेष की सम्पदा नही है। इसीलिये हैने ने कहा है कि, 'अर्थशास्त्र एक चीज है और अर्थशास्त्री दूसरी।'[15] इसीलिये व्यक्तियो अर्थात् विचारको के स्थान पर आर्थिक चिंतन के विकास पर अधिक बल दिया जाता है।

15 "Economics is onething and economists are another" Haney

8. दृष्टिकोण में बदलाव लाना (Leads to a change in outlook) :-

आर्थिक विचारो के इतिहास का अध्ययन पाठको के दृष्टिकोण मे बदलाव लाता है । इससे स्वाभाविक बुद्धि का विकास होता है जिससे तार्किक शक्ति और विश्लेषणात्मक दक्षता (analytical ability) बढ़ती है, पूर्वग्रह समाप्त होते है एव गलतियो की पुनावृत्ति रुकती है और सच्चाई स्वीकार करने की सामर्थ्यता बढ़ती है । इससे विचारक का दृष्टिकोण वैज्ञानिक बनता है और आर्थिक तुलनाओ के लिये विस्तृत आधार (broad basis for economic comparision) मिलता है तथा समान समस्याये हल करने के लिये वैकल्पिक समाधान (alternative solutions for similar problems) सामने आते है । इसीलिये प्रो जे एम कीन्स (J.M. Keynes) ने मतिष्क के विकास के लिए आर्थिक विचारो का अध्ययन अपरिहार्य माना है । इसके अध्ययन से हमारी यह स्वीकार करने की सामर्थ्यता बढ़ती है कि आर्थिक सिद्धान्तो मे सशोधन एव बदलाव इसकी कमजोरिया नही बल्कि ये अवश्यम्भावी है । मार्क्स, कीन्स और गाधी को बनाने मे आर्थिक विचारो के इतिहास की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है ।

9. यह समझाने में सहायक है कि आर्थिक पहलू मानव जीवन की समग्रता का एक भाग है (Brings home the fact that economic aspect of life is only a part of totality of life) :-

मानव जीवन के नाना पक्ष है जिनमे आर्थिक पक्ष भी एक है। अर्थशास्त्र की परिधि मे मानव जीवन का केवल यही पक्ष आता है । अतः आर्थिक विचारो का इतिहास अन्य सामाजिक विज्ञानो के मध्य अर्थशास्त्र की भूमिका एव महत्ता निर्धारित कर यह बता देता है कि अर्थशास्त्र से न तो समाज के समग्र व्यवहार का विवेचन एव अध्ययन सम्भव है और न यह किसी समस्या का पूर्ण हल ही दे सकता है । अत अर्थशास्त्र की उपयोगिता बढ़ाने के लिये आवश्यक है कि अर्थशास्त्री आर्थिक विचारो के इतिहास के माध्यम से सामाजिक विज्ञानो के विस्तृत दायरे मे आये ।

10 आर्थिक प्रणालियों के स्वरूप, संरचना, एवं विकास की जानकारी प्राप्त करने में सहायक (Helps in knowing the nature, composition and development of variouse economic systems) :

आधुनिक विश्व की अर्थव्यवस्थाओ मे मुख्यत पूजीवादी, समाजवादी और मिश्रित आर्थिक प्रणालिया है । इन आर्थिक प्रणालियो की आधारभूत विशेषताओ, सरचना और विकास की जानकारी का एकमात्र एव विश्वसनीय स्रोत आर्थिक विचारो का इतिहास ही है ।

11 आर्थिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं की जानकारी देना (Reveals the various phases of economic development)

मानव समाज ने आदिम अवस्था से निकलकर वर्तमान उद्योग–प्रधान अवस्था मे पहुचने मे विकास की एक लम्बी यात्रा तय की है । इस दौरान वह जिन विभिन्न अवस्थाओ से गुजरा है उनकी समुचित जानकारी हमे आर्थिक विचारो के इतिहास से ही मिलती है ।

12 आर्थिक संस्थाओं एव सम्प्रदायों की जानकारी में सहायक (Provides knowledge about economic institutions and schools of thought)

मानवीय आर्थिक चिंतन से अनेक आर्थिक सस्थाओ की स्थापना हुयी है । इन सस्थाओ के क्रमिक विकास की जानकारी हमे आर्थिक विचारो का इतिहास ही देता है । उदाहरणार्थ मुद्रा एक आधारभूत सस्था है । जैसे–जैसे इस सस्था का स्वरूप बदला है मानव समाज का स्वरूप बदला है । वस्तुत मुद्रा के विकास की कहानी मानव के आर्थिक विकास की एक कहानी है । इसी प्रकार मानवीय आर्थिक चिंतन के अनेक सम्प्रदाय है जिन्हे इसी अध्याय मे श्रृखलाबद्ध रूप मे प्रस्तुत किया जा चुका है । इनके बारे मे सम्पूर्ण जानकारी आर्थिक विचारो के इतिहास से ही मिलती है ।

13 आर्थिक नीतियों के निर्माण एव मूल्याकन में सहायक (Helpful in the formulation and evaluation of economic policies)

आर्थिक नीतियो के निर्माण एव मूल्याकन मे आर्थिक विचारो का इतिहास हमारा मार्गदर्शन करता है । अनुभव मानव की सर्वश्रेष्ठ सम्पदा एव भूतकाल अर्थात् जो बीत गया है वह उसका सबसे बड़ा गुरु है । अत आर्थिक नीतियो के निर्माण एव मूल्याकन मे आर्थिक विचारो के इतिहास की जानकारी जरूरी है और एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री ही किसी देश का कुशल वित्तमत्री हो सकता है ।

14 शैक्षिक महत्ता (Scholastic significance) -

अन्त मे प्रो शुम्पीटर (Schumpeter) ने आर्थिक विचारो के इतिहास की शैक्षिक महत्ता पर बल दिया है और कहा है कि 'यह मानना एक भूल है कि बिना इतिहास के अध्ययन के कोई सिद्धान्त समझा जा सकता है । ज्ञान की किसी भी शाखा को उसकी ऐतिहासिक एव भूतकालीन पृष्ठभूमि मे गये बिना नही समझा जा सकता है ।'

प्रश्न

1. **आर्थिक विचारों के इतिहास से आप क्या समझते हैं । इसकी प्रकृति एवं महत्ता समझाइये ।**

   संकेत : प्रश्न के तीन भाग है । प्रथम भाग मे, सक्षेप मे, आर्थिक विचारो के इतिहास का आशय स्पष्ट कर द्वितीय एव तृतीय भाग मे क्रमश इसकी प्रकृति एव महत्ता समझाये ।

2. **आर्थिक विचारों के इतिहास का अर्थ समझाइये । इसकी विषय–सामग्री का विवेचन कीजिये ।**

   संकेत : प्रश्न के दो भाग है । प्रथम भाग मे आर्थिक विचारो के इतिहास का अर्थ समझाये तथा द्वितीय भाग मे इसकी विषय–सामग्री बताये ।

3. **आर्थिक विचारों का इतिहास क्या है ? यह आर्थिक इतिहास एवं अर्थशास्त्र के इतिहास से किस प्रकार भिन्न है ।**

   संकेत : प्रश्न के दो भाग है । प्रथम भाग मे आर्थिक विचारो के इतिहास का अर्थ एव परिभाषा दे तथा द्वितीय भाग मे इसका आर्थिक इतिहास एव अर्थशास्त्र के इतिहास से अन्तर स्पष्ट करे ।

4. **आर्थिक विचारों के इतिहास की महत्ता का परीक्षण कीजिये ।**

   संकेत : पहले एक पैराग्राफ मे आर्थिक विचारो के इतिहास का आशय स्पष्ट करे और तत्पश्चात् इसकी महत्ता की विस्तृत व्याख्या दे ।

5. **आर्थिक विचारों के विभिन्न सम्प्रदायों की विशेषतायें बताइये ।**

   संकेत : इस प्रश्न का समुचित उत्तर इस विषय के सम्पूर्ण अध्ययन के पश्चात् ही दिया जा सकता है । अत पाठ्यक्रम के पूर्ण अध्ययन के पश्चात् विभिन्न सम्प्रदायो एव उनकी विशेषताओ के आधार पर प्रश्न का उत्तर दे ।

6. **आर्थिक विचारों के इतिहास का क्षेत्र समझाइये ।**

7. **आर्थिक विचारों के इतिहास के अध्ययन की प्रमुख रीतियां बताइये ।**

❑

2

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय I : एडम स्मिथ

(The Classical Tradition I Adam Smith)

> "एडम स्मिथ ने अपनी पीढ़ी का अनुनय किया और भावी पीढ़ी का शासन किया।"[1] — जॉन रे।

परिचय . एडम स्मिथ प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सस्थापक के रूप में

(Introduction Adam Smith as a Founder of Classical School)

सन् 1776 मे एडम स्मिथ की प्रसिद्ध रचना Wealth of Nations [2] के प्रकाशन से लेकर 19वी सदी के मध्य तक आर्थिक विचारो के इतिहास मे जिन विचारो का बोलबाला रहा वे मुख्यत पूर्ण प्रतिस्पर्धा एव पूर्ण रोजगार की विद्यमानता, मुक्त व्यापार, निर्बाधावाद ह्रासमान प्रतिफल नियम की क्रियाशीलता, निजी एव सामाजिक हित मे सह–अस्तित्व आदि की मान्यताओ पर आधारित थे। कार्ल मार्क्स ने, सामूहिक रूप से, इन्हे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र का नाम दिया। अत उन विचारो के प्रतिपादको एव समर्थको को प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अर्थशास्त्री कहा जाता है। इन अर्थशास्त्रियो मे आँग्ल अर्थशास्त्री एडम स्मिथ अग्रणी है क्योकि शेष सभी विचारको ने बिना किसी विशेष मतभेद के, मूलरूप मे, उन्ही के आर्थिक सिद्धान्तो को आधार मानकर अपने आर्थिक विचार एव सिद्धान्त प्रतिपादित किये। इसीलिये एडम स्मिथ को प्रतिष्ठित सम्प्रदाय एव अर्थशास्त्र का सस्थापक एव 'अर्थशास्त्र का जनक' (Father of Economics) होने का गौरव प्राप्त है। वे एक मौलिक दार्शनिक एव आर्थिक विचारक थे। उन्होने इधर–उधर बिखरे पडे तत्कालीन आधे–अधूरे अपरिपक्व एव अपरिष्कृत आर्थिक विचारो को कतिपय मान्यताओ के सहारे समन्वित एव एकीकृत रूप मे लिपिबद्ध कर न केवल अर्थशास्त्र को एक पृथक् एव स्वतत्र विज्ञान का दर्जा दिया बल्कि उसके भावी विकास को एक मजबूत आधारशिला प्रदान की। इसीलिये बाद मे विकसित

---

1 "Adam Smith persuaded his own generation and governed the next — Rae J

2 इस पुस्तक का पूरा नाम "An Enquary into the Nature and Causes of Wealth of Nations" है।

सभी सम्प्रदाय, किसी न किसी रूप मे, उनके ऋणी रहे है ।

संक्षिप्त जीवन परिचय

(Brief Life Sketch)

आँग्ल अर्थशास्त्री एडम स्मिथ का जन्म 5 जून सन् 1723 ई को स्कॉटलैण्ड मे एडिनबर्ग के निकट किरकावड़ी (Kirkcaldy) नामक छोटे से कस्बे मे एक उच्च–मध्यमवर्गीय सम्पन्न परिवार मे हुआ । इनके पिता वहा के कस्टम अधिकारी थे । बाल्यकाल मे एडम स्मिथ को केवल अपनी माता का ही वात्सल्य मिला क्योकि इनके पिता का स्वर्गवास इनके जन्म से तीन माह पूर्व ही हो चुका था । वे जीवन–पर्यन्त अविवाहित रहे और अपने जीवन के अधिकाश वर्षों मे वे अपनी माता के साथ रहे ।

एडम स्मिथ बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि एव दार्शनिक विचारो के बालक थे । इनकी प्रारम्भिक शिक्षा किरकावड़ी मे ही हुई । चार वर्ष तक (सन् 1737–40) तक ग्लासगो कॉलेज मे अध्ययन (विशेषत. गणित) करने के पश्चात् उन्होने सन् 1740 मे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के बेल्यिल कॉलेज मे प्रवेश लिया और सन् 1746 मे वहा से बी. ए. की उपाधि प्राप्त की । इसके पश्चात् दो साल तक किरकावड़ी मे अपनी माता के पास रहकर उन्होने ज्योतिष एव तर्कशास्त्र जैसे विषयो का स्वाध्याय किया एव उन पर कुछ निबन्ध लिखे । सन् 1748–50 के दो वर्षों मे उन्होने एडिनबर्ग मे आँग्ल साहित्य एव अर्थशास्त्र पर नि शुल्क प्रसार व्याख्यान (extension lectures) दिये और सम्मान पाया । इसी दौरान अध्यापन कार्य मे उनकी अभिरुचि जागृत हुई। जनवरी सन् 1751 मे उनकी नियुक्ति ग्लासगो विश्वविद्यालय मे तर्कशास्त्र के प्रोफेसर पद पर हुई । अगले ही वर्ष उन्हे नैतिक दर्शनशास्त्र (Moral Philosophy) विभाग का अध्यक्ष पद दे दिया गया । इसी पद पर रहते हुए सन् 1759 मे उन्होने अपनी पहली एव दार्शनिक रचना 'दि थ्योरी ऑफ मोरल सेन्टीमेटस्' **(The Theroy of Moral Sentiment)** का प्रकाशन किया । सन् 1762 मे ग्लासगो विश्वविद्यालय ने उन्हे 'डाक्टर आफ लॉज' (LL.D) की उपाधि से सम्मानित किया ।

सन् 1764 मे एडम स्मिथ ने अध्यापन कार्य छोड़ दिया और वे तात्कालीन वित्तमत्री (chancellor to the Exchequer) चार्ल्स टाउनशेड (Charles Townshend) के दामाद बकल्यूक के युवा ड्यूक (Duke of Buccleuch) के निजी शिक्षक बनाये गये । सन् 1766 मे वे पुन अपनी माता के पास किरकावड़ी आ गये और अपनी ऐतिहासिक रचना Wealth of Nation के लेखन कार्य मे जुट गये । सन् 1776 मे इस पुस्तक के प्रकाशन से उन्हे भारी–सम्मान मिला । अपने जीवन के अतिम पड़ाव मे सन् 1778 मे उनकी नियुक्ति एडिनबरा के सीमाकर आयुक्त के पद पर हुई और वे जीवन पर्यन्त

इसी पद पर रहे। इसी वर्ष ग्लासगो विश्वविद्यालय ने उन्हे अधिष्ठाता (Lord Rector) का मानद पद देकर सम्मानित किया। सन् 1784 मे उनकी माता के देहावसान से उनका पारिवारिक जीवन एकाकी हो गया। सन् 1790 मे, पेट की लम्बी बीमारी के पश्चात् 67 वर्ष की उम्र मे उनका देहान्त हो गया।

एडम स्मिथ को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Influencing Adam Smith)

यद्यपि, एडम स्मिथ ने अपनी प्रमुख रचनाओ, लेखो एव भाषणो मे कभी भी उन घटको का उल्लेख नही किया जिन्होने उन्हे प्रभावित किया, तथापि उन घटको की आसानी से खोज की जा सकती है जिनका उनके विचारो एव लेखन पर प्रभाव पड़ा। सक्षेप मे, ये घटक निम्नाकित है–

1. पूर्ववर्ती एवं समकालीन विचारक
(Predecessors and contemporary Thinkers)

एडम स्मिथ ने 'Wealth of Nations' मे एक सौ से अधिक पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको का नामोल्लेख किया है। इससे सहज ही मे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि एडम स्मिथ इन सब विचारको से प्रभावित हुए बिना नही रहे। इन सबके विचार एडम स्मिथ के आर्थिक चिन्तन की नीव के पत्थर है। जैसा कि **प्रो. हैने** ने लिखा है, "एडम स्मिथ वणिकवादियो, 17वी एव 18वी सदी के दार्शनिको और प्रकृतिवादी विचारको के लेखो से परिचित थे और वे उन्ही के कधो पर खड़े हुए।"[3] इस कथन के आधार पर उन्हे प्रभावित करने वाले पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको को, विश्लेषण की सरलता के निम्नाकित तीन वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है–

(i) वणिकवादी विचारक– इन विचारको मे सर थॉमस मन, सर विलियम पैटी, डडले नॉर्थ, जोसिया चाइल्ड, कॉलबर्ट और जॉन लॉक आदि प्रमुख है। ये सभी विचारक 16वी व 17वी सदी अथवा एडम स्मिथ से पहले की पीढ़ियो के है। इन विचारको ने श्रम की गतिशीलता पर रोक, उद्योगो पर राजकीय नियत्रण, आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप, विक्रय एव व्यापार की अनुमति के एकाधिकार आदि का समर्थन किया। एडम स्मिथ इनके ऐसे विचारो से सहमत नही थे। औद्योगिक क्रान्ति के लाभो को समस्त देशवासियो के बीच फैलाने के लिए वे आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप के विरुद्ध हो गये। इतना ही नही, वणिकवादी विचारधारा ने एडम स्मिथ को बुरी तरह झकझोर दिया। जिन वणिकवादी विचारको ने अपेक्षाकृत उदार विदेश व्यापार

---

3 "Adam Smith was acquainted with the writings of mercantilists, the philosophers of seventeenth and eighteenth centuries and Physiocrates and he stood upton their shoulders." -Haney L. H.

नीति का समर्थन किया, वे एडम स्मिथ के मन भाये । इनमे अतिम चरण के वणिकवादी थे ।

सरजेम्स स्टुअर्ट, वान जुस्ती और डेविड ल्यूम आदि वणिकवादी विचारक एडम स्थिम के समकालीन थे । इनमे डेविड ह्यूम के चिन्तन का एडम स्मिथ के विचारो पर गहरा प्रभाव पडा । वे एक दार्शनिक विचारक एव इतिहासकार थे । उन्होने राजस्व, वाणिज्य, मुद्रा, ब्याज, भुगतान शेष आर्थिक उदारतावाद आदि आर्थिक विषयो पर अपने विचार व्यक्त किये । 16 वर्ष की आयु मे एडम स्मिथ और ह्यूम ग्लासगो मे परस्पर एक दूसरे के सम्पर्क मे आये । अत दोनो ने एक दूसरे के चिन्तन को प्रभावित किया । एडम स्मिथ के आर्थिक चिन्तन पर ह्यूम के प्रभाव का उल्लेख करते हुए **प्रो. अलेक्जेण्डर ग्रे** ने लिखा है कि, ''स्मिथ का कोई भी वृत्तात तब तक उचित एव आनुपातिक होने का दावा नही कर सकता जब तक उसकी पृष्ठभूमि मे ह्यूम का उल्लेख नही किया जाये ।''[4]

(ii) **प्रकृतिवादी विचारक-** एडम स्मिथ के समय प्रकृतिवादी दर्शन चरमोत्कर्ष पर था । अधिकाश प्रमुख प्रकृतिवादी विचारक एडम स्मिथ के समकालीन ही थे । डयूक आफ बकल्यूक के साथ 10 माह के पेरिस प्रवास के दौरान एडम स्मिथ को क्वेने (Quesnay) टरगो (Turgot) एव डुपोण्ट (Dupont) आदि प्रमुख प्रकृतिवादी विचारको का सानिध्य मिला । क्वेने को जहा एडम स्मिथ ने बहुत सम्मान दिया वहा टरगो से फ्रास प्रवास के दौरान उनका अनेक ज्वलन्त विषयो पर विचारो का आदान–प्रदान हुआ । उनकी रचना 'Reflexions' की विषय–सामग्री का एडम स्मिथ पर गहरा प्रभाव पड़ा । एडम स्मिथ के स्वतत्रता, स्व–हित धन–प्रवाह, प्राकृतिक व्यवस्था, व्यक्तिवाद, आशावाद, निर्बाधावाद और आधिक्य (surplus) सम्बन्धी विचारो मे प्रकृतिवादियो के प्रभाव की स्पष्ट झलक दिखायी देती है ।

(iii) अन्य समकालीन विचारक- इन विचारको मे निम्नाकित उल्लेखनीय है जिन्होने एडम स्थिम का आर्थिक चिन्तन एव दर्शन प्रभावित किया–

(a) **फ्रांसिस हकेसन** (Francis Hutcheson) :- फ्रासिस हकेसन एक ख्याति प्राप्त दार्शनिक विचारक थे । ये राजनीतिक, धार्मिक एव आर्थिक स्वतत्रता के समर्थक थे । ग्लासगो विश्वविद्यालय मे एडम स्थिम ने इनसे शिक्षा प्राप्त की । एडम स्थिम इनके प्रिय शिष्य थे और स्वय एडम स्मिथ भी अपने गुरुओ मे सबसे ज्यादा इन्ही की विचारधारा से प्रभावित हुये । *'वेल्थ ऑफ नेशन्स'* मे वर्णित सामाजिक दर्शन पर हकेसन के विचारो की स्पष्ट झलक दिखायी देती

---

4 "No account of Smith can claim to be fair or proportioned if it fails to disclose Hume in the background." Gray A

है । **डब्ल्यू. आर. स्कॉट** (W R Scott) के मतानुसार 'हकेसन के विचारो ने 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रारूप (arrangement) को प्रभावित किया ।' इनके प्रभाव से ही एडम स्मिथ की प्राकृतिक व्यवस्था (natural order) मे, न केवल, आस्था उत्पन्न हुयी बल्कि उन्होने उसे चरमोत्कर्ष पर पहुचाकर पूर्णता प्रदान की । एडम स्मिथ के मूल्य, ब्याज, मुद्रा आदि विचारो पर हकेसन के चिन्तन एव उनकी रचना 'System of Moral Philosophy' का प्रभाव पड़ा । 'अधिकतम लोगो का अधिकतम सुख' (Greatest happiness of the greatest number) की सूक्ति सम्भवत हकेसन ने ही दी । एडम स्मिथ का आर्थिक दर्शन इस सूक्ति से ओत–प्रोत रहा है ।

(b) बर्नार्ड डि मण्डेविले (B D Mandeville) पेशे से चिकित्सक मण्डेविले दार्शनिक अभिरुचि के एक मौलिक विचारक थे । इनकी कृति 'The Fable of Bees' का एडम स्मिथ के चिन्तन पर गहरा प्रभाव पड़ा । इस कृति मे मण्डेविले ने बताया कि सभ्यता मानव जाति की अच्छाइयो का नही अपितु बुराइयो का परिणाम है । इसी विचारधारा से प्रभावित होकर एडम स्मिथ ने स्वीकार किया कि 'वैयक्तिक स्वार्थ ही मनुष्य को समृद्धि की ओर ले जाता है ।' एडम स्मिथ के स्वहित, श्रम–विभाजन एव आवश्यकताओ की सख्या वृद्धि सम्बन्धी विचारो पर मण्डेविले के चिन्तन का प्रभाव रहा । सम्भवत 'विभाजन' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम मण्डेविले ने ही किया जिसका एडम स्मिथ ने 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' मे भरपूर प्रयोग किया है ।

(c) जोसिया टक्कर (Josiah Tucker) उन्होने जनसख्या मे वृद्धि का समर्थन करते हुए ब्रह्मचर्य एव अविवाहित जीवन पर राज्य द्वारा कर लगाने का समर्थन किया था । ये वणिकवादी विचारधारा के समर्थक थे । इनके वाणिज्य, करारोपण, जनसख्या, स्वहित एव श्रम की महत्ता सम्बन्धी विचारो का एडम स्मिथ पर गहरा प्रभाव पड़ा ।

(d) एडम फर्गुसन (A Ferguson)- फर्गुसन ने मुख्यत करारोपण की समस्या का नैतिक आधार पर विवेचन किया । उनके इन विचारो की एडम स्मिथ के करारोपण के सिद्धान्तो मे स्पष्ट झलक दिखायी पडती है ।

(e) हैरिस (Harris) - सन् 1757 मे इनकी 'Coins' पर पुस्तक का प्रकाशन हुआ जिसमे मूल्य एव उपयोगिता सम्बन्धी विषयो पर चर्चा की गयी। इन्होने बताया कि किसी वस्तु के मूल्य का आधार उसके उत्पादन मे लगने वाली भूमि, श्रम और दक्षता आदि है । इन बातो का एडम स्थिम के 'उपयोगिता' एव 'मूल्य' विषयक विचारो पर गहरा प्रभाव पड़ा ।

2. समकालीन परिवेश (Contemporary Environments)

एडम स्मिथ के आर्थिक चिन्तन पर तात्कालीन आर्थिक, सामाजिक एव राजनैतिक परिवेश का गहरा प्रभाव पड़ा । इस समय तक इगलैण्ड मे कृषि

एव औद्योगिक क्राति हो चुकी थी । औद्योगीकरण एव शहरीकरण के कारण वहाँ का आर्थिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा था । धीरे–धीरे लोग अपना परम्परागत पेशा कृषि छोडकर औद्यौगिक महानगरो की ओर रोजगार पाने के लिये पलायन करते जा रहे थे । औद्योगिक पूजीवाद आर्थिक स्वतत्रता, बडे पैमाने पर औद्यौगिक एव कृषि उत्पादन एव श्रम की गतिशीलता की लोकप्रियता निरलर बढती जा रही थी । इनसे प्रभावित होकर एडम स्मिथ औद्यौगिक क्रियाओ मे पूजीवादी सगठन के प्रबल समर्थक बन गये । उन्होने देखा कि आधिक्य' का सृजन कृषि क्षेत्र से बाहर उद्योगो मे भी किया जा सकता है ।

इसी समय योरोप एव शेष विश्व मे राजनीतिक घटना चक्र भी तेजी से घूम रहा था । योरोप मे सामतवादर अपनी अतिम सासे गिन रहा था । सन् 1776 मे अमरीका के स्वतत्रता घोषणा–पत्र पर हस्ताक्षर के साथ ही अमरीका को इग्लैण्ड के प्रभुत्व से मुक्ति मिल गयी । इससे उपनिवेशवाद का विरोध एव विखण्डन आरम्भ हो गया और जगह–जगह स्वतत्रता की माग होने लगी । सन् 1789 मे फ्रास की राज्य क्राति हो गयी । इसने स्वतत्रता, समानता एव भाईचारे का सदेश दिया । इन क्रान्तियो एव परिवर्तनो की पृष्ठभूमि मे तात्कालीन राजनैतिक परिवेश था, जिससे एडम स्मिथ भी प्रभावित हुये बिना नही रहे ।

एडम स्मिथ को बदलते सामाजिक परिवेश एव मूल्यो ने भी प्रभावित किया । मध्ययुगीन रूढ़िवादी एव धर्मान्ध समाज पुनर्जागरण के दौर से गुजर कर तेजी से हो रहे परिवर्तनो का समर्थन करता जा रहा था । सरकारी प्रतिबन्धो एव नियत्रणो का प्रबल विरोध होने लग गया था । लोग आर्थिक, राजनैतिक एव सामाजिक स्वतत्रता के समर्थक बन गये थे । इन सब बातो का एडम स्मिथ के आर्थिक चितन पर गहरा प्रभाव पडा । वस्तुत एडम स्मिथ तात्कालीन परिवेश की ही एक देन थे ।

3. स्कॉटलैण्ड का आर्थिक पिछडापन

(Economic Backwardness of Scottland) -

एडम स्मिथ का अपना मातृ प्रदेश स्कॉटलैण्ड इग्लैण्ड की तुलना मे आर्थिक दृष्टि से काफी पिछडा हुआ था । कृषि एव औद्योगिक क्राति के सुफल यहा के निवासियो को नही मिल पाये थे । जब सन् 1740 मे एडम स्मिथ ने *ग्लासगो से ऑक्सफोर्ड तक की 650 कि मी लम्बी दूरी सडक मार्ग से घोड़े* पर सवार होकर पूरी की तो न केवल उन्होने स्कॉटलैण्ड एव इग्लैण्ड के आर्थिक विकास मे अन्तर पाया बल्कि क्रमश दोनो की पिछडी आर्थिक स्थिति एव समृद्धि को काफी *निकटता से देखा । ज्ञान पिपासु एडम स्मिथ के मस्तिष्क* मे तभी से राष्ट्रो के धन के कारण एव प्रकृति की खोज करने की धुन सवार हो

गयी। सम्भवत इस यात्रा से प्रभावित होकर ही एडम स्मिथ ने सन् 1776 मे प्रकाशित अपनी प्रमुख रचना का पूरा नाम 'एन इन्क्वायरी इन्टू दि नेचर एण्ड कॉजेज ऑफ वेल्थ ऑफ नेशनस्' रखा।

4. यात्रायें (Travels)

एडम स्मिथ स्कॉटलैण्ड (किरकावडी, ग्लासगो, एडिनबर्ग आदि) एव इग्लैण्ड (ऑक्सफोर्ड) के बीच कई यात्राये की। इन यात्राओ से उनका आर्थिक चितन प्रभावित किया। सन् 1764 मे ड्यूक ऑफ बकल्यूक के निजी शिक्षक नियुक्त हो जाने के पश्चात् उन्होने ड्यूक के साथ योरोपीय देशो की यात्रा की। इन यात्राओ से वे अनेक विचारको (विशेषत फ्रासिसी प्रकृतिवादी विचारक) के निकट सम्पर्क मे आये और उनसे वैचारिक आदान-प्रदान किया। इसी दौरान उनका समागम तत्कालीन दार्शनिक विचारको से हुआ। एडम स्मिथ का आर्थिक चिन्तन इनसे प्रभावित हुआ। इस सदर्भ मे सबसे उल्लेखनीय घटना यह है कि ड्यूक के साथ फ्रास प्रवास के दौरान ही उन्होने अपनी प्रसिद्ध रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के लेखन का कार्य आरम्भ किया।

5. क्लब (Clubs) :-

ग्लासगो एव एडिनबर्ग मे एडम स्मिथ अनेक क्लबो के सदस्य रहे। इनमे पॉलिटीकल इकॉनोमिक क्लब, ग्लासगो, सेलेक्ट सोसायटी, एडिन बर्ग, ओइस्टर क्लब, एडिनबर्ग, पोकर क्लब, ग्लासगो आदि प्रमुख है। उस समय इन क्लबो के बुद्धिजीवी सदस्य सप्ताह मे एक बार तत्कालीन विषयो पर सार्थक चर्चाये किया करते थे। इन क्लबो की सदस्यता से एडम स्मिथ का अनेक समकालीन बुद्धिजीवियो, व्यापारियो तथा उद्योगपतियो से विचारो का आदान प्रदान हुआ। इससे उनका आर्थिक चिंतन प्रभावित हुआ।

6. घरेलू परिवेश (Family Environment) :-

एडम स्मिथ अविवाहित थे। पिता की मृत्यु उनके जन्म से पूर्व ही हो जाने के कारण जीवन के अधिकाश वर्षो मे वे मुख्यत अपनी माता के सम्पर्क मे रहे। उनका जीवन सादगीपूर्ण था। उनके प्रकृतिवाद एव आशावाद पर उनके पारिवारिक जीवन एव घरेलू वातावरण का प्रभाव पड़ा।

प्रमुख कृतियां

(Major Works)

एडम स्मिथ की दो प्रमुख रचनाये है—

1. **दि थ्योरी ऑफ मोरल सेन्टीमेंटस (The Theory of Moral Sentiments)**- यह रचना सन् 1759 मे प्रकाशित हुई।
2. **वेल्थ ऑफ नेशनस् (Wealth of Nations)**- इस पुस्तक का प्रकाशन 9 मार्च सन् 1776 को हुआ।

3 **व्याख्यान**- इन दो रचनाओ के अलावा एडम स्मिथ ने अनेक व्याख्यान दिये । इन व्याख्यानो का एक सग्रह सन् 1896 मे उनके एक प्रबल समर्थक कैनन ने प्रकाशित किया जिसका शीर्षक है "Lectures on Justice Police Revenue and Arms delivered in Glasgow by Adam Smith from notes taken by a student in 1763" (Oxford)

4 **पत्र आदि**- W R Scott ने Adam Smith as a student and Professor' नामक पुस्तक लिखी । इसमे एडम स्मिथ के पत्रो के अलावा एडम स्मिथ के आर्थिक चितन का वह सार सम्मिलित किया गया है जो उन्होने सन् 1760 मे तात्कालीन वित्तमत्री चार्ल्स टाउनशेड को भेजा था ।

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' पर एक टिप्पणी .

(A Note on Wealth of Nations)

सन् 1764 मे अपने फ्रास प्रवास के दिनो मे एडम स्मिथ ने इस पुस्तक को लिखना आरम्भ किया और 12–13 वर्ष के अथक प्रयास के पश्चात् सन् 1776 मे इसका प्रकाशन हुआ । इस रचना मे आर्थिक सिद्धान्तो एव आर्थिक नीतियो का अनूठा समन्वय है । यह पुस्तक 5 खण्डो मे विभाजित है । इसके प्रथम एव दूसरे खण्ड अर्थशास्त्र के उत्पादन, विनिमय एव वितरण विषयक सिद्धान्तो से सम्बन्धित है । प्रथम खण्ड मे मुख्यत श्रम एव द्वितीय खण्ड मे पूजी सम्बन्धी विवेचन किया गया है । पुस्तक का तीसरा खण्ड विभिन्न देशो की आर्थिक समृद्धि मे वृद्धि के विवेचन से सम्बन्धित है जबकि चौथे खण्ड मे विभिन्न आर्थिक प्रणालियो एव वणिकवादियो और प्रकृतिवादियो के आर्थिक चितन का आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है । पुस्तक का पाचवाँ एव अतिम खण्ड राजस्व, करारोपण एव राज्य के कार्यों तथा आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप से सम्बन्धित है ।

सक्षेप मे, इस पुस्तक मे मुख्यत एडम स्मिथ ने चार प्रसगो को छुआ है, (i) सामान्य आर्थिक सिद्धान्त, (ii) तात्कालीन आर्थिक नीतियो एव चितन की समालोचना, (iii) सामाजार्थिक एव राजनीतिक सस्थाओ के उद्भव एव विकास की व्याख्या तथा (iv) व्यावहारिक आर्थिक समस्याये ।

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' न केवल अर्थशास्त्र की एक विशुद्ध एव प्रथम रचना है, जिसके प्रकाशन के साथ आधुनिक अर्थशास्त्र का जन्म हुआ, और जो घरेलू एव अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सम्बन्धी समस्याओ पर प्रकाश डालती है बल्कि एक ऐसी दार्शनिक रचना है जो मानव सुख, भौतिक कल्याण, विधिशास्त्र एव नीतिगत समस्याओ पर भी समुचित ध्यान केन्द्रित करती है । इसीलिए प्रो कैनन ने इसे 'महान ऐतिहासिक महत्ता की एक कृति (a classic of great historical interest) हेलब्रोनर ने श्रेष्ठ कृति (master piece) और रोबर्ट लेकामैन (Lekachman) ने आर्थिक विकास का एक सिद्धान्त (a theory of

economic development) कहा है । यह एडम स्मिथ के आर्थिक चिंतन की चरम पारकाष्ठा (final culmination of his thinking) है । यह रचना अपने नाम की सार्थकता सिद्ध करती है क्योंकि यह वास्तव मे राष्ट्रो के धन की प्रकृति एव उनके कारणो की एक खोज है । यद्यपि, इस पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व ही एडम स्मिथ की ख्याति सारे योरोप मे फैल चुकी थी किन्तु, इस पुस्तक ने उन्हे सदा के लिए अमर कर दिया । 900 पृष्ठो की यह पुस्तक एडम स्मिथ ने *सामान्य पाठको के लिए, सरल भाषा मे, लिखी थी और उन्हे अपने इस उद्देश्य* मे पूरी सफलता मिली ।

उपर्युक्त अच्छाइयो के बावजूद इस पुस्तक मे कुछ कमिया भी है । इसके कई प्रसग अनावश्यक रूप से लम्बे एव क्रम–विहीन है जिनके कारण कई स्थानो पर स्वय लेखक परस्पर विरोधी विचारो के भवर मे फसे जान पड़ते है । इसीलिए **एलेक्जेण्डर ग्रे** ने कहा है कि, "यह वास्तव मे एक अस्त–व्यस्त रचना है जिसमे विचारो के क्रम को लम्बे विषयान्तरो द्वारा चतुराई से छिपा दिया गया है ।"[5]

प्रो ग्रे के उपर्युक्त कथन मे सत्याश होने के बावजूद भी एडम स्मिथ की इस कृति का नीचा मूल्याकन नही किया जा सकता । अत **प्रो जीड** एव **रिस्ट** का यह कथन सार्थक है कि, "कुल मिलाकर यह एक रोचक, तथ्यो से परिपूर्ण एव सजीव पुस्तक है तथा इसके विवेचन इतने पूर्ण विस्तृत एव सतुलित है कि वे आसानी से उन्हे मनवा देते है ।"[6] प्रो हैने ने इसे 'अर्थशास्त्र की उपयुक्त समय पर लिखी गयी एक कृति' कहा है जिसमे राष्ट्रो के धन की प्रकृति एव उसे निर्धारित करने वाले कारणो का विश्लेषण किया गया है ।

एडम स्मिथ के प्रमुख विचार
(Major Ideas Of Adam Smith)

एडम स्मिथ ने अपनी कृतियो, मुख्यत वेल्थ ऑफ नेशन्स, मे जो दार्शनिक एव आर्थिक विचार व्यक्त किये है, उनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 प्रकृतिवाद एव आशावाद (Naturalism and Optimism)
2 *अदृश्य शक्ति (Invisible Hand)*

---

5 "It is certainly a disorderly book in which the sequence of thought is successfully concealed behind lengthy digressions " Gray A

6 "It is above all an interesting book bristling with facts and palpitating with life His discussion of these quetions is marked by such mastery of detail and such balance of judgement that he convinces without effort." -Gide & Rist.

उनके प्रकृतिवाद एव आशावाद का भी अदृश्य शक्ति से सादृश्य (analogy) है । वे नैसर्गिक अथवा सहज उत्पत्ति वाली सभी आर्थिक सस्थाओ को लोकोपयोगी मानने के साथ–साथ ईश्वरीय भी मानते है । इन सस्थाओ के माध्यम से व्यक्ति न केवल अपने स्वार्थ को पूरा करते है बल्कि परमेश्वर की इच्छा की भी पूर्ति करते है । जिस प्रकार बूद–बूद से घडा भरता है उसी प्रकार एक–एक व्यक्ति का स्वार्थ एव आर्थिक हित मिलकर सामाजिक हित मे उल्लेखनीय वृद्धि कर देते है । प्रत्येक व्यक्ति के आय–वृद्धि के प्रयास से राष्ट्रीय आय मे बढ़ोत्तरी हो जाती है ।

आधुनिक अर्थशास्त्रियो ने एडम स्मिथ के उपर्युक्त विचारो की कटु आलोचना की है । इनके अनुसार 'स्वहित' मे आवश्यक रूप से 'लोकहित' निहित नही है और बहुत बार ये परस्पर विपरीत होते है । उदाहरणार्थ, मादक वस्तुओ का उत्पादन एव विक्रय उद्यमकर्त्ता की दृष्टि से बहुत लाभदायक हो सकता है, किन्तु इससे सामाजिक कल्याण मे वृद्धि के स्थान पर गिरावट आती है । अत इन क्रियाओ से सामाजिक हित मे किसी प्रकार की वृद्धि की आशा नही की जा सकती है ।

3. श्रम की महत्ता एवं श्रम–विभाजन (Significance & Division of Labour) :-

एडम स्मिथ ने श्रम को न केवल उत्पत्ति के साधनो मे सर्वोपरि स्थान दिया बल्कि उसे किसी राष्ट्र के धन अथवा उत्पादन का सबसे प्रधान स्रोत माना । इसीलिए श्रम उनकी रचना 'वे ल्थ ऑफ नेशन्स' का प्रारम्भिक बिन्दु है । वे अपनी पुस्तक की प्रस्तावना के पहले ही वाक्य मे श्रम की महत्ता का गुणगान करते है और क्योकि उन्होने उपभोग विषयक मानवीय व्यवहार का विवेचन नही किया, अत वे आर्थिक प्रसग अथवा अर्थशास्त्र की विषय सामग्री श्रम से ही आरम्भ करते है । प्रस्तावना मे उन्होने लिखा है कि, "प्रत्येक देश का वार्षिक श्रम ही वह कोष है जो मूलत. जीवन की उन सभी अनिवार्यताओ एव सुविधाओ की वस्तुओ की पूर्ति करता है जिनका वर्षभर मे उपभोग किया जाता है तथा जो या तो श्रम की तात्कालिक उत्पादन होती है या उसके उत्पादन के बदले दूसरे देशो से प्राप्त की जाती है ।"[8]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि जहा प्रकृतिवादियो एवं वणिकवादियो ने क्रमश. कृषि एव व्यापार मे किसी राष्ट्र की समृद्धि देखी, वहा एडम स्मिथ ने

---

8 "The annual labour of every nation is the fund which originally supplies it with all the necessities and conveniences of life which it annually consumes, and which consists always either in the immediate produce of that labour or in what is purchased with that produce from other nations " -Smith A'

उसे श्रम मे बताया[9] और कहा कि यदि किसी राष्ट्र की प्राकृतिक दशाये दी हुयी एव निश्चित है और श्रम परिवर्तनीय है तो उस राष्ट्र का धन श्रम बढ़ने के साथ बढ़ता है और विलोमश घटता है । इस सदर्भ मे, उन्होने श्रम के परिमाणात्मक पक्ष के साथ–साथ उसके गुणात्मक पक्ष को भी ध्यान मे रखा है । अर्थात् राष्ट्र का धन अथवा उत्पादन श्रम की कुल मात्रा के साथ–साथ उसकी कार्य–दक्षता एव उन निर्णयो पर निर्भर करता है जिनके अनुसार उस श्रम का प्रयोग किया जाता है ।

उत्पादक एवं अनुत्पादक श्रम –एडम स्मिथ ने मानवीय श्रम का उत्पादक एव अनुत्पादक मे विभाजन किया और कहा कि जो श्रम पूजी के सहयोग से *लगातार गतिमान रहता है, केवल वही श्रम उत्पादक है और इसी से मूल्यो* का सृजन अर्थात् उत्पादन होता है । उन्होने कहा कि जो व्यक्ति एव राष्ट्र ऐसे श्रम की जितनी अधिक मात्रा का प्रयोग करते है वे अपेक्षाकृत उतने ही अधिक सम्पन्न एव विलोमश विपन्न होते हैं । इसी आधार पर एडम स्मिथ शासक, उसकी मत्रि परिषद् एव सेना, शिक्षको, पादरियो, वकीलो, डॉक्टरो, सगीतज्ञो एव रगमच के कलाकारो को घरेलू नौकरो के समकक्ष मानकर अनुत्पादक श्रम मे सम्मिलित करते है और कहते है कि क्योकि इनकी सेवाओ का उपभोग कर लिया जाता है । अत ये अनुत्पादक है । उनके मतानुसार श्रम की उत्पादकता समाज के पूजीगत कोष पर निर्भर करती है अत उन्होने बचत एव मितव्ययिता की प्रशसा की और कहा कि एक व्यक्ति द्वारा जो बचत की जाती है वह आवश्यक रूप से राष्ट्र के पूजीगत कोष मे वृद्धि करती है । *उन्होने बताया कि राष्ट्रीय आय को उपभोग व्ययो एव* विनियोगो मे काम मे लिया जा सकता है । विनियोगो को वे उत्पादक श्रम पर एक व्यय मानते है और कहते है कि जो अर्थव्यवस्था उत्पादक श्रम पर जितनी अधिक राशि व्यय करती है भविष्य मे उसकी राष्ट्रीय आय उतनी ही अधिक होती है । इसलिये राष्ट्रो के धन के कारणो एव प्रकृति की खोज मे उत्पादक श्रम उल्लेखनीय भूमिका निभाता है ।

श्रम-विभाजन– जब किसी कार्य को विभिन्न विधियो एव उपविधियो मे विभाजित कर प्रत्येक विधि अथवा उपविधि का कार्य पृथक्–पृथक् विशेषज्ञ श्रमिको द्वारा पूर्ण किया जाता है तो उसे श्रम–विभाजन कहते हैं । यह एडम स्मिथ के आर्थिक चितन का प्रारम्भिक बिन्दु है । वे 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' का आरम्भ ही 'श्रम विभाजन' से करते है । न केवल इस पुस्तक के प्रथम खण्ड के प्रथम अध्याय, जो इसके अति महत्वपूर्ण अध्यायो मे गिना जाता है, का शीर्षक "Of the Division of Labour है बल्कि दूसरे एव तीसरे अध्याय की विषय–सामग्री भी श्रम–विभाजन से सम्बन्ध रखती है ।

---

9 "Origin of national wealth lies not in foreign trade and land but in labour Smith A

श्रम–विभाजन से एडम स्मिथ का आशय विभिन्न व्यवसायो (trades) एव श्रमिको के पृथक्करण के विभिन्न पहलुओ से है । वे श्रम–विभाजन को सभ्य समाज का एक आवश्यक लक्षण मानते है जिसका उद्भव एव विकास विनिमय की अनिवार्यता एव स्वाभाविक प्रवृत्ति से हुआ है । उन्होने इसे श्रमिको की परस्पर सहयोग एव अपने साथियो की मदद करने की एक सतत आवश्यकता एव सामाजिक सहकारिता माना है ।[10]

श्रम-विभाजन के लाभ- एडम स्मिथ ने श्रम–विभाजन के तीन प्रमुख लाभ गिनाये है । ये निम्नाकित है–

(1) **निपुणता-** जब कोई श्रमिक एक ही कार्य बार–बार करता है तो वह उसमे निपुणता हासिल कर लेता है ।[11]

(2) **समय की बचत-** श्रम–विभाजन के कारण श्रमिक को बार–बार अपना कार्य, कार्य–स्थल एव यत्र तथा उपकरण नही बदलने पड़ते है । इससे समय की बचत होती है ।

(3) **आविष्कार-** श्रम–विभाजन से श्रमिक कार्य एव मशीनो के सचालन की बारीकिया जान लेता है तथा उसका मस्तिष्क सदैव उन बाधाओ एव दोषो को दूर करने के उपाय सोचता रहता है जो उसकी कार्य–दक्षता मे वृद्धि पर रोक लगाते है । इससे नये–नये आविष्कारो की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है ।

जैसा कि एडम स्मिथ ने उल्लेख किया है, उपर्युक्त तीनो लाभो के कारण उत्पादन मे तेजी से वृद्धि होती है और राष्ट्र समृद्ध होता है । उन्होने बताया कि श्रम–विभाजन से श्रम की कार्यकुशलता मे परिमाणात्मक एव गुणात्मक सुधार होता है । आलपिन निर्माण का उदाहरण देते हुए उन्होने समझाया कि श्रम–विभाजन के कारण ही एक श्रमिक औसत आकार के 4800 आलपिन बनाने मे समर्थ हो जाता है जो अन्यथा उतने ही समय मे 20 अथवा एक भी आलपिन का निर्माण नही कर पाता । इस प्रकार उन्होने बताया कि श्रम–विभाजन के कारण श्रमिको की कार्य दक्षता 240 गुणा से 4800 गुणा तक अधिक हो जाती है । इसी से उद्योग, राष्ट्र एव व्यापार की समृद्धि का मार्ग खुलता है । उनके ये विचार मण्डेविले के "The Fable of bees" से प्रभावित थे ।

श्रम-विभाजन के दोष- एडम स्मिथ श्रम–विभाजन के दोषो से भी भली–भाति परिचित थे । उन्होने बताया कि श्रम–विभाजन के लिये समाज को बौद्धिक, सामाजिक एव नैतिक मूल्यो की ऊँची लागत चुकानी पडती है ।

---

10 "Man has almost constant occasion for the help of his brethren, and it is in vain for him to expect it from their benevolence only" Smith A

11 Repetition brings improvement and practice makes a man perfect "

इससे श्रम की गतिशीलता पर रोक लग जाती है । लम्बे समय तक लगातार एक ही कार्य करते रहने से उनका जीवन नीरस हो जाता है, वे कार्य के प्रति उदासीन हो जाते है । उनकी बुद्धि काम मे लेने की आदत समाप्त हो जाती है और वे ऐसे मूर्ख बन जाते है जैसा किसी भी श्रमिक के लिये बनना सम्भव है ।[12] और प्रत्येक सभ्य समाज मे तब तक श्रम–विभाजन के कारण बेचारे श्रमिको की आवश्यक रूप से ऐसी ही दुर्दशा होती जाती है जब तक वहा की सरकार इसे रोकने का प्रयास नही करती है ।

श्रम-विभाजन की सीमा- यद्यपि, श्रम–विभाजन से श्रम की कार्य दक्षता मे तीव्र वृद्धि होती है और राष्ट्र की सम्पन्नता तेजी से बढ़ती है किन्तु, एडम स्मिथ के अनुसार असीमित मात्रा मे श्रम–विभाजन नही किया जा सकता । उनके मतानुसार निम्नांकित घटक श्रम–विभाजन की सीमा निर्धारित कर देते है–

(1) श्रमिक द्वारा उत्पादित वस्तु का बाजार विस्तार- यह बाजार जितना विस्तृत होता है, उसके उत्पादन मे श्रम–विभाजन लागू करने की सम्भावना उतनी ही ज्यादा रहती है । बाजार विस्तार के अभाव मे कोई भी श्रमिक स्वय को केवल एक ही पूर्ण अथवा अधूरे कार्य के प्रति समर्पित नही रख सकता । किसी वस्तु का बाजार विस्तार मुख्यत. विनिमय सुविधाओ, परिवहन एव सचार– साधनो, जनसख्या एव पूजी–सचय पर निर्भर करता है । अत ये सभी घटक श्रम–विभाजन की सीमा निर्धारित कर देते है ।

(2) उत्पत्ति का पैमाना- वस्तु विशेष की उत्पत्ति का पैमाना (scale of production) जितना बड़ा होता है उसके उत्पादन मे श्रम–विभाजन अपनाने की सम्भावनाये उतनी ही ज्यादा एव अच्छी होती है । अर्थात् जब किसी वस्तु का उत्पादन छोटे पैमाने पर किया जाता है तो उसमे श्रम–विभाजन लागू करना सम्भव नही होता है ।

(3) पूंजी की पर्याप्तता- श्रम–विभाजन के लिये बड़ा पैमाना और बड़े पैमाने के लिये पर्याप्त मात्रा मे पूजी की आवश्यकता होती है । अत पिछड़े समाजो, जिनमे पूजी का अभाव है, मे सामान्यतया श्रम–विभाजन का स्तर नीचा ही बना रहता है ।

(4) औद्योगिक विस्तार- श्रम–विभाजन तभी सम्भव है जब किसी उद्योग का लगातार विस्तार होता रहे ।

(5) श्रम एवं विनिमय की स्वतंत्रता- इन पर रोक से श्रम–विभाजन का स्तर गिर जाता है ।

---

12 "He naturally becomes as stupid and ignorant as it is possible for human creature to become." -Smith A

(6) **व्यवसाय की प्रकृति**– सीमित एव मौसमी आवश्यकताओ की पूर्ति करने वाले व्यवसायो मे श्रम–विभाजन सम्भव नही हो पाता है।

मूल्यांकन– श्रम–विभाजन सम्बन्धी विचार एडम स्मिथ के मौलिक विचार नही थे। जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, इन पर मण्डेविले के आर्थिक एव दार्शनिक चिंतन का प्रभाव था। उनसे प्राचीन विचारक भी श्रम–विभाजन एव उसकी महत्ता से अनभिज्ञ नही थे। किन्तु, एडम स्मिथ की व्याख्या इतनी पूर्ण एव सामयिक थी कि इसका विवेचन उनके आर्थिक विचारो का एक अभिन्न अग बन गया।

4 **मुद्रा (Money)**

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रथम खण्ड के चौथे अध्याय मे एडम स्मिथ ने मुद्रा विषयक बातो का उल्लेख किया है। इनमे मुद्रा के उद्‌भव, विकास कार्यों, महत्ता एव प्रकृति सम्बन्धी बाते विशेषत उल्लेखनीय है। उनके अनुसार वस्तु–विनिमय की कठिनाइया दूर करने के लिए सामूहिक प्रेरणा एव स्वाभाविक क्रिया से मुद्रा का जन्म हुआ। श्रम विभाजन अपनाने के पश्चात् जब सभी व्यक्ति व्यापारी बन गये तो वाणिज्य को एक सार्वभौमिक उपकरण के रूप मे मुद्रा की आवश्यकता अनुभव हुई और जैसे–जैसे यह आवश्यकता बढ़ती गयी मुद्रा का विकास होता गया। उन्होने मुद्रा के दो प्रधान कार्यों की महत्ता स्वीकार की और कहा कि विनिमय के माध्यम एव मूल्य के मापक के रूप मे मुद्रा ने मानव समाज को वस्तु–वि नेमय की तथाकथित कठिनाइयो से छुटकारा दिलाया है। उनके अनुसार मुद्रा ने उद्योग, व्यापार एव विनिमय का क्षेत्र विस्तृत किया है। किन्तु, उन्होने मुद्रा को वास्तविक धन नही माना और कहा कि 'मुद्रा धन नही बल्कि मुद्रा की क्रय–शक्ति धन है और अपनी क्रय–शक्ति के कारण ही मुद्रा मूल्यवान है।'[13] उन्होने श्रमिको, भूमियो एव भवनो द्वारा उत्पादित वस्तुओ को ही किसी राष्ट्र का असली धन माना, जिसका क्रय–विक्रय मुद्रा द्वारा किया जाता है। उनके अनुसार प्रचलन मे मुद्रा की मात्रा आतरिक आर्थिक क्रियाओ के स्तर पर निर्भर करती है। अत किसी देश मे उतनी ही मुद्रा प्रचलन मे रहनी चाहिये जितनी आवश्यक हो। उन्होने सुझाव दिया कि आधिक्य मुद्रा (उस समय धातु मुद्राये चलन मे थी) विदेशो को निर्यात कर देनी चाहिये। इसी आधार पर उन्होने वणिकवादियो के मुद्रा सम्बन्धी विचारो की आलोचना की जिन्होने स्वर्ण एव रजत मुद्राओ के सग्रह को राष्ट्र की समृद्धि का सूचक माना था।

किन्तु, एडम स्मिथ ने एक भिन्न दृष्टिकोण अपनाते हुए मुद्रा को एक्‍म अनुत्पादक बताया और माना कि मुद्रा से अधिक बेकार वस्तु समाज

13 " Wealth does not consist in money but in what money purchases and is valuable only for purchasing " Smith A

मे कोई और नही हो सकती । उन्होने मुद्रा की तुलना एक सडक से की और कहा कि ''स्वर्ण एव रजत मुद्राये उस सडक के समान अनुत्पादक है जिससे होकर राष्ट्र का सारा उत्पादन तो गुजर जाता है किन्तु स्वय उस सड़क पर अनाज का एक भी दाना अथवा घास का एक भी तिनका नही उगता ।' [14]

5 मूल्य की अवधारणा एवं सिद्धान्त (Concept and the theory of value)

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रथम खण्ड के पाचवे छठे एव सातवे अध्याय मे एडम स्मिथ ने मूल्य विषयक बातो का विवेचन किया है । यद्यपि, मूल्य–सिद्धान्त उनकी रचना एव आर्थिक चिन्तन की प्रमुख विषय–वस्तु नही है तथापि उन्होने इसकी राष्ट्रो के धन की प्रकृति एव कारणो की खोज' मे उपयोगी भूमिका स्वीकार की है । इसकी सहायता से उन्होने बाजार तत्र (market mechanism) की व्याख्या की है, जो आर्थिक समृद्धि प्राप्त करने की दिशा मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है । इस दृष्टि से मूल्य सिद्धान्त उनके 'समग्र आर्थिक विश्लेषण' का एक महत्त्वपूर्ण भाग है जिसके द्वारा एक मुक्त अर्थव्यवस्था (Laissezfaire economy) की कार्य–प्रणाली को भली–भाति समझा जा सकता है । किन्तु, जैसा कि एरिक रोल ने कहा है, ''एडम स्मिथ का मूल्य सिद्धान्त अस्पष्ट एव भ्रातिमूलक है और उसे सार रूप मे व्यक्त करना आसान नही है ।''[15] यद्यपि, इस कथन मे सत्याश है तथापि एडम स्मिथ के मूल्य सिद्धान्त की प्रमुख बातो को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है–

मूल्य के आधार– प्रो एडम स्मिथ के अनुसार किसी वस्तु के मूल्य के दो प्रमुख आधार–उपयोगिता (utility) एव दुर्लभता (scarcity) है । इन्ही आधारो पर उन्होन प्रयोग–मूल्य (value-in use) एव विनिमय मूल्य (value in-exchange or Exchangeable value) तथा इन दोनो के मध्य पाये जाने वाले अन्तर का स्पष्टीकरण किया । वस्तु के प्रयोग–मूल्य को उन्होने कुल उपयोगिता एव विनिमय मूल्य को विनिमय–शक्ति (power of purchasing goods) के परिप्रेक्ष्य मे देखा और कहा कि ये दोनो, स्वतत्र है और साथ–साथ नही चलते अर्थात् यह आवश्यक नही कि जिस वस्तु का प्रयोग मूल्य ऊँचा हो उसका विनिमय मूल्य भी अधिक हो । इसी आधार पर उन्होने 'पानी' एव 'हीरे' के मूल्य मे अन्तर का स्पष्टीकरण किया ।[16] किन्तु, उनका यह

---

14 "The gold and silver money which circulates in any country may very properly be compared to a highway which while it circulates and carries to market all the grass and corn of the country produces itself not a single pile of either" Smith A

15 "It is not easy to give a summary account of Adam Smith s ambiguous and confused theory of value." Roll A.

16. "...Nothing is more useful than water but it will scarce purchase anything A diamond has scarce any value-in-use, but a very great quantity of other goods may frequently be had in exchange for it." -Smith A

स्पष्टीकरण पूर्ण एव सही नही था ।

मूल्य सिद्धान्त- एडम स्मिथ का मूल्य सिद्धान्त विनिमय मूल्य की अवधारणा पर आधारित है । इसको निम्नांकित तीन भागो मे विभाजित किया जा सकता है–

(1) *मूल्य का वास्तविक माप (real measure of value) क्या है ?*
(2) मूल्य के प्रमुख घटक (components of value) कौन–कौन से है और
(3) *मूल्य क्यो बदलता है ? (why value changes ?)*
अब हम, सक्षेप मे, इन तीनो का विवेचन करेगे–

(1) मूल्य का वास्तविक माप- एडम स्मिथ के मतानुसार किसी वस्तु को प्राप्त करने मे लगने वाला श्रम ही उस वस्तु के मूल्य का माप, कारण और उत्पत्ति है ।[17] वे इसे वस्तु के मूल्य का सार्वभौमिक, एक मात्र एव सही माप बताते है और कहते है कि इसी के आधार पर हम विभिन्न वस्तुओ के मूल्यो की तुलना कर सकते हैं । उन्ही के शब्दो मे, ''उदाहरण के लिये, यदि शिकारियो के देश मे एक उदबिलाव मारने मे एक हरिण को मारने की तुलना मे दुगुना श्रम व्यय करना पडता है तो एक उदबिलाव के बदले विनिमय मे दो हरिण मिल सकते है । यह स्वाभाविक है कि दो दिन अथवा दो घण्टे के श्रम का मूल्य एक दिन अथवा एक घण्टे के श्रम के मूल्य से दुगुना होना चाहिये ।'' एडम स्मिथ के मूल्य निर्धारण के श्रम लागत सिद्धान्त सम्बन्धी ये विचार ही कार्ल मार्क्स के समाजवादी आर्थिक चितन के पूर्वाधार बने ।

(2) मूल्य के प्रमुख घटक- मूल्य के प्रमुख घटको से उनका आशय प्राकृतिक कीमत (natural price) अथवा सामान्य कीमत (normal price) के घटको से है । आदिम समाज (primitive society) मे श्रम ही उत्पादन का एक मात्र साधन था अत वस्तुओ के उत्पादन की श्रम–लागत के आधार पर ही उनके सापेक्षिक मूल्य निर्धारित होते थे । इस समाज में श्रमिको को भूमिपतियो और पूजीपतियो के साथ अपना उत्पादन नही बाटना पडता था । किन्तु, एडम स्मिथ के अनुसार, कालान्तर मे उत्पादन लागत श्रम–नियत्रित नही रही अत वस्तुओ के मूल्य निर्धारण मे श्रम लागत के स्थान पर उत्पादन लागत महत्त्वपूर्ण हो गयी । इसी आधार पर एडम स्मिथ ने 'मूल्य का उत्पादन लागत सिद्धान्त' *(Cost of Production theory of value)* प्रतिपादित किया और कहा कि कुल उत्पादन लागत मे श्रम के अलावा भूमि का लगान और पूजी का ब्याज एव लाभ भी सम्मिलित रहते है (ज्ञातव्य है कि एडम स्मिथ ने

---

17 "Labour, therefore, is the real measure of exchangeable value of all commodities.. the real price of everything, what every thing really costs to the man who wants to acquire it, is toil and trouble of acquiring it." -Smith A

साहस को उत्पादन के पृथक् साधन के रूप मे मान्यता नही दी) । दूसरे शब्दो मे, उन्होने श्रमिको के अलावा दूसरे व्यक्तियो के श्रम को भी वस्तुओ की उत्पादन लागत का प्रमुख निर्धारक माना और श्रम–विभाजन की महत्ता स्वीकार की । इस प्रकार एडम स्मिथ ने मूल्य के तीन प्रमुख घटक– मजदूरी, लगान और लाभ (मय ब्याज) स्वीकार किये और कहा कि दीर्घकाल मे वस्तुओ का श्रम नियन्त्रित मूल्य (labour command value) इनकी प्राकृतिक दरो के बराबर होता है ।

(3) मूल्य क्यों बदलता है– मूल्य के दो रूप है,– एक– बाजार मूल्य (mark*t value) तथा दूसरा, प्राकृतिक मूल्य (natural value)

(i) बाजार मूल्य– बाजार मूल्य से आशय वस्तुओ की बाजार कीमत या वास्तविक प्रचालित कीमत से है जिस पर उनका क्रय–विक्रय होता है । इसका निर्धारण वस्तुओ की पूर्ति और उनकी प्रभावोत्पादक माग (effectual demand) द्वारा किया जाता है । यह मूल्य वस्तुओ के प्राकृतिक मूल्य (जिसका निर्धारण उनकी उत्पादन लागत से होता है) से कम अथवा ज्यादा हो सकता है किन्तु इसकी प्रवृत्ति निरन्तर प्राकृतिक मूल्य की ओर लौटने की रहती है । बाजार मूल्य अति अल्पकालीन मूल्य होता है और इसके निर्धारण मे माग की शक्ति सक्रिय भूमिका निभाती है ।

(ii) प्राकृतिक मूल्य– प्राकृतिक मूल्य से आशय वस्तुओ की सामान्य कीमत से है यह मूल्य वस्तुओ की उत्पादन लागत के बराबर होता है । यह मूल्य कभी प्रचलित नही रहता अत इस पर वस्तुओ का क्रय–विक्रय नही होता है । यह दीर्घकालीन मूल्य होता है और ऐसी आशा की जाती है कि दीर्घकालन मे वस्तुओ का बाजार मूल्य भी प्राकृतिक मूल्य के बराबर होगा । यह मूल्य स्थायी मूल्य होता है किन्तु सदैव स्थिर नही रहता है । सामाजिक दशाओ, उत्पादन ढाचे, उत्पादन विधियो, आर्थिक प्रणाली के स्वरूप, तकनीकी प्रगति के स्तरो आदि मे परिवर्तन से वस्तुओ की उत्पादन लागत बदल जाती है, अत प्राकृतिक मूल्य भी बदल जाता है । एडम स्मिथ ने इसे ही वस्तुओ का वास्तविक मूल्य (real value) कहा और इसी आधार पर मूल्य सिद्धान्त के प्रतिपादन मे माग की शक्ति को स्थिर एव गौण तथा वस्तुओ की उत्पादन लागत अर्थात् पूर्ति की शक्ति को प्रमुख स्थान दिया ।

6 वितरण का सिद्धान्त (Theory of Distribution)-

यद्यपि, एडम स्मिथ ने वितरण के किसी एकीकृत सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया किन्तु, 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रथम खण्ड के शेष तीन अध्यायो मे उन्होने वितरण सम्बन्धी जो विचार प्रस्तुत किये है, उनके आधार

पर उनके वितरण सम्बन्धी सिद्धान्त का खाका खीचा जा सकता है। उनका यह सिद्धान्त मुख्यत निजी सम्पत्ति उत्पादन के साधनो पर निजी स्वामित्व एव मुद्रा के प्रयोग की मान्यताओ पर आधारित है। इस सिद्धान्त के अनुसार सामूहिक उत्पादन मे से श्रम को मजदूरी भूमि को लगान और पूजी को लाभ मिलता है। अब हम सक्षेप मे इन तीनो का विवेचन करेगे–

(1) मजदूरी (Wages) मजदूरी के बारे मे एडम स्मिथ के विचार सुस्पष्ट एव सुनिश्चित नही थे। तथापि उन्होने मजदूरी विषयक अनेक बातो का उल्लेख किया जिन पर बाद मे विकसित सिद्धान्त एव विचार आधारित है। इनमे निम्नाकित मुख्य है–

(a) मजदूरी का आशय एडम स्मिथ ने मजदूरी को श्रम के विक्रय से प्राप्त मूल्य' (value secured by selling the labour) बताया।

(b) निर्धारण उनका मानना था कि मजदूरी का निर्धारण श्रमिको एव नियोक्ताओ के मध्य प्रतिस्पर्धा एव उनकी पारस्परिक सौदेबाजी की शक्ति पर निर्भर करता है। उन्होने कहा कि श्रमिक ऊची मजदूरी चाहते है जबकि नियोक्ता उन्हे कम से कम मजदूरी देना चाहते है। सख्या मे सीमित होने के कारण सिद्धान्त रूप मे असगठित होने के बावजूद व्यवहार मे नियोक्ता शक्तिशाली होते है और श्रमिक सख्या मे अधिक होने के कारण सिद्धान्त रूप मे सगठित होने के बावजूद व्यवहार मे असगठित और कमजोर रहते है। अत नियोक्ताओ की तुलना मे श्रमिको की सौदेबाजी की शक्ति (bargaining capacity) दुर्बल होती है और नियोक्ता उन्हे उतनी ही मजदूरी देते है जिससे वे अपने परिवारो का जीवन–निर्वाह व्यय मात्र चला पाते है। यह मजदूरी की न्यूनतम दर होती है।

(c) सिद्धान्त– मजदूरी निर्धारण की सभी प्रचलित मान्यताओ धारणाओ एव सिद्धान्तो को अस्वीकार कर एडम स्मिथ ने मुख्यत इसके दो सिद्धान्तो की ओर इगित किया–

(i) मजदूरी का माग और पूर्ति सिद्धान्त (Demand & Supply Theory of wages) इस सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य मे उनका मानना था कि मजदूरी श्रम की माग और पूर्ति की दशाओ पर निर्भर करती है और ये दोनो शक्तिया ही मजदूरी दर का निर्धारण करती है। उन्होने बताया कि श्रम की माग राष्ट्रीय सम्पत्ति पर एव पूर्ति जीवन–निर्वाह की औसत कीमत (Average price of provisions) पर निर्भर करती है।

(ii) मजदूरी कोष सिद्धान्त (Wage Fund Theory) एडम स्मिथ ने कहा कि मजदूरी मजदूरी कोष पर और यह कोष राष्ट्रीय सम्पत्ति पर निर्भर करता है। अत राष्ट्र का धन बढ़ने से ही मजदूरी–कोष एव फलस्वरूप श्रम के पारिश्रमिक मे वृद्धि हो सकती है। उन्होने बताया कि किसी देश मे मजदूरी

दरो का समायोजन स्वत ही मजदूरी–कोष के साथ हो जाता है। यदि किसी समय विशेष मे मजदूरी–कोष की तुलना मे श्रम–शक्ति कम होती है तो श्रमिको को ऊँचा पारिश्रमिक मिलता है और जनसख्या बढ़ने लगती है तथा यह उसी अनुपात मे बढ़ती है जिस अनुपात मे अर्थव्यवस्था को श्रम–शक्ति की आवश्यकता होती है। अत अन्तत श्रम के अभाव की समस्या समाप्त हो जाती है। ऐसा ही समायोजन श्रम की पूर्ति अधिक होने पर अन्तत हो जाता है।

अन्य-

(i) एडम स्मिथ ने मजदूरी की दरो मे क्रमश वृद्धि को अर्थव्यवस्था के लिए हितकर बताया।

(ii) उन्होने मजदूरी की दरो मे भिन्नता स्वीकार की और कहा कि विभिन्न रोजगारो की प्रकृति मे भिन्नता एव सरकारी नीतियो के कारण अलग–अलग कार्यों मे अलग–अलग श्रमिको को भिन्न–भिन्न मजदूरिया मिलती है।

(iii) एडम स्मिथ गरीब श्रमिको के प्रति हमदर्द थे। उन्होने कहा कि जो दूसरो को भोजन, वस्त्र और आवास देते है उन्हे भी उनका न्यायोचित हिस्सा मिलना चाहिये। उन्होने बताया कि जिस राष्ट्र का श्रमिक निर्धन है वह उन्नति नही कर सकता।

(2) लाभ (Profit)- एडम स्मिथ ने 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रथम खण्ड के नवे अध्याय मे लाभ–विषयक विचार प्रस्तुत किये है। उन्होने पूजीगत कोषो के स्वय द्वारा प्रयोग की प्राप्तियो को लाभ कहा और माना कि क्योकि एक साहसी उत्पादित वस्तुओ की बिक्री से पूर्व उन वस्तुओ के निर्माण मे उत्पादन के साधनो को रोककर रखता है तथा स्वय द्वारा काम पर लगाये गये श्रम के उत्पादन का एक भाग पाने मे सफल हो जाता है, इसलिये लाभ प्राप्त करता है। इस प्रकार एडम स्मिथ ने लाभ को एक विशिष्ट सस्थागत व्यवस्था का परिणाम माना। उन्होने कहा कि लाभ पूजी पर कुल प्रतिफल के बराबर होता है और ब्याज लाभ का एक घटक है। उनके मतानुसार लाभ की औसत दर ज्ञात नहीं की जा सकती क्योकि, जैसे ही वस्तुओ की बाजार कीमत बदलती है, लाभ दर बदल जाती है। फिर भी, उन्होने माना कि लाभ दर कम से कम इतनी अवश्य होनी चाहिये कि पूजी विनियोजन से होने वाली हानि समाप्त की जा सके।

एडम स्मिथ ने बताया कि लाभ प्राकृतिक कीमत का एक अवयव है और इस कीमत पर मजदूरी की दर मे परिवर्तन की अपेक्षा लाभ–दर मे परिवर्तन का अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर प्रभाव पड़ता है। उनके मतानुसार एक विकासशील अर्थव्यवस्था मे जैसे ही मजदूरियां बढ़ती है लाभ घटते है।

इसी प्रकार उन्होने बताया कि पूजी मे वृद्धि से लाभ–दर गिरती है और विलोमश बढ़ती है । उन्होने राष्ट्रो के धन एव लाभ के बीच प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध माना और कहा कि अनिश्चितता राष्ट्र के धन पूजी, प्रतिस्पर्धा आदि घटको मे परिवर्तन से लाभ–दर बदल जाती है और भिन्न–भिन्न व्यवसायो मे लाभ–दर मे अन्तर पाया जाता है । जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है उन्होने ब्याज को पूजी के पूर्तिकर्ता की आय बताया और इसे लाभ का ही एक भाग माना । अत उसका पृथक् विवेचन नही किया ।

(3) लगान (Rent) वेल्थ ऑफ नेशन्स के प्रथम खण्ड के अतिम अध्याय मे एडम स्मिथ ने अपने लगान–विषयक विचार प्रस्तुत किये है । भूमि के लगान के विषय मे उनका मानना था कि 'यह भूमि के प्रयोग के बदले चुकायी गयी कीमत एव एकाधिकारी आय है' ।[18] उनके अनुसार यह भूमिपति की आय है और इसका भुगतान काश्तकार करते है । काश्तकारो को अपनी मजदूरी एव लाभ पर जो आधिक्य मिलता है वह भूमिपति लगान के रूप मे बलात् वसूल कर लेता है ।

एडम स्मिथ ने लगान को प्रकृति की उदारता एव दया का पुरस्कार बताया और कहा कि भूमि की स्थिति एव उर्वरा–शक्ति मे भिन्नता के आधार पर लगान मे अन्तर पाया जाता है और श्रेष्ठ भूमियो के मालिको को ऊँचे लगान मिलते है ।

लगान एव कीमत के बीच सम्बन्ध के बारे मे एडम स्मिथ के विचार अस्पष्ट थे । वे कही कीमत को लगान का एक कारण (अर्थात् लगान को मजदूरी एव लाभ के साथ प्राकृतिक कीमत का एक घटक मानते है) तो कहीं एक परिणाम मानते है ।

7. पूंजी का सिद्धान्त (Theory of capital)

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के द्वितीय खण्ड मे एडम स्मिथ का पूजी–विषयक आर्थिक चिंतन है । इसमे पूजी की प्रकृति संचय, प्रयोग एवं महत्ता सम्बन्धी बातो के अलावा बचत एव विनियोग सम्बन्धी विचार महत्त्वपूर्ण है । उनके मतानुसार पूजी से आय का सृजन होता है और यह उत्पादक श्रम, श्रम–विभाजन एव बचत का परिणाम है । बचत की महत्ता का उल्लेख करते हुए उन्होने लिखा है कि मितव्ययिता ही पूजी मे वृद्धि का तात्कालिक कारण है इससे पूजी बढ़ती है और अपव्यय से घटती है ।[19] उन्होने अपव्यय

---

18 "The rent of land, therefore considered as the price paid for the use of land, is naturally a monopoly price." Smith A

19 "Parsimony is the immediate cause of increase in capital. capitals are increased by parsimony and diminished by prodigality" -Smith A

करने वालो को समाज का दुश्मन एव मितव्ययियो को शुभचिंतक बताया ।[20]

एडम स्मिथ ने पूजी का स्थिर (fixed) यथा– मशीन, उपकरण आदि एव परिसचारी (circulating) यथा– मुद्रा, कच्चा माल आदि मे विभाजित किया और कहा कि इसकी महत्ता श्रम को गतिमान बनाये रखने मे है । उनके अनुसार प्रथम प्रकार की पूजी स्वामित्व परिवर्तन किये बिना आगम प्रदान करती है जबकि परिसचारी पूजी स्वामित्व परिवर्तन के पश्चात् प्रतिफल देती है । उन्होने, पूजी को आर्थिक समृद्धि एव राष्ट्रो के धन का एक वास्तविक एव उपयोगी स्रोत अथवा फव्वारा बताते हुए कहा कि ''देश के उत्पादन मे श्रम–विभाजन एव मुद्रा के बाद पूजी ही सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।'' वे इसे औद्योगिक विकास की एक सीमा मानते है । उनके मतानुसार पूजी का कृषि, उद्योग और व्यापार (फुटकर एव थोक) के क्षेत्र मे उपभोग, उत्पादन, एवं विनिमय की क्रियाओ मे उपयोग हो सकता है । उन्होने समाजिक दृष्टि से, कृषि क्षेत्र मे पूजी के प्रयोग को सबसे महत्त्वपूर्ण माना एव उपयोगी बताया तथा कहा कि पूजी मे वृद्धि करने एव उसके रख–रखाव की लागत घटाने से समाज का शुद्ध आगम बढ़ता है एव विलोमश घटता है । अत: उन्होने पूजी मे लगातार वृद्धि का समर्थन किया और श्रम की गतिशीलता एव उत्पादकता मे वृद्धि के लिए पूजी को आवश्यक बताया ।

8. **आर्थिक स्वतंत्रता एवं राज्य के कार्य (Economic Liberty and Functions of State)**

(1) आर्थिक स्वतंत्रता- एडम स्मिथ आर्थिक स्वतत्रता के प्रबल समर्थक थे । उन्होने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति अपने आर्थिक हित का सबसे अच्छा निर्णायक है और वह जानता है कि उसे क्या करना चाहिये और क्या नही करना चाहिये ? अत. आर्थिक क्रियाओ एव जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप अहितकर है । फलत. जब तक कोई व्यक्ति किसी कानून का उल्लघन नही करता तब तक उसे अपने तरीके से जीने एव अपनी आर्थिक स्वतत्रता के उपभोग की छूट मिलनी चाहिये । इस छूट को उन्होने प्राकृतिक न्याय एव स्वतत्रता के अनुकूल बताया और कहा कि इससे राष्ट्रीय समृद्धि बढ़ती है और न केवल वैयक्तिक अपितु सामाजिक हित भी अधिकतम होता है ।

राज्यीय हस्तक्षेप के विपक्ष में तर्क (Arguments against state intervention)- उपर्युक्त विचारो से स्पष्ट है कि, एडम स्मिथ आर्थिक क्रियाओ के नियमन, नियत्रण और सचालन मे राजकीय हस्तक्षेप के विरुद्ध थे । सक्षेप मे, उन्होने अपने इन विचारो की पुष्टि मे निम्नाकित तर्क दिये–

(i) **अपव्ययी प्रवृत्तियाँ** (Spendthrift propensities)- उन्होने बताया कि यदि

---

20. "Every prodigal is a public enemy and every frugal man is a benefactor" -Smith A.

सरकार ने *मानवीय आर्थिक क्रियाओ मे* हस्तक्षेप कर एक व्यापारी का कार्य भी किया तो लापरवाही एवं फिजूलखर्ची से सामाजिक कोषो का दुरुपयोग होगा और अपव्ययी प्रवृत्तिया बढ़ेगी।

(ii) **पार्थक्य** (Remoteness)- सरकार अथवा राज्य वस्तुओ के वास्तविक उत्पादको से बहुत दूर रहता है अत. उनकी आवश्यकताओ का सही–सही *अनुमान नही लगा पाता।*

(iii) **प्रशासनिक अदक्षता (administrative inefficiency)**- एडम स्मिथ ने कहा कि राजकीय हस्तक्षेप से प्रशासनिक अकुशलता बढ़ जायेगी। उन्होने कहा कि सरकारीतंत्र भ्रष्टाचार, पक्षपात, एवं लालफीताशाही से ग्रसित रहता है। अत. वह जनहित के प्रति उदासीन रहता है। इसीलिये उन्होने कहा कि *लोक–सेवको (अर्थात् सरकारी कर्मचारियो) को सरकारी कोषागार से वेतन न* दिया जाकर उन लोगो द्वारा दिया जाना चाहिये जो उनकी सेवाओ से लाभान्वित होते है। इससे वे अपने काम से अधिक वेतन नही ले पायेगे।

(2) राज्य के कार्य- राज्य के कार्यों का उल्लेख करते हुए एडम स्मिथ ने बताया कि राज्य एक साथ कुशल शासक एवं चतुर व्यापारी की भूमिका नही *निभा सकता, अतः श्रम–विभाजन के सिद्धान्त के अनुसार राज्य को* केवल एक ही कार्य (शासन) करना चाहिये एवं व्यापारी के कार्य उसे अपने नगारिको को सौप देने चाहियें। दूसरे शब्दो मे, जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, उन्होने निर्बाधावाद की नीति का समर्थन किया और कहा कि राज्य को केवल वे ही कार्य करने चाहिये जो देशवासी स्वयं नही कर सके। इस *आधार पर उन्होने राज्य के निम्नांकित तीन कार्य बताये–*

(i) बाह्य आक्रमण से देश की सुरक्षा करना,
(ii) आतंरिक शाति एवं सुव्यवस्था की स्थापना के लिए कानून एवं न्याय की व्यवस्था करना और
(iii) लोकोपयोगी कार्यों एवं संस्थाओ की स्थापना एवं रख रखाव करना। *इस श्रेणी मे एडम स्मिथ ने निम्नाकित तीन कार्य बताये–*

(a) व्यापार एवं वाणिज्य के विकास के लिये लोक–निर्माण संस्थाये–यथा, नहरो, सड़को, बांधो आदि का निर्माण एवं विदेशो मे दूतावास खोलने का कार्य।

(b) युवको की शिक्षा के प्रसार के लिये शिक्षण–संस्थाये खोलना और

(c) जनता की शिक्षा के लिए चर्च खोलना।

राज्य के उपर्युक्त कार्यों के अलावा एडम स्मिथ ने, विशेष दशाओ मे, विदेशी व्यापार, बैकिंग संस्थाओ और ब्याज दर को राज्य द्वारा नियंत्रित एवं संचालित करने तथा गरीबो को निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करने के कार्यों

का समर्थन किया और कहा कि जिन लोगो को राज्य के कार्यों से प्रत्यक्ष लाभ मिलता है उन्हे कुछ वित्तीय भार वहन करना चाहिये। राज्य के उपर्युक्त कार्यों के परिप्रेक्ष्य मे एडम स्मिथ ने कहा कि "यद्यपि, यह सम्भव है कि राज्य के इन कार्यों से कुछ व्यक्तियो की आर्थिक स्वतत्रता का हनन हो, किन्तु, कुछ लोगो को स्वतत्रता देकर शेष सम्पूर्ण समाज की अनदेखी नही की जा सकती।"

9. **स्वतंत्र व्यापार एवं संरक्षण (Free Trade and Protection)-**

'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के चौथे खण्ड मे एडम स्मिथ के विदेशी व्यापार सम्बन्धी आर्थिक विचार है। विदेशी व्यापार के क्षेत्र मे वे स्वतत्र व्यापार के कट्टर समर्थक एव सरक्षण की नीति के विरोधी थे। उनका कहना था कि सोना एव चादी इकट्ठी करने के लिए सरक्षण की नीति नही अपनायी जानी चाहिये, क्योकि ये दोनो धातुये भी अन्य वस्तुओ की भाति स्वतत्र विदेशी व्यापार से आसानी से उपलब्ध हो जाती है। अत विदेशी व्यापार राजकीय हस्तक्षेप से मुक्त एव स्वाभाविक होना चाहिये और इसे किसी एक देश द्वारा दूसरे देश पर जबरदस्ती नही लादना चाहिये। उन्होने निम्नाकित आधारो पर स्वतत्र व्यापार की नीति का समर्थन अथवा सरक्षण की नीति का विरोध किया–

(1) स्वतत्र व्यापार मे सब उद्योगो का एव एक साथ सतुलित विकास होता है जबकि सरक्षण से कुछेक उद्योगो का तो विकास होता है, किन्तु अधिकाश उद्योग, जिनको सरक्षण नही मिलता, पिछड जाते हैं।

(2) सरक्षण से राष्ट्र का धन एव पूजी नही बढते बल्कि केवल उनका प्रवाह बदलता है। अत यह अनावश्यक हस्तक्षेप है।

(3) स्वतत्र व्यापार से प्रादेशिक श्रम–विभाजन के लाभ मिलते है और वस्तुओ का विभिन्न देशो के बीच न्यायोचित उत्पादन एव वितरण हो जाता है जबकि सरक्षण मे इन सब पर रोक लग जाती है।

(4) स्वतत्र व्यापार से उपभोक्ताओ के हितो की रक्षा होती है और उन्हे सस्ती, पर्याप्त एव प्रमाणित वस्तुए मिलती है, जबकि सरक्षण मे वस्तुओ के अभाव की स्थिति बनी रहती है।

(5) स्वतत्र व्यापार से अन्तर्राष्ट्रीय बाजार विकसित होते है जबकि सरक्षण की नीति से वस्तुओ का बाजार सकीर्ण हो जाता है।

किन्तु, एडम स्मिथ प्रत्येक दशा मे स्वतत्र व्यापार के समर्थक नही थे। निम्नाकित दशाओ मे, उन्होने, सरक्षण की नीति का समर्थन किया–

(1) **सुरक्षा उद्देश्य**- एडम स्मिथ का कहना था कि "समृद्धि से सुरक्षा बेहतर है।"[21] अत जब सुरक्षा व्यवस्था मजबूत करने के लिए किन्ही उद्योगो

21 "Defence is more importance than opulence" Smith A

को सरक्षण देना आवश्यक हो जाये तो ऐसा ही करना चाहिये ।

(2) प्रतिक्रिया– जब कोई एक देश सरक्षण की नीति का अनुसरण करने लगे तो दूसरे देश भी प्रतिक्रिया स्वरूप ऐसी ही नीति का अनुसरण कर सकते है । इसी प्रकार जब एक देश विनिमय नियत्रण लागू कर देता है तो बदले मे दूसरे देश भी ऐसा ही कर सकते है ।

किन्तु, उपर्युक्त तर्कों के आधार पर कदापि यह निष्कर्ष नही निकाला जा सकता कि वे सरक्षण की नीति के समर्थक थे । वस्तुओ के अभाव एव आधिक्य की समस्याओ से मुक्ति पाने का रास्ता उन्होने स्वतत्र व्यापार मे खोजा और कहा कि जब फ्रास अथवा पुर्तगाल से सस्ते अगूर आयात किये जा सकते है तो स्कॉटलैण्ड मे अगूर की खेती करना एक मूर्खतापूर्ण कदम होगा । उन्होने आगे कहा कि जो परिवार के लिए सही है वही राष्ट्र के लिये सही है । जिस प्रकार एक गृहस्वामी घर मे उन्ही वस्तुओ का निर्माण करता है जिनकी बाजार से खरीद महगी पडती है, दूसरे शब्दो मे वे वस्तुए बाजार से खरीदता है जिनका उत्पादन घर मे महगा पडता है, उसी प्रकार एक राष्ट्र को वे वस्तुए विदेशो से ही मगवानी चाहिये जिनका स्वदेश मे उत्पादन महगा होता है ।

10 लोक वित्त (Public Finance)

वेल्थ ऑफ नेशन्स' के पाचवे खण्ड मे एडम स्मिथ का लोक वित्त विषयक आर्थिक चिंतन है । इसके तीन प्रमुख भाग है–

(1) सार्वजनिक व्यय (Public Expenditure) एडम स्मिथ ने सार्वजनिक व्यय को राज्य के कार्यों के परिप्रेक्ष्य मे देखा और कहा कि रक्षा, न्याय, प्रशासन एव लोक–निर्माण के लिये सरकार को वित्त की आवश्यकता पडती है ।

(2) सार्वजनिक आय (Public Revenue)- सार्वजनिक व्ययो को पूरा करने के लिए सार्वजनिक आय प्राप्त करना आवश्यक है । एडम स्मिथ के अनुसार राज्य की आय के दो प्रमुख स्रोत है– (a) राज्य के स्रोतो से प्राप्त आय और (b) जनता से प्राप्त आय । एडम स्मिथ ने बताया कि प्रथम स्रोत से प्राप्त आय बहुत कम रहती है अत दूसरे स्रोत का सहारा लेना पड़ता है । इस स्रोत से प्राप्त आगम मे करो से प्राप्त आगम सबसे महत्त्वपूर्ण है । अत एडम स्मिथ ने करो का समर्थन किया और कर–प्रणाली के दोषो को न्यूनतम करने के लिए करारोपण के निम्नाकित चार सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया ।

(i) समानता का सिद्धान्त (*Canon of Equality*) इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक देशवासी को अपनी सामर्थ्य एव सरकार से प्राप्त होने वाले लाभो के अनुपात मे सरकार की सहायता के लिए कर देना चाहिये । कर भार के न्यायोचित वितरण की दृष्टि से यह सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण है । इसे भुगतान सामर्थ्य का सिद्धान्त भी कहते है ।

(ii) निश्चितता का सिद्धान्त (Canon of certainty)- इस सिद्धान्त के अनुसार करदाता द्वारा चुकाये जाने वाले कर की राशि, वसूली अवधि, भुगतान विधि आदि पूर्व निश्चित होनी चाहियें। व्यवसाय एव वाणिज्य के विकास के लिए एडम स्मिथ ने करारोपण के इस सिद्धान्त को बहुत उपयोगी बताया।

(iii) सुविधा का सिद्धान्त (Canon of convenience)- इस सिद्धान्त के अनुसार करदाता पर कर तब लगाना व वसूल किया जाना चाहिये जब उसका भुगतान करना करदाता के लिए सुविधाजनक हो। करो से होने वाले कष्ट को न्यूनतम करने के लिए यह सिद्धान्त बहुत उपयोगी है।

(iv) मितव्ययिता का सिद्धान्त (Canon of Economy)- इस सिद्धान्त के अनुसार करो की वसूली की लागत कम से कम होनी चाहिये ताकि करदाताओ द्वारा चुकाये गये कर का ज्यादा से ज्यादा भाग सरकारी खजाने मे पहुच जाये। इस सिद्धान्त के आधार पर ऐसे कर नही लगाये जाने चाहिये जिनका प्रशासनिक व्यय ऊचा एव वास्तविक प्राप्तिया कम हो।

एडम स्मिथ कर-भार (Incidence of Taxation) की अवधारणा से भी परिचित थे और उन्होने सुझाव दिया कि कर उन्ही पर लगने चाहियें जिन पर अतिम रूप से उनका भार डालना है। इस दृष्टि से उन्होने लाभ एव मजदूरी पर कर की अपेक्षा लगान पर कर लगाने की सिफारिश की।

(3) सार्वजनिक ऋण (Public Debt)- एडम स्मिथ ने सार्वजनिक ऋणो की महत्ता स्वीकार की और इनमे वृद्धि के दो प्रमुख कारण बताये– (i) राज्यो का बढ़ता व्यय और (ii) लोगो की उधार देने का सामर्थ्य। उन्होने बताया कि, मुख्यत, सकट काल मे बढ़े हुए सार्वजनिक व्यय की पूर्ति सार्वजनिक ऋणो से की जाती है। इस प्रकार उन्होने सार्वजिनक ऋणो को अनुत्पादक माना और कहा कि इनसे पूंजीगत कोष उत्पादक व्ययो से अनुत्पादक व्ययो मे चले जाते है,अत सार्वजनिक ऋणो से राष्ट्र का धन नही बढ़ता है। उन्होने ऋणो के पुनर्भुगतान से बढ़ने वाले भार के आधार पर भी इन्हे उचित नही माना।

11. आर्थिक विकास सिद्धान्त (Theory of Economic Development)-

यद्यपि, एडम स्मिथ ने आर्थिक विकास के किसी एकीकृत अथवा समन्वित सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया, किन्तु, 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक समृद्धि एव उसे प्रभावित करने वाले घटको मे उनकी गहन रुचि रही। इसी आधार पर उनके विभिन्न आर्थिक विचारो को एक सूत्र मे पिरोकर उनके आर्थिक विकास के सिद्धान्त का एक खाका तैयार किया जा सकता है। आर्थिक विकास के बारे मे उनके विचार आशावादी थे। उन्होने राष्ट्रीय आय मे वृद्धि को आर्थिक विकास का सूचक एव प्रति व्यक्ति आय को उसका एक मापक माना और कहा कि आर्थिक

विकास एक प्रक्रिया है, जिसे पूरा होने मे समय लगता है । सुव्यवस्थित आर्थिक विकास के लिए उन्होने प्राथमिकताओ के निर्धारण की सिफारिश की और कहा कि राष्ट्रो के धन मे वृद्धि का एकमात्र रास्ता आर्थिक विकास ही है ।

मान्यताए (Assumptions) एडम स्मिथ के आर्थिक विकास के सिद्धान्त विषयक विचार निम्नाकित दो मान्यताओ पर आधारित थे–

(i) श्रम ही वह एकमात्र स्रोत है जहा राष्ट्र का धन सृजित होता है और

(ii) सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना मे, निजी लाभ की प्रेरणा के कारण, निजी क्षेत्र एव साहस अधिक कार्यदक्ष होता है,अत आर्थिक विकास उसी पर निर्भर है।

आर्थिक विकास के निर्धारक घटक (Factors determining economic development)- आर्थिक विकास के लिये एडम स्मिथ ने उत्पादक श्रम, श्रम–विभाजन, पूजी–सचय, बचत एव उसके सार्थक विनियोग को आवश्यक बताया । बचत के लिए उन्होने लाभ को महत्त्वपूर्ण माना और कहा कि केवल लाभो के सृजन से ही बचत क्षमता बढ सकती है क्योकि मजदूरी एव लगान के रूप मे प्राप्त आय श्रमिक एव भूमिपति उपभोग व्यय मे खर्च कर समाप्त कर देते हैं । अत मजदूरी एव लगान मे वृद्धि से आय सृजन की प्रक्रिया शुरू नही हो सकती । बचत एव विनियोजन मे लाभो की भूमिका के कारण ही उन्होने लाभो को कर मुक्त छोडने की सिफारिश की ताकि अर्थव्यवस्था को यथेष्ट मात्रा मे सम्भाव्य बचते (potential savings) मिल सकें । उन्होने विलासिताओ एव नाशवान उपभोक्ता वस्तुओ को बचत मे बाधक माना और कहा कि इनके स्थान पर देशवासियो को टिकाऊ आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओ का ही प्रयोग करना चाहिये ताकि फिजूलखर्ची पर रोक लगकर उनकी बचत करने की सामर्थ्य बढ सके । इसी आधार पर उन्होने विलासिताओ के आयात पर रोक लगाने की सिफारिश की । पूजी–सचय के लिए भी उन्होने बचत को बहुत महत्त्वपूर्ण माना और कहा कि पूजी–सचय परिश्रम का परिणाम नही बल्कि विवेकपूर्ण व्यय का परिणाम होता है ।

आर्थिक विकास के लिए एडम स्मिथ ने बचत एव विनियोग के साम्य एव उनकी वृद्धि पर बल दिया । उन्होने बताया कि विनियोजन मे वृद्धि से ही देश की उत्पादन कुशलता मे वृद्धि होती है जो भौतिक पडतो, भूमि की उर्वरता एव मानवीय पूजी मे वृद्धि के रूप मे परिलक्षित होती है ।

आर्थिक विकास एवं सरकार (Economic development and Government)- यद्यपि, आर्थिक विकास के लिये एडम स्मिथ ने निर्बाधावाद, मुक्त व्यापार एव निजी क्षेत्र का समर्थन किया, किन्तु, जहा–तहा वे विकास मे सरकार अथवा राज्य की भूमिका भी आवश्यक मानते है और कहते हैं कि सामाजिक पूजी मे

वृद्धि, जो विकास के लिए एक आधारभूत आवश्यकता है, का कार्य राज्य ही कर सकता है ।

निष्कर्ष (conclusion)- एडम स्मिथ के आर्थिक विकास विषयक अधिकाश विचार आधुनिक अर्थशास्त्रियो के विकास मॉडलो से मेल खाते है । उनका सिद्धान्त विकासशील राष्ट्रो के सदर्भ मे बहुत उपयोगी एव सटीक है क्योकि, उन्होने 'कम खाओ एव ज्यादा बचाओ' के आधार पर बचतो मे वृद्धि का समर्थन कर विकासशील देशो का मार्ग–दर्शन किया । आज सभी विकासशील देश एडम स्मिथ द्वारा दिखाये गये उसी रास्ते पर चलकर आर्थिक पिछड़ापन दूर करने का प्रयास कर रहे है । इसीलिए कहा जाता है कि 'ऐसा आभास होता है कि एडम स्मिथ ने अपना अधिकाश विश्लेषण विकासशील देशो की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर किया ।'

12.अन्य (Others)-

एडम स्मिथ के अन्य आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है—

(1) **अर्थशास्त्र की परिभाषा एवं विषय-सामग्री** (Definition and subject Matter of Economics) आधुनिक अर्थशास्त्र की सबसे प्रथम परिभाषा एडम स्मिथ ने दी । इसीलिये उन्हे अर्थशास्त्र का जनक (father of economics) एव 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रकाशन के साथ ही सन् 1776 मे आधुनिक अर्थशास्त्र का जन्म हुआ माना जाता है । उन्होने इसे 'धन का एक विज्ञान' कहकर परिभाषित किया ।[22] उनके अनुसार धन ही समृद्धि का स्रोत एव मानव जीवन का परम लक्ष्य है । अत यदि कोई व्यक्ति धन कमाने मे सफल हो जाता है तो उसका जीवन सार्थक हो जाता है ! इसी आधार पर उन्होने 'आर्थिक मानव' (economic man) की कल्पना की और कहा कि मनुष्य केवल आर्थिक घटको से प्रभावित एव शासित होकर ही अपना आर्थिक व्यवहार करता है । उन्होने मनुष्य को धन कमाने वाली एक मशीन के समान समझा, जिस पर सामाजार्थिक, नैतिक एव चारित्रिक घटको का कोई विशेष प्रभाव नहीं रहता है ।

एडम स्मिथ ने अर्थशास्त्र को एक विज्ञान का दर्जा दिया और उसे अन्य विज्ञानो से पृथक् एव महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रदान की । उन्होने 'धन' शब्द का सकीर्ण अर्थ मे प्रयोग किया और केवल भौतिक वस्तुओ को ही धन की परिधि मे सम्मिलित किया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने सेनाओ मे वृद्धि से राष्ट्रो के धन मे वृद्धि की बात स्वीकार नही की ।

(2) **कृषि** (Agriculture) एडम स्मिथ कृषि के समर्थक थे । अत उन्होने

22 Economics is a sience of wealth." -Smith A

समस्त आर्थिक क्रियाओ मे कृषि को सर्वोपरि माना और किसान को सर्वाधिक उत्पादक श्रमिक बताया ।

(3) एकाधिकार एव वणिकवाद (Monopoly and Mercantilism) एडम स्मिथ एकाधिकार एव वणिकवाद के विरोधी तथा प्रतिस्पर्धा एव मुक्त व्यापार के समर्थक थे । एकाधिकारी कम्पनियो के बारे मे उनका मानना था कि ये जहा कही स्थापित होती है वहा प्रतिस्पर्धा समाप्त कर परेशानिया पैदा करती है । अत इनकी स्थापना पर रोक लगाने के लिए प्रभावी कदम उठाने चाहिये। इसी प्रकार एडम स्मिथ वणिकवादियो के इन विचारो से सहमत नही थे कि व्यापार ही राष्ट्रो के धन का एकमात्र स्रोत है और जो बहुमूल्य धातुएँ (स्वर्ण एव रजत) देश मे आ जाये उन्हे वापस बाहर जाने से रोकना चाहिये । दूसरे शब्दो मे एडम स्मिथ ने वणिकवादियो की भाति मुद्रा को धन का सर्वोत्कृष्ट रूप नही माना । इतना ही नही उन्होने तो यहाँ तक कहा कि स्वर्ण एव रजत मुद्राए तुच्छ है । इनसे किसी मानवीय उपभोग सम्बन्धी आवश्यकता पूर्ति नही होती अर्थात् मुद्रा केवल विनिमय का एक माध्यम है । अत यह गतिमान रहनी चाहिये । अर्थात् मुद्राओ के सग्रह से राष्ट्रो का धन बढ़ने के बजाय घटता है ।

(4) आर्थिक कल्याण (Economic Welfare) एडम स्मिथ सामान्य जन (common man) के आर्थिक हितो के पक्षधर थे । उन्होने राष्ट्रो के धन मे वृद्धि को इसी आधार पर उचित बताया कि इससे उनके कल्याण मे वृद्धि होती है ।

(5) राजनीतिमत्ता *(Statesmanship)* एक आर्थिक विचारक होने के साथ–साथ एडम स्मिथ एक राजनेता भी थे । युवा ड्यूक के निजी शिक्षक के रूप मे वे सत्ता के निकट रहे । इसीलिए उन्होने सुझाव दिया कि ब्रिटेन को ब्रिटिश साम्राज्य के उन प्रातो की रक्षा का बोझ नही उठाना चाहिये जो उसकी वित्तीय व्यवस्था मे अशदान नही करते है ।

एडम स्मिथ का आलोचनात्मक मूल्याकन
(Critical Appraisal of Adam Smith)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि एडम स्मिथ एक महान् विचारक थे । उन्होने अनेक आर्थिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया । उनके विचारो मे मौलिकता समन्वय पाण्डित्य एव गहन–ज्ञान के दर्शन होते है । किन्तु उनकी रचना एव विचारो मे कुछ कमिया एव दोष भी बताये गये है । अत आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान निर्धारित करने से पूर्व उनका आलोचनात्मक मूल्याकन करना आवश्यक है ।

(A) एडम स्मिथ के पक्ष में तर्क (Case for Adam Smith)

एडम स्मिथ की महानता के पक्ष मे निम्नाकित तर्क दिये जाते है–

(1) एक महान विचारक (A great thinker) एडम स्मिथ एक महान्

विचारक थे । उनके विचार उनसे पहले के विचारको से कही अधिक सटीक एव व्यापक थे । **हेलब्रोनर** के अनुसार "एडम स्मिथ के समान अन्य कोई अर्थशास्त्री नही जो इतना शात, दुराग्रह रहित, विद्वेष रहित, छिद्रान्वेषी, मर्मभेदी और स्वप्नदर्शी हुए बिना आशावादी हो ।"[23] उनके एक अनुयायी **विलियम नासौ सीनियर** के मतानुसार, "अपने ज्ञान के विस्तार एव परिशुद्धता की दृष्टि से स्मिथ सम्भवत अरस्तू के बाद के सभी लेखको से श्रेष्ठ थे ।"[24] एक महान विचारक की हैसियत से ही उन्होने प्रकृतिवादी विचारको की प्राकृतिक व्यवस्था की अवधारणा को पूर्णता प्रदान की ।

(2) एक नये युग के प्रवर्त्तक (Founder of a new era)- एडम स्मिथ उस सक्रमण काल के विचारक है जिसमे मध्ययुगीन सामतवादी व्यवस्था समाप्त हो रही थी और आर्थिक क्षेत्र मे औद्योगिक पूजीवाद की स्थापना हो रही थी । अपने इस काल का उन्होने इतना पूर्ण एव विस्तृत चितन किया कि उन्हे एक नये युग का प्रवर्त्तक माना जाने लगा । इसीलिए जीड एव रिस्ट ने कहा कि **प्रकृतिवादियो** को ज्यादा से ज्यादा नये युग का अग्रदूत माना जा सकता है **जबकि एडम स्मिथ** इस युग के वास्तव मे प्रवर्त्तक थे ।[25]

(3) अर्थशास्त्र के ढांचे के निर्माता (Maker of the Structure of Economics)- 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के प्रकाशन से पूर्व अर्थशास्त्र ज्ञान की अन्य शाखाओ के साथ मिला हुआ था । एडम स्मिथ ने उसे इनसे पृथक् कर उसके ढाचे, क्षेत्र एव विषय–सामग्री का निर्धारण किया । इस हेतु उन्होने अपने पूर्ववर्ती विचारको के अव्यवस्थित, अपरिपक्व एव अपरिष्कृत विचारो का परिमार्जन किया । इसीलिए **एलेक्जेण्डर ग्रे** ने कहा कि "एडम स्मिथ से पहले जहा बहुत अधिक आर्थिक विचार–विमर्श हो चुका था, उनके साथ हम अर्थशास्त्र पर विवेचन की अवस्था मे पहुच गये ।"[26] उन्होने अर्थशास्त्र को एक विज्ञान का दर्जा दिया और उसकी विषय–सामग्री मे आर्थिक मानव की धनोपार्जन सम्बन्धी क्रियाये सम्मिलित की ।

(4) एक महान् समन्वयकर्त्ता (A great synthesiser)- एडम स्मिथ एक महान् समन्वयकर्त्ता थे । उन्होने अपने पूर्ववर्ती विचारको के विचारो एव

---

23 "...no economist was ever so serene, so devoid of contumacy, so penetratingly critical without rancour, and so optimistic without being utopian" -Heilbroner R.I

24 "Smith was superior perhaps to every writer since the time of Aristotle in the extent and accuracy of his knowledge." -Senior W N

25 "Note with standing the originality and vigour displayed by physiocrates, they can only be regarded as the heralds of the new scene. Adam Smith, it is now unanimously agreed, is its real founder" -Gide & Rist.

26. "Before Adam Smith there had been much economic discussion, with him we reach the stage of discussing Economics" -Gray A.

सिद्धान्तो की त्रुटियो का निवारण किया । जैसा कि गारनियर ने लिखा है "उन्होने अर्थशास्त्र मे एक पूर्ण क्रांति गढ़ी।"[27]

(5) **एक मौलिक विचारक** (An original thinker)- एडम स्मिथ एक मौलिक विचारक थे । उन्होने श्रम–विभाजन, मुद्रा, करारोपण, आर्थिक संस्थाओ के स्वत विकास आदि सम्बन्धी जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये, उन्हे बाद के अर्थशास्त्रियो ने ज्यो का त्यो स्वीकार किया है ।

(6) **सूक्ष्म एवं व्यापक अर्थशास्त्र का समाकलन** (Integration of Micro and Macro-economics) यद्यपि, आर्थिक विश्लेषण की इन दोनो शाखाओ का उद्भव एव विकास इस सदी की एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक देन है, किन्तु, एडम स्मिथ के विश्लेषण मे इन दोनो का समाकलन आसानी से देखा जा सकता है, जब वे यह कहते है कि निजीहित (सूक्ष्म अर्थशास्त्र) मे ही सार्वजनिक हित (व्यापक अर्थशास्त्र) निहित है ।

(7) **श्रम एवं पूंजी को प्राधान्य (Prominance to labour and capital)**- एडम स्मिथ से पहले व्यापार एव भूमि को ही विशेष मान्यता प्राप्त थी । उन्होने सर्व– प्रथम भूमि के साथ–साथ श्रम एव पूजी को महत्ता प्रदान की और इन्हे राष्ट्रो के धन मे वृद्धि के लिए आवश्यक बताया ।

(8) **भावी सिद्धान्तों के प्रवर्तक** (Founder of future theories)- एडम स्मिथ लोकवित्त, जनसख्या, व्यापार एव वाणिज्य, पूजी, आर्थिक विकास आदि सम्बन्धी भावी सिद्धान्तो के प्रवर्तक माने जाते है । उदाहरण के लिए, बाद के अर्थशास्त्रियो ने एडम स्मिथ के करारोपण के चार सिद्धान्तो को ज्यो का त्यो स्वीकार कर लिया ।

(9) **'वेल्थ ऑफ नेशान्स' एक प्रमाणिक आश्चर्य** ('Wealth of Nations'- an authentic marvellous) एडम स्मिथ के अनुयायियो ने उनकी रचना को एक 'युग परिवर्तनकारी रचना एव प्रामाणिक आश्चर्य बताया है जिसने लोक–नीतियो का स्वरूप निर्धारित करने मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है । इसीलिये इसे आर्थिक विश्लेषण का नुक्कड़ का पत्थर (cornerstone of Economic science) कहा जाता है । सन् 1783 से लेकर 1800 के मध्य ब्रिटिश ससद मे कई बार इस पुस्तक पर लम्बी बहसे हुयी । उनके प्रशसको ने इसे 'कीमती रत्नो का खजाना' (store house of costly gems) कहा । सन् 1800 तक इस पुस्तक के 24 वर्षों मे 8 सस्करण निकले और इसका लगभग सभी प्रमुख यूरोपीय भाषाओ मे अनुवाद हो गया ।

आज यह पुस्तक विश्व की सभी भाषाओ मे उपलब्ध है । अर्थशास्त्र के विद्यार्थियो के लिए यह पुस्तक प्रथम धर्म ग्रंथ है जिसे पढ़े बिना आगे का

27 "He wrought a complete revolution in science." -Garnier

अध्ययन सम्भव नही है । यह एक बहुत ही आकर्षक शैली (persuasive style) मे लिखी गयी रचना है जो अति सुबोध (highly lucid) एव विश्वासोत्पादक (convincing) है । इसकी व्याख्या मे तार्किक सम्पूर्णता (logical totality) है और तर्कों की तथ्यो द्वारा पुष्टि की गयी है । इसमे आर्थिक इतिहास एव आर्थिक विश्लेषण की काफी एव विश्वसनीय विषय–सामग्री सम्मिलित की गयी है ।

एडम स्मिथ के विपक्ष में तर्क (Case Against Adam Smith)-

एडम स्मिथ एव उनकी रचना के मूल्याकन का एक दूसरा पक्ष भी है । हिल्डीब्रैण्ड, फ्रेडरिक लिस्ट, बॉनमूलर ओस्पैन आदि इनके प्रमुख आलोचक है। सक्षेप मे इनकी निम्नाकित आलोचनाये की गई है–

(1) मौलिकता का अभाव (Lacks originality)- आलोचको के मतानुसार एडम स्मिथ के विचारो मे मौलिकता का अभाव है । उन्होने कोई नई एव चौकाने वाली बात नही कही । वास्तव मे उन्होने वही कहा एव लिखा जो उनसे पहले वणिकवादियो, प्रकृतिवादियो तथा डेविड ह्यूम और अन्य पूर्ववर्ती एव समकालीन विचराको द्वारा कहा वह लिखा जा चुका था । उनकी रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' मे उसके आकार के अनुपात मे मौलिकता की नितान्त कमी है । वास्तव मे, एडम स्मिथ कोई भौतिक विचारक नही बल्कि एक समन्वयकर्त्ता थे । एक विश्लेषणकर्त्ता के रूप मे उनकी यही महत्ता है कि उन्होने केवल प्रचलित धारणाओ एव सिद्धान्तो का अति उत्तम समन्वय किया। श्रम–विभाजन, जिसे उनका प्रमुख योगदान माना जाता है, एक मौलिक विचार नही है ।

(2) अस्पष्ट एव भ्रमोत्पादक विचार (Ambiguous and confusing ideas)- एडम स्मिथ के आर्थिक विचार अस्पष्ट एव भ्रमोत्पादक है । इनमे जगह–जगह अन्तर्विरोध एव अन्तराल है, अत इनमे स्पष्टता एव क्रमबद्धता का अभाव है । उनके मूल्य विषयक विचार अस्पष्ट है । उनका यह मानना भी गलत है कि मुद्रा भी अन्य वस्तुओ की भाति एक वस्तु है और इसकी तुलना बर्तन–भाण्डो तक से की जा सकती है । यही बात उनके अधिकाश विचारो के बारे मे कही जा सकती है ।

(3) एक भौतिकवादी विचारक (A materialistic thinker) आलोचको ने उन पर एक भौतिकवादी विचारक होने का आक्षेप लगाया जो भौतिकता के भ्रम मे फसे रहे । उनके अनुसार इनके चिंतन मे आदर्शवाद एव नैतिकता का अभाव है । वे मानव जीवन के उच्च आदर्शों की ओर नही झाक सके । उनके अनुसार भौतिकवाद के नशे मे धुत एडम स्मिथ निजी हित एव सामाजिक हित मे भेद नही कर सके और दोनो मे सामजस्य के गीत गाते रहे । उन्होने अर्थशास्त्र को एक भौतिकवादी मोड़ (materialestic twist) दे दिया जिसके कारण समकालीन दार्शनिक विचारको ने उन्हे गालिया दी ।

सिद्धान्तो की त्रुटियो का निवारण किया । जैसा कि गारनियर ने लिखा है "उन्होने अर्थशास्त्र मे एक पूर्ण क्रांति गढ़ी ।"[27]

(5) एक मौलिक विचारक (An onginal thinker)- एडम स्मिथ एक मौलिक विचारक थे । उन्होने श्रम–विभाजन, मुद्रा, करारोपण, आर्थिक संस्थाओ के स्वत विकास आदि सम्बन्धी जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये, उन्हे बाद के अर्थशास्त्रियो ने ज्यो का त्यो स्वीकार किया है ।

(6) सूक्ष्म एवं व्यापक अर्थशास्त्र का समाकलन (Integration of Micro and Macro-economics)- यद्यपि, आर्थिक विश्लेषण की इन दोनो शाखाओ का उद्‌भव एव विकास इस सदी की एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक देन है, किन्तु, एडम स्मिथ के विश्लेषण मे इन दोनो का समाकलन आसानी से देखा जा सकता है, जब वे यह कहते है कि निजीहित (सूक्ष्म अर्थशास्त्र) मे ही सार्वजनिक हित (व्यापक अर्थशास्त्र) निहित है ।

(7) श्रम एवं पूंजी को प्राधान्य (Prominance to labour and capital)- एडम स्मिथ से पहले व्यापार एव भूमि को ही विशेष मान्यता प्राप्त थी । उन्होने सर्व– प्रथम भूमि के साथ–साथ श्रम एव पूजी को महत्ता प्रदान की और इन्हे राष्ट्रो के धन मे वृद्धि के लिए आवश्यक बताया ।

(8) भावी सिद्धान्तों के प्रवर्तक (Founder of future theones)- एडम स्मिथ लोकवित्त, जनसख्या, व्यापार एव वाणिज्य, पूजी, आर्थिक विकास आदि सम्बन्धी भावी सिद्धान्तो के प्रवर्तक माने जाते है । उदाहरण के लिए, बाद के अर्थशास्त्रियो ने एडम स्मिथ के करारोपण के चार सिद्धान्तो को ज्यो का त्यो स्वीकार कर लिया ।

(9) 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' एक प्रमाणिक आश्चर्य (*'Wealth of Nations'- an authentic marvellous*) एडम स्मिथ के अनुयायियो ने उनकी रचना को एक 'युग परिवर्तनकारी रचना एव प्रामाणिक आश्चर्य बताया है जिसने लोक–नीतियो का स्वरूप निर्धारित करने मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है । इसीलिये इसे आर्थिक विश्लेषण का नुक्कड़ का पत्थर (cornerstone of Economic science) कहा जाता है । सन् 1783 से लेकर 1800 के मध्य ब्रिटिश ससद मे कई बार इस पुस्तक पर लम्बी बहसे हुयी । उनके प्रशसको ने इसे 'कीमती रत्नो का खजाना' (store house of costly gems) कहा । सन् 1800 तक इस पुस्तक के 24 वर्षों मे 8 सस्करण निकले और इसका लगभग सभी प्रमुख यूरोपीय भाषाओ मे अनुवाद हो गया ।

आज यह पुस्तक विश्व की सभी भाषाओ मे उपलब्ध है । अर्थशास्त्र के विद्यार्थियो के लिए यह पुस्तक प्रथम धर्म ग्रंथ है जिसे पढ़े बिना आगे का

---

27 "He wrought a complete revolution in science." -Garnier

अध्ययन सम्भव नही है । यह एक बहुत ही आकर्षक शैली (persuasive style) मे लिखी गयी रचना है जो अति सुबोध (highly lucid) एव विश्वासोत्पादक (convincing) है । इसकी व्याख्या मे तार्किक सम्पूर्णता (logical totality) है और तर्कों की तथ्यो द्वारा पुष्टि की गयी है । इसमे आर्थिक इतिहास एव आर्थिक विश्लेषण की काफी एव विश्वसनीय विषय–सामग्री सम्मिलित की गयी है ।

एडम स्मिथ के विपक्ष में तर्क (Case Against Adam Smith)-

एडम स्मिथ एव उनकी रचना के मूल्याकन का एक दूसरा पक्ष भी है । हिल्डीब्रैण्ड, फ्रेडरिक लिस्ट, बॉनमूलर ओस्पैन आदि इनके प्रमुख आलोचक है। सक्षेप मे इनकी निम्नाकित आलोचनाये की गई है–

(1) मौलिकता का अभाव (Lacks originality) आलोचको के मतानुसार एडम स्मिथ के विचारो मे मौलिकता का अभाव है । उन्होने कोई नई एव चौकाने वाली बात न्ही कही । वास्तव मे, उन्होने वही कहा एव लिखा जो उनसे पहले वणिकवादियो, प्रकृतिवादियो तथा डेविड ह्यूम और अन्य पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको द्वारा कहा वह लिखा जा चुका था । उनकी रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' मे उसके आकार के अनुपात मे मौलिकता की नितान्त कमी है । वास्तव मे, एडम स्मिथ कोई भौतिक विचारक नही बल्कि एक समन्वयकर्त्ता थे । एक विश्लेषणकर्त्ता के रूप मे उनकी यही महत्ता है कि उन्होने केवल प्रचलित धारणाओ एव सिद्धान्तो का अति उत्तम समन्वय किया। श्रम–विभाजन, जिसे उनका प्रमुख योगदान माना जाता है, एक मौलिक विचार नही है ।

(2) अस्पष्ट एवं भ्रमोत्पादक विचार (Ambiguous and confusing ideas)- एडम स्मिथ के आर्थिक विचार असष्ट एव भ्रमोत्पादक है । इनमे जगह–जगह अन्तर्विरोध एव अन्तराल है, अत इनमे स्पष्टता एव क्रमबद्धता का अभाव है । उनके मूल्य विषयक विचार अस्पष्ट है । उनका यह मानना भी गलत है कि मुद्रा भी अन्य वस्तुओ की भाति एक वस्तु है और इसकी तुलना बर्तन–भाण्डो तक से की जा सकती है । यही बात उनके अधिकाश विचारो के बारे मे कही जा सकती है ।

(3) एक भौतिकवादी विचारक (A materialistic thinker) आलोचको ने उन पर एक भौतिकवादी विचारक होने का आक्षेप लगाया जो भौतिकता के भ्रम मे फसे रहे । उनके अनुसार इनके चितन मे आदर्शवाद एव नैतिकता का अभाव है । वे मानव जीवन के उच्च आदर्शों की ओर नही झाक सके । उनके अनुसार भौतिकवाद के नशे मे धुत एडम स्मिथ निजी हित एव सामाजिक हित मे भेद नही कर सके और दोनो मे सामजस्य के गीत गाते रहे । उन्होने अर्थशास्त्र को एक भौतिकवादी मोड़ (materialestic twist) दे दिया जिसके कारण समकालीन दार्शनिक विचारको ने उन्हे गालिया दी ।

(4) अति व्यक्तिवादी (Excessve individualist) एडम स्मिथ पर, आलोचको ने, अति व्यक्तिवादी होने का आरोप लगाया है । वे समाज को असम्बद्ध व्यक्तियो का समूह मानते है जो अपनी–अपनी रोटिया सेकने मे तल्लीन रहते है और अपने इस उद्देश्य मे सफल भी हो जाते है । उन्होने स्वार्थी, धनलोलुप एव सकीर्ण विचारधारा वाले आर्थिक मानव की कल्पना की। किन्तु, उसके समान न वे स्वय बन सके और न कोई और ही वैसा बन सका ।

(5) 'धन' की सकीर्ण व्याख्या (Narrow version of wealth) एडम स्मिथ के धन विषयक विचार अति सकीर्ण है । उन्होने केवल भौतिक एव विनिमय साध्य वस्तुओ को ही धन कहा और वे मानव जीवन के उच्च आदर्शों एव धन के परम पावन प्रयोगो को भूल गये । दूसरे शब्दो मे, उन्होने सेवाओ को धन मे सम्मिलित नही किया ।

(6) अधूरा चिन्तन (Incomplete thought)- आलोचको के अनुसार एडम स्मिथ का आर्थिक चिंतन पूर्ण एव परिपक्व नही है । उनका वितरण सिद्धान्त असतोषप्रद एव असगत है । उन्होने उपभोग, जिसका अर्थशास्त्र की विषय सामग्री मे महत्त्वपूर्ण स्थान है और जिसे आर्थिक क्रियाओ का आदि एव अत माना जाता है, को बिल्कुल भुला दिया । टेलर के मतानुसार वे क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की भी सुस्पष्ट व्याख्या नही कर सके ।

(7) राज्य–भूमिका का नीचा मूल्याकन (Under evaluation of the role of state) एडम स्मिथ राज्य की भूमिका का सही–सही आकलन नही कर सके । उन्होने निर्बाधावाद के गीत गाये और माना कि वही सरकार सबसे अच्छी सरकार है जो न्यूनतम शासन करती है ।

(8) अर्थशास्त्र को विज्ञान का दर्जा दिलाने में विफल (Failed to provide Economics a status of science)- आलोचको के अनुसार एडम स्मिथ के हाथो अर्थशास्त्र एक विज्ञान नही बन सका । उनके इस अधूरे कार्य को बाद के अर्थशास्त्रियो (मुख्यत 1890 मे प्रो अल्फ्रेड मार्शल) ने पूर्ण किया ।

(9) 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' – एक अस्तव्यस्त रचना (Wealth of Nations - a disorderly book) आलोचको ने उनकी इस रचना को एक अस्तव्यस्त रचना कहा है जिसमे बहुत लम्बे–लम्बे प्रसग हैं । इस प्रसगो मे प्रासागिकता का अभाव है । एडम स्मिथ लम्बे प्रसगो के बीच जगह–जगह भटके हुए नजर आते हैं । ऐतिहासिक विवेचन के बावजूद उनके विश्लेषण मे सापेक्षता का अभाव है और जल्दीबाजी मे स्थान–स्थान पर वे निरपेक्ष विश्लेषण कर गये । इसीलिए उनकी रचना को आलोचको ने 'एक अव्यवस्था (a chaos) कहा ।

आर्थिक विचारों के इतिहास में एडम स्मिथ का स्थान

(Place of Adam Smith in the History of Economic Thought)

संस्थापक अर्थशास्त्रियों की तिकड़ी (trio) एडम स्मिथ, माल्थस और रिकार्डो, मे एडम स्मिथ सर्वोपरि है। वे एक महान् अर्थशास्त्री, उच्चकोटि के लेखक एव मौलिक विचारक थे। एक अर्थशास्त्री के रूप मे भलेही उन्होने कोई चौकाने वाला कार्य नही किया, किन्तु इधर–उधर बिखरे पड़े आर्थिक विचारो को इतने मौलिक एव एकसूत्र मे पिरोकर प्रभावशाली तरीके से लोगो के सामने रखा कि उन्हे न केवल 'अर्थशास्त्र के जनक' होने का गौरव मिला अपितु वे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सस्थापक भी माने गये। यही नही, उनके बाद विकसित आर्थिक चिंतन के सभी सम्प्रदाय, किसी न किसी रूप मे, उनके ऋणी है। अत. एडम स्मिथ को उनका पथ–प्रदर्शक अथवा सस्थापक भी कहा जाता है। जैसा कि प्रो. एरिक रोल ने कहा, "उन्होने आर्थिक जाच के क्षेत्र का इस प्रकार सीमाकन किया कि बाद के सभी विचारक उन्ही सीमा चिन्हो–उत्पादन, मूल्य एव वितरण–से निर्देशन प्राप्त करते रहे।"[28] यहा तक कि बिल्कुल पृथक् दिखायी देने वाले मूल्य के जिस श्रम सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रसिद्ध समाजवादी विचारक कार्ल मार्क्स ने किया, उसकी जड़े एडम स्मिथ के 'मूल्य के श्रम सिद्धान्त' मे निहित है।

एडम स्मिथ की रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' आर्थिक चिंतन के क्षेत्र मे 'मील का पत्थर' (a mile stone) है। इसीलिए विभिन्न वर्गों–विचारक, व्यापारी, उद्योगपति, राजनेता आदि– पर उसकी विषय–सामग्री का प्रभाव काफी दूरगामी रहा। यह प्रभाव न केवल सैद्धान्तिक, अपितु, व्यावहारिक दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। एडम स्मिथ ने आर्थिक नीति एव विचार दोनो को प्रभावित किया। वे एक युग–पुरुष थे। उनके समर्थको एव अनुयायियो, जिनमे माल्थस, रिकार्डो, जे. एस मिल, सीनियर, जे. बी. से आदि अग्रणी है, ने सहस्र वर्षों तक आर्थिक विचारो का प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र रूपी जो सुन्दर प्रासाद खड़ा किया उसकी मजबूत नीव एडम स्मिथ के हाथो ही रखी गयी थी। उनके विचारो का बोलबाला न केवल तत्कालीन इग्लैण्ड मे ही रहा अपितु पूरे योरोप मे एव लम्बे समय तक देखा गया। उनके आर्थिक चिंतन ने अनेक सस्थाओ, आदोलनो, सम्प्रदायो, सधियो, सघो आदि को जन्म दिया। यदि यह कहा जाये कि ब्रिटिश प्रधानमत्री विलियम पिट दि यगर, एडम स्मिथ के आर्थिक चिंतन के आधार पर ब्रिटेन का शासन तत्र चलाना चाहते थे, तो भी कोई अतिशयोक्ति नही होगी। वे समय–समय पर आर्थिक

---

28. "He mapped out the field of economic enquiry in such a way that all subsequent thinkers were guided by those landmarks value, production and distribution." Roll E.

मामलो मे एडम स्मिथ से सलाह लिया करते थे । उनके अलावा नार्थ बकल, बेजहॉट एव फाक्स आदि राजनीतिज्ञ भी एडम स्मिथ से काफी प्रभावित थे ! प्रधानमत्री लार्ड नार्थ ने 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के अध्ययन के आधार पर ही शराब कर (*Malt tax*) एव गृह कर (*House tax*)लगाये ।

एडम स्मिथ के आर्थिक चिंतन ने आर्थिक तत्र को एक नयी दिशा दी । यह कहना त्रुटिपूर्ण नही होगा कि एडम स्मिथ के आर्थिक चिंतन का सहारा पाकर 19वी सदी के मध्य तक इग्लैण्ड वणिकवादी आर्थिक नीतियो के शिकजे से निकलकर स्वतत्र व्यापार एव निर्बाधावाद की राह पर निकल पडा । उनके विचारो ने इग्लैण्ड मे औद्योगिक क्राति की सफलता की पृष्ठभूमि तैयार की । इस आधार पर उन्हे औद्योगिक क्राति का प्रमुख सूत्रधार एव सहयोगी माना जा सकता है । बेजहॉट ने तो यहा तक कहा कि, "इनके कारण इग्लैण्ड-- वासियो का जीवन--दर्शन पहले से अच्छा एव भिन्न हो गया । किसी अन्य राजनीतिक दर्शन का एक हजारवा प्रभाव भी हम पर नही पडा । एडम स्मिथ की शिक्षाये राष्ट्र के व्यावहारिक ज्ञान का हिस्सा होकर अपरिवर्तनीय बन गयी है ।" जॉन रे के मतानुसार "एडम स्मिथ ने अपनी पीढी को समझाया और भावी पीढी को प्रभावित किया ।" वे एक भविष्य दृष्टा थे । आधिक्य एव मूल्य के सिद्धान्तो के जरिये उन्होने विभिन्न वर्गों के हितो मे टकराव उत्पन्न होने का सकेत दे दिया था ।

अन्त मे, आर्थिक चिन्तन के इतिहास मे एडम स्मिथ को कोई चुनौती नही दी जा सकती । बिना किसी वाद--विवाद के यह स्वीकार किया जा सकता है कि एडम स्मिथ की गिनती सदैव प्रथम--पक्ति के अर्थशास्त्रियो मे की जाती रहेगी । अग्रेजो का एडम स्मिथ को 'अर्थशास्त्र का जनक' कहकर आनन्दित होना समीचीन है । उनकी रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' एक महान मस्तिष्क की ही अभिव्यक्ति नही बल्कि एक पूरे युग की अभिव्यक्ति है । अत. अर्थशास्त्र के सभी विद्यार्थी एडम स्मिथ के आगे नत--मस्तक है ।

प्रश्न

1 **आर्थिक विचारों के इतिहास को एडम स्मिथ की देन का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये ।**

सकेत : सक्षेप मे एडम स्मिथ एव 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' का परिचय देकर एडम स्मिथ के प्रमुख आर्थिक विचारो की आलोचनात्मक व्याख्या करे ।

2 **आर्थिक विचारों के इतिहास में एडम स्मिथ का प्रमुख योगदान क्या है ? क्या उन्हें 'अर्थशास्त्र का जनक' कहना उचित है ? तर्क दीजिये ।**

सकेत : प्रश्न के प्रथम भाग मे एडम स्मिथ का आर्थिक विचारो के इतिहास को योगदान बताये, एव द्वितीय भाग मे यह स्पष्ट करे कि उन्हे

'अर्थशास्त्र का जनक' कहना गलत नही है ।

3 **"स्मिथ ने अपनी पीढी को समझाया और भावी पीढी को प्रभावित किया ।" जॉन रे । कथन की समीक्षा कीजिये ।**

संकेत : प्रश्न के प्रथम भाग मे कथन का आशय समझाकर द्वितीय भाग मे यह बताये कि किस प्रकार एडम स्मिथ ने अपनी पीढ़ी को नेतृत्व दिया तथा अत मे उन बातो का उल्लेख करे जिनमे एडम स्मिथ का प्रभाव दृष्टिगत होता है ।

4 **एडम स्मिथ को 'अर्थशास्त्र का जनक' क्यों कहते हैं ? समझाइये ।**
संकेत : सक्षेप मे एडम स्मिथ की पूर्ववर्ती एव समकालीन दशाओ का वर्णन कर बताये कि किस प्रकार उन्होने प्रचलित विचारो का सकलन एव समन्वय कर 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' की रचना की । निष्कर्ष मे कथन का औचित्य बताये ।

5 **एडम स्मिथ के प्रमुख आर्थिक विचारों की संक्षिप्त व्याख्या कीजिये ।**

6 **यह कहना कहां तक उचित है कि 'एडम स्मिथ का प्रमुख योगदान अपने पूर्ववर्ती विचारकों के विचारों के समन्वय में है ।'**
संकेत : प्रश्न सख्या 3 के सकेतानुसार हल करे ।

7 **'वेल्थ ऑफ नेशन्स' पर एक आलोचनात्मक निबन्ध लिखिये । अथवा "वेल्थ आफ नेशन्स एक महान मस्तिष्क की ही अभिव्यक्ति नहीं बल्कि एक पूरे युग की अभिव्यक्ति है ।" कथन की समीक्षा कीजिये ।**
संकेत . 'वेल्थ आफ नेशन्स' का सक्षिप्त परिचय देकर एडम स्मिथ के *आर्थिक चिंतन की प्रमुख विशेषताये एव दिशाये* बताये और सिद्ध करे कि उनके विचारो पर तत्कालीन दशाओ का कैसे प्रभाव पड़ा ।

8 **आर्थिक विचारों के इतिहास में एडम स्मिथ का स्थान निर्धारित कीजिये।**
संकेत : एडम स्मिथ का सक्षिप्त परिचय देकर उनके प्रमुख आर्थिक विचारो का विवेचन करे तथा इनके आधार पर आलोचनात्मक मूल्याकन कर निष्कर्ष दे कि उनका स्थान अग्रणी है ।

❐

3

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय II : टी. आर. माल्थस

(The Classical Traditon II : T. R. Malthus)

> ''माल्थस अग्रणी थे जो बिना किसी अर्न्तविरोध के भय के स्वयं द्वारा प्रतिपादित जनसंख्या सिद्धान्त को सबके ध्यान में लाये।[1] -हैजलिट

परिचय : माल्थस प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के एक कर्णधार के रूप में

(Introduction : Malthus as a helmsman of Classical Tradition)

थामस रॉबर्ट माल्थस् प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सस्थापक अर्थशास्त्रियो की तिकड़ी मे, एडम स्मिथ के पश्चात् दूसरा महत्त्वपूर्ण नाम है । ये एडम स्मिथ के अनुयायियो एव समर्थको मे अग्रणी है । इन्हे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का एक कर्णधार कहा जाता है क्योकि, एडम स्मिथ ने प्रतिष्ठित विचारधारा का जो वैचारिक अभियान (ideological campaign) चलाया, उसे माल्थस ने निर्बाध रूप से आगे बढ़ाते हुए पूर्णता की ओर अग्रसर किया । इसीलिए इनकी गणना प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की अधिरचना (super structure) के स्तम्भो मे की जाती है। किन्तु, एडम स्मिथ से भिन्न इनकी गणना निराशावादी (pessimistic) अर्थशास्त्रियो मे की जाती है क्योकि जिस जनसख्या सिद्धान्तो के साथ इनका नाम जुड़ा है उसमे इन्होने, एडम स्मिथ के आशावाद से भिन्न, जनसख्या मे होने वाली प्रत्येक वृद्धि को अपशकुन का प्रतीक एव घातक बताया है ।

संक्षिप्त जीवन परिचय

(Brief Life Sketch)

माल्थस का जन्म 14 फरवरी, सन् 1766 को इगलैण्ड के सर्रे प्रमण्डल (Surrey county) मे डॉर्किंग (Dorkihg) के निकट रॉकरी (Rockery) नामक स्थान पर एक सम्भ्रात पादरी परिवार मे हुआ । ये अपने पिता की सबसे छोटी सतान थे । इनके पिता सर डेनियल माल्थस एक विद्वान एव पेशे से वकील

---

1 "Malthus was the first who brought into general notice the doctrine of population which he established beyond the fear of contradiction." Hazlitt.

थे। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा रॉकरी मे हुई। सन् 1784 मे उच्च शिक्षा प्राप्ति हेतु उन्होने जीसस कॉलेज कैम्ब्रिज (*Jesus College, Cambridge*) मे प्रवेश लिया। यहाँ उन्होने दर्शनशास्त्र, गणित एव धर्मशास्त्र काअध्ययनकिया तथा सन् 1788 मे बी. ए. आनर्स एव सन् 1791 मे एम ए की उपाधि प्राप्त की। वे कठावरोध से ग्रसित थे और न केवल बहुत धीरे बोलते थे अपितु अभिव्यक्ति मे हकलाते भी थे। अत शिक्षा समाप्ति के पश्चात् उन्होने गिरजाघर की सेवा मे कार्य करना आरम्भ कर दिया। उन्होंने अपनी कार्य–शैली से सभी को प्रभावित किया। अत सन् 1797 मे उन्हे चर्च मे कनिष्ट पैरिस के पद का उत्तरदायित्व सौप दिया गया। उस पद पर रहते हुए उनमे लेखन कार्य के प्रति अभिरुचि जागी। सन् 1799–1802 के बीच माल्थस ने प्रसिद्ध यात्री डेनियल क्लार्क के साथ योरोप का भ्रमण किया और वे स्वीडन, नॉर्वे, फिनलैण्ड, रूस, जर्मनी, फ्रास और स्विटजरलैण्ड गये। सन् 1804 मे माल्थस ने शादी की। इनके दो सताने (एक पुत्र, एक पुत्री) हुईं। वे उच्चकोटि के लेखक थे और जनसख्या पर अपने विचारो के लिए अब तक काफी प्रतिष्ठा पा चुके थे। अत. सन् 1805 मे उन्हे हेलीबरी (हर्टफोर्ड शायर) मे ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा अपने कर्मचारियो को प्रतिक्षण देने हेतु स्थापित महाविद्यालय मे इतिहास एव राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर पद पर नियुक्ति दे दी। वे अपने शेष जीवन मे इसी पद पर रहे। सन् 1821 मे माल्थस ने पॉलिटिकल इकॉनामी क्लब तथा सन् 1834 मे रॉयल स्टेटिस्टीकल सोसाइटी की स्थापना की। 68 वर्ष की अवस्था मे दिसम्बर 29, 1834 को उनका निधन हो गया। विश्व इतिहास मे उन्हे 'जनसख्या पर पहले लेखक' (विचारक नही) एव राजनीतिक अर्थव्यवस्था का पहला प्रोफेसर होने का गौरव प्राप्त है।

माल्थस को प्रभावित करने वाले घटक

(Factors Influencing Malthus)

माल्थस उच्चकोटि के आर्थिक विचारक थे। उन्होने आर्थिक विचारो के इतिहास एव अर्थशास्त्र को कई नये आर्थिक विचार एव विश्लेषणात्मक उपकरण प्रदान किये। किन्तु, वे अपने जनसख्या विषयक विचारो के कारण ही मुख्यत विख्यात है। अत यह सत्य है कि, यदि माल्थस के अन्य विचार समाप्त कर दिये जाये *अथवा माल्थस ने अन्य विषयो पर कुछ नही लिखा* होता तब भी आर्थिक विचारो के इतिहास मे वे अग्रिम पक्ति मे ही रहते। माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त एव चितन कोई आकस्मिक अभिव्यक्ति मात्र नहीं था। उनके विचारो पर अनेक घटको का प्रभाव पड़ा, जिनमे निम्नाकित मुख्य है–

(1) तत्कालीन इंग्लैण्ड में व्याप्त आर्थिक दशायें (Prevailing economic conditions in contemporary England)- 18वी सदी के मध्य तक इग्लैण्ड मे

कृषि क्रांति हो चुकी थी और इलैण्डवासी उसके सुफल भोग चुके थे। किन्तु, इसी सदी के उत्तरार्द्ध मे कृषि की स्थिति मे भारी बदलाव आ गया और बार-बार अकाल की स्थितियां उत्पन्न होने लगी। इससे कृषि पैदावार गिरने लगी और अनाज के भाव बहुत ऊँचे हो गये। इसी समय औद्योगिक क्रांति के दुष्परिणाम सामने आने लग गये। लोगो का परम्परागत पेशा कृषि एव गांव उजडने लगे और औद्योगिक महानगरो मे रोजगार चाहने वालो की भीड़ बढ़ने लगी वस्तुत अकाल से प्रभावित प्रदेश मे लोग नारकीय जीवन बिता रहे थे। माल्थस को चारो ओर गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी एव उत्पात नजर आने लगा। अत उन्होंने जनसख्या मे वृद्धि को घातक बताकर उस पर रोक लगाने का सुझाव दिया।

(2) ऑग्ल दरिद्र कानून का प्रशासन एवं विषय-वस्तु (The administration and the subsiance of British Poor Low)- माल्थस ने इसका विरोध किया। इसने गरीबो को ज्यादा शादियां करने के लिए प्रोत्साहन दिया। यह दोषपूर्ण था। इसकी विषय-वस्तु कमजोर एव प्रशासन ढीला था। इससे गरीबो के हितो की सुरक्षा नहीं हो रही थी। खाद्यान्नो की कीमते बहुत बढ़ गयी थी और श्रमिको की स्वतत्रता कुचली जा रही थी। देश मे गरीबो की सख्या निरन्तर बढ़ रही थी। अत. माल्थस ने जनसख्या मे और वृद्धि को भावी अपशकुन का प्रतीक बताया।

(3) पूर्ववर्ती एवं समकालीन लेखकों के विचार (Ideas of his predecessors and contemporary writers)- इनके विचारो का माल्थस के आर्थिक एव जनसख्या विषयक चिंतन पर गहरा प्रभाव पडा। पूर्ववर्ती लेखको मे वणिकवादी एव प्रकृतिवादी विचारक तथा दार्शनिक मुख्य थे। इनमे क्वेंने, मॉंटेस्क्यू, कैंटीलन, फ्रांसिस बेकन, बैंजामिन फ्रैंकलिन, पेट्टी, मुर्समिक, सोनेन्फेल्स आदि मुख्य है। इन सभी विचारको ने जनसख्या मे उत्तरोत्तर वृद्धि को समृद्धि का प्रतीक मानकर उसमे वृद्धि की सिफारिश की। एक विचारक जोसिया चाइल्ड ने तो जनसख्या मे वृद्धि का समर्थन करते हुए अविवाहित जीवन एव ब्रह्मचर्य पर राज्य द्वारा कर लगाने की सिफारिश की। सरकारो द्वारा भी जनसख्या मे वृद्धि का समर्थन किया जा रहा था। उच्च पदो पर शादी शुदा लोगो की ही नियुक्तियां होने लग गयी थी। माल्थस इन विचारको के 'समृद्धि अति जन- सख्या का अनुगमन करती है' (Overpopulation follows prosperity) के निष्कर्ष से सहमत नही हुये और उन्होने जनसख्या मे वृद्धि को एक महत्त्वपूर्ण चुनौती माना।

माल्थस के समकालीन विचारको मे एडम स्मिथ, रिकार्डो, टाउनसेंड, डेविड ह्यूम, विलियम गोडविन एव काण्डरसेट आदि मुख्य थे। इनमे गोडविन के विचारो एव उनकी दो रचनाओ 'Political Justice' तथा 'Enquirer'

ने माल्थस को सर्वाधिक उद्वेलित किया । उन्होने धरती पर स्वर्ग बनाने की बात कही और पैगम्बर अथवा भविष्य–द्रष्टा की भाति मानव जाति का सुखमय भविष्य बताया । उन्होने बताया कि वतमान की अव्यवस्था एव भौतिक कष्टो के लिए सरकार जिम्मेदार है और वह दिन दूर नही जब मनुष्य थोडे से प्रयासो से ही जीवन के सब सुख भोगने मे सफल हो जायेगा । उनका भावी समृद्धि मे पक्का विश्वास था और कहा कि वैज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति से उत्पादन बढ जायेगा अथवा मनुष्य अपने विवेक से जनसख्या मे वृद्धि रोक देगा । किन्तु, माल्थस उनके इन अति आशावादी विचारो से सहमत नही हुए और फलत उन्होने उनसे बिल्कुल भिन्न दृष्टिकोण अपनाते हुए जनसख्या वृद्धि मे मानव–जाति का अहित माना ।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, यद्यपि माल्थस एडम स्मिथ के एक प्रमुख अनुयायी थे, किन्तु उनके आशावाद से सहमत नही थे । इसीलिए जहा एडम स्मिथ ने राष्ट्रो के धन की प्रकृति एव कारणो की, खोज की माल्थस ने राष्ट्रो की गरीबी की प्रकृति एव कारणो की खोज की और ये कारण उन्हे जनसख्या मे मिले ।

(4) उनके अग्रदूतों के जनसंख्या विषयक विचार (Ideas of his forerunners regarding population)- माल्थस के अग्रदूतो मे सर मैथ्यू हेल एव रॉबर्ट वैसले मुख्य थे । हेल ने बताया कि जनसख्या 34 वर्षो मे रेखागणित अनुपात मे बढकर दुगुनी हो जाती है और अकाल, युद्ध, आतरिक झगडे, महामारिया, बाढ आदि जनसख्या कम कर देती है । इन विचारो से माल्थस को एक दिशा–निर्देश मिला ।

(5) आयर लैण्ड में जनाधिक्य (Over population in Ireland)- माल्थस के समय इग्लैण्ड के पड़ौसी देश आयरलैण्ड मे जनाधिक्य की स्थिति थी । उसे देखकर माल्थस डर गये । उन्होने सोचा कि यह बीमारी इग्लैण्ड मे भी फैल सकती है । अत उन्होने जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाने के लिए देशवासियो को उसके सम्भावित खतरो के विरुद्ध सावधान किया ।

(6) समकालीन योरोप की आर्थिक एवं राजनैतिक दशायें (Economic and political conditions of contemporary Europe)- उस समय सारा योरोपीय महाद्वीप फ्रास के सम्राट नैपोलियन बोनापार्ट के युद्धो से आक्रात था । इन युद्धो से कृषि फसले चौपट हो गयी थी और खाद्यान्नो के भाव न केवल बहुत ऊचे हो गये थे बल्कि उनमे गिरावट की कोई सम्भावना नजर नही आ रही थी। अपने योरोपीय भ्रमण के दौरान माल्थस सभी देशो की आर्थिक स्थिति अपनी आखो से देख चुके थे और कुल मिलाकर उन्हे स्थिति बड़ी भयावह नजर आयी तथा उन्होने इसका समाधान जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाने मे देखा ।

(7) घरेलु परिवेश (Family Environment)- माल्थस के पिता सर डेनियल माल्थस आशावादी थे और गोडविन के विचारो से सहमति रखते थे। पिता–पुत्र मे जब कभी जनसख्या के प्रसग को लेकर चर्चा होती तो मतैक्य नही हो पाता था। इससे माल्थस के मन मे अपने पिताश्री को निरूत्तर करने की भावना प्रबल हो गयी और उन्होने जनसख्या पर एक शोध–प्रबन्धन (treatise) लिख डाला।

प्रमुख कृतियाँ (Major Works)

माल्थस की प्रमुख कृतिया निम्नाकित है–

	शीर्षक (Title)	प्रकाशन वर्ष
(A)	पुस्तकें (Books)	
	(1) An Essay on the principle of Population (गुमनाम)	1798
	(2) An Essay an the Principle of Population or A Veiw of its Past and Present Effects on Human Happiress	1803
	(3) The Princ ples of Political Economy	1820
(B)	पम्पलेट्स :	
	(1) The Crisis, (प्रधानमत्री पिट के प्रशासन की आलोचना) इसका प्रकाशन नही हुआ था।	1796
	(2) An Investigation of the Cause of High Prices of Provisions	1800
	(3) Poor Laws	1813
	(4) Observations on the Effects of the Corn Laws	1814
	(5) Nature and Progress of Rent	1815
	(6) Grounds of an opinion of the Policy of Restructing the Importation of Foreign Corn	1815
	(7) Measure of Value	1823
(C)	पत्र, जो उन्होने रिकार्डो एव अन्य समकालीन लेखको को समय–समय पर लिखे जिनमे उनके आर्थिक विचार है।	

'जनसंख्या सिद्धान्त पर लेख' पर एक टिप्पणी

(A Note on 'An Essay on the Principle of Population')

सन् 1798 मे, अज्ञात नाम से, माल्थस ने अपना 'जनसख्या सिद्धान्त

पर लेख' (An Essay on the Principle of Population, as it affects the Future Improvement of Society with Remarks on the Speculations of Mr Godwin, M Condorcete, and other Writers') लिखा । इसमे 396 पृष्ठ थे और यह तीन खण्डो मे विभाजित था । इस निबन्ध मे गोडविन एव कोण्डरसेट के विचारो के विरुद्ध माल्थस का आक्रोश था । माल्थस ने अपने इस लेख मे प्रचलित सामाजिक एव धार्मिक मान्यताओ के विरुद्ध, जनसख्या वृद्धि को घातक बताकर उस पर रोक लगाने के उपाय बताये थे । अपने ऐसे विचारो पर लोगो की प्रतिक्रिया जानने के लिए, यद्यपि, माल्थस ने अपना नाम गुप्त रखा किन्तु, इस समय तक माल्थस अपने विचारो के लिए बुद्धिजीवियो मे स्थान पा चुके थे, अत लोगो को पता चल गया कि इस पुस्तक के लेखक माल्थस है । माल्थस को डर था कि ऐसे विचारो के बदले सामाजिक बहिष्कार हो सकता है अथवा चर्च एव राज्य द्वारा प्रताड़ना मिल सकती है । किन्तु, जब ऐसा कुछ नही हुआ, तो सन् 1803 मे उन्होने इस पुस्तक का दूसरा सस्करण, जिसे सक्षेप मे 'Essay on Population' कहा जाता है, प्रकाशित किया । इस पुस्तक मे 600 पृष्ठ एव 45 अध्याय है और यह चार खण्डो मे विभाजित है । इसका शीर्षक[2] एव विषय–सामग्री प्रथम रचना से थोडी भिन्न है । सन् 1806, 1807, 1817 एव 1826 मे इस पुस्तक के सस्करण निकले जो उसकी लोकप्रियता से सूचक है । नि सदेह यह माल्थस की सर्वोत्कृष्ट कृति है ।

यद्यपि, माल्थस की इस रचना मे विषय–सामग्री की मौलिकता की दृष्टि से कुछ नही है तथापि इसका प्रस्तुतीकरण एव अभिव्यक्ति इतनी रोचक एव पूर्ण है कि यह 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' (एडम स्मिथ), 'ऑरिजन ऑफ स्पेसीज' (चार्ल्स डार्विन), 'दास कैपीटल' (कार्ल मार्क्स) एव 'दि जनरल थ्योरी' (जे एम कीन्स) के समकक्ष एव युग परिवर्तनकारी रचना मानी जाती है । इसीलिये कहा जाता है कि यदि माल्थस की शेष रचनाये समाप्त भी हो जाये तो भी आर्थिक विचारों के इतिहास मे उनका स्थान पूर्ववत् बना रहेगा ।

माल्थस के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Malthus)

माल्थस के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 जनसख्या सिद्धान्त (Theory of Population)
2 अन्य आर्थिक विचार (Other Economic Ideas)
 (1) मूल्य का सिद्धान्त (Theory of Price)
 (2) वितरण के सिद्धान्त (Theories of Distribution)
 (3) अति–उत्पादन का सिद्धान्त (Theory of Overproduction)

(4) आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Development)
(5) अनुत्पादक भूस्वामी (Unproductive Land Lords)
(6) खाद्यान्न कानून (Corn Laws)
(7) अन्य (Others
(a) राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy)
(b) धन (Wealth) और
(c) विलासिताये (Luxuries)

अब हम क्रमश इन सबका सक्षिप्त विवेचन करेगे ।

1 माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त (Malthusian Theory of Population)

ज्ञातव्य है कि जनसख्या' माल्थस का सर्वाधिक प्रिय विषय रहा । उन्होने जनसख्या के सम्बन्ध मे इधर-उधर बिखरे पडे विचारो को एक -सूत्र मे पिरोकर उन्हे एक सिद्धान्त का रूप दिया । इस सिद्धान्त की विषय-वस्तु की अपेक्षा प्रस्तुतीकरण की मौलिकता के कारण ही यह उनके नाम के साथ जुड़ गया । दूसरे शब्दो मे माल्थस ने कोई नई एव चौकाने वाली बात नही कही बल्कि वही कहा जो उनसे पहले जनसख्या के बारे मे कहा जा चुका था अथवा कहा जा रहा था । वे अपने पूर्ववर्ती एव समकालीन लेखको के इन आशावादी विचारो से सहमत नही हुए कि मानवजाति की समृद्धि जनसख्या वृद्धि मे निहित है अथवा जनसख्या मे वृद्धि से ही आर्थिक समृद्धि का द्वार खुलता है । अत एक भिन्न दृष्टिकोण अपनाते हुए उन्होने बताया कि प्रकृति अपने उपहारो मे कन्जूस है । उसने खोने की टेबल सीमित एव चुने हुए मेहमानो के लिए लगायी है और जो मेहमान बिना बुलाये आयेगे वे आवश्यक रूप से भूखे मरेगे ।[3]

मान्यतायें (Assumptions) माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त निम्नाकित मान्यताओ पर आधारित है-

(i) मनुष्य की कामवासना स्थिर एव अवश्यम्भावी है ।
(ii) कामावासना की पूर्ति एव सतानोत्पादन मे प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध है ।
(iii) मनुष्य भी अन्य जीवो की भाति अपनी सख्या मे अनियत्रित एव असीमित वृद्धि का पक्षधर है और उसमे असीमित सतानोत्पादन क्षमता है ।

---

2 सन् 1803 में प्रकाशित सस्करण का पूरा नाम An Essay on the Principle of Population or a view of its past and Present Effects on Human Happiness है ।

3 "Nature had laid the dining table for a limited number of guests and those who come uninvited must starve. Malthus T.R

(iv) आर्थिक समृद्धि एवं सन्तानोत्पादन मे प्रत्यक्ष एवं धनात्मक सम्बन्ध है।
(v) खाद्यान्न ही जीवन–निर्वाह के एकमात्र स्रोत है।
(vi) कृषि मे क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता से खाद्यान्न मे अपेक्षित वृद्धि सम्भव नही है।

उपर्युक्त मान्यताओ को आधार मानकर माल्थस ने कहा कि "यदि जनसख्या पर नियत्रण नही रखा जाता है तो वह गुणोत्तर श्रेढ़ी मे बढ़ती है तथा जीवन–निर्वाह के साधन अकगणितीय श्रेढ़ी मे बढ़ते है।"[4]

सिद्धान्त के निष्कर्ष अथवा प्रमुख विशेषतायें (Findings or main characteristics of the theory)- माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताये निम्नलिखित है–

(1) जनसख्या गुणोत्तर श्रेढ़ी में बढ़ती है। (Population increases in geometrical progression)- माल्थस ने तथ्यपरक अध्ययन एव गणना के आधार पर बताया कि किसी भी स्थान की जनसख्या तीव्र गति से बढ़ती है और गुणोत्तर श्रेढ़ी मे बढ़ती जनसख्या 25 वर्ष की अवधि मे दुगुनी हो जाती है। दूसरे शब्दो मे, *यदि जनसख्या मे वृद्धि पर किसी प्रकार की रोक न लगायी* जाये तो वह 1 2 4 8 .के अनुपात मे बढ़ती है।

(2) खाद्य-सामग्री अंकगणितीय श्रेढ़ी में बढ़ती है (Subsistence increases in arithmetical progression)- माल्थस ने बताया कि कृषि मे 'क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता के कारण खाद्यान्न मे वृद्धि की दर काफी धीमी रहती है। दूसरे शब्दो मे, इसमें अकगणितीय दर (अर्थात् 1 2 · 3 4...) से वृद्धि होती है।

(3) जनसंख्या एवं जीवन-निर्वाह के साधनों में असंतुलन (*Imbalance in population and means of subsistence*)- *माल्थस* ने बताया कि जनसख्या एव जीवन–निर्वाह के साधनो मे वृद्धि का अनुपात भिन्न–भिन्न होने के कारण इन दोनो मे असतुलन उत्पन्न हो जाता है और जनसख्या जीवन–निर्वाह के साधनो से काफी आगे निकल जाती है। उन्होने बताया कि 200 वर्षों के बाद जनसख्या एव खाद्य सामग्री का अनुपात 256 · 9 एव 300 वर्षों के बाद 4096 13 हो जाता है। इस प्रकार माल्थस का इस कथन मे विश्वास नही था कि *'एक सभ्य समाज मे एक व्यक्ति उससे कही ज्यादा कमाता है जितना उसके जीवित रहने के लिए आवश्यक है।'* अथवा 'जीवन–निर्वाह के साधन स्वत. ही जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगा देते है अत. वह तेजी से नही बढ़ती और इन दोनो असतुलन की कोई सम्भावना नहीं रहती।'

(4) यह असंतुलन स्थायी नहीं (The imbalance is not of a permanent nature)- माल्थस ने कहा कि, दोनो मे वृद्धि की दर असमान होने के कारण यद्यपि, जनसख्या एव जीवन–निर्वाह के साधनों मे असतुलन उत्पन्न हो जाता

है, किन्तु, यह असतुलन स्थायी नही रहता । जन्म दर घटने अथवा मृत्यु दर बढ़ने से यह असतुलन समाप्त हो जाता है ।

(5) असंतुलन के निवारण हेतु दो प्रकार की रुकावटें (Two Categories of checks for the removal of imbalance)- माल्थस के शब्दो मे "जो रुकावटे जनसख्या को जीवन–निर्वाह के साधनो के स्तर तक सीमित रखती है वे *प्राकृतिक एव कृत्रिम है ।" इस कथन के अनुसार असतुलन के निवारण की* रुकावटो के दो प्रमुख रूप है –

(i) प्रतिबन्ध रुकावटें (Preventive checks)- इन्हे कृत्रिम अथवा मानवीय रुकावटे भी कहते है । इसमे वे सारे उपाय सम्मिलित किये जाते है जिनका प्रयोग मनुष्य अपने विवेक से शासित होकर, जनसंख्या को एक निश्चित स्वीकार्य एव वाछित सीमा मे रखने के लिए करता है । दूसरे शब्दो मे, इन रुकावटो द्वारा जन्म दर मे कमी की जाती है । माल्थस ने इन्हे दो भागो मे बाटा है– (a) नैतिक रुकावटे– जैसे, ब्रह्मचर्य, सयम का पालन एव बड़ी उम्र मे शादी आदि। (b) पापाचार (Vice) अर्थात् ऐसे सहवास जिनसे बच्चे न हो, यथा–वेशागमन, अविवेकी अथवा स्वछंद सहवास एव सतति निग्रह के कृत्रिम उपायो (Contraceptives) का प्रयोग आदि । इन दोनो प्रकारो मे से माल्थस ने प्रथम अर्थात् नैतिक रुकावटो का समर्थन किया ।

(ii) प्राकृतिक रुकावटें (Positive checks) जब प्रतिबन्धक रूकावटो द्वारा मनुष्य– जाति जनसख्या वृद्धि पर रोक नही लगाती है तो स्वय प्रकृति प्राकृतिक रुकावटो द्वारा आधिक्य जनसख्या का सफाया कर देती है । इस हेतु प्रकृति मृत्यु दर मे वृद्धि करती है अथवा जीवनावधि कम कर देती है । माल्थस ने इन्हे तीन वर्गों मे विभाजित किया है– (a) युद्ध, आतरिक अशान्ति एव *अराजकता* (b) *अकाल, महामारिया, भूकम्प, भूचाल आदि और* (c) गदी एव भीड़–युक्त बस्तिया, अत्यधिक गरीबी, भुखमरी एव शोषण आदि ।

माल्थस का सुझाव ***(Suggestion of Malthus)***- माल्थस ने सुझाव दिया कि मानव जाति को विवेक से शासित होकर प्रतिबन्धक रुकावटो द्वारा ही *जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाकर उसे एक स्वीकार्य सीमा मे रखना चाहिए ।* उनका कहना था कि (i) प्राकृतिक रुकावटे कष्टदायी हैं (ii) इनके द्वारा *स्थापित सतुलन बिल्कुल अस्थायी होता है क्योकि,* प्राकृतिक रुकावटो द्वारा कम हुयी जनसख्या पुन: बगीचे की कटी हुई घास की तरह तेजी से बढ़ती है । दूसरे शब्दो मे, मानव जाति की अपनी सख्या में वृद्धि की इच्छा तत्काल तीव्र हो जाती है ।

---

4 "Population when unchecked, increases in a geometrical ratio. Subsistence only increases in an arithmatical ratio" *Malthus T.R.*

(iii) इनसे परस्पर निर्भर घटनाओ का एक ऐसा कुचक्र चल पडेगा जिससे बार–बार मनुष्य जाति इन विपदाओ का शिकार होती रहेगी । इसे 'माल्थूजियन कुचक्र' के नाम से जाना जाता है ।

(iv) ये रुकावटे अधी होकर आधिक्य जनसख्या का सफाया करेगी । फलत कार्यशील जनसख्या भी कम होने की आशका प्रबल हो जाती है । इसीलिए माल्थस ने कहा कि, "प्रत्येक व्यक्ति को भली–भाति समझ लेना चाहिये कि वह अपनी गरीबी के स्वय जिम्मेदार है । अत प्रत्येक व्यक्ति क कर्तव्य है कि वह प्राकृतिक रुकावटो की गम्भीरता से बचने के लिए प्रतिबन्धक रूकावटे अपनाये ।" प्रो मार्शल ने माल्थस के सुझाव का उल्लेख करते हुए लिखा कि, "जो भूतकाल मे हुआ है उसी की भविष्य मे पुनरावृत्ति की सभावना है और जनसख्या की वृद्धि को यदि स्वैच्छिक सयम द्वारा न रोका गया तो गरीबी अथवा अन्य किसी कष्टदायी तरीके से उसे रोका जायेगा । इसलिए वे (माल्थस) अनुरोध करते है कि मनुष्य सयम का जीवन बिताये और नैतिक पवित्रता का जीवन बिताने के साथ–साथ शीघ्र विवाह भी न चाहे।"

सक्षेप मे, माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त को एक चार्ट की सहायता से समझाया जा सकता है जो अगले पृष्ठ पर अकित है–

माल्थस का जनसंख्या सिद्धान्त

जनसख्या मे गुणोत्तर श्रेढ़ी (1 2 4 8) मे वृद्धि होती है और 25 वर्षो मे किसी स्थान की जनसख्या बढ़कर दुगुनी हो जाती है।

खाद्यान्न मे अकगणितीय श्रेढ़ी (1 2 3 4 5)मे वृद्धि होती है।

इन दोनो मे असतुलन से 200 वर्षो मे जनसख्या एव खाद्य सामग्री का अनुपात 256 9 हो जाता है।

↓

यह असतुलन स्थायी नही रहता और इसके टूटने के दो उपाय है।

प्रतिबन्धक रुकावटें

(i) **नैतिक संयम**– ब्रह्मचर्य का पालन करना, बडी उम्र मे शादी करना आदि।

(ii) **पापाचार** – कामवासना की पूर्ति होती रहे और बच्चे न हो। अर्थात् जन्म दर घटाने वाले तत्त्व।

प्राकृतिक रुकावटें

(i) युद्ध एवं अशाति।

(ii) प्राकृतिक विपदाये।

(iii) गरीबी, भुखमरी, शोषण आदि। अर्थात् मृत्यु दर बढ़ाने वाले तत्त्व।

प्राकृतिक विपदाये कष्टदायी एव अल्पकालीन है। अत प्रतिबन्धक रुकावटो द्वारा आधिक्य जनसख्या पर रोक लगाना ठीक है।

आलोचना (Criticism) -

माल्थस एव उनके जनसख्या सिद्धान्त की कटु आलोचना हुई है। यह प्रामाणिक है कि आर्थिक विचारो के इतिहास मे किसी अन्य उच्च कोटि के लेखक की इतनी आलोचना नही हुई जितनी माल्थस की । उन्हे पागल, विक्षिप्त अथवा निराशावादी अर्थशास्त्री बताया गया और उन पर आक्षेप लगाया गया कि 'मानव जाति का बुरा चाहने वाला वह काला पिशाच अन्धेरी रातो मे काल की माला जपकर उससे नवजात शिशुओ का सफाया करने की कामना किया करता था ।' यह कहा जाता है कि उन लोगो ने भी माल्थस को गालिया दी जिन्होने उनकी पुस्तक को पढ़ना तो दूर, देखा तक नही । उनके जीवन काल मे ही चार्ल्स हाल, थॉमस जारोल्ड, साइमन ग्रे, जॉन वेयलैण्ड, ग्राहम, जार्ज एन्सर, हैजलिट और गोडविन आदि लेखको ने उनके सिद्धान्त की आलोचना की और उन्हे निरूत्तर करने का प्रयास किया । एडविन कैनन, जे के इन्ग्राम, ऑपेनहीम और निकलसन आदि की गिनती उनके मुख्य आलोचको मे की जाती है । सक्षेप मे, उनके सिद्धान्त की प्रमुख आलोचनाए निम्नांकित है–

(1) **अवास्तविक मान्यताओं पर आधारित अवास्तविक सिद्धान्त (Unrealistic theory based on unrealistic assumptions)-** आलोचको के अनुसार माल्थस की सभी मान्यताये अवास्तविक एव निराधार है, अत उनका सिद्धान्त गलत एव काल्पनिक है । सक्षेप मे,

(i) मनुष्य की कामवासना स्थिर एव अवश्यम्भावी नहीं है । सामाजार्थिक परिवेश एव मूल्यो मे परिवर्तन से इसमे परिवर्तन होता है । आर्थिक समृद्धि मे वृद्धि के साथ–साथ मनुष्य की आर्थिक क्रियाओ मे व्यस्तता बढ़ी है और उसकी कामवासना मे गिरावट आयी है ।

(ii) कामवासना की पूर्ति एव सतानोत्पादन की इच्छा दोनो एक नही है। प्रथम जहा मनुष्य की एक जैविकीय आवश्यकता है वहा दूसरी सामाजार्थिक एव धार्मिक भावनाओ से प्रभावित होती है । इसीलिए आज अपने रहन–सहन के ऊँचे स्तर के प्रति जागरूक नव दम्पत्ति बेबीकार एव बेबी मे से बेबीकार का चयन करता है ।

(iii) मनुष्य विवेकशील है और अन्य जीवो से बहुत भिन्न है अत वह जनसख्या मे अनियन्त्रित एव असीमित वृद्धि नही चाहता ।

(iv) आर्थिक समृद्धि एव सन्तानोत्पादन मे भी प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध नही है । यह एक सामान्य एव सही कथन है कि अमीर अधिक अमीर होते जाते है और गरीबो के बच्चे होते जाते है (the rich get richer and the poor get children) अर्थात् समृद्धि के साथ जनसख्या मे वृद्धि की दर गिरती है और गरीबी मे बढ़ती है ।

(v) माल्थस ने क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता स्वीकार

की किन्तु आलोचको के अनुसार इसकी गम्भीरता एव आवृत्ति इतनी अधिक नही है जितनी माल्थस ने मानी । इनके अनुसार उत्पादन की वैज्ञानिक विधियो के प्रयोग से उस नियम की क्रियाशीलता को रोककर उसकी गम्भीरता कम की जा सकती है ।

(2) जनसख्या गुणोत्तर श्रेढी में नहीं बढती (Population does not increase in geometrical progression) *आलोचको के अनुसार जनसख्या के गुणोत्तर श्रेणी मे* बढ़कर 25 वर्ष मे दुगुनी हो जाने की ऐतिहासिक पुष्टि नही हुयी है । इनके अनुसार जिन योरोपीय देशो के भ्रमण के पश्चात् माल्थस ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया उनकी जनसख्या या तो स्थिर रही है या फिर उसमे वृद्धि की गति बहुत धीमी रही है । कुछ *आलोचको के अनुसार जनसख्या 25 वर्ष मे दुगुनी न होकर 33 वर्षो मे दुगुनी होती है ।*

(3) जीवन-निर्वाह के साधन अकगणितीय श्रेढी में नहीं बढते (Means of subsistence does not increase in arithmatical progression) आलोचको के अनुसार *माल्थस वैज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति का ठीक-ठीक अनुमान नही लगा* पाये। इस प्रगति के कारण जीवन-निर्वाह के साधनो म भी तीव्र वृद्धि करना सम्भव हो गया है ।

(4) जीवन निर्वाह के साधनों की अधूरी व्याख्या *(Incomplete explanation* of means of subsistence) माल्थस ने जीवन-निर्वाह के साधनो मे मुख्यत खाद्यान्न को ही सम्मिलित किया है । आलोचको के अनुसार यह उचित नही है। पाश्चात्य-सम्पन्न पूँजीवादी देशो के आहार म खाद्यान्न की अपेक्षा दूध, फल, अण्डे *मास मछलियो एव सब्जियो का प्रतिशत निरन्तर बढ़ता जा रहा* है । इन सभी चीजो मे तीव्र वृद्धि सम्भव है ।

(5) प्रतिबन्धक रुकावटें अप्रभावी (Preventive checks are ineffective)- आलोचको के अनुसार *माल्थस ने जिन प्रतिबन्धक रुकावटो द्वारा जनसख्या को स्वीकार्य सीमा मे रखने का सुझाव दिया है वे रुकावटे अधिक सार्थक एव* प्रभावशाली नही है । जैसा कि कहा गया है, यदि 30 वर्ष की उम्र मे शादी की जाये तो भी जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि एव जन्म लेने वालो की विनाशकारी झडी लगने के लिए पर्याप्त अवधि शेष रह जाती है । इसी प्रकार सयम के जीवन एव ब्रह्मचर्य के पालन से भी जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि रोकना सम्भव नही है ।

(6) प्राकृतिक रुकावटें अति-जनसख्या की सूचक नहीं (Positive checks are not the indication of over population) माल्थस के अनुसार जब *प्रतिबन्धक रुकावटो द्वारा जनसख्या-वृद्धि पर रोक नही लगायी जायगी तो अति-जनसख्या की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी ।* उनके अनुसार इस स्थिति मे प्रकृति अपना वीभत्स रूप दिखायेगी और वह अनेक प्रकोपो द्वारा आधिक्य

जनसख्या का सफाया कर देगी । दूसरे शब्दो मे, माल्थस के मतानुसार प्राकृतिक प्रकोप अतिजनसख्या के सूचक होते है । आलोचक इससे सहमत नही है । उनके अनुसार प्राकृतिक प्रकोपो के कारण भी प्रकृति मे ही निहित है न कि अति–जनसख्या मे । क्योकि ये प्रकोप तो उन देशो एव स्थानो पर भी आते रहते है जहाँ जनसख्या बहुत ही कम है, अत अति जनसख्या की स्थिति एव प्राकृतिक प्रकोपो मे कोई सह–सम्बन्ध नही है ।

(7) गरीबी का सही कारण खोजने में विफल (Failed to find the real cause of poverty)- आलोचको के अनुसार माल्थस लोगो की गरीबी से डरे और उन्होने गरीबी का कारण अति–जनसख्या मे देखा जबकि वास्तव मे गरीबी का कारण अति–जनसख्या न होकर न्यून–उत्पादन है । आर्थिक विकास की दौड़ मे आज दुनिया के वे ही देश पीछे है जहाँ उत्पादन कम है ।

(8) जनसंख्या की समस्या की प्रकृति की अधूरी व्याख्या (Incomplete explanation of the nature of the problem of population)- माल्थस ने जनसख्या की समस्या को केवल आकार की समस्या माना । दूसरे शब्दो मे, उन्होने केवल यही स्वीकार किया कि जनसख्या की समस्या का केवल एक ही पक्ष है और वह है परिमाणात्मक पक्ष । इसके विपरीत आलोचको के अनुसार इस समस्या का गुणात्मक पक्ष भी कम महत्त्वपूर्ण नही है । इनके अनुसार जनसख्या की समस्या केवल आकार की ही समस्या नही बल्कि कुशल उत्पादन एव न्यायोचित वितरण की समस्या भी है । अनुकूलतम जनसख्या सिद्धान्त माल्थस के सिद्धान्त की इसी आलोचना पर आधारित है ।

(9) जनसख्या में प्रत्येक वृद्धि अनिवार्यत· हानिकारक नहीं (Every increase in population is not essentially harmful)- आलोचको के अनुसार जनसख्या मे होने वाली प्रत्येक वृद्धि से आतकित होने की आवश्यकता नही है । जैसा कि **जार्ज एन्सर** ने कहा है, 'जनसख्या वृद्धि ने आदि मानव को शिकारी, शिकारी को चरवाहा, चरवाहे को कृषक और कृषक को उद्योगपति बनाया ।' अत इसे घातक एव हानिकारक नही माना जा सकता ।

10 ऐतिहासिक तथ्य उसके खतरों की पुष्टि नहीं करते (Historical facts do not confirm his fears)- माल्थस ने जनसख्या वृद्धि के जो सम्भावित खतरे बताये, उनकी मानव जाति का इतिहास पुष्टि नही करता है । सन् 1850 से 1900 के मध्य अमरीका की जनसख्या 2 3 करोड से बढ़कर 9 2 करोड हो गयी किन्तु, वहाँ जनाधिक्य नही हुआ । इसी प्रकार इग्लैण्ड एव स्कॉटलैण्ड की जनसख्या भी इसी अवधि मे 1 करोड़ से बढ़कर 4 5 कारोड़ हो गयी किन्तु वहाँ गरीबी एव भुखमरी की स्थिति उत्पन्न नही हुयी, क्योकि वहाँ इसी अनुपात मे आर्थिक समृद्धि बढ़ गयी थी ।

11 **उतावले एव नाटकीय निष्कर्ष** (Hasty and unwarranted conclusions)- माल्यस भावी प्रवृत्तियो, परिवर्तनो एव विकास का सही–सही अनुमान नही लगा सके । उन्होने शिक्षा, रहन–सहन के स्तर मे सुधार, परिवहन एव सचार के सस्ते, पर्याप्त एव शीघ्रगामी साधनो, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एव सहयोग मे वृद्धि की महत्ता की उपेक्षा कर उतावले एव नाटकीय निष्कर्ष प्रतिपादित कर दिये । वे भूल गये कि जो बच्चा एक मुह लेकर आता है उसके दो हाथ एव विकसित मस्तिष्क भी होता है और उसका कार्य–क्षेत्र सारी दुनिया है ।

निष्कर्ष (conclusion) माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त की उपर्युक्त आलोचनाये, यद्यपि, निर्मूल नही है तथापि ये इतनी महत्त्वपूर्ण नही है कि इनके आधार पर इसे निरर्थक घोषित किया जा सके । माल्थस मानव जाति के सच्चे हितैषी थे । उन्होने जनसख्या वृद्धि के सम्भावित खतरे के विरुद्ध मानव जाति को सजग करना अपना कर्तव्य समझा । वे अपने सिद्धान्त मे किसी प्रकार की गणितीय शुद्धता भरना नही चाहते थे । वे गणित के विद्यार्थी रहे, अत अपने सिद्धान्त को रोचक एव तथ्यपरक बनाने के लिए उन्होने जनसख्या एव खाद्य सामग्री मे गुणोत्तर एव अकगणितीय श्रेढ़ी मे वृद्धि की बात कही । अत **प्रो हैने** का यह कथन सही है कि, ''नि सदेह माल्थस की कुछ कमिया क्षम्य है क्योकि वे उनके कथन को स्पष्ट एव प्रभावशाली बनाने के प्रयास मे हुई है । इन्हे उनके सिद्धान्त को गलत समझे जाने का एक प्रमुख कारण माना जा सकता है ।'' प्रो वाकर, मार्शल, टॉजिग आदि अर्थशास्त्रियो ने उनके विचारो का समर्थन किया था । क्लार्क ने तो यहाँ तक कहा कि, 'इस सिद्धान्त की जितनी आलोचनाये की गई है उसमे उतनी ही अधिक दृढ़ता आयी है ।' कटु आलोचनाओ के बावजूद उनका सिद्धान्त अडिग खड़ा है। आज एशिया, अफ्रिका एव लैटिन अमेरिका के बहुत से देश जनाधिक्य की समस्या से ग्रसित है और वे माल्थस के अजायबघर नजर आते है, भले ही उन देशो की जनसख्या बहुत कम बढ़ी है जिनके आधार पर माल्थस ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था । यदि जनसख्या पर नियत्रण के उपाय न किये जाते तो विश्व की जनसख्या कही अधिक होती । अत माल्थस की आशकाये भी निर्मूल नही थी ।

2. अन्य आर्थिक विचार (Other Economic Ideas)-

माल्थस की दूसरी महत्त्वपूर्ण रचना "The Principles of Political Economy" मे मुख्यत उनके शेष आर्थिक विचार है । 592 पृष्ठो की यह पुस्तक 7 अध्यायो मे विभाजित है । इसमे तथा विभिन्न पुस्तिकाओ मे वर्णित प्रमुख आर्थिक विचार निम्नाकित है–

(1) मूल्य सिद्धान्त (The Theory of Value) The principles of Political Economy' के दूसरे अध्याय मे माल्थस के मूल्य विषयक विचार है ।

यद्यपि, मूल्य के विषय मे उन्होने किसी सुस्पष्ट एव भिन्न सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया, तथापि, उन्होने एडम स्मिथ एव रिकार्डो के मूल्य विषयक विचारो की आलोचना मे जो विचार रखे उनके आधार पर उनके मूल्य सिद्धान्त की निम्नाकित रूपरेखा बन सकती है–

किसी वस्तु के मूल्य से उनका आशय उस वस्तु की विनिमय–शक्ति से था। उन्होने उत्पादन लागत को मूल्य का आधार मानकर मूल्य के उत्पादन लागत सिद्धान्त का समर्थन किया और कहा कि किसी वस्तु का न्यूनतम मूल्य उसकी उत्पादक लागत के बराबर अवश्य होना चाहिये ताकि श्रमिको एव पूजीपतियो को खाद्यान्न एव कच्चे माल की लगातार पूर्ति होती रहे। उन्होने उत्पादन लागत के तीन प्रमुख घटक माने–मजदूरी, लाभ और लगान तथा कहा कि यदि वस्तु का मूल्य इससे नीचे चला जाता है तो उसका उत्पादन गिर जाता है अथवा बद हो जाता है। इससे वस्तु की पूर्ति घट जाती है और परिणामस्वरूप मूल्य बढ़ जाता है।

मूल्य के निर्धारण मे माल्थस ने वस्तु की पूर्ति अर्थात् उत्पादन लागत के साथ–साथ वस्तु की माग की शक्ति की महत्ता भी स्वीकार की। इसीलिए उनके मूल्य विषयक विचार एडम स्मिथ एव रिकार्डो के विचारो से अधिक अच्छे एव वास्तविकता के कुछ नजदीक थे।

माल्थस ने मूल्य के तीन रूप – (i) प्रयोग मूल्य (value in use), (ii) मौद्रिक विनिमय मूल्य (nominal value in exchange और (iii) वास्तविक अथवा आतरिक विनिमय मूल्य (real or intrinsic value in exchange) बताये। उन्होने इन तीनो का अन्तर स्पष्ट करने का भी प्रयास किया और कहा कि प्रयोग मूल्य वस्तु की वास्तविक उपयोगिता का सूचक होता है जबकि मौद्रिक विनिमय मूल्य किसी बहुमूल्य धातु मे व्यक्त किया गया मूल्य होता है। उन्होने बताया कि इस मूल्य का माप मुद्रा द्वारा किया जाता है। वास्तविक अथवा आतरिक विनिमय मूल्य से उनका आशय किसी वस्तु की विनिमय शक्ति अर्थात् विनिमय मे एक वस्तु के बदले किसी दूसरी वस्तु की मात्रा प्राप्त करने की सामर्थ्य से था।

वस्तुओ के मूल्य के साथ–साथ माल्थस ने मुद्रा के मूल्य के बारे मे भी अपने विचार व्यक्त किये। माल्थस ने मुद्रा को मूल्य का सर्वाधिक सुविधाजनक मापक बताया और कहा कि जब मुद्रा का मूल्य गिरता है तो खाद्यान्न, कच्चे माल और श्रम की मौद्रिक कीमत बढ़ जाती है। दूसरे शब्दो मे, उन्होने मुद्रा–मूल्य एव सामान्य कीमत–स्तर मे प्रत्यक्ष एव ऋणात्मक सम्बन्ध बताया।

अन्त मे, माल्थस ने अपने मूल्य विषयक विचारो को साधन कीमत–निर्धारण मे भी व्यक्त किया और कहा कि मजदूरी, लगान और लाभ

भी उन्ही शक्तियो द्वारा निर्धारित होते है जिनके द्वारा किसी वस्तु का मूल्य निर्धारित होता है । इस प्रकार निष्कर्ष रूप मे यह माना जा सकता है कि यद्यपि माल्थस के मूल्य विषयक विचार पूर्ण नही थे, किन्तु वे एडम स्मिथ एव रिकार्डो के विचारो से ठीक थे और उन्होने मार्शल के विचारो को एक आधार भूमि प्रदान की ।

(2) **वितरण के सिद्धान्त (Theories of Distribution)**- माल्थस के लगान, मजदूरी एव लाभ विषयक विचारो के आधार पर इनके वितरण के सिद्धान्त की व्याख्या की जा सकती है । सक्षेप मे, इन तीनो का विवेचन निम्नाकित है–

(a) **लगान (Rent)**- माल्थस ने डेविड रिकार्डो की भाति लगान के किसी सिद्धान्त का तो प्रतिपादन नही किया, किन्तु उनके लगान विषयक विचार, जो एडम स्मिथ के लगान विषयक विचारो एव रिकार्डो के लगान सिद्धान्त के बीच की एक महत्त्वपूर्ण कडी है, सर्व प्रथम सन् 1815 मे एक पम्पलेट (Nature and Progress of Rent) एव तत्पश्चात् सन् 1820 मे उनकी पुस्तक 'The Principles of Political Economy' मे प्रकाशित हुए ।

माल्थस ने 'भूमि की उपज के मूल्य मे से उसके उत्पादन की सभी लागते घटा देने के पश्चात् शेष राशि को भूमिपति का लगान'[5] माना । उन्होने लगान को भूमि की उदारता (bounty of nature) का प्रतीक माना और कहा कि घटिया अर्थात् कम उपजाऊ भूमियो की उपज पर बढ़िया अर्थात् अधिक उपजाऊ भूमियो की उपज का आधिक्य ही उनके मालिको अर्थात् भूमिपतियो का लगान होता है । उन्होने इसकी उत्पत्ति के निम्नलिखित कारण बताये–

(i) **भूमियों की उर्वरा शक्ति**– जिसके कारण वे उत्पादन लागत से अधिक उपज देती है ।

(ii) **उपज की अच्छी किस्म**– जिसके कारण उनकी उत्पादित मात्रा से अधिक माग की जाती है ।

(iii) **जनसंख्या में वृद्धि**– जिसके कारण भूमि की माग (कृषि कार्य के लिए) बढ़ती है और

(iv) **अधिक उर्वरा शक्ति वाली भूमियां**– जिनकी मात्रा उनकी माग से कम रहती है ।

माल्थस ने बताया कि घटिया किस्म की भूमि की उपज द्वारा कीमत

---

5 "Rent is that portion of the value of the whole produce which remains to the owner of the land after all the outgoings belonging to its cultivation of whatever kind have been paid including the profits of the capital employed" Malthus T R

का निर्धारण होने के कारण अच्छी किस्म की भूमियो के मालिको को ऊँचे लगान मिलते है अत रिकार्डो की भाति उन्होने भी लगान को उपज के मूल्य का परिणाम बताया और कहा कि भूमिपतियो एव शेष समाज के हितो मे कोई विरोध नही है। इस प्रकार उन्होने भूमिपतियो को इस आक्षेप से मुक्त कर दिया कि 'वे परजीवी है और बिना बोये ही काटते है'। उन्होने बताया कि गरीबी, अच्छी किस्म की भूमियो की उर्वरा शक्ति मे गिरावट, पूजी एव जन– सख्या मे कमी, कच्चे माल की कीमतो मे गिरावट और कठिन एव अरुचिकर कृषि प्रणाली मे भूमियो के लगान गिरते है एव विलोमश बढ़ते है। उन्होने बताया कि जब भूमियो के मालिको को लगान मिलता है तो वे घटिया भूमियो पर भी खेती करना आरम्भ कर देते है और परिणामस्वरूप उनकी श्रेष्ठ भूमियो का लगान बढ़ जाता है। इस प्रकार माल्थस ने एडम स्मिथ के इस विचार का खण्डन कर दिया कि भूमि पर एकाधिकार के कारण भूमिपतियो को ऊँचा लगान मिलता है। इसके विपरीत माल्थस ने यह कहा कि कृषि उत्पादन स्वय ही अपनी माग सृजित कर लेता है क्योकि कृषि उत्पादन मे वृद्धि आवश्यक रूप से जनसख्या मे वृद्धि से पीछे रहती है। परिणामस्वरूप, घटिया भूमियो पर खेती करना एक सामाजिक विवशता है जिससे लगान का उदय होता है। उन्होने लगान को अवश्यम्भावी माना और कहा कि लगान आर्थिक प्रगति का परिणाम है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि, यद्यपि माल्थस लगान के किसी पूर्ण एव सुस्पष्ट सिद्धान्त का प्रतिपादन तो नही कर पाये किन्तु उनके लगान सम्बन्धी विचार ठोस एव परिपक्व थे।

(b) मजदूरी (Wages)- माल्थस ने मजदूरी को "श्रम के वैयक्तिक परिश्रम का पुरस्कार"[6] बताया और कहा कि वस्तु के मूल्य की भाति श्रम के मूल्य अर्थात् मजदूरी को भी वास्तविक मजदूरी एव मौद्रिक मजदूरी मे अभिव्यक्त किया जा सकता है। उन्होने बताया कि वास्तविक मजदूरी से आशय 'श्रमिक को कार्य के बदले प्राप्त होने वाली, आवश्यक, आराम एव विलासिता की वस्तुओ की मात्रा से है' जबकि मौद्रिक मजदूरी इन वस्तुओ का मौद्रिक मूल्य होती है। उन्होने बताया कि नकद अर्थात् मौद्रिक मजदूरी का निर्धारण श्रम की माग और पूर्ति की शक्तियो द्वारा होता है। इस दृष्टि से, उन्हे बाद मे विकसित मजदूरी के माग एव पूर्ति सिद्धान्त का पूर्वगामी माना जा सकता है। किन्तु, माल्थस ने बार–बार यह कहा कि 'गरीब अपनी गरीबी के लिए स्वय जिम्मेदार है।' उनके इस कथन से ऐसा आभास होता है कि वे मजदूरी के जीवन–निर्वाह सिद्धान्त के समर्थक थे, जबकि वास्तव मे उन्होने

6 "The remuneration to the labour for his personal exertions" Malthus T R

कही पर भी अपना यह मतव्य स्पष्ट नही किया । इस प्रकार मजदूरी निर्धारण के सिद्धान्त के बारे मे उनके विचार अस्पष्ट ही रहे ।

(c) **लाभ (Profit)**- माल्थस ने पूजी से प्राप्त आय को लाभ कहा । इसकी अवधारणा के स्पष्टीकरण मे उन्होने धन एव पूजी का अन्तर भी स्पष्ट किया और कहा कि धन एक व्यापक अवधारणा है जबकि पूजी सकीर्ण । दूसरे शब्दो मे, उन्होने बताया कि पूजी धन का एक महत्त्वपूर्ण घटक है और इस घटक का विनियोग पूजीपति लाभ कमाने की आशा मे करता है । इस प्रकार उनके मतानुसार जिस प्रकार मजदूरी उत्पादन के श्रम साधन का पुरस्कार है, उसी प्रकार लाभ पूजी का पुरस्कार है जो उसके साधक पूजीपति को मिलता है । उन्होने लाभ को पूजी की उत्पादकता से सम्बद्ध किया और कहा कि जब इसमे वृद्धि होती है तो लाभ बढ़ता है और विलोमश घटता है । इस प्रकार उन्होने एडम स्मिथ के इस सामान्यीकरण का खण्डन कर दिया कि मजदूरी मे कटौती से ही लाभ मे वृद्धि होती है । इसके विपरीत उन्होने बताया कि जब श्रमिको को अच्छे उपकरण प्रदान कर उत्पादन प्रक्रिया मे लगाया जाता है तो उनकी उत्पादकता पहले से अधिक हो जाती है और इससे पूजी पर प्राप्त होने वाला लाभ पहले की अपेक्षा बढ़ जाता है ।

(3) **अति उत्पादन का सिद्धान्त (*Theory of Over production*)**- इसे न्यून–उपभोग (under consumption) का सिद्धान्त अथवा आर्थिक सकट (Economic crisis) का सिद्धान्त भी कहते है । माल्थस ने इससे सम्बद्ध विचारो को, जो मूलत उत्पादन एव प्रभावपूर्ण माग मे कमी के सम्बन्ध मे है, अपनी रचना 'The Principles of Political Economy' मे व्यक्त किया हैं । इन्हे जानने के लिए थोड़ी पृष्ठभूमि की जानकारी आवश्यक है ।

फ्रासिसी अर्थशास्त्री जे बी. से (J B Say), जो माल्थस के समकालीन थे, ने पूर्ण प्रतिस्पर्धी ''पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के कार्य सचालन के बारे मे एक नियम प्रतिपादित किया जिसे 'से का बाजार नियम' (*Say's* Law of Markets) कहा जाता है । इस नियम मे उन्होने बताया कि किसी भी वस्तु की पूर्ति स्वय अपनी माग सृजित करती है (Supply creates its own demand) अत. सामान्यतया किसी अर्थव्यवस्था मे, दीर्घ काल मे, अति उत्पादन अथवा न्यून उत्पादन की स्थिति नही रहती है । उन्होने कहा कि यदि अल्पकाल मे कही न्यून अथवा आधिक्य उत्पादन की स्थिति विद्यमान रहती है तो बाजार की माग और पूर्ति की शक्तिया इस प्रकार क्रियाशील होती है कि उत्पादन के साधनो की गतिशीलता के कारण ये स्थितिया शीघ्र ही समाप्त हो जाती है । उन्होने बताया कि किसी वस्तु के उत्पादन मे ही उसकी माग की शक्ति निहित रहती है क्योकि व्यक्ति, एक साथ उत्पादन एव उपभोक्ता दोनो है । जब वह किसी वस्तु का उत्पादन करता है तो बदले मे उसे पुरस्कार अथवा मौद्रिक

आय मिलती है जिसका प्रयोग वह उसी वस्तु की उत्पादित मात्रा की खरीद मे कर सकता है । ऐसी स्थिति मे उत्पादित वस्तु की बाजार मे तत्काल माग व बिक्री हो जायेगी । फलत बाजार मे अति उत्पादन अथवा आधिक्य उत्पादन की स्थिति नही बनेगी । इसी प्रकार जब उत्पादन गिर जाता है तो श्रमिको की आय गिर जाती है । इससे उनकी व्यय करने की सामर्थ्य गिर जाती है । फलत वे बाजार मे वस्तु की माग मे वृद्धि नही कर पाते । अत अल्प उत्पादन अथवा न्यून उत्पादन की समस्या गम्भीर नही हो पायेगी । इस प्रकार 'से' के मतानुसार बाजार शक्तियो मे स्वत समायोजन की एक प्रक्रिया चलती है, अत सामान्यतया अति उत्पादन अथवा न्यून उत्पादन की दशाओ द्वारा या तो आर्थिक उच्चावचन आते ही नही और यदि आते है तो वे बहुत गम्भीर नही होते है ।

यद्यपि डेविड रिकार्डो और दूसरे समकालीन लेखको ने इन विचारो मे अपनी सहमति व्यक्त की, किन्तु, माल्थस से के बाजार नियम से सहमत नही हुए । उसका खण्डन करते हुए उन्होने बताया कि पूर्ति स्वय समर्थ माग का एकमात्र स्रोत नही है । अत जब पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे कुल समर्थ माग कुल उत्पादन से पीछे रह जाती है तो अति उत्पादन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । उनके मतानुसार पूजीवादी आर्थिक प्रणाली की सरचना इतनी सरल नही है जितनी कि से ने मानी । अत एक जटिल–मौद्रिक–पूजीवादी आर्थिक प्रणाली मे वस्तुओ द्वारा वस्तुओ के विनिमय मे अथवा पूर्ति एव माग के बीच प्रत्यक्ष पारस्परिक निर्भरता के आधार पर अति उत्पादन की समस्या का समाधान नही खोजा जा सकता ।

माल्थस ने बताया कि 'से का बाजार नियम' तभी क्रियाशील होता है जब कुल उत्पादन एव कुल उपभोग दोनो बराबर हो । दूसरे शब्दो मे, लोग अपनी सम्पूर्ण आय को व्यय कर दे अर्थात् बचत न करे । किन्तु, वास्तव मे, एक पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे पूजीनिवेश बढ़ाने के लिए बचते बढ़ायी जाती है। इससे उत्पादित वस्तुओ की माग कम हो जाती है क्योकि, वर्तमान आय का जो भाग बचा लिया जाता है वह उपभोग व्यय के लिए उपलब्ध नही हो पाता है । इससे कुल उत्पादन का उपभोग अथवा विक्रय नही हो पाता, परिणामस्वरूप अति उत्पादन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । अपने इन्ही विचारो के कारण माल्थस को व्यापार–चक्रो के न्यून–उपभोग सिद्धान्त (under consumption theory) का अग्रदूत कहा जाता है, जिसके आधार पर आगे चलकर सन् 1936 मे प्रो जे एम कीन्स ने, अपनी रचना 'The General Theory of Employment, Interest and Money' मे, प्रभावपूर्ण माग मे कमी को रोजगार–स्तर मे गिरावट का एक कारण बताकर अपने रोजगार सिद्धान्त का प्रतिपादन किया ।

माल्थस के सामान्य अति उत्पादन सम्बन्धी उपर्युक्त विचार अनुभूत सत्य थे । औद्योगिक क्राति के उत्तर प्रभावो एव नैपोलियन के युद्धो के कारण 19वी सदी के प्रथम चतुर्थांश मे इग्लैण्ड मे गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, आर्थिक मदी, अति–उत्पादन, न्यून–उपभोग आदि की स्थितिया विद्यमान थी जिनसे माल्थस ने अमीरो के मध्य निर्धनो की सख्या बढ़ती देखी । सामान्यत *अति–उत्पादन की सम्भावना के लगातार मौजूद रहने के आधार पर ही* माल्थस ने अपने पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको के इस मत का खण्डन किया कि आर्थिक समृद्धि के लिए विनियोग एव बचत आवश्यक है और बचतो मे वृद्धि से आर्थिक विकास की गति तेज होती है । इसके विपरीत माल्थस ने कहा कि जब बचते बढ़ जाती है किन्तु, तदनुरूप विनियोग नही *बढ़ता है तो बचते आर्थिक विकास मे सहायक होने के बजाय उसमे बाधक* बन जाती है ।

माल्थस ने कहा कि विनियोग अनुत्पादक उपभोग अर्थात् उपभोक्ता वस्तुओ की माग पर निर्भर करता है । अत बचत बढ़ाकर जब उपभोक्ता वस्तुओ की माग मे कमी कर दी जाती है तो विनियोगो मे वृद्धि के लिए कोई जगह ही नही रह जाती है । ऐसी स्थिति मे जब बचते बढ़ती है तो बाजार मे उपभोक्ता वस्तुओ की माग कम हो जाती है और परिणामस्वरूप निवेशकर्त्ता विनियोग बढ़ाने मे हिचकिचायेगे । इस प्रकार माल्थस ने बचत को आय सृजन की प्रक्रिया मे एक ऐसा रिसाव माना जिसकी पूर्ति विनियोग वृद्धि से सम्भव नही । इसीलिए माल्थस ने विनियोगो मे वृद्धि के लिए बचत की तुलना मे *उपभोक्ता वस्तुओ की माग मे वृद्धि के जरिये प्रभावपूर्ण माग मे वृद्धि* का समर्थन किया जिसमे अति उत्पादन की समस्या का समाधान निहित है । दूसरे शब्दो मे, इससे उत्पादन वृद्धि के बावजूद कीमतो मे गिरावट की प्रवृत्ति उत्पन्न नही होगी । इसी आधार पर माल्थस ने समाज मे धन के असमान *वितरण का विरोध एव समान वितरण का समर्थन किया । उन्होने माना कि* धन का असमान वितरण कम उपभोग एव अधिक बचत को जन्म देकर अति उत्पादन की समस्या पैदा करता है । उन्ही के शब्दो मे "सैकडो हजारो पौण्ड की वार्षिक आय कमाने वाले एक अकेले उत्पादक की तुलना मे तीस–चालीस उत्पादक जिनकी वार्षिक आय 100 से 500 पौण्ड के बीच है, अनिवार्यताओ, सुविधाओ एव विलासिताओ की वस्तुओ की अधिक प्रभावपूर्ण माग सृजित करेगे ।" उन्होने बताया कि जिस समाज मे समृद्धि बढ़ती है, उस समाज के लोगो की आय बढ़ती है । किन्तु, बढ़ी हुई आय का सब लोगो मे एक समान वितरण नही होता । फलत एक ओर अमीरो के लिए बचत करना सुगम हो जाता है जिससे विनियोग एव उत्पादन बढ़ता है किन्तु, दूसरी ओर, साथ ही साथ, गरीबो की आय मे इतनी वृद्धि नही होती जिससे

वे इस बढ़े हुए उत्पादन की खरीद कर सके। अत अन्तत अति उत्पादन एव बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

किन्तु, इसका यह आशय नही है कि माल्थस बचत एव विनियोग विरोधी थे। उन्होने उस सीमा तक इन दोनो मे वृद्धि का समर्थन किया जिस सीमा तक उनमे सतुलन सम्भव हो जाता है। उन्होने केवल आधिक्य बचतो का विरोध किया जिनका तत्काल विनियोग सम्भव नही होता और परिणामस्वरूप वे आर्थिक विकास मे बाधक बनने लगती है। उन्ही के शब्दो मे, "एडम स्मिथ ने बताया कि मितव्ययिता से पूजी बढ़ती है तथा प्रत्येक मितव्ययी व्यक्ति समाज का हितैषी होता है और उपभोग पर उत्पादन आधिक्य शेष से समाज के धन मे वृद्धि होती है। यद्यपि ये विचार काफी सही है किन्तु, ये असीमित मात्रा मे सही नही है। अर्थात् एक सीमा से अधिक बचत उत्पादन का उद्देश्य ही विफल कर देगी। यदि प्रत्येक व्यक्ति (अधिक बचत करने के प्रलोभन मे) घटिया खाने, निकृष्टतम कपडो और घटिया आवास से सतुष्ट हो गया तो यह तय है कि समाज मे और भोजन, वस्त्र एव आवास *का अस्तित्व एव महत्त्व नही रहेगा* और ऐसा *समाज आर्थिक विकास* की दृष्टि से प्राचीन आदिम समाज के समान होगा। इससे स्पष्ट है कि सामान्य बचत समाज के लिए हितकर एव आधिक्य बचत अहितकर है। अत उत्पादन क्षमता एव उपभोग प्रवृत्ति को ध्यान मे रखकर ही बचत को इन दोनो सीमाओ के बीच एव उस स्तर पर निर्धारित करना चाहिये जहा वह आर्थिक विकास एव धन मे वृद्धि को अधिक से अधिक प्रोत्साहन दे सके।"

माल्थस के उपर्युक्त विचार स्वत स्पष्ट एव प्रामाणिक है। वे प्रथम अर्थशास्त्री थे जिन्होने आर्थिक विकास मे उत्पादक उपभोग के साथ-साथ अनुत्पादक उपभोग का महत्त्व समझा। यही नही उन्होने अपने ऐसे विचारो से पूजीवादी अर्थव्यवस्थाओ की स्वय-सचालकता पर अगुली उठायी और कहा कि बाजार शक्तियो के सहारे ये अर्थव्यवस्थाये पूर्ण रोजगार की स्थापना का लक्ष्य प्राप्त नही कर सकती। अत प्रछन्न रूप मे उन्होने निर्बाधावाद की नीति का खण्डन कर आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप की महत्ता स्वीकार कर उसका समर्थन किया।

किन्तु, इसका यह आशय नही है कि वे पूजीवाद के समर्थक नही थे। वास्तव मे, वे पूजीवाद के कट्टर समर्थक थे। इसीलिए उन्होने इसके समर्थन मे कहा कि, 'भूस्वामी एव राज्य कर्मचारी भले ही अनुत्पादक, परजीवी एव सामाजिक दृष्टि से एक बुराई हो परन्तु आर्थिक दृष्टि से अच्छे है, क्योकि ये अपने ऊँचे अनुत्पादक व्ययो के जरिये पूजीवादी अर्थव्यवस्था की प्रभावपूर्ण माग मे वृद्धि करते है और इस प्रकार अति उत्पादन एव बेरोजगारी की *समस्याओ की गम्भीरता कम करने मे सहायक होते है।' यही नही,* उन्होने

तो यहाँ तक कह दिया कि, "एक ऊँची उत्पादन क्षमता वाले देश को अनुत्पादक उपभोक्ताओ का एक समूह रखना चाहिये जो आधिक्य उत्पादन की माग कर के।"[7]

माल्थस के उपर्युक्त विचार ठोस एव परिपक्व थे। इसीलिए कहा जाता है कि 'यदि वे इस विषय को जनसख्या के विषय की भाति थोडी गम्भीरता से लेते तो वे जनसख्या के क्षेत्र की भाति इस क्षेत्र मे भी अपना नाम सदा के लिए सुरक्षित कर लेते।'

(4) आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Development)- यद्यपि, माल्थस ने आर्थिक विकास के किसी एकीकृत सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया किन्तु, "The Principles of Political Economy" के अतिम अध्याय मे उनके आर्थिक विकास विषयक विचार है। उन्होने एक निश्चित स्वीकार्य सीमा मे जनसख्या मे वृद्धि को आर्थिक विकास के लिए एक आवश्यक शर्त माना। किन्तु, साथ ही साथ उन्होने यह भी स्वीकार किया कि केवल जनसख्या मे वृद्धि से ही आर्थिक विकास सम्भव नही है।

अत जनसख्या वृद्धि के पूरक एव सहयोगी घटको के रूप मे उन्होने पूजीगत स्टॉक मे वृद्धि, कच्चे माल की पर्याप्त पूर्ति के लिए उपजाऊ भूमियो की उपलब्धता एव वैज्ञानिक आविष्कारो को भी आर्थिक विकास के लिए आवश्यक माना और कहा कि आर्थिक विकास जनसंख्या, पूजी, उपजाऊ भूमियो एव वैज्ञानिक आविष्कारो का फलन है। सूत्र रूप मे, माल्थस के अनुसार,

आर्थिक विकास = f (जनसख्या, पूजीगत स्टॉक, उपजाऊ भूमिया, आविष्कार) यहाँ f से आशय फलन से है।

माल्थस ने सतुलित आर्थिक विकास का समर्थन किया और कहा कि प्रत्येक देश को उद्योग एव व्यापार के साथ–साथ कृषि का भी विकास करना चाहिये ताकि वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बन सके। उन्होने जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि को आर्थिक विकास मे बाधक माना, अत प्रतिबन्धात्मक रुकावटो द्वारा जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाने का सुझाव दिया।

आर्थिक विकास के लिए माल्थस ने श्रम–बचत तकनीको अर्थात् पूजी–गहन तकनीको एव आविष्कारो का समर्थन किया क्योकि, इनसे आर्थिक विकास की गति तेज होती है। वे औद्योगीकरण के समर्थक थे। आर्थिक एव सामाजिक पिछड़ापन दूर करने के लिए उन्होने गरीबो को अपनी

---

7 "It is absolutely necessary that a country with great powers of production should possess a body of unproductive consumers" Malthus T.R

गरीबी के लिए स्वय जिम्मेदार माना और कहा कि अपने परिश्रम एव योग्यता द्वारा ही वे अपनी स्थिति सुधार सकते है । उन्होने गरीबो की स्थिति सुधारने के लिए बचत बैको की स्थापना का सुझाव दिया ताकि उन्हे इनसे सकटकाल मे सहायता उपलब्ध करवायी जा सके ।

(5) अनुत्पादक भूस्वामी (Unproductive Land Lords)- माल्थस के समय तक भूस्वामियो को परजीवी एव खून चूसने वाला शोषक वर्ग मानकर गालिया दी जा रही थी । माल्थस ने इस वर्ग की सामाजिक एव आर्थिक महत्ता सिद्ध कर इसे आलोचनाओ के घेरे से बाहर निकाल कर सामाजिक प्रतिष्ठा प्रदान की । जैसा कि, अति उत्पादन सिद्धान्त मे उल्लेख किया जा चुका है, माल्थस ने पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे जनसख्या के एक ऐसे वर्ग की आवश्यकता सिद्ध की जो उत्पादन की तुलना मे उपभोग की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण होता है । यही वर्ग मुख्यत भूस्वामियो का वर्ग होता है । यह वर्ग स्वय उत्पादन तो नही करता किन्तु समाज के कुल उत्पादन का उपभोग करने वाला एक सम्पन्न वर्ग होता है। माल्थस ने बताया कि जनसख्या का जो भाग उत्पादन प्रक्रिया मे सम्मिलित रहता है वह अपनी स्वय की आवश्यकता से कही अधिक मात्रा मे भौतिक वस्तुओ का उत्पादन करता है । अत इस वर्ग के आधिक्य उत्पादन की बिक्री के लिए एक ऐसा वर्ग चाहिये जो अनुत्पादक एव केवल परजीवी उपभोक्ता वर्ग हो । प्रभाव पूर्ण माग मे वृद्धि या उसके स्तर को बनाये रखने की दृष्टि से माल्थस ने इस वर्ग को एक अनिवार्यता बताया और कहा कि यही वह वर्ग है जो सामान्य अति उत्पादन पर अकुश लगाकर पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे सम्भावित आर्थिक मदी पर रोक लगाता है । एक अन्य दृष्टि से भी माल्थस ने इस वर्ग की अनिवार्यता सिद्ध की और कहा कि यदि यह वर्ग नही होगा तो समाज मे धन एव जनसख्या मे वृद्धि अपनी इष्टतम उत्पादन सीमा से पहले ही रुक जायेगी और उस स्थिति मे दुर्लभ आर्थिक ससाधनो एव सीमित आर्थिक सम्भावनाओ का समुचित उपयोग नही हो सकेगा । उन्होने सकेत दिया कि समाज का सम्पन्न उत्पादक वर्ग (पूँजीपति एव विनिर्माता) तो आवश्यक रूप से मितव्ययी होता है जबकि गरीब उत्पादक वर्ग (श्रमिक) अपनी क्रय–शक्ति की सीमितता के कारण उत्पादन की एक सीमा से अधिक मात्रा नही खरीद पाता । अत आधिक्य उत्पादन की बाजार माग सृजित करने के लिये जनसख्या का अनुत्पादक वर्ग एक अनिवार्यता है । भूस्वामियो मे माल्थस को जीवन की सुख सुविधाओ का उपभोग करने वाला एक ऐसा ही बडा वर्ग मिला जो स्वभाव से काफी खर्चीला एव साधनसम्पन्न था ।

अनुत्पादक उपभोक्ताओ की समाज मे महत्ता का उल्लेख करते हुए

माल्थस ने कहा, 'उत्पादन वृद्धि मे अनुत्पादक उपभोक्ताओ का विशेष महत्त्व यह है कि वे उत्पादन एव उपभोग मे आवश्यक तालमेल स्थापित कर उत्पादन का अधिकतम विनिमय मूल्य सम्भव बनाने है । समाज मे इस वर्ग का प्राधान्य होने पर वस्तुओ की कीमते ऊची होगी और विलोमश उनका विनिमय मूल्य नीचा रहेगा ।'

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि माल्थस भू–स्वामियो के हितो के पक्षधर थे । किन्तु, इसके लिए वे आलोचना के पात्र भी बने । इसी आधार पर प्रो एरिक रोल ने उन्हे प्रतिकारी (retaliator) बताया ।

(6) खाद्यान्न कानून (Corn Lows)- माल्थस के समय इग्लैण्ड मे खाद्यान्न कानून लागू थे । इनके द्वारा खाद्यान्न के आयात पर रोक लगा रखी थी । इससे इग्लैण्ड मे जीवन–निर्वाह के साधन बहुत महगे हो गये थे । लोग इनका विरोध कर रहे थे । अनेक राजनेता एव अर्थशास्त्री, जिनमे रिकार्डो प्रमुख थे, जन मानस का समर्थन कर रहे थे । किन्तु, माल्थस इन कानूनो को लागू रखने के समर्थक थे । उन्होने कहा कि खाद्यान्न की ऊची कीमतो का कारण ये नियम नही बल्कि बढ़ती जनसख्या है । उन्होने यह भी कहा कि इन्हे समाप्त कर खाद्यान्न के आयात को खुली छूट दे देने से कृषि विधियो मे सुधार एव उत्पादन वृद्धि की प्रेरणाये समाप्त हो जायेगी जिनसे अर्थव्यवस्था पर घातक एव दूरगामी प्रभाव पडेगे । इससे खाद्यान्न लागत काफी बढ़ जायेगी और अनाज सस्ता होने स्थान पर महगा हो जायेगा । अत. माल्थस ने प्रच्छन्न रूप से सरक्षण की नीति का समर्थन करते हुए खाद्यान्न कानून लागू रखने की सिफारिश की । उन्होने आर्थिक एव राष्ट्रीय स्वावलम्बन की दृष्टि से भी इन्हे न्यायोचित बताया और कहा कि राष्ट्र को अनाज के आयात के गम्भीर दुष्परिणामो से बचने के लिए अपनी खाद्यान्न की आवश्यकता घरेलू उत्पादन से पूरी करनी चाहिये । दूसरे शब्दो मे, उन्होने खाद्यान्न आयात को किसी राष्ट्र की समृद्धि एव प्रतिष्ठा के प्रतिकूल माना और कहा कि यह आवश्यक नही है कि जो देश आज इंग्लैण्ड को अनाज भेज रहे है वे भविष्य मे भी उसके औद्योगिक माल के बदले हमे खाद्यान्न का निर्यात करते रहेगे । इसके अलावा उन्होने सतुलित आर्थिक विकास की दृष्टि से भी खाद्यान्न कानूनो को उचित बताया ।

(7) अन्य (Others)- माल्थस के अन्य विचारो मे निम्नाकित मुख्य है–

(a) राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy)- एडम स्मिथ से भिन्न माल्थस ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विषय–सामग्री मे धन की अपेक्षा मनुष्य के आर्थिक व्यवहार के अध्ययन को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया और कहा कि यह आचरण का एक विज्ञान (Science of morals) है । दूसरे शब्दो मे, माल्थस ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था को एक आदर्श विज्ञान माना । उन्होने इस विषय को विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा मे सम्मिलित करने का सुझाव दिया ।

(b) धन (Wealth) माल्थस ने धन को परिभाषित करते हुए लिखा कि "वे भौतिक वस्तुए जो मनुष्य के लिए आवश्यक, उपयोगी अथवा स्वीकार्य होती है तथा जो व्यक्तियो एव देशो द्वारा स्वेच्छा से विनियुक्त की जाये, धन है।" इस परिभाषा स स्पष्ट है कि एडम स्मिथ की भाति उन्होने भी धन मे केवल भौतिक वस्तुए सम्मिलित की तथा धन को आर्थिक समृद्धि का आधार मानकर कहा कि किसी देश की जनसख्या एव क्षेत्र के सदर्भ मे भौतिक वस्तुए जितनी अधिक होती है, उस देश का धन उतना ही ज्यादा एव विलोमश कम होता है। उन्होने धन मे वृद्धि के लिए जनसख्या मे वृद्धि को आवश्यक नही माना बल्कि यह कहा कि जब जनसख्या ज्यादा हो जाती है तो प्राकृतिक विपदाए (बाढ, भूचाल, भूकम्प आदि) आती है जिनसे आधिक्य जनसख्या का सफाया हो जाता है और देश के धन की व्यापक बर्बादी हो जाती है। उन्होने बताया कि जलवायु, वस्तुओ की माग, कुशल श्रमिको और वैज्ञानिक आविष्कारो का धन पर प्रभाव पड़ता है।

(c) विलासितायें (Luxuries)- माल्थस विलासिताओ की वस्तुओ के उत्पादन एव उपभोग के पक्षधर थे। उन्होंने इसके तीन प्रमुख लाभ गिनाये– (i) जनसख्या की वृद्धि पर समुचित रोक लगती है। (ii) देशवासियो मे कार्य करने की आदत उत्पन्न होती है और (iii) कृषि विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

माल्थस का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Malthus)

माल्थस आर्थिक विचारो के इतिहास मे सर्वाधिक विवादास्पद लेखक है। उन्हे झूठे पूर्वाग्रहो से ग्रसित व्यक्तित्व बताया गया और कहा गया कि वह एक ऐसा विचारक था जो अपने लक्ष्य से भटक गया। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, उन्हे, 'निराशावादी' कहा गया। गोडविन ने उन्हे एक ऐसा काला एव भयानक राक्षस बताया जो सदैव मानव समाज की आशाओ पर कुठाराघात करने के लिए तत्पर था।' उन पर कोरा सिद्धान्तवादी एव निरपेक्षतावादी होने का आक्षेप है। उन्हे हठधर्मी एव 'निराशावादी भविष्य द्रष्टा' कहा जाता है।

किन्तु, दूसरी ओर माल्थस विलक्षण प्रतिभा एव वृहत् अन्तर्दृष्टि के धनी थे। उन्हे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का रैगलर् अर्थात् विवादक (उस समय जो छात्र बी ए की परीक्षा मे प्रथम श्रेणी के साथ गणित मे आनर्स् प्राप्त करता उसे यह सम्मान दिया जाता था) एव प्रथम अर्थशास्त्री होने का गौरव प्राप्त है। वे विश्व इतिहास मे राजनीतिक अर्थव्यवस्था के पहले प्रोफेसर हुए। वे पहले अर्थशास्त्री थे जिन्होने जनसख्या पर एक पूरा एव ऐसा ग्रंथ लिखा जिसकी गणना विश्व की बहुचर्चित एव चोटी की रचनाओ मे की जाती है।

वे एक सामाजिक एव व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे जिनके निराशावाद ने अति आशावाद की चकाचौध के सम्भावित खतरे समाप्त कर दिये। वे नैतिकता के समर्थक एव सबल चरित्र के धनी थे। उन्होने जनसख्या वृद्धि को रोकने के लिए किसी ऐसे उपाय का सुझाव नही दिया जिससे किसी की सामाजिक एव धार्मिक भावनाओ को ठेस पहुचे अथवा कोई उन पर अंगुली उठा सके। जनसख्या मे सम्भावित वृद्धि के आधार पर यद्यपि उन्होने भावी समाज का निराशाजनक चित्र प्रस्तुत किया किन्तु वे स्वय उसके निर्माण मे सहायक नही हुए। उनके मात्र दो सताने थी। वे सच्चे यथार्थवादी थे। उन्होने कभी मनुष्य जाति की सम्पूर्णता के झूठे गीत नही गाये। वे निराशावादी नही बल्कि वास्तविकतावादी थे। यदि वे आज जीवित होते तो स्वय को निराशावादी कहे जाने पर आश्चर्य व्यक्त करते और इसका प्रतिकार करते। जनसख्या विस्फोट के कगार पर खड़ा आज का विश्व उनकी भविष्यवाणिया सही होने का जीता जागता उदाहरण है। वे सतुलित विचारो के लेखक थे। उनके विचारो एव कृतियो मे एडम स्मिथ एव उनकी कृति 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' की भांति लम्बे प्रसग, पारस्परिक विरोधाभास एव उतार–चढ़ाव नही है। वे आर्थिक वास्तविकताओ के पारखी थे। पूजीवादी अर्थव्यवस्थाओ की निर्बाध स्वय सचालकता की जिस विचारधारा की पोल सन् 1930 की विश्वव्यापी मदी के समय खुली उसका सकेत माल्थस ने लगभग 125 वर्ष पूर्व ही दे दिया था। उन्होने एक बार अपने चितन को जो दिशा दे दी, लगातार उस दिशा मे तब तक आगे बढ़ते रहे जब तक उनका कार्य पूर्ण नही हो गया।

आर्थिक विचारों के इतिहास में माल्थस का स्थान

(Place of Malthus in the History of Economic Thought)-

आर्थिक विचारो के इतिहास मे माल्थस का अग्रिम पक्ति मे एव विशिष्ट स्थान है। वे बहुआयामी व्यक्तित्त्व के धनी एव मौलिक विचारक थे। अत न केवल उन्होने अपने समकालीन लेखको को वैचारिक नेतृत्व प्रदान किया अपितु आधुनिक अर्थशास्त्रियो एव अन्य विचारको का भी मार्ग–दर्शन किया। आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान आर्थिक चितन को उनकी देनो के आधार पर सुनिश्चित किया जा सकता है। इस सदर्भ मे निम्नाकित बाते उल्लेखनीय है–

(1) जनसंख्या विज्ञान के संस्थापक (Founder of the science of Demography)- माल्थस जनसख्या विज्ञान के सस्थापक थे। वे इस विषय को अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री मे सम्मिलित करने वाले पहले विचारक थे। उन्होने जनसख्या पर प्रथम ग्रथ लिखा एव प्रथम पूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। अति जनसख्या के सम्भावित खतरो को अभिव्यक्त करने वाले अग्रणी विचारक के रूप मे आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका अपना विशिष्ट

स्थान है । उनके जनसख्या विषयक विचार प्रामाणिक एव अनुभूत थे क्योकि लगभग सम्पूर्ण योरोपीय महाद्वीप के देशो की जनसख्या के अध्ययन के पश्चात् माल्थस ने अपने निष्कर्ष प्रतिपादित किये थे । इसीलिए कहा जाता है कि उनके जनसख्या विज्ञान के सस्थापक होने मे किसी प्रकार की आशका व्यक्त नही की जा सकती । उनका यही योगदान उन्हे आर्थिक विचारो के इतिहास मे अमर करने के लिए पर्याप्त है । जब तक मानव समाज रहेगा तब तक जनसख्या का प्रसग रहेगा और जहा एव जब जनसख्या का प्रसग आयेगा वहा माल्थस का नाम लिया जायेगा । यह उन्ही के विचारो का परिणाम था कि सन् 1801 मे इग्लैण्ड मे प्रथम बार जनगणना हुई और आज सभी देश उसका अनुसरण कर रहे है ।

(2) आर्थिक सकटों के प्रथम सिद्धान्ती (First Theorist of Economic Crisis) माल्थस आर्थिक सकटो का सिद्धान्त प्रतिपादित करने वाले पहले अर्थशास्त्री थे । उन्होने पूजीवादी अर्थव्यवस्थाओ की स्वय सचालकता एव जे बी से के बाजार नियम' की प्रभावशीलता मे आशका व्यक्त करते हुए कहा कि अर्थव्यवस्थाओ मे अति उत्पादन एव न्यून उत्पादन के आर्थिक सकट आयेगे । इसीलिए उन्हे व्यापार चक्रो के न्यून उपभोग सिद्धान्त का पूर्वगामी माना जाता है ।

(3) अर्थशास्त्र एव प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सह–सस्थापक (Co founder of Economics and Classical school of Economics) एडम स्मिथ के साथ माल्थस अर्थशास्त्र एव प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सह–सस्थापक है । अपनी इस भूमिका मे उन्होने अनेक मौलिक विचार दिये जिन्हे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक चितन की नीव का पत्थर कहा जा सकता है ।

(4) प्रथम सामाजिक अर्थशास्त्री (First Social Economist) माल्थस पहले सामाजिक अर्थशास्त्री थे अत उन्हे बाद के सामाजिक अर्थशास्त्रियो का अग्रणी माना जाता है । एक सामाजिक अर्थशास्त्री के रूप मे उन्होने इग्लैण्ड के कानूनो को प्रभावित किया । यह उन्ही के विचारो की देन थी कि सन् 1934 मे इग्लैण्ड मे निर्धन कानूनो मे सशोधन कर निकम्मे आदमियो को दी जा रही आर्थिक सहायता बद की । यही नही जेम्स बोनर के मतानुसार माल्थस ने सामाजिक अर्थशास्त्री के रूप मे तीन मानवीय विचार प्रस्तुत किये– (i) नवजात शिशुओ की अकाल मृत्यु से सुरक्षा होनी चाहिये (ii) निर्धनो के जीवन–स्तर मे सुधार होना चाहिए और (iii) ऊँची मृत्यु–दर के विरुद्ध सभी की सुरक्षा की जाये । वस्तुत उन्होने सकट के समय मानव जाति की महान् सेवा की ।

(5) प्रथम राजनैतिक अर्थशास्त्री (First Political Economist) एक सामाजिक अर्थशास्त्री के साथ–साथ उन्हे प्रथम राजनीतिक अर्थशास्त्री भी

कहा जाता है। यद्यपि यह सम्मान एडम स्मिथ को भी दिया जाता है किन्तु वे एक विशुद्ध अर्थशास्त्री नही थे। माल्थस जीवन पर्यन्त अर्थशास्त्र के प्रोफेसर रहे और उनका चिन्तन विशुद्ध आर्थिक था।

(6) अति आशावाद के दोषों का निराकरण (Abrogation of the Evils of High Optimism) एडम स्मिथ के विचारो के फलस्वरूप सर्वत्र अति आशावाद छा गया। गोडविन के विचारो ने इसे और मजबूत कर दिया। सामाजिक एव आर्थिक जीवन मे अनेक बुराइया घर कर गयी और मनुष्य अपने जीवन के परम पावन लक्ष्य को भूल कर धन कमाने की एक मशीन बन गया। इससे अनेक नैतिक एव चारित्रिक दोष पनप गये। माल्थस ने अपने जनसख्या सिद्धान्त जिसे निराशावादी सिद्धान्त कहा जाता है से अति आशावाद के दोष दूर किये और मानव समाज को सही राह दिखायी। दूसरे शब्दो मे उनका जनसख्या सिद्धान्त एडम स्मिथ के आशावाद का ही एक उत्तर था। इसीलिए माल्थस के एक प्रशसक जेम्स बोनर ने लिखा है कि उनकी पुस्तक का शीर्षक An essay on the nature & causes of poverty of nations होना चाहिये था।

(7) एक महान अनुसधानकर्त्ता (A great Investigator) माल्थस एक महान् अनुसधानकर्त्ता थे। प्रो जे एम कीन्स ने उन्हे एक प्रेरक (Inductive) एव अन्तर्ज्ञानी (intuitive) अनुसधानकर्त्ता बताया। आर्थिक एव सामाजिक समस्याओ के प्रति उन्होने वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया। वे आगमन प्रणाली (Inductive method) के प्रमुख प्रयोगकर्त्ता थे। उन्होने अपने जनसख्या सिद्धान्त के प्रतिपादन हेतु विभिन्न देशो के जनसख्या सम्बन्धी आकडो को एकत्र कर उनका विश्लेषण एव अध्ययन किया। दूसरे शब्दो मे उन्होने आर्थिक विश्लेषण मे साख्यिकी का प्रयोग आरम्भ किया। एक अनुसधानकर्त्ता के रूप मे अपने जीवन के अतिम चरण मे उन्होने सन् 1934 मे रॉयल स्टेटिस्टीकल सोसाइटी की स्थापना की। अपने इस रूप मे वे आर्थिक विश्लेषण मे साख्यिकी के प्रथम प्रयोगकर्त्ता थे।

(8) पूर्ण रोजगार के आधुनिक सिद्धान्त के प्रणेणा (Pioneer of the Modern Theory of Full Employment) पूर्ण रोजगार के आधुनिक सिद्धान्त की जडे माल्थस के आर्थिक चितन मे है। यद्यपि उनके प्रभावपूर्ण माग अति उत्पादन एव व्यापार चक्र सम्बन्धी विचारो पर तत्कालीन लेखको एव समर्थको ने कोई विशेष ध्यान नही दिया, किन्तु, ये ही विचार आगे चलकर कीन्स के आर्थिक विचारो एव पूर्ण रोजगार के आधुनिक सिद्धान्त के आधार बने। माल्थस के विचारो से प्रभावित होकर ही प्रो जे एम कीन्स ने आर्थिक मदी से छुटकारा पाने एव रोजगार के अवसरो मे वृद्धि के लिए अनुत्पादक सार्वजनिक व्यय का समर्थन किया और कहा कि सरकार को चाहिये कि वह बेरोजगार लोगो से

दोपहर तक खड्डे खुदवाये और दोपहर बाद उन्हे भरवाकर सायकाल दैनिक मजदूरी दे दे । इससे उन्हे व्यय करने का अधिकार मिलेगा और प्रभावपूर्ण माग मे वृद्धि से रोजगार के अवसरो मे वृद्धि होने लगेगी । इस सदर्भ मे माल्थस के विचारो की महत्ता का समर्थन करते हुए प्रो कीन्स ने लिखा है कि 'यदि उनके समर्थक थोडी मेहनत करते तो, यदि माल्थस जनसख्या पर कुछ नही लिखते तब भी, व्यापार चक्रो पर उनके विचार ही उन्हे अर्थशास्त्र मे ऊचा स्थान दिला देते ।'[8]

(9) चार्ल्स डर्विन पर प्रभाव (Impact on Charles Darwin) माल्थस के विचारो का चार्ल्स डार्विन के विकास सिद्धान्त (Theory of Evolution) पर प्रभाव पडा । उन्होने स्वय इसे स्वीकार किया है कि माल्थस की पुस्तक से उन्हे जो विचार मिले उनके आधार पर ही उन्होने 'श्रेष्ठतम को ही जीवन का हक है' (survival of the fittest) के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । यही नही माल्थस के समर्थक तो यहा तक कहते है कि 'डार्विन के प्राकृतिक वरण (natural selection) का सिद्धान्त और कुछ नही है बल्कि माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त का सम्पूर्ण जीव समुदाय पर क्रियान्वयन मात्र है ।'[9]

(10) अर्थशास्त्र में गतिशीलता के तत्त्व का समावेश (Introduction of Dynamic Element in Economics)- माल्थस ने अपने जनसख्या विषयक विचारो द्वारा अर्थशास्त्र मे गतिशीलता के तत्त्व का समावेश किया । वे परिवर्तन की प्रेरणा के समर्थक थे । उन्होने स्वय विवेक से जनसख्या पर रोक लगाने का सुझाव दिया किंतु यह भी कहा कि यदि ऐसा नही किया तो गतिशील तत्त्व आधिक्य जनसख्या का सफाया कर देगे । इस प्रकार उन्होने किसी स्थैतिक स्थिति की रचना एव समर्थन नही किया ।

(11) आधुनिक गणितीय अर्थशास्त्र के विकास की भविष्यवाणी (Predicted the Development of Modern Mathematical Economics)- माल्थस ने गणितीय अर्थशास्त्र के विकास की भविष्यवाणी की और ऐतिहासिक सम्प्रदाय एव आदोलन के अग्रणी बने । आगमन विधि का प्रयोग करते हुए उन्होने आर्थिक विश्लेषण मे गणित के प्रयोग को बढ़ाया जिससे प्रभावित होकर जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय ने अपना आर्थिक अनुसधान एव चितन का क्षेत्र विस्तृत किया ।

---

8 "Although his admirers took little note his contribution to the theory of trade cycles would have given him a high place in Economics, even if he had never written on population problems" Keynes J M

9 "The Darwin s Theory of Natural Selection is nothing but the application of Malthusian theory of population to the whole animal kingdom"

(12) रिकार्डो के विचारों के अग्रदूत *(**Forerunner of the Ideas of David Recordo**)*- डेविड रिकार्डो अपने जिस लगान सिद्धान्त के कारण प्रसिद्ध है, उसमे माल्थस उनके अग्रदूत है। माल्थस ने ही सर्वप्रथम यह बताया कि श्रेष्ठ भूमियो की तुलनात्मक न्यूनता के कारण लगान का उदय होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बिना किसी शका के अर्थशास्त्र के निर्माताओ मे माल्थस को एडम स्मिथ के बाद दूसरा महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जा सकता है। उनके कुछ समर्थक तो यहा तक मानते है कि, उनके आर्थिक विकास, लगान, प्रभावपूर्ण माग और अति–उत्पादन सम्बन्धी विचारो के आधार पर ही उन्हे एडम स्मिथ के पश्चात् दूसरा स्थान दिया जा सकता है। नि सदेह माल्थस एक महान् एव जीवत विचारक थे। इसीलिए **बाकर** ने कहा कि 'उनके विरुद्ध उठाये गये सम्पूर्ण विवादो के मध्य माल्थस अजेय तथा अविच्छिन्न खडा है।'' **जे बी क्लार्क** ने माना कि *'माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त की आलोचना ही उसकी 'मार्मिकता एव सच्चाई प्रमाणित करती है!'* इस सदी के बहुचर्चित अर्थशास्त्री कीन्स ने उन्हे बहुत सम्मान दिया और अपना प्रेरणा–स्रोत माना। अन्त मे, *यही कहा जा सकता है कि माल्थस का नाम अर्थशास्त्र मे अविस्मरणीय रहेगा।*

'नव–माल्थसवाद' पर एक टिप्पणी

(A Note on 'Neo-Malthusianism')

ज्ञातव्य है कि, जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि पर रोक लगाकर मानव समाज को 'माल्थूजियन कुचक्रो' के गम्भीर दुष्परिणामो एव सकटो से बचाने के लिए माल्थस ने प्रतिबन्धक रुकावटो के अधीन नैतिक सयम द्वारा जनसख्या वृद्धि पर अकुश लगाने का सुझाव दिया और सभी प्रकार के उन पापाचारो का विरोध किया जिनसे कामवासना की तो पूर्ति हो जाये किन्तु सन्तानोत्पादन न हो।

माल्थस के समर्थको एव अनुयायियो को नैतिक सयम द्वारा जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाने का सुझाव अपर्याप्त, असतोषजनक एवं अव्यावहारिक नजर आया। अत उन्होने सतति निग्रह (birth control) के सभी कृत्रिम उपायो (वे सभी शारीरिक, रासायनिक यात्रिक तथा शल्य चिकित्सा सम्बन्धी उपाय जिनसे जन्म दर गिरायी जा सके, यथा– महिला नसबदी के 266 तरीके है) का समर्थन कर जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि पर रोक लगाने का एक आदोलन चलाया जो नवमाल्थसवाद के नाम से जाना जाता है। दूसरे शब्दो मे, नव–माल्थसवाद नियोजित पितृत्व (planned parenthood) का एक आदोलन है जो सतति निग्रह के कृत्रिम उपायो का समर्थक है। यह आदोलन सर्वप्रथम इग्लैण्ड मे एक मजदूर नेता फ्रासिस प्लेस, जो पेशे से दर्जी थे एव जिनके 15 बच्चे थे, ने सन् 1820 मे चलाया। ड्राइस्डेल ने नव–माल्थसवाद

पर सन् 1854 मे एक गुमनाम पुस्तक लिखी जिसका शीर्षक था– 'Elements of Social Science' तथा सन् 1877 मे उन्होने नव–माल्थसवाद लीग की स्थापना की। इन विचारो के प्रथम सक्रिय कार्यकर्त्ता ब्राडलोउ एव श्रीमती ऐनीबिसेंट थे । इस सदी मे इग्लैण्ड मे इसका मेरी स्टोप्स तथा अमरीका मे मेरी स्टेन्जर ने व्यापक प्रचार–प्रसार किया । वर्तमान मे इसे विश्व जनमत के सभी वर्गों का व्यापक समर्थन मिल चुका है और बहुत से देशो मे परिवार नियोजन अथवा कल्याण कार्यक्रम सरकारी एजेन्सियो द्वारा चलाये जा रहे है ।

माल्थसवाद एवं नव-माल्थसवाद में अन्तर (Difference between Malthusianism and Neo- Malthusianism)- यद्यपि नव–माल्थसवादी स्वय को माल्थस का आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहते है, किन्तु माल्थसवाद एव नव–माल्थसवाद मे निम्नाकित दो आधारभूत अतर है–

(i) माल्थस ने कामवासना की पूर्ति की इच्छा एव सतानोत्पादन की इच्छा मे भेद नही किया और कहा कि ये दोनो एक है अत. जब भी कामवासना की पूर्ति की जायेगी संतानोत्पादन की सम्भावना रहेगी । अत. नैतिक सयम द्वारा कामवासना की पूर्ति पर रोक लगाकर सतानोत्पादन अर्थात् जनसख्या वृद्धि पर रोक लगानी चाहिये ।

इसके विपरीत नव–माल्थसवादियो ने इन दोनो मे भेद किया और कहा कि कामवासना पूति एक दम्पति की प्राकृतिक, जन्मजात एव जैविकीय आवश्यकता है जबकि सतानोत्पादन की इच्छा अनेक सामाजिक, धार्मिक, एव सस्कृति रीतिरिवाजो और परम्पराओ; शारीरिक आवश्यकताओ, वैयक्तिक घटको आदि पर निर्भर करती है । उनके अनुसार किसी दम्पति की सतानोत्पादन की इच्छा तो प्राय. दो–तीन बच्चे हो जाने के पश्चात् क्षीण अथवा तृप्त हो जाती है किन्तु कामवासना की पूर्ति की इच्छा का प्रश्न आयु के साथ जुड़ा रहता है । अत. ऐसे असख्य दम्पति मिल जाते है जो सतानोत्पादन की इच्छा नही रखते, किन्तु अपनी कामवासना की पूर्ति की इच्छा मे कोई कमी पसंद नही करते । दूसरे शब्दो मे, मनुष्य की कामवासना की पूर्ति की प्राकृतिक इच्छा का ह्रास बहुत धीरे–धीरे होता है जबकि संतानोत्पादन की इच्छा सामान्यतः बहुत शीघ्र ही तृप्त हो जाती है अथवा कुछ मामलो मे शुरू से ही इसके प्रति कोई मोह नही रहता है ।

(ii) माल्थस ने जनसख्या मे वृद्धि पर रोक लगाने के लिए नैतिक संयम का समर्थन एव पापाचारो का नैतिकता के आधार पर विरोध किया और कहा कि "वास्तव मे मुझे जनसख्या नियत्रण के सामान्यतया कृत्रिम अथवा अप्राकृतिक उपायो का सदैव परित्याग करना चाहिये । जिन सयमो का मैने परामर्श दिया है वे बिल्कुल भिन्न प्रकृति के हैं । वे केवल तर्क–सम्मत एव धर्म–सम्मत ही नही बल्कि उद्यम के भी समर्थक है ।"

नव–माल्थसवादियो के विचार इससे भिन्न है । उनके अनुसार नैतिकता मानव निर्मित, काल सापेक्ष एव स्थिति सापेक्ष है । अत सतति–निग्रह के सभी उपायो का समर्थन किया जा सकता है और नैतिकता उनके मार्ग मे बाधा नही है । वे कहते है कि मनुष्य ने कदम–कदम पर प्रकृति मे बाधा पहुचाकर उसके नियमो एव स्वतत्रता का उल्लघन किया है । अत राष्ट्र एव समाज की उन्नति के लिए उन सभी भले–बुरे उपायो का समर्थन वि[illegible] सकता है जिनसे जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि पर रोक लगे। इस दृ[illegible] अनिवार्य नसबन्दी, जबरन नसबदी, गर्भपात, विकालागो, बीमारो एव पागलो की नसबदी तक का खुले आम समर्थन किया जा सकता है अर्थात् उन्होने नैतिक अथवा अनैतिक कार्यों को सामाजिक आवश्यकता के परिप्रेक्ष्य मे देखा है ।

माल्थस, नव-माल्थसवाद के एक समर्थक के रूप में (Malthus as a supporter of Neo-Malthusianism)- यह प्रश्न भी विचारणीय है कि, यदि माल्थस जीवित होते तो क्या वे नव–माल्थसवाद का समर्थन करते और नव–माल्थसवादियो को अपना आध्यात्मिक शिष्य मानकर स्वय को उनके आध्यात्मिक गुरु के पद पर प्रतिष्ठित करते अथवा नही ?

यह सत्य है कि माल्थसवाद एव नव–माल्थसवाद दोनो ही जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि को हानिकारक मानकर उसमे वृद्धि पर रोक के समर्थक है । किन्तु, जीड एव रिस्ट के मतानुसार माल्थस सम्भवत कभी स्वय को नव–माल्थसवादी स्वीकार नही करते । उन्ही के शब्दो मे, "यदि माल्थस जीवित होते तो वे कभी भी नव–माल्थसवादी नही हुए होते और न ही अपने उन शिष्यो को, जो कुकर्मों का प्रचार करते है, माफ किया होता ।" इसके विपरीत कुछ अन्य विचारको का मानना है कि माल्थस इनका समर्थन कर देते । वे इसके पक्ष मे तर्क देते है कि माल्थस एक उदार, प्रगतिशील एव लोककल्याण की कामना करने वाले व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे । अपने सन् 1798 के गुमनाम लेख मे वे जितने कट्टर थे उतने सन् 1803 मे प्रकाशित लेख मे दिखायी नही दिये । वस्तुत प्रथम सस्करण का नैतिकता का कट्टर समर्थक माल्थस दूसरे सस्करण मे व्यावहारिक सुखार्थी बन गये । वे स्वय इस बात से परिचित थे कि जिन नैतिक सयमो की वे चर्चा कर रहे हैं वे अधिक प्रभावी एव सार्थक नही है क्योकि लोग या तो उनके अनुरूप आचरण नही कर पायेगे और यदि उनके सुझाव मानेगे तो भी उनकी सफलता सदिग्ध है क्योकि गर्भ–धारण एक सयोग है जो किसी दुर्घटना के समान घटित होता है । इसके अलावा मार्शल एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे । उनके समय से लेकर आज तक न केवल सामाजिक मान्यताओं एव मूल्यो मे भारी परिवर्तन हो गया है अपितु विश्व जनसख्या–विस्फोट के कगार पर आ गया है और यह विस्फोट

ऐसा विस्फोट माना जा रहा है जो कई हाइड्रोजन बमो के विस्फोट से भी अधिक घातक है। ऐसे माहौल मे माल्थस निसदेह सतति निग्रह की सभी विधियो एव कार्यक्रमो का समर्थन कर देते। अत यह बहुत सम्भव है कि वे परिवर्तित परिवेश मे नव–माल्थसवाद का ही समर्थन करते। सन् 1934 मे उनकी मृत्यु की 100वी बरसी पर प्रकाशित एक लेख मे लिखा गया था कि ''माल्थस सतति निग्रह से बहुत पहले रहे किन्तु, हम सहज ही मे विश्वास कर सकते है कि वे जनसख्या पर रोक के ऐसे उपायो मे कितनी गर्मजोशी से विश्वास कर लेते।''[8]

प्रश्न

1 **माल्थस के प्रमुख आर्थिक विचारों का संक्षेप में विवेचन कीजिये।**

संकेत : सक्षेप मे माल्थस का जीवन परिचय देकर क्रमश उनके विभिन्न आर्थिक विचारो का सक्षिप्त विवेचन करे।

2. **माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।**

संकेत : माल्थस का सक्षिप्त जीवन परिचय देकर 'माल्थस के जनसख्या सम्बन्धी विचार' शीर्षक मे वर्णित बातो का उल्लेख करे। सक्षेप मे प्रभावित करने वाले घटको का उल्लेख भी करे।

3. **'माल्थस एक निराशावादी विचारक थे।'' समीक्षा कीजिये। अथवा ''वर्तमान समाज में माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त का आतंक समाप्त हो चुका है।'' व्याख्या कीजिये।**

संकेत : इस प्रश्न के उत्तर के तीन भाग है– प्रथम भाग मे माल्थस का सिद्धान्त समझाये, द्वितीय भाग मे उसकी आलोचनाओ और तीसरे भाग मे सिद्धान्त की वर्तमान मे क्रियाशीलता की व्याख्या कर निष्कर्ष दे कि न वे निराशावादी थे और न उनके सिद्धान्त का आतक समाप्त हुआ है।

4. **'यदि माल्थस के जनसंख्या सिद्धान्त को एक ओर छोड़ दें तो भी आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान एडम स्मिथ के बाद दूसरा है समझाइये।'**

संकेत : प्रश्न के प्रथम भाग मे माल्थस के विभिन्न आर्थिक विचारो का विवेचन करे और दूसरे भाग मे उनका आलोचनात्मक मूल्याकन करते हुए आर्थिक विचारो के इतिहास मे स्थान निर्धारित करे।

---

8 "Malthus lived long before birth control but we can easily believe how warmly he would have welcomed such a check on population."

5. **'कीन्स अपने विचारों के लिए माल्थस के ऋणी हैं' समझाइये ।**

   संकेत : माल्थस के अति–उत्पादन सिद्धान्त एव विकास सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए बताये कि किस प्रकार कीन्स के विचार माल्थस के आर्थिक चिन्तन पर आधारित है ।

6. **नव–माल्थसवाद पर एक टिप्पणी लिखिये ।**

4

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय III : डेविड रिकार्डो

(The Classical Tradition III : David Recardo)

> **"अर्थशास्त्र में स्मिथ के पश्चात् रिकार्डो दूसरा महानतम नाम है और उनके नाम के चारों ओर इतना अधिक वाद-विवाद केन्द्रित हो गया है जितना उनके गुरु के नाम के चारों ओर कभी नहीं रहा।"[1]** –जीड एवं रिस्ट

परिचय - प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की अधिरचना के केन्द्रीय स्तम्भ

(Introduction : Central pillar of the Superstructure of classical Tradition)

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के संस्थापक अर्थशास्त्रियों की तिकड़ी में एडम स्मिथ और माल्थस के पश्चात् तीसरा एवं अंतिम **(the last of the trinity)** नाम डेविड रिकार्डो है। आर्थिक विचारों के इतिहास में अनेक आधारों पर इनकी गणना एडम स्मिथ के पश्चात् दूसरे स्थान पर की जाती है, जिन्होंने सही मायने में राजनीतिक अर्थव्यवस्था के सीमा चिन्ह निश्चित किये। यदि हम एडम स्मिथ को प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का संस्थापक मानलें, जैसा कि उन्हें माना जाता रहा है, तो निसंदेह रिकार्डो उसकी अधिरचना के केन्द्रीय स्तम्भ थे, क्योंकि उन्होंने एडम स्मिथ के अधूरे छोड़े कार्य को पूर्ण कर राजनीतिक *अर्थव्यवस्था को पूर्णता प्रदान की। ज्ञातव्य है कि, एडम स्मिथ ने मुख्यतः* उत्पादन पर बल दिया और इसमें वृद्धि को राष्ट्र के धन में वृद्धि का प्रतीक माना। दूसरे शब्दों में, उन्होंने सामूहिक उत्पादन के वितरण के बारे में ऐसे निश्चित नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन नहीं किया जिन्हें अधिक महत्त्वपूर्ण माना जा सके। उनके द्वारा अधूरा छोड़ा गया यही कार्य डेविड रिकार्डो ने पूर्ण किया। इसलिए आर्थिक विचारों के इतिहास में वे अपने वितरण सम्बन्धी सिद्धान्तों—विशेषतः लगान सिद्धान्त, के लिए सुविख्यात है।

---

1 *"Next to Smith Recardo is the greatest name in Economics, and fiercer controversy* has centered around his name than ever raged around the master's." –Gide and Rist.

वस्तुत जिस प्रकार माल्थस का नाम जनसख्या सिद्धान्त के साथ जुड़ा हुआ है, ठीक उसी प्रकार रिकार्डो का नाम लगान सिद्धान्त के साथ जुड़ा हुआ है। वे ज्यादा शिक्षित नही थे क्योकि 14 साल की उम्र मे ही उन्होने पढ़ाई बद कर दी थी। अत वे एक अच्छे लेखक नही थे। किन्तु, वे एक उच्च कोटि के विचारक थे। आर्थिक विचारो के भावी स्वरूप के निर्धारण मे उनके आर्थिक चितन की भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण रही है कि उसे कोई चुनौती नही दी जा सकती। इस भूमिका मे न केवल उन्होने अपने समर्थको एव प्रशसको के विचारो को प्रभावित किया अपितु वे अपने आलोचको के लिए भी एक लम्बे समय तक एक महत्त्वपूर्ण प्रेरक–शक्ति बने रहे। इसीलिए उन्हे आर्थिक विचारो के इतिहास मे 'एक महत्त्वपूर्ण युगान्तकारी घटना' **(An important land mark)** का सम्मान दिया जाता है और उनकी गणना महानतम अर्थशास्त्रियो एव विचारको म की जाती है।

संक्षिप्त जीवन परिचय (Brief Life Sketch)

डेविड रिकार्डो का जन्म स्पेनिश मूल के एक सम्पन्न यहूदी परिवार, जो हालैण्ड से इगलैण्ड आकर बस गया था, मे सन् 1772 मे लदन मे हुआ। इनके पिता इब्राहीम रिकार्डो लदन शेयर बाजार के एक प्रसिद्ध एव सम्पन्न दलाल थे, जिन्हे सरकारी प्रतिभूतियो की खरीद एव बिक्री मे विशेषज्ञता हासिल थी। डेविड रिकार्डो इनकी 17 सतानो मे से तीसरी सतान थे। रिकार्डो की प्रारम्भिक शिक्षा लदन मे ही हुई। इनके पिता की व्यापार एव धनोपार्जन की क्रियाओ मे गहन रुचि थी, अत 12 वर्ष की आयु मे उन्होने अपने पुत्र को वाणिज्य की शिक्षा प्राप्त करने के लिए हालैण्ड भेज दिया। दो वर्ष पश्चात् सन् 1786 मे रिकार्डो वापस लदन आ गये और 14 वर्ष की अल्पायु मे ही अपने पिता के साथ लदन शेयर बाजार मे प्रतिभूतियो की खरीद एव बिक्री का कार्य करने लगे। कुशाग्र बुद्धि एव विलक्षण तर्क–शक्ति के धनी डेविड रिकार्डो ने शीघ्र ही बैंकिंग, विनिमय एव वित्तीय लेन–देनो की बारीकिया जान ली किन्तु, अपने पिता की देखरेख के कारण उन्हे स्वतत्र निर्णयन की छूट नही थी, अत वे कुछ व्यथित एव कुठित रहते थे। 21 वर्ष की आयु मे सन् 1793 मे उन्होने इसाई धर्म स्वीकार कर एक इसाई युवती, जिसका नाम परिसिला एने विलकिन्सन था, से शादी करली। उनके परिवारजनो को धर्म–परिवर्तन की यह घटना अशोभनीय एव परिवार की मान–मर्यादा विरुद्ध लगी। अत पिता ने उन्हे सदा के लिए घर से निकाल दिया। सम्भवतः लदन शेयर बाजार को भी इसी घटना का इन्तजार था। अब रिकार्डो ने स्वतत्र रूप से शेयरो–विशेषकर सरकारी प्रतिभूतियो की दलाली का कार्य आरम्भ कर दिया। वे लदन स्कध विनिमय के एक सदस्य बन गये। वे शीघ्र ही अपनी इमानदारी एव सही–सही पूर्वानुमान लगाने के कौशल के

लिए लदन शेयर बाजार मे सुविख्यात हो गये और 26 वर्ष की उम्र मे, जब उनके साथ जन्मे युवक विश्वविद्यालयो की शिक्षा पूर्ण कर रहे थे, वे लगभग 20 लाख पौण्ड की विशाल सम्पत्ति के मालिक बन गये जो उन्होने अपने पिता से अलग होने के पश्चात् लदन शेयर बाजार मे शेयरो की खरीद एव बिक्री से कमायी। धर्म--परिवर्तन द्वारा इसाई बन जाने के बावजूद उन्होने अपने यहूदी होने की पुष्टि कर दी। वे शेयर बाजार के वित्त विशेषज्ञ एव वित्तदाता (financier) बन गये। वे सरकारी प्रतिभूतियो, जिनकी राशि इस समय तक आते– आते बहुत बढ़ गयी थी (क्योकि नैपोलियन के युद्धो के सभावित खतरो से बचने के लिए इग्लैण्ड की सरकार ने भारी मात्रा मे जनता से सार्वजनिक ऋण लिये थे) के मुख्यत विशेषज्ञ थे। इसी समय वे बैक आफ इग्लैण्ड के एक अशधारी भी बन गये थे।

आरम्भ से ही बैंकिग एव वित्तीय लेन-देनो के अलावा शेष आर्थिक विषयो मे रिकार्डो की कोई रुचि नही थी और उनका झुकाव मुख्यत गणित, रसायनशास्त्र एव भूगर्भ विज्ञान की ओर अधिक था। सन् 1799 मे उन्होने एडम स्मिथ की ऐतिहासिक रचना 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' पढ़ी और इसके साथ ही उनके चितन की दिशा बदल गयी। धीरे–धीरे उनमे समाया हुआ आर्थिक विचारक जागृत होने लगा। शेयर बाजार मे दलाली से उन्होने इतना धन एव यश कमा लिया कि इससे सतुष्ट होकर उन्होने सन् 1814 मे शेयर बाजार मे विदाई ले ली और ग्लोसेस्टरशायर मे हजारो एकड़ जमीन खरीद कर वहाँ एक देहाती के रूप मे रहने लग गये तथा अपना शेष जीवन वही बिताया। किन्तु, यहाँ भी उनका जीवन निष्क्रिय नही रहा। यद्यपि, इससे पहले भी उन्होने कई पम्पलेट प्रकाशित करवाये जिन्हे काफी मान्यता मिली, किन्तु उन्होने प्रमुख लेखन कार्य सन् 1817 मे पूर्ण किया जब 'The Principles of Political Economy and Taxation' का प्रकाशन हुआ। इसके बाद वे राजनीति मे सक्रिय हुए। सन् 1819 मे 20 हजार पौण्ड खर्च कर उन्होने आयरलैण्ड मे रोटन बोरो आफ पोर्टरलिंगटन से ब्रिटिश ससद की सीट खरीद ली। वे बहुत अच्छे वक्ता तो नही थे किन्तु, जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, एक सजीदे एव जीवत विचारक थे अत कम बोलते थे और मुख्यत उन आर्थिक विषयो पर ही बोलते थे जिन पर उनकी अच्छी पकड़ थी। लोग उन्हे तन्मयता से सुना करते थे। सासद बन जाने के बाद भी एक वक्ता के रूप मे वे इमानदार बने रहे, और उन्होने कभी सरकारी सुर मे सुर मिलाकर अपने विचारो की मौलिकता भग नही होने दी। वे सरकार के खाद्यान्न कानूनो का लगातार विरोध करते रहे। उन्होने अपने समय की ज्वलत समस्याओ को सदैव सामने रखा।

रिकार्डो के 7 सताने हुईं। उन्होने माल्थस के परामर्श नही माने। 51

वर्ष की उम्र मे ही सन् 1823 मे उनका निधन हो गया। मृत्यु के समय उनके पास मात्र 7 लाख पौण्ड शेष रहे थे। वे प्रकृति से दयालु एव उदार थे।

रिकार्डो को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Influencing Recardo)

रिकार्डो का आर्थिक चितन आकस्मिक नही था। उनके समय तक आते–आते प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की वैचारिक क्राति काफी बल पकड चुकी थी। उन पर उस समय के विचारो, विचारको, आर्थिक दशाओ एव सम–सामयिक घटनाओ का गहरा प्रभाव पडा, जिन्होने उनके विचारो को एक निश्चित दिशा एव आकृति प्रदान की। सक्षेप मे, उन्हे प्रभावित करने वाले प्रमुख घटक निम्नाकित है–

(1) **समकालीन ब्रिटिश अर्थव्यवस्था एवं औद्योगिक क्रांति का प्रभाव** *(Contemporary British Economy and the Impact of Industrial Revolution)*

एडम स्मिथ के समय से लेकर रिकार्डो तक ब्रिटिश अर्थव्यवस्था मे अनेक उल्लेखनीय एव आधारभूत परिवर्तन हो चुके थे। उदाहरण के लिए, वहा औद्योगिक क्राति की जडे काफी गहरी हो चुकी थी और ब्रिटिश अर्थव्यवस्था का समग्र विकास हो गया था। उत्पादन की कारखाना प्रणाली एव बडे पैमाने पर उत्पादन के कारण मालिक–मजदूर सम्बन्ध अप्रत्यक्ष एव अवैयक्तिक हो चुके थे और कारखानो एव उद्योगो मे श्रम का प्रयोग उत्पादन की अन्य भौतिक मदो, यथा–पूजी, कच्चा माल आदि की तरह होने लग गया था। श्रम–पूजी विवाद उत्पन्न होने लग गये थे और मजदूरो ने सामूहिक उत्पादन के न्यायोचित वितरण की माग उठानी आरम्भ करदी थी। उद्योगपति एव व्यापारी एडम स्मिथ के 'आर्थिक मानव' की भाति कार्य कर रहे थे और इगलैण्ड मे पूजीवाद जोर पकडता जा रहा था। जीवन–निर्वाह के लिए भूमि एव कृषि की तुलना मे उद्योगो पर निर्भरता बढ गयी थी, अत धीरे–धीरे औद्योगिक बेरोजगारी मे वृद्धि आरम्भ हो चुकी थी। उद्योगपतियो मे प्रतिस्पर्धा बढती जा रही थी और अर्थव्यवस्था का तेजी से प्रसार होता जा रहा था। विनियोजन के अवसरो मे भारी वृद्धि हो गयी थी और उपनिवेशवाद तथा परिवहन एव सचार साधनो मे उल्लेखनीय प्रगति हो चुकी थी। इस सम्पूर्ण परिदृश्य मे उत्पादन वृद्धि के साथ–साथ उसके वितरण का प्रश्न भी बहुत महत्त्वपूर्ण हो गया, जिसने रिकार्डो को अपने विचार व्यक्त करने के लिए प्रेरित किया।

(2) **नैपोलियन के युद्धों का प्रभाव** (Impact of Napoleonic Wars)-

रिकार्डो के आर्थिक चिंतन पर फ्रास के सम्राट नैपोलियन के युद्धो के

उत्तर प्रभावो का गहरा प्रभाव पड़ा। इन युद्धो ने ब्रिटिश सरकार को जनता से उधार लेने के लिए मजबूर कर दिया। इससे सरकारी प्रतिभूतियो एव वित्तीय परिसम्पत्तियो मे काफी वृद्धि हो गयी। बैंक आफ इग्लैण्ड ने मुद्रा–पूर्ति मे काफी वृद्धि कर दी और युद्धो की आशका के कारण सर्वत्र सट्टेबाजी का जोर हो गया। इससे लन्दन मे एक सवेदनशील मुद्रा, पूजी एव शेयर बाजार का विकास हो गया, जो रिकार्डो की कर्मभूमि बना। युद्धो की आशका से उपभोक्ता वस्तुओ की माग बढ गयी, जिससे आम उपभोग की वस्तुओ की कीमते एव उनके निर्माताओ के लाभ बढ गये। इससे सारा ब्रिटिश समाज विचलित हो गया था। रिकार्डो ने इस स्थिति के लिए वितरण व्यवस्था को दोषपूर्ण माना और इस दिशा मे खोज का कार्य आरम्भ कर दिया।

(3) खाद्यान्न कानून विवाद (Corn Laws Controvercy)

उस समय इग्लैण्ड मे खाद्यान्न कानून लागू थे। इन कानूनो के अधीन खाद्यान्नो के आयात पर कई प्रकार के शुल्को एव निर्यात पर छूटो का प्रावधान कर रखा था। औद्योगिक क्रान्ति के कारण इग्लैण्ड का कृषि उत्पादन काफी गिर गया था। अत एक ओर उसके पास निर्यात–शेष नही था तथा दूसरी ओर ऊँचे आयात शुल्को के कारण अनाज का विदेशो से आयात करना सम्भव नही हो रहा था। अत खाद्यान्न की कीमते काफी ऊँची हो गयी। आम आदमी का जीवन–निर्वाह व्यय बहुत बढ गया। परिणामस्वरूप गरीबो का जीवन दुभर हो गया। लोग खाद्यान्न की कीमतो मे गिरावट एव उनके आयातो पर लगी रोक को समाप्त करने की माग करने लगे। किन्तु, भूमिपतियो की समर्थक ब्रिटिश सरकार ने खाद्यान्न पर लगे आयात शुल्क घटाने की बजाय बढा दिये। इससे यह विवाद और तेज हो गया। इस विवाद मे स्वय रिकार्डो ने काफी सक्रिय भूमिका निभायी और माल्थस से भिन्न वे खाद्यान्न कानून समाप्त करने की वकालत करने लगे। उन्होने माना कि इन कानूनो के लागू रहने से भूमिपतियो का लगान बहुत बढ गया है। कुल मिलाकर खाद्यान्न कानूनो पर हुयी व्यापक एव राष्ट्रीय बहस के परिप्रेक्ष्य मे लगान की उत्पत्ति एव विभिन्न भूमियो के लगान मे अन्तर पर भी व्यापक विचार–विमर्श हुआ, जिसने रिकार्डो को उस लगान सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के लिए प्रेरित किया जिसके लिए वे आर्थिक विचारो के इतिहास मे लोकप्रिय है।

इस सम्पूर्ण विवाद मे माल्थस से उनका वैचारिक मतभेद महत्त्वपूर्ण रहा। माल्थस खाद्यान्न कानून लागू रखने के पक्षधर थे। उन्होने कहा कि इनके हटाते ही खाद्यान्न की कीमते गिर जायेगी और देश मे खाद्यान्न का उत्पादन गिर जायेगा। इससे खाद्यान्न के आयात के लिए ब्रिटेन की विदेशो पर निर्भरता बढ जायेगी तथा जब विदेशो से आयात करना कठिन हो जायेगा तो घटिया

भूमियो पर खेती करने की विवशता बढ़ जायेगी और परिणामस्वरूप खाद्यान्न की कीमते एव लगान बहुत बढ जायेगे । किन्तु, रिकार्डो उनकी इन आशकाओ से असहमत थे । अत उन्होने खाद्यान्न कानून तत्काल समाप्त करने की माग का समर्थन किया और ब्रिटिश ससद मे इसकी माग उठायी । उन्होने तर्क दिया कि इनके हटने से जीवन–निर्वाह की लागत गिरने और परिणामस्वरूप उत्पादन लागत गिरने से औद्योगिक विकास की गति तेज होगी । उन्होने कहा कि जहा इनके लागू रहने से केवल कुछेक भूमिपतियो को तुच्छ लाभ मिल रहा है, वहा इन्हे हटाते ही सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था एव समाज के लाभ का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा ।

(4) वितरण की समस्या का प्रकाश में आना (To Come into Limelight the Problem of Distribution)

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, ब्रिटिश अर्थव्यवस्था मे आधारभूत भौतिक पविर्तन हो चुके थे । अत एक औद्योगिक महाशक्ति बन चुके इग्लैण्ड मे आर्थिक वृद्धि को गति एव समर्थन देने के स्थान पर विकास के लाभो के समुचित एव सतुलित आवटन का प्रश्न अधिक महत्त्वपूर्ण था । इससे वितरण की समस्या एक राष्ट्रीय समस्या बनकर सामने आ गयी जिससे रिकार्डो स्वय को अछूता एव अप्रभावित नही रख सके ।

(5) समकालीन विचारक एव लेखक (Contemporary Thinkers and Writers)

समकालीन विचारको एव लेखको के चितन का रिकार्डो पर गहरा प्रभाव पडा । जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, सन् 1799 मे 'वेल्थ आफ नेशन्स' पढ़ने के पश्चात् आर्थिक विषयो मे उनकी रुचि बहुत गहरी हो गयी । दूसरे शब्दो मे, उन्होने एडम स्मिथ को अपना वैचारिक गुरु मान लिया और उनके अधूरे कार्य को पूरा करने मे जुट गये । इनके अलावा माल्थस के जनसख्या एव लगान विषयक विचारो का रिकार्डो पर बहुत एव तात्कालिक प्रभाव पड़ा । पत्रो के जरिये माल्थस से उनका विचारो का आदान–प्रदान चलता रहता था । उन्होने माल्थस के लगान विषयक विचारो की नीव पर ही अपने ऐतिहासिक लगान सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । प्रसिद्ध आर्थिक विचारक जे. एस मिल के पिता जेम्स मिल रिकार्डो के एक नजदीकी मित्र थे । उन्होने 'Commerce Defended' शीर्षक एक पम्पलेट प्रकाशित करवाया जिससे रिकार्डो बहुत प्रभावित हुए । इसमे मिल ने कृषि के साथ–साथ उद्योग एव व्यापार को भी इग्लैण्ड की अर्थव्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण बताया था । रिकार्डो के विचारो पर इनके प्रभाव का उल्लेख करते हुए न्यूमैन ने लिखा है कि, "वे मुख्यत मिल ही थे जिन्होने रिकार्डो को अपने विचारो की अभिव्यक्ति के लिए सहयोग दिया और उन्हे एक प्रतिष्ठित लेखक बनाया ।"[2]

एडवर्ड वेस्ट, कर्नल रोबर्ट टोरेन्स, बोसा, जे बी से मकलक, बेन्हम, थोरन्टन आदि अन्य पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारक थे, जिन्होने किसी न किसी रूप मे उनके आर्थिक चिन्तन को प्रभावित किया ।

(6) **क्लब** (Clubs)

उन दिनो ब्रिटेन मे क्लब बुद्धिजीवियो के वैचारिक आदान-प्रदान के अच्छे मच थे । लदन शेयर बाजार मे दलाली करते समय ही वे क्लबो मे जाने लग गये थे । सन् 1821 मे स्थापित 'पॉलिटिकल इकॉनामिक क्लब' के वे एक सस्थापक सदस्य थे ।

(7) **वैयक्तिक जीवन** (Personal Life)

रिकार्डो एक धनी व्यक्ति थे । धनी समाज की बुराइयो को उन्होने बहुत निकट से देखा । शेयर बाजार छोड़ने के बाद वे फार्म हाउस मे देहाती का जीवन बिताने लगे । उन्होने ग्लोसेस्टरशायर मे हजार एकड़ जमीन खरीद ली और वे गेटकाम्ब पार्क मे बड़े भूमिपति बन गये । इस हैसियत मे उन्होने ऊँचा लगान कमाया तो उन्हे लगान की प्रकृति एव कारणो की समुचित जानकारी मिल गयी । इस प्रकार भले ही, उन्होने अपने विश्लेषण मे तर्क-वितर्क को प्रधानता दी, किन्तु लगान विषयक उनके विचार एक अनुभूत सत्य थे ।

प्रमुख कृतियाँ (*Major Works*)

इनकी रचनाओ मे निम्नांकित मुख्य है—

रचना का शीर्षक	प्रकाशन वर्ष
1 पुस्तक— The Principles of Political Economy & Taxation	1817
2 पम्पलेटस्—	
(1) *The High Price of Bullion, a proof of depreciation of Bank* Notes	1809
(2) Reply to Mr Bosanquate's Practical Observations on the Report of the Bullion Committee	1811
(3) The Influence of how Price of Corn on the Profit of stock	*1815*
(4) Proposals for an Economical and Secure currency with observation on the Profit of the Bank of England	1816
(5) Essay on the Funding System	1820
(6) On Protection to Agriculture	*1822*
(7) Plan for the Establishment of a National Bank	1823
(8) Notes on Malthus's Principles of Political Economy	1823

2. *"It was mainly Mill who helped Recardo in expressing his thoughts in writing and made him a writer of standing"* Newman

रिकार्डो की प्रमुख रचनाओ के शीर्षको से ही स्पष्ट हो जाता है कि उनके आर्थिक चिन्तन की कई दिशाये रही है। बैंकिंग, वित्त, कृषि, व्यापार राजनीतिक अर्थव्यवस्था आदि विषयो मे उनकी गहरी रुचि रही। उनकी दो अंतिम पुस्तिकाये उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुईं। यद्यपि वे मुख्यतः अपनी एकमात्र पुस्तक के लिए विख्यात है किन्तु सन् 1822 मे प्रकाशित उनकी एक पुस्तिका Protection to Agriculture के बारे मे उनके एक समर्थक मकलक (Mcculloch) ने लिखा है कि, "यदि रिकार्डो और कुछ नही लिखते तब भी यह पुस्तिका उन्हे प्रथम श्रेणी के राजनीतिक अर्थशास्त्रियो मे स्थान दिलाने के लिए पर्याप्त है।"[3]

'राजनीतिक अर्थव्यवस्था एवं करारोपण के सिद्धान्त' पर एक टिप्पणी
(A Note on the Principles of Political Economy and Taxation)

जिस प्रकार एडम स्मिथ के नाम के साथ 'वेल्थ आफ नेशन्स'' एवं माल्थस के नाम के साथ "एन ऐसे' ऑन दि प्रिन्सीपल्स ऑफ पॉपुलेशन'' शीर्षक पुस्तक जुड़ी हुयी है उसी प्रकार रिकार्डो के नाम के साथ "प्रिन्सीपल्स ऑफ पॉलिटिकल इकॉनामी एण्ड टैक्सेशन'' जुड़ी हुयी है। यह रिकार्डो की एकमात्र पुस्तक एव सर्वोत्कृष्ट रचना है, जिसका प्रकाशन सन् 1817 मे हुआ। इस पुस्तक के लेखन एव प्रकाशन मे जेम्स मिल ने रिकार्डो को सबसे अधिक प्रभावित किया। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, रिकार्डो ज्यादा पढ़े–लिखे नही थे। अत. एक अच्छे विचारक होने के बावजूद वे उच्चकोटि के लेखक नही थे। उनकी इस प्रमुख रचना से भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है। इसीलिए कुछ विचारक तो इसे एक पुस्तक कहना ही पसद नही करते और इसे केवल 'टिप्पणियो का एक पुलिंदा' (a bundle of Notes) मानते है। इसकी विषय–सामग्री मे क्रमबद्धता एव वैज्ञानिकता का अभाव है। इसका प्रस्तुतीकरण सुबोधगम्य, आकर्षक एव प्रभावशाली नहीं है। एक अस्त–व्यस्त रचना होने के कारण रिकार्डो तो इसे प्रकाशित भी नही करवाना चाहते थे। किन्तु, मिल आदि मित्रो ने बाद मे उन्हे इसके लिए राजी कर लिया। उनके जीवन काल मे ही सन् 1819 एव 1821 मे इसके दो और सस्करण प्रकाशित हुए। चाहे कुछ हो, उनकी इस पुस्तक ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक चिंतन को इस प्रकार आगे बढ़ाकर पूर्ण किया कि उनकी गिनती उसके सस्थापक अर्थशास्त्रियो मे की गयी। इसकी विषय–सामग्री मे मुख्यत. उनके वितरण एव करारोपण विषयक सिद्धान्त है।

---

3 "Had Mr Recardo never written anything else, this pamphlet would have placed him in the first rank of pol tical economists" — Mcculloch

रिकार्डो के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of David Recardo)

रिकार्डो के प्रमुख आर्थिक विचार निम्नांकित है–

1 वितरण के सिद्धान्त (Theories of Distribution)
   (1) लगान सिद्धान्त (Recardian Theory of Rent)
   (2) मजदूरी सिद्धान्त (Theory of wages)
   (3) लाभ एव ब्याज सिद्धान्त (Theory of Profit and Interest)
2 मूल्य सिद्धान्त (Theory of Value)
3 आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Development)
4 विदेशी व्यापार का सिद्धान्त (Theory of International Trade)
5 मुद्रा सिद्धान्त (Theory of Money)
6 लोक वित्त का सिद्धान्त (Theory of Public Finance)
7 अन्य (Others)
   (i) राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy) और
   (ii) मशीनो के प्रयोग (Uses of Machines)

अब हम, सक्षेप मे, इन आर्थिक विचारो का अध्ययन करेगे –

1. वितरण के सिद्धान्त (Theories of Distribution)-

वितरण के सिद्धान्तो से आशय उन सिद्धान्तो से है जिनके द्वारा राष्ट्रीय आय का उसके सृजन मे भागीदार साधनो मे विभाजन किया जाता है । *रिकार्डो ने राष्ट्रीय आय के तीन प्रमुख साधन–भूमि, श्रम और पूजी माने और* कहा कि कुल राष्ट्रीय आय का इन तीनो मे विभाजन किसी एक ही सिद्धान्त के द्वारा नही हो सकता, क्योकि तीनो की प्राप्तियो की प्रकृति मे अन्तर पाया जाता है । अत लगान, मजदूरी ब्याज और लाभ के निर्धारण के लिए पृथक्–पृथक् सिद्धान्तो की आवश्यकता है।

रिकार्डो ने वितरण की समस्या (सामूहिक उत्पादन अथवा राष्ट्रीय आय के उत्पत्ति के साधनो मे विभाजन की समस्या) को राजनीतिक अर्थव्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण एवं केन्द्रीय समस्या बताया । इसीलिए उन्होने अपनी रचना (The Principles of Political Economy and Taxation) की प्रस्तावना मे बताया कि, भूमि का उत्पादन (रिकार्डो ने राष्ट्रीय आय मे अशदान की दृष्टि से भूमि की सबसे महत्त्वपूर्ण माना) उस पर लगाये गये उत्पत्ति के विभिन्न साधनो, यथा– श्रम, मशीन एव पूजी आदि का सामूहिक प्रयास है और इसका क्रमश इन साधनो के मालिको अथवा समाज के तीन वर्गों– भूमिपतियो, श्रमिको एव पूजीपतियो मे विभाजन होता है । किन्तु,

भूमि के कुल उत्पादन मे से उसमे भागीदार प्रत्येक साधन के स्वामी को मिलने वाला भाग निश्चित नही है, क्योकि इस पर अनेक घटको, यथा–भूमि की उर्वरा शक्ति, जनसख्या, श्रम की कार्यदक्षता, पूजी सचय की मात्रा, कृषि विधियो आदि का प्रभाव पड़ता है । अत विभिन्न समाजो एव विकास के विभिन्न चरणो मे इन साधनो का हिस्सा अलग–अलग एव अनिश्चित रहता है । अत रिकार्डो ने कहा कि, ''इसके वितरण के नियम निर्धारित करना राजनीतिक अर्थव्यवस्था की सबसे प्रमुख समस्या है ।''[4]

उन्होने बताया कि, यद्यपि इस दिशा मे पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको, जिनमे एडम स्मिथ, माल्थस, जेम्स मिल, जे बी. से आदि उल्लेखनीय है, के विचार सराहनीय है । किन्तु, इनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त वितरण की समस्या की प्रकृति की समुचित एव सतोषप्रद व्याख्या नही करते । अत. इसके समाधान के सिद्धान्तो के पुनरावलोकन की आवश्यकता है, जो वर्तमान आर्थिक दशाओ मे अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण एव ज्वलत हो गयी हैं । इसीलिए उन्होने मुख्य रूप से वितरण सम्बन्धी समस्याओ का अध्ययन किया और जैसा कि प्रो. हैने ने लिखा है,

''रिकार्डो ही ऐसे प्रथम अर्थशास्त्री थे जिन्होने वितरण सम्बन्धी समस्याओं का अधिक वैज्ञानिक विवेचन किया और राष्ट्रीय आय के सृजन मे योग देने वाले विभिन्न साधनो के हिस्से निर्धारित करने के लिए विस्तृत नियम बनाये ।''

रिकार्डो ने बताया कि समाज के विभिन्न वर्गों के हित एक समान नही हैं । अतः भूमिपतियो, श्रमिको एवं उत्पादकों के हितो मे परस्पर टकराव रहता है । सामूहिक उत्पादन मे से जब इनमे से कोई एक बड़ा हिस्सा ले लेता है तो दूसरे साधनो का हिस्सा घट जाता है । अतः उन्होने वितरण के ऐसे सिद्धान्तो के प्रतिपादन की आवश्यकता अनुभव की जो विभिन्न साधनो के हिस्सो की प्रकृति एवं कारणो की समुचित जांच कर इसे मूल्य सिद्धान्त के निकट ला सके । दूसरे शब्दो मे, उन्होने मूल्य सिद्धान्त को वितरण के क्षेत्र मे उसकी समस्याओ के समाधान के लिए प्रयोग किया । यद्यपि, यह तो नहीं कहा जा सकता कि रिकार्डो के वितरण सम्बन्धी सिद्धान्त पूर्ण एवं निर्दोष थे, फिर भी, यह सत्य है कि वे सभी पूर्ववर्ती विचारको के सिद्धान्तो से अधिक वैज्ञानिक, ठोस एव व्यापक थे । इनके जरिये उन्होने एडम स्मिथ द्वारा अधूरे छोड़े गये कार्य को पूर्ण किया । यही कारण है कि उनके वितरण सम्बन्धी सिद्धान्त एव विचार उनकी प्रसिद्धि के सबसे प्रमुख कारण है । इन सिद्धान्तो

4 "To determine the laws which regulate this distribution is the principal problem in political economy" -Recardo D

की सबसे प्रमुख महत्ता यह है कि भावी आर्थिक विश्लेषण के विकास मे ये केन्द्र बिन्दु (focal point) रहे है। इन सिद्धान्तो मे भी उनका लगान सिद्धान्त सर्वोपरि है। अत अब हम पहले उनके लगान सिद्धान्त की और तत्पश्चात् क्रमश मजदूरी तथा लाभ एव ब्याज विषयक सिद्धान्तो की व्याख्या करेगे –

(1) रिकार्डो का लगान सिद्धान्त (*Recardian Theory of Rent*)

रिकार्डो के वितरण विषयक सिद्धान्तो मे उनके लगान सिद्धान्त को केन्द्रीय स्थान प्राप्त है। वे स्वय, क्योकि, प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के एक आधार स्तम्भ थे, उनके इस सिद्धान्त को लगान का प्रतिष्ठित सिद्धान्त भी कहते है। तथ्य इस बात की पुष्टि करते है कि उनके लगान विषयक विचार एव सिद्धान्त एकदम नये एव चौकाने वाले नही थे। सन् 1777 मे स्कॉटलैण्ड के एक कृषि विचारक जेम्स एण्डरसन ने सर्वप्रथम लगान सम्बन्धी विचार प्रस्तुत किये। प्रकृतिवादी विचारको एव एडम स्मिथ ने भी भूमि के लगान की चर्चा कर इसे प्रकृति की उदारता का पुरस्कार बताया किन्तु उनके विचार पूर्ण, परिपक्व एव सतुलित नही थे। 19वीं सदी के आरम्भ मे सन् 1815 मे रोबर्ट टोरेन्स (Essay on the External Corn Trade), सर एडवर्ड वेस्ट (Esaay on the Application of Capital to Land) एव माल्थस (Observations of the Effects of the Corn Laws) ने एक साथ, किन्तु, भिन्न–भिन्न पम्पलेटस् मे अपने–अपने लगान सम्बन्धी विचार एव सिद्धान्त रखे। रिकार्डो इन सबके विचारो से सहमत नही थे। अत पहले उन्होने सन् 1815 मे एक पम्पलेट "Essay on the *Influence of Low Price of Corn on the Profits of Stock*" मे *अपने लगान* सिद्धान्त की रूपरेखा प्रस्तुत की और तत्पश्चात् सन् 1817 मे "The Principles of Political Economy and Taxation" नामक अपनी पुस्तक मे इसकी पूर्ण, विस्तृत एव वैज्ञानिक व्याख्या की। इस प्रकार यद्यपि, रिकार्डो ने लगान के बारे मे कोई बिल्कुल नयी बात नहीं कही और वही कहा अथवा लिखा जो उनसे पहले कहा व लिखा जा चुका था, किन्तु उनके स्वय के इस विषय मे विचार इतने पूर्ण, परिष्कृत एव परिपक्व थे कि यह सिद्धान्त उन्हीं के *नाम के साथ जुड़ गया। रिकार्डो इस सम्मान के पात्र भी थे। जैसा कि न्यूमैन* ने लिखा है, "रिकार्डो द्वारा लगान सिद्धान्त का विकास पूर्ण एव सही था और यह उन्ही का नाम है जिसके साथ लगान का प्रतिष्ठित सिद्धान्त जुड़ा हुआ है।"[5]

लगान क्यों दिया जाता है ? (Why Rent is Paid ?)- रिकार्डो से पहले सभी लेखको, विचारको एव अर्थशास्त्रियो ने लगान को भूमि की उदारता (bounty of nature) का पुरस्कार बताया। किन्तु, रिकार्डो ने इन सबसे पृथक्, लगान के एक ऐसे सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो प्रकृति की उदारता पर नही बल्कि उसकी कृपणता (negardliness) पर आधारित था। उन्होने बताया

कि 'भूमिपतियो को ऊचा लगान इसलिए नही मिलता है कि प्रकृति अपने उपहारो मे उदार है बल्कि इसलिए मिलता है कि वह अपने उपहारो मे कृपण अर्थात् कजूस है' । यदि वह अपने उपहारो मे उदार होती और समस्त भूमियाँ समान रूप से एव अत्यधिक उपजाऊ होतीं तो किसी भी भूमिपति को कोई लगान नही मिलता । किन्तु, वास्तव मे ऐसा नही है । उसने मानव जाति के साथ सौतेला व्यवहार किया है । उपजाऊ भूमियो की तुलनात्मक न्यूनता है और विभिन्न भूमियो की उर्वरा शक्ति मे अन्तर पाया जाता है, अत लगान का उदय होता है और जिस भूमिपति का जितनी अधिक उर्वराशक्ति वाली भूमि पर स्वामित्व है, उसे उतना ही ज्यादा लगान मिलता है । और जैसे–जैसे जनसख्या मे उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण किसी समाज के लोगो को क्रमश घटिया एव कम उपजाऊ भूमियो पर खेती करने के लिए विवश होना पड़ता है, अधिक उपजाऊ भूमियो का लगान क्रमश बढ़ता जाता है । दूसरे शब्दों मे, रिकार्डो के अनुसार यदि समस्त भूमियो की उर्वरता एक समान होती तो किसी भी भूमिपति को कोई लगान नहीं मिलता । उन्होने बताया कि जैसे–जैसे प्रकृति अपने उपहारो मे कजूस होती जाती है, कृषि मे क्रमागत उत्पत्ति हास नियम क्रियाशील होने लगता है और वह अपने उपहारो की ऊंची कीमत मागने लगती है । अत मानव जाति प्रकृति के श्रम अर्थात् भूमि का मूल्य (लगान) इसलिए नही चुकाती कि वह (प्रकृति) बहुत काम करती है बल्कि इसलिए चुकाती है कि वह बहुत कम काम करती है । इसी आधार पर उन्होने बताया कि श्रेष्ठ भूमियो के मालिको को उस समय अधिक लगान मिलेगा और उसमे क्रमश वृद्धि होती जायेगी जब भूमियो का सीमात तेजी से गिरेगा अर्थात् शेष बची भूमियो की उर्वरा शक्ति तेजी से गिरे तथा उस समय उनका लगान अधिकतम होगा जब चट्टानो अर्थात् बहुत घटिया किस्म की भूमियो पर खेती करने के लिए समाज विवश हो जाये । इस प्रकार अन्य प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की भाति रिकार्डो ने भी भूमि के लगान को एक अनर्जित आय (unearned income) माना, जो किसी साधन (भूमि) का पुरस्कार न होकर केवल उस पर स्वामित्व का ही पारितोषिक है । इसी आधार पर उन्होने भूमिपतियो को परजीवी कहा, जो बिना बोये ही काटना पसद करते हैं । उन्होने कहा कि भूमिपतियो के ऊचे लगान से उनकी दक्षता का कोई सम्बन्ध नही है और सयोगवश जिस भूस्वामी ने जितनी अधिक उपजाऊ भूमि पर अपना अधिकार जमा लिया है, उसे उतना ही ऊचा लगान मिलता है। इस प्रकार रिकार्डो ने अनुपस्थित भूस्वामियो (absentee landlords) का

5 "Recardo's development of the theory was by far the fullest and most complete, and it is his name which is generally associated with the classic enunciation of a rent theory" Newman

अस्तित्व स्वीकार कर लगान को एक सस्था सम्बद्ध अथवा सस्था आबद्ध घटना (Insutuuon bound phenomenon) माना । यह सस्था 'भूमि पर निजी स्वामित्व' है।

मान्यतायें (Assumptions)- रिकार्डो का लगान सिद्धान्त निम्नांकित मान्यताओ पर आधारित है–

(ı) लगान केवल भूमि (खानो एव खदानो सहित) को ही प्राप्त होता है, उत्पत्ति के अन्य साधनो को नही ।

(ıı) भूमि की पूर्ति (मात्रा एव गुण दोनो की दृष्टि से) सीमित एव पूर्णत बेलोचदार है ।

(ııı) भूमि पर निजी स्वामित्व है और कृषि मे अनुपस्थित भूस्वामित्व पाया जाता है ।

(ıv) भूमि का प्रयोग पूर्णत विशिष्ट है अर्थात् इसका प्रयोग केवल कृषि के लिए होता है ।

(v) भूमि के विभिन्न टुकडो की स्थिति एव उर्वरा शक्ति मे भिन्नता पायी जाती है और इसी अन्तर से लगान का उदय होता है ।

(vı) भूमि का जो टुकड़ा किसी एक प्रयोग अर्थात् एक फसल के उत्पादन मे श्रेष्ठ होता है, वह टुकड़ा शेष सभी प्रयोगो अथवा फसलो के उत्पादन मे भी बढ़िया अथवा अधिक कुशल होता है ।

(vıı) सर्वप्रथम सर्वाधिक उपजाऊ अथवा अनुकूलतम स्थिति वाली भूमि पर खेती की जाती है और बाद मे क्रमश कम उपजाऊ भूमियो का नम्बर आता है ।

(vııı) समस्त भूमियो के समान आकार के भूखण्डो पर कृषि करने की उत्पादन लागत एक समान होती है ।

(ıx) समस्त भूमियो की उपज की किस्म समरूप एव बाजार कीमत एक समान होती है ।

(x) सीमात भूमि (सबसे कम उपजाऊ भूमि जो सबसे अत मे कृषि कार्य मे प्रयुक्त होती है) की उपज एव उत्पादन लागत द्वारा बाजार कीमत का निर्धारण होता है ।

(xı) सीमात भूमि लगान रहित भूमि (no rent land) होती है अर्थात् इसे कोई लगान नही मिलना ।

(xıı) लगान, कीमत मे सम्मिलित नही होता ।

(xııı) कृषि मे क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम क्रियाशील होता है ।

(xıv) पूर्ण प्रतिस्पर्धा की स्थिति विद्यमान रहती है फलत. सीमात भूमि की उत्पादन लागत एव उपज द्वारा कीमत निर्धारित होने से इसे कोई आधिक्य अर्थात् लगान नही मिलता ।

(xv) यह सिद्धान्त दीर्घ कालीन व्याख्या करता है ।

लगान की परिभाषा एवं सिद्धान्त का कथन (Definition of Rent and the Statement of Theory)- उपर्युक्त मान्यताओं का सहारा लेकर रिकार्डो ने कहा कि, "लगान भूमि की उपज का वह भाग है जो भूमिपति को भूमि की मूल एवं अविनाशी शक्तियो के प्रयोग के बदले दिया जाता है।"[6] रिकार्डो द्वारा प्रतिपादित लगान की इस परिभाषा से स्पष्ट है कि उनके अनुसार भूमि मे दो प्रकार की उर्वरा शक्ति होती है– (a) मूल एवं अविनाशी अर्थात् प्रकृति से अर्जित उर्वरा शक्ति और (b) मानवीय प्रयासो द्वारा सृजित उर्वरा शक्ति। रिकार्डो ने बताया कि दूसरे प्रकार की उर्वरा शक्ति नाशवान है और भूमि के लगातार प्रयोग से समाप्त हो जाती है। इससे आशय भूमि की उत्पादन लागत से है और समान आकार–प्रकार के विभिन्न भूमियो के टुकड़ो की यह उर्वरा शक्ति अथवा उत्पादन लागत एक समान होती है। विभिन्न भूमियो की प्रकृति से अर्जित उर्वरा शक्ति अर्थात् मूल एव अविनाशी शक्तियो मे अन्तर पाया जाता है और इसी कारण विभिन्न भूमियो की उत्पादन कुशलता अलग–अलग होती है। अत रिकार्डो ने बताया कि भूमि के किसी टुकड़े से प्राप्त कुल उपज का जो भाग केवल उसकी मूल और अविनाशी शक्तियो के प्रयोग के बदले मिलता है, लगान कहलाता है।

रिकार्डो ने लगान को एक अन्तर मूलक बचत (differential surplus) बताया और कहा कि यदि समस्त भूमियो की प्रकृतिदत्त उर्वरा शक्ति एक समान होती तो उनकी उपज की मात्रा मे कोई अन्तर नही होता और किसी भूमि अथवा भूमिपति को कोई लगान नहीं मिलता। उन्ही के शब्दो मे, "यदि समस्त भूमियो की विशेषताये एक जैसी होती और यह मात्रा मे असीमित एवं किस्म मे एक जैसी होती तो इसके प्रयोग के बदले कोई शुल्क (अर्थात् लगान) नही लिया जाता।"[7] किन्तु, व्यवहार मे ऐसा नही है, अत घटिया भूमियो की तुलना मे बढ़िया भूमियो से ज्यादा उत्पादन मिलता है। उत्पादन का यह अन्तरमूलक आधिक्य ही रिकार्डो के अनुसार आर्थिक लगान है।[8] दूसरे शब्दो मे, लगान भूमि के टुकड़ो, जिनकी उर्वरा शक्ति अलग–अलग होती है, का उर्वरता विभेद (fertility differential) है।

सिद्धान्त की व्याख्या (Explanation of the Theory)- रिकार्डो ने एक नये आबाद हुए देश के उदाहरण से अपने सिद्धान्त का स्पष्टीकरण किया और कहा

---

6 "Rent is that portion of the produce of the earth which is paid to the landlord for the use of the original and indestructible powers of the soil." Recardo D

7 "If all lands had the same properties and if it were unlimited in quantity and uniform in quality no charge could be made for its use." -Recardo D

8 "Rent is the excess of the yield of a superior piece of land i.e. super-marginal land over that of a marginal plot." Recardo D

कि आरम्भ मे इसकी जनसख्या कम है और यह जनसख्या अपनी खाद्यान्न की आवश्यतकता की पूर्ति के लिए वहा उपलब्ध सबसे अच्छी एव उपजाऊ अर्थात् A किस्म की भूमि पर खेती करती है । जब तक क्रमश बढ़ती जनसख्या की खाद्यान्न की आवश्यकता को पूरा करने के लिए इस किस्म की भूमि पर्याप्त है, तब तक इसी पर खेती की जायेगी और किसी भी भूमिपति को उपज आधिक्य के रूप मे कोई लगान नही मिलेगा । यही नही, जब तक केवल A किस्म की भूमि पर खेती की जाती है यही सीमात भूमि है और इसी की उत्पादन लागत द्वारा खाद्यान्न की बाजार कीमत निर्धारित होती है । अत इसकी कुल उपज की बिक्री से उत्पादन की कुल लागत वसूल होती है । दूसरे शब्दो मे, मानवीय प्रयासो द्वारा सृजित भूमि की उर्वरा शक्ति के ह्रास की क्षति–पूर्ति होती है । फलत भूमिपतियो को कीमत आधिक्य के रूप मे भी कोई लगान नही मिलता है ।

किन्तु, जैसे–जैसे जनसख्या बढ़ती है क्रमश घटिया किस्म की भूमियो पर खेती करने के लिए विवश होना पड़ता है और जैसे–जैसे यह विवशता बढ़ती जाती है, बढ़िया किस्म की भूमियो का लगान भी बढ़ता जाता है । उदाहरण के लिए जब द्वितीय अर्थात् B श्रेणी की भूमि पर खेती होने लग्ती है तो A श्रेणी की भूमि को उपज एव कीमत आधिक्य के रूप मे लगान मिलने लग जाता है । ज्यो ही B किस्म की भूमि पर खेती आरम्भ होती है, यह भूमि सीमात एव A किस्म की भूमि अधि सीमात भूमि (super marginal land) हो जाती है और सीमात भूमि (B) की उपज पर अधिसीमात भूमि (A) की उपज का आधिक्य अधिसीमात भूमि के मालिको को लगान के रूप मे मिलना आरम्भ हो जाता है । अब B किस्म की भूमि की उत्पादन लागत द्वारा कीमत का निर्धारण होगा और इसकी कुल प्राप्तिया (कुल उपज की बिक्री से) ठीक इसकी कुल उत्पादन लागत के बराबर होगी, अत इसे कोई लगान नही मिलता है। इसी क्रम मे, जब जनसख्या मे और वृद्धि से अपेक्षाकृत और घटिया अर्थात् C किस्म की भूमि पर खेती आरम्भ हो जाती है तो ऐसा होते ही B किस्म की भूमि, जो पहले सीमात भूमि थी, अब अधिसीमात भूमि बनकर लगान प्राप्त करने लगती है और A किस्म की भूमि का लगान बढ़कर पहले से अधिक हो जाता है । इस प्रकार जो भूमि सबसे अत मे कृषि कार्य मे प्रयुक्त होती है उसे सीमात भूमि अथवा लगान रहित भूमि (No rent land) कहते है । पूर्ण प्रतिस्पर्धा की मौजूदगी के कारण इस भूमि की उपज एव उत्पादन लागत (जो समान आकार के सभी किस्मो के भूखण्डो के संदर्भ मे एक बराबर रहती है) द्वारा खाद्यान्न की बाजार कीमत निर्धारित होती है, अत इसकी उपज की बिक्री से केवल उत्पादन लागत वसूल होता है और शेष सभी श्रेष्ठ अर्थात् अधि सीमात भूमियो को लगान मिलता है । इसीलिए रिकार्डो ने

कहा कि ज्यो–ज्यो भूमियो का सीमात गिरेगा, बढ़िया किस्म की भूमियो का लगान बढ़ता जायेगा।

उपर्युक्त व्याख्या को एक उदाहरण द्वारा भी स्पष्ट किया जा सकता है। माना कि किसी देश मे A B C एव D चार किस्म की भूमियां है। जनसंख्या मे क्रमिक वृद्धि से क्रमश चारो ही किस्मो की भूमियो पर खेती होने लग जाती है। चारो किस्मो की भूमियो के समान आकार (माना कि एक–एक हेक्टेयर) के भूखण्डो पर उत्पादन की लागत एक समान है (माना कि 1000/- रुपये) जबकि उनसे अलग–अलग मात्रा मे उपज मिलती है। इस स्थिति मे चारो भूमियो के मालिको को निम्नाकित तालिका के अनुसार उपज आधिक्य एव कीमत आधिक्य के रूप मे लगान मिलेगा–

भूमि की किस्मे	प्रति हेक्टेयर उपज मे लगान		प्रति हेक्टेयर मुद्रा मे लगान			
	कुल उत्पादन (क्विटल)	लगान (क्विटल)	कुल उत्पादन लागत (रु)	कीमत प्रति क्विटल (रु)	कुल आगम (रु)	लगान (रु)
A	20	20 5 15	1000	200	4000	4000 1000 3000
B	15	15 5 10	1000	200	3000	3000-1000 -2000
C	10	10-5-5	1000	200	2000	2000-1000 =1000
D	5	5 5=0	1000	200	1000	1000 1000 -शून्य

उपर्युक्त तालिका को रेखाचित्र द्वारा भी समझाया जा सकता है। रेखाचित्र मे अधिसीमात भूमियो के लगान को छायाकित क्षेत्र द्वारा दिखाया गया है।

उपर्युक्त तालिका एव रेखाचित्र से निम्नाकित निष्कर्ष निकाले जा सकते है–

(1) भूमि के किसी टुकड़े पर कृषि से प्राप्त कुल उत्पादन मे से सीमात भूमि का उत्पादन घटा देने के पश्चात् जो मात्रा शेष रहती है, उसे लगान कहते है। अथवा भूमि के किसी टुकड़े से प्राप्त कुल आगम मे से कुल उत्पादन लागत

घटा देने के पश्चात् जो राशि शेष रहती है, उसे लगान कहते है।

(ii) जनसख्या मे क्रमश वृद्धि से भूमियो के सीमात मे गिरावट के कारण अधिसीमात भूमियो का लगान बढ़ता है। अत लगान एक अनर्जित आय है। ऊँचे लगानो के पीछे आधारभूत कारण भूमिपतियो की ज्यादा मेहनत नहीं बल्कि अच्छी किस्म की भूमि पर स्वामित्व है।
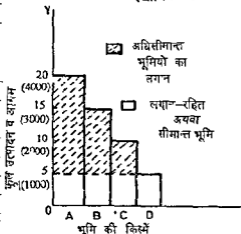
(iii) भूमिपति परजीवी है और बिना बोये ही काटते है। किन्तु, फिर भी वे ऊँचे लगानो के लिए स्वय जिम्मेदार नही है। ऊँचे लगान परिस्थितिजन्य (ऊँची जनसख्या एव भूमियो की किस्म मे अन्तर) है। अत यदि इन्हे भूमिपतियो की तिजौरियो मे जाने से रोक दिया जाये तो तब भी खाद्यान्न की बाजार कीमत कम नही होगी। इसका कारण यह है कि बाजार कीमत अनिवार्यत सीमात भूमि की उत्पादन लागत व उसकी उपज के भागफल के मान के बराबर होती है। इसीलिए रिकार्डो ने कहा कि ऊचे लगान ऊँची कीमतो के कारण नही बल्कि उनके परिणाम है। उन्ही के शब्दो मे, "अनाज इसलिए महँगा नही है क्योकि लगान चुकाया जाता है बल्कि लगान चुकाया जाता है क्योकि अनाज महँगा है।"[9]

रिकार्डो के लगान सिद्धान्त की उपर्युक्त व्याख्या विस्तृत कृषि के सदर्भ मे है। इसकी गहन कृषि के सदर्भ मे व्याख्या की जा सकती है। रिकार्डो ने स्वय बताया कि जब भूमि के एक ही टुकडे पर श्रम एव पूजी की अधिकाधिक इकाइया लगाकर बढती जनसख्या के लिए खाद्यान्न की पूर्ति के लिए प्रयास किया जाता है तो समान लागत की प्रत्येक अतिरिक्त इकाई की सीमात उत्पादकता गिरती है। दूसरे शब्दो मे, परिवर्तनशील अनुपातो के नियम अर्थात् क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता के कारण परिवर्तनशील साधनो की उत्तरोत्तर इकाइयो की सीमात उत्पादकता गिरती है और उपज की कीमत क्योकि, सीमात इकाई की लागत एव उसके उत्पादन के भागफल के बराबर होती है, अत सीमात इकाई लगान रहित इकाई होती है[10] और

---

9 "Corn is not high because a rent is paid but rent is paid because corn is high" RecardoD
10 "The capital last employed pays no rent."

इससे पहले की सभी अधि–सीमात इकाइयो को लगान मिलता है । स्पष्ट है कि विस्तृत एव गहन कृषि मे इस नियम की क्रियाशीलता मे कोई आधारभूत अन्तर नही है ।

सिद्धान्त की प्रमुख विशेषतायें (Salient Features of the Theory)- इस सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताये निम्नांकित है-

(i) लगान उत्पत्ति के भूमि साधन का पुरस्कार है और इससे आशय आर्थिक लगान से है न कि उस लगान से जो भूमिपतियो एव काश्तकारो के मध्य आपसी समझौते द्वारा तय होता है और जिसे 'ठेका लगान' कहते है ।

(ii) जनसख्या मे वृद्धि के साथ–साथ लगान मे वृद्धि होती है ।

(iii) लगान का भूमि की उर्वरता मे अन्तर (विस्तृत कृषि) अथवा क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता (गहन कृषि) अथवा भूमियो की स्थिति मे भिन्नता के कारण उदय होता है ।

(iv) लगान प्रकृति की उदारता का पुरस्कार नही बल्कि उसकी कृपणता का परिणाम है । यदि उपजाऊ भूमियो का तुलनात्मक अभाव नही होता तो क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता अथवा भूमियो की स्थिति मे भिन्नता के आधार पर भूमिपतियो को अत्यल्प मात्रा मे लगान मिलता ।

(v) लगान एक अन्तर मूलक आधिक्य है जिसका सृजन विभिन्न भूमियो की मूल एव अविनाशी शक्तियो मे अन्तर द्वारा होता है ।

(vi) लगान एक अनर्जित आय है । किसी भूमिपति को ज्यादा लगान इसलिए नही मिलता कि वह अधिक कार्य कुशल है बल्कि केवल इसलिए मिलता है क्योकि, उसका अपेक्षाकृत अच्छी किस्म की भूमि पर स्वामित्व है ।

(vii) लगान सीमात भूमि की उपज पर अधिसीमात भूमियो की उपज का आधिक्य है। इसीलिए केवल अधिसीमांत भूमियो को ही लगान मिलता है।

(viii) महगा अनाज एक कारण एव ऊँचा लगान उसका एक परिणाम है । दूसरे शब्दो मे, लगान कीमत मे सम्मिलित नही रहता है अर्थात् यह अनाज की उत्पादन लागत का एक भाग अथवा घटक नही (Rent is not a cost component or Rent does not enter into price)

(ix) लगान का बढ़ना देश के धन मे वृद्धि का सूचक होता है ।

सिद्धान्त की आलोचना ((Criticism of the theory)- तार्किक दृष्टि से पूर्ण होने के बावजूद, इस सिद्धान्त की निम्नांकित आलोचनाये की जाती है–

(i) उत्पादन के सभी साधनों को लगान मिलता है (All the factors of production get a rent- आधुनिक अर्थशास्त्रियो के अनुसार लगान केवल उत्पत्ति के भूमि साधन (land factor) का पुरस्कार नही है, जैसा कि रिकार्डो ने अपने सिद्धान्त मे बताया है, बल्कि भूमि तत्त्व (Land element) का एक

पुरस्कार है और क्योकि, अल्प काल मे न्यूनाधिक मात्रा मे सभी साधनो मे भूमि तत्त्व पाया जाता है, अत लगान केवल भूमि को ही नही बल्कि उत्पत्ति के शेष सभी साधनो को भी मिलता है। इन्होने किसी साधन की हस्तातरण आय पर वास्तविक आय के आधिक्य को भूमि तत्त्व के बदले प्राप्त होने वाला लगान माना है। साधनो मे पाये जाने वाले 'भूमि तत्त्व' को इन अर्थशास्त्रियो ने उनकी विशिष्टता कहा है। अत इस आधार पर 'लगान साधन की विशिष्टता का एक पुरस्कार है'।

(ii) अवास्तविक मान्यताओं पर आधारित अवास्तविक सिद्धान्त (Unrealistic theory based on unrealistic assumptions) आलोचको ने इस सिद्धान्त की मान्यताओ को झूठा एव काल्पनिक बताकर इसकी आलोचना की है, यथा–

(a) **पूर्ति में गुणात्मक स्थिरता नहीं**– वैज्ञानिक विधियो के प्रयोग से गुणात्मक आधार पर भूमि की पूर्ति मे वृद्धि की जा सकती है।

(b) **सभी देशों में भूमि निजी स्वामित्व में नहीं**– रिकार्डो ने लगान का कारण भूमि पर निजी स्वामित्व एव अनुपस्थित भूस्वामित्व मे देखा। इस आधार पर समाजवादी देशो मे भूमि को लगान नही दिया जा सकता। किन्तु, यह निष्कर्ष उचित नही।

(c) **भूमि में प्रयोग विशिष्टता नहीं**– रिकार्डो के अनुसार भूमि का प्रयोग केवल कृषि कार्यो मे होता है। किन्तु आधुनिक अर्थशास्त्रियो के अनुसार ऐसा केवल कृषि प्रधान अर्थव्यवस्थाओ के सदर्भ मे ही माना जा सकता है।

(d) **स्थिति एवं उर्वरा शक्ति में अन्तर ही लगान के सृजन का एकमात्र कारण नहीं**– रिकार्डो के अनुसार विभिन्न भूमियो की स्थिति एव उर्वरा शक्ति मे अन्तर के कारण ही लगान का उदय होता है। किन्तु, आधुनिक अर्थशास्त्री साधन की विशिष्टता को लगान का कारण मानते है।

(e) **एक भूखण्ड सभी प्रयोगों में सर्वोत्तम नहीं होता**– रिकार्डो ने माना कि जो भूमि श्रेष्ठ है वह बस श्रेष्ठ है और अपने सभी प्रयोगो मे श्रेष्ठ है। आलोचक कहते है कि यह गलत है। जो भूमि जूट की खेती के लिए अच्छी है वह कपास की खेती के लिए अच्छी नही हो सकती। इसी प्रकार जो भूमि कृषि कार्य के लिए अच्छी है वह आबादी के लिए अच्छी नही हो सकती।

(f) **सर्वप्रथम सर्वाधिक उपजाऊ एव अच्छी स्थिति वाली भूमि पर खेती की धारणा गलत**– आलोचक कहते है कि यह भूमि तो जगलो से ढकी रहती है और बस्तियो से दूर होती है। मानव जाति ने जहा रहना शुरू कर दिया, बस वही भूमि उसके लिए अच्छी हो गयी। क्या अमरीका रिकार्डो के सिद्धान्त के अनुसार आबाद हुआ ? प्रश्न विचारणीय है।

(g) **समस्त भूमियों की उत्पादन लागत एक समान नहीं हो सकती**– जो भूमि बजर एव उबड–खाबड़ होती है, उसकी उत्पादन लागत भी अधिक होती है।

यदि उस पर श्रेष्ठ भूमियो के बराबर ही उत्पादन लागत लगायी जाये तो सम्भव है उसका रूप और ज्यादा बिगड़ जाये और वह अनुत्पादक हो जाये।

(h) समस्त भूमियों की उपज की किस्म एक समान नहीं होती- जो भूमि जितनी बढ़िया होती है, उसकी उपज की किस्म भी उतनी ही अच्छी होती है। मालवा की भूमि मे जैसी कपास अथवा पजाब मे जैसा गेहूँ एव उत्तर प्रदेश मे जैसा गन्ना होता है, इन फसलो की वैसी किस्मे सर्वत्र नही होती।

(i) समस्त भूमियों की उपज की बाजार कीमत एक समान नहीं होती- जिस भूमि के उत्पादन की किस्म जितनी बढ़िया होती है, उसकी बाजार कीमत भी उतनी ही ऊँची एव विलोमश नीची रहती है।

(j) सीमान्त भूमि अथवा लगान रहित भूमि की खोजना असम्भव- आलोचक कहते है कि यह तय करना कठिन है कि सीमात भूमि कौनसी है। वे रिकार्डो के इस विचार से भी सहमत नही है कि सीमात भूमि को लगान नहीं मिलता। उनके अनुसार जब खाद्यान्न की बाजार माग बढ़ जाती है तो कीमत बढ़ जाती है और सीमात भूमियो को भी लगान मिल जाता है। क्या जब–तब बड़े पैमाने पर जनसख्या के पलायन से सीमात भूमियो को लगान नही मिला है? आलोचक कहते है कि मिला है।

(k) लगान कीमत का एक घटक है- आलोचको के अनुसार लगान लागत का एक घटक है अत कीमत का भी एक घटक है।

(l) कृषि में क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम क्रियाशीलता की गलत मान्यता- आलोचक कहते है कि यह नियम इतना जल्दी एव तत्परता से क्रियाशील नही होता है जितना रिकार्डो ने मान लिया है। इनके अनुसार इस नियम की क्रियाशीलता समाप्त तो नहीं की जा सकती, किन्तु स्थगित की जा सकती है।

(m) पूर्ण प्रतिस्पर्धा की मान्यता अवास्तविक- आलोचको के अनुसार पूर्ण प्रतिस्पर्धा वास्तविक जगत की वास्तविक घटना नही है बल्कि यह केवल पाठ्य पुस्तको मे मिलती है।

(n) दीर्घकाल कभी नहीं आता- यह सिद्धान्त दीर्घकाल मे क्रियाशील होने की मान्यता पर आधारित है। प्रो कीन्स के अनुसार दीर्घकाल की चर्चा करना ही अल्पकालीन समस्याओ की जटिलता से मुह मोड़ना है। उनके अनुसार दीर्घकाल मे और कुछ नही होता बल्कि केवल एक घटना–'मौत' घटित होती है।

(iii) लगान मानव जाति के भूतकालीन श्रम का परिणाम है (Rent is a result **of the past labour of mankind)-** आलोचको के अनुसार लगान मानव जाति के भूतकालीन श्रम का परिणाम है। इनके अनुसार मनुष्य ने जगल काटकर, उबड़–खाबड़ जमीन को समतल बनाकर, सिंचाई के लिए नालिया बनाकर तथा अन्य अनेक रूपो में भूमि को उपजाऊ एव खेती योग्य बनाया है। अत

लगान मनुष्य के ऐसे भूतकालीन परिश्रम का परिणाम है। जर्मन अर्थशास्त्री बस्तियत इन्ही विचारो के समर्थक थे।

(iv) मूल एवं अविनाशी शक्तियों की अवधारणा सही नहीं (Notion of Original and indestructible powers of soil is not Correct) आलोचको के अनुसार वास्तव मे भूमि मे किसी प्रकार की मूल एव अविनाशी शक्तिया नही होती। इनके अनुसार भूमि के लगातार प्रयोग से वह बजर एव ऊसर हो जाती है। अत उसकी उर्वरा शक्ति मे टिकाऊपन नहीं है। दूसरे शब्दो मे इनके अनुसार भूमि की उर्वरा शक्ति कृत्रिम मानव निर्मित एव नाशवान है। फिर, यदि हम यह मान ले कि भूमि मे कुछ मूल एव अविनाशी शक्तिया रहती है, तो आलोचको का कहना है कि यह ज्ञात करना कठिन है कि आर्थिक लगान मे से कितना लगान इन शक्तियो के बदले मिला है और कितना मानवीय प्रयासो के फलस्वरूप।

(v) लगान भूमी की सल्पता का परिणाम है (Rent is a reward of the scarcity of land) आलोचको के अनुसार लगान का उदय भूमि की न्यूनता के कारण होता है। उनका यह कारण भूमि के लगान को लगान के आधुनिक सिद्धान्त से जोड़ देता है। दूसरे शब्दो मे, रिकार्डो ने जहा भेदात्मक लगान की बात कही वहा आधुनिक अर्थशास्त्री दुर्लभता लगान स्वीकार करते है।

(vi) लगान निर्धारण के लिए किसी पृथक् सिद्धान्त की आवश्यकता नहीं (No separate theory is needed for the determination of Rent) रिकार्डो का मानना था कि लगान अन्य साधनो के पुरस्कारो से भिन्न है। अत उन्होने जान बूझकर लगान के एक पृथक् सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। किन्तु, उनके आलोचक इससे समहत नही है। इनके अनुसार लगान भूमि का पुरस्कार है। अत जिस प्रकार माग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा अन्य सभी साधनो का पुरस्कार निर्धारित होता है, उसी प्रकार भूमि की माग और पूर्ति की शक्तियों के आधार पर भूमि के मूल्य—लगान का भी निर्धारण हो जायेगा।

(vii) भूमि सुधार भूमिपतियों के हितों के विरुद्ध नहीं (Land reforms are not against the interests of landlords) रिकार्डो ने भूमि सुधारो को भूमिपतियो के हितो के विरुद्ध माना क्योकि इनसे घटिया किस्म की भूमियो का प्रयोग रुकता है और परिणास्वरूप भूमिपति ऊँचे लगान से वचित रह जाते है। किन्तु, आलोचको के अनुसार उनका यह सामान्यीकरण सही नही है।

(viii) लगान का निर्धारण भूमिपति एव काश्तकार के बीच सम्पन्न समझौते से होता है (Rent is determined by a contract between landlord and the farmer)- आलोचको के अनुसार व्यावहारिक बात यह है कि भूमि के लगान का निर्धारण भूमिपति एव काश्तकारो के मध्य सम्पन्न समझौते से होता है और जब तक इस समझौते का पुनरावलोकन नही किया जाता तब तक लगान निश्चित रहता है।

उपर्युक्त आलोचनाओ के अलावा जर्मन अर्थशास्त्री थानपुनन ने भूमियो की विभेदात्मक दूरियो के आधार पर रिकार्डो के लगान सिद्धान्त को अधूरा बताया और कहा कि समान लागत, किस्म एव कीमत होने के बावजूद उस भूमिपति को लगान कम मिलेगा जिसकी भूमि दूर स्थित होती है। कैरे एव आर्थर यग का मानना है कि घटिया से घटिया भूमियो को श्रेष्ठ भूमियो मे बदलकर मानव जाति ने रिकार्डो की भविष्यवाणिया गलत साबित कर दी है। इसी आधार पर उन्होने रिकार्डो को 'समाज को नष्ट–भ्रष्ट करने वाला' बताया।

निष्कर्ष (Conclusion)- अनेक दोषो, अवास्तविक मान्यताओ एव कटु आलोचनाओ के बावजूद यह सिद्धान्त निरर्थक नही है क्योकि, इसने अनेक महत्त्वपूर्ण प्रभाव छोड़े है। इस सिद्धान्त की गणना अर्थशास्त्र के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तो मे की जाती है। रोबर्टसन ने इसे 'एक शक्तिशाली एव शिक्षाप्रद सिद्धान्त' बताया है। इस सिद्धान्त के द्वारा रिकार्डो ने जो आशका व्यक्त की थी वह सही निकली है। उनका कहना था कि भविष्य मे जनसख्या वृद्धि के कारण घटिया भूमियो पर खेती करने के लिए विवश होना पड़ेगा और परिणास्वरूप भूमियो का सीमात गिरने से अच्छी किस्म की भूमियो का लगान बढ़ जायेगा। दूसरे शब्दो मे, ऊँचे एव आधिक्य लगान की सम्भावनाये बनी रहेगी। वास्तव मे, ऐसा ही हुआ है। परिवहन एव सचार के सस्ते एवं शीघ्रगामी साधनो के कारण कुछ देशो ने विदेशो से खाद्यान्न का आयात कर यद्यपि घटिया भूमियो के प्रयोग एव लगान–वृद्धि पर रोक लगा दी है किन्तु, इससे उनके सिद्धान्त की क्रियाशीलता समाप्त नही बल्कि केवल मात्र स्थगित हुई है। फिर, इससे अनाज के निर्यातक देशो मे, आवश्यक रूप से, भूमियो का सीमात गिरने से लगान बढ़ा है, जो अन्यथा नही बढ़ता। इसी प्रकार बड़े पैमाने पर, जनसख्या के एक देश से दूसरे देशो को पलायन भी केवल इस सिद्धान्त की क्रियाशीलता की प्रकृति बदलता है। इसीलिए **प्रो. जीड** एव **रीस्ट** का कहना है कि, "जब मनुष्य अण्डे की जरदी को विज्ञान की सहायता से बनाने लगेगा तभी रिकार्डो का सिद्धान्त निरर्थक हो सकता है, जब तक ऐसा नही होता, उनका सिद्धान्त सत्य रहेगा।" रिकार्डो ने तो केवल इतनी ही भूल की कि उन्होने लगान को भूमि साधन का पुरस्कार मान लिया। यदि वे अपने चिंतन की दिशा थोड़ी मोड़कर इसे 'भूमि तत्त्व' का पुरस्कार मान लेते तो वे लगान के आधुनिक सिद्धान्त के प्रतिपादक मान लिये जाते। सक्षेप मे आर्थिक विचारो के इतिहास मे इस सिद्धान्त के निम्नाकित प्रमुख प्रभाव रहे है–

(i) इसने भूमिपतियो एव समाज के शेष वर्गों के हितो का आपसी टकराव बता दिया। जैसा कि **एरिकरोल** ने लिखा है, "अब भूमिपतियो का

हित न केवल श्रमिको एव उद्योगपतियो के हितो के विरुद्ध है बल्कि इसका समाज के सामान्य हित से भी टकराव है।''

(ii) इस सिद्धान्त ने भूमिपतियो की परजीवी एव समाज विरोधी प्रकृति उजागर कर दी। इससे उनकी आय पर रोक लगाने की माग होने लगी और परिणामस्वरूप जे एस मिल आदि विचारको ने लगान के सामाजीकरण, अथवा राज्य द्वारा उसे छीन लेने के विचारो का अनुमोदन कर दिया।

(iii) इसने माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त की चुनौतियो को एक बार पुन सबके ध्यान मे ला दिया।

(iv) यह सिद्धान्त समाजवादियो के लिए एक अति महत्त्वपूर्ण प्रेरणा–स्रोत रहा है। इसी के आधार पर उन्होने लगान को समस्त सामाजिक बुराइयो की जड माना और व्यक्तिगत सम्पत्ति पर आक्रमण का अपना लक्ष्य निर्धारित किया। इसीलिए इस सिद्धान्त को 'आधुनिक समाजवाद का प्रारम्भिक बिन्दु' माना जाता है जिसने श्रमिको एव निर्धनो के हितो की रक्षा के लिए आवाज उठवायी।

(v) प्रसिद्ध विचारक सिडनी वैब ने रिकार्डो के लगान सिद्धान्त को समष्टि अर्थशास्त्र की आधारशिला बताया।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर सहज ही मे यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि एम फोविल (M Foville) ने रिकार्डो पर 'झूठा भविष्यद्रष्टा एव भ्रमित प्रचारक' (false prophet and a mistaken apostle) होने का जो आक्षेप लगाया है वह सही नही है और इस सिद्धान्त के आधार पर ही यदि उन्हे आर्थिक विचारो के इतिहास मे एडम स्मिथ के पश्चात् दूसरा सबसे महान विचारक माना जाता है तो वे इसके पात्र है।

(2) मजदूरी सिद्धान्त (Theory of wages)

रिकार्डो के मजदूरी विषयक विचार मुख्यत दो अवधारणाओ– एडम स्मिथ के मजदूरी विषयक विचार और माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त– के मिश्रण है। उन्होने 'मजदूरी' शब्द के 6 अर्थ बताये है–

(i) कुल आगम मे श्रम के सापेक्ष हिस्से मे से लगान घटा देने के बाद शेष राशि,

(ii) प्रति श्रमिक मौद्रिक मजदूरी,

(iii) प्रति श्रमिक वास्तविक मजदूरी,

(iv) दीर्घकालीन साम्य मजदूरी अर्थात् मजदूरी की प्राकृतिक दर,

(v) अल्पकालीन साम्य मजदूरी अर्थात् प्रचलित अथवा मजदूरी की बाजार दर और

(vi) उन वस्तुओ के मूल्य जो श्रम को पुरस्कृत करते है।

मजदूरी के उपर्युक्त रूपो मे चौथा एव पाचवा रूप अपेक्षाकृत अधिक

उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है । अत रिकार्डो ने भी अन्य रूपो की तुलना मे इनका विस्तृत विवेचन किया है ।

मजदूरी की प्राकृतिक दर– यह वह दर है जिस पर श्रमिक अपनी जाति की सख्या यथास्थिर बनाये रखते है और एक श्रमिक के स्थान पर दूसरे श्रमिक के प्रतिस्थापना के परिणामस्वरूप न कुल श्रमशक्ति बढ़ती है और न घटती है। दूसरे शब्दो मे, जैसे ही एक श्रमिक वृद्ध हो जाता है अथवा मर जाता है तो दूसरा श्रमिक उसके स्थान पर प्रतिस्थापित हो जाता है । इस दर का निर्धारण श्रम के लिए न्यूनतम आवश्यक अनिवार्यताओ, सुविधाओ एव विलासिताओ पर निर्भर करता है । दूसरे शब्दो मे, मजदूरी की यह दर श्रमिक परिवारो के जीवन–निर्वाह व्यय के ठीक बराबर होती है । इस व्यय को रिकार्डो ने वस्तुओ के प्राकृतिक मूल्य (जो उनकी उत्पादन लागत के ठीक बराबर होता है) के समान माना, जिसमे श्रमिक द्वारा अपनी न्यूनतम जरूरी आवश्यकताओ (अनिवार्यताओ, सुविधाओ एव विलासिताओ) पर किया जाने वाला व्यय सम्मिलित किया जाता है ।

रिकार्डो ने बताया कि भिन्न–भिन्न वर्गों के श्रमिको के लिए उनके रहन–सहन के स्तर मे अन्तर के आधार पर भिन्न–भिन्न प्राकृतिक मजदूरी की दरे होती हैं । उन्होने बताया कि श्रमिको मे ऊँचे जीवन–स्तर का रुझान पैदा कर मजदूरी की प्राकृतिक दर मे वृद्धि की जा सकती है । इसके लिए श्रमिको को ऐसा प्रशिक्षण देना होगा जिसमे वे अपने जीवन की अनिवार्यताओ की भाति सुविधाओ एव विलासिताओ के प्रयोग मे भी वृद्धि करे ।

मजदूरी की बाजार दर– इससे आशय मजदूरी की वास्तविक अर्थात् प्रचलित दर से है, जिस पर श्रमिक अपना श्रम बेचते हैं । इस प्रकार यह दर वस्तुओ के बाजार मूल्य के समकक्ष है । इस दर का निर्धारण श्रम की माग और पूर्ति की दशाओ से होता है और यह मजदूरी की प्राकृतिक दर के निकट आने की प्रवृत्ति रखती है ।

रिकार्डो ने बताया कि जब कभी मजदूरी की बाजार दर प्राकृतिक दर से ऊँची होती है तो श्रमिक सतुष्ट रहते हैं और परिणामस्वरूप वे अपनी जनसख्या मे वृद्धि पसद करते है । इससे दीर्घकाल मे श्रम की पूर्ति बढ़ जाने से यह दर गिरकर प्राकृतिक दर के निकट आ जाती है । किन्तु, जिस प्रकार वस्तुओ का बाजार मूल्य प्राकृतिक मूल्य पर स्थिर नही रहता, उसी प्रकार मजदूरी की बाजार दर उसकी प्राकृतिक दर पर स्थिर नहीं रहती है ।

इसी प्रकार जब कभी यह दर प्राकृतिक दर से नीची होती है तो जनसंख्या में गिरावट होने लगती है और परिणामस्वरूप दीर्घकाल मे श्रम की पूर्ति घटने से मजदूरी की बाजार दर बढ़कर प्राकृतिक दर के बराबर होने की प्रवृत्ति रखती है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रिकार्डो के अनुसार दीर्घकाल में मजदूरी की ये दोनो दरे एक बराबर होती है।

रिकार्डो ने बताया कि एक गतिशील समाज मे पूजी एव विनियोजन मे वृद्धि से श्रम की माग बढ़ती है, अत मजदूरी की बाजार दर बढ़ती है और बढ़कर मजदूरी की प्राकृतिक दर से ऊँची हो जाती है। किन्तु, ऐसा तभी होता है जब श्रम की पूर्ति कम होती है। वैसे रिकार्डो ने कभी मजदूरी की ऊँची बाजार दर का समर्थन नही किया। दूसरे शब्दो मे, वे मजदूरो के हितो के समर्थक नही थे। फिर भी, उन्होने यह अवश्य कहा कि मजदूरो को कम से कम इतनी मजदूरी अवश्य मिलनी चाहिए जिससे वे अपने जीवन की अनिवार्यताओ के साथ–साथ कुछ सुविधाओ एव विलासिताओ का भी उपयोग कर सके।

जहाँ तक मजदूरी के सिद्धान्त का प्रश्न है, रिकार्डो ने न तो लगान सिद्धान्त की भाति मजदूरी के किसी निश्चित सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और न प्रचलित सिद्धान्तो मे से किसी एक का समर्थन ही किया। इसी प्रकार एक तो उनके मजदूरी सिद्धान्त मे कई सिद्धान्तो के तत्त्व सम्मिलित हैं और दूसरे, वे कई पूर्वकल्पित मान्यताओ पर आधारित हैं। उन्होने मुख्यत मजदूरी के निम्नाकित तीन सिद्धान्तो का समर्थन किया है –

(i) मजदूरी का जीवन–निर्वाह सिद्धान्त (Subsistance theory of wages)- इसे मजदूरी का लौह सिद्धान्त भी कहते है। इसका प्रतिपादन सन् 1815 मे टोरेन्स ने किया था। इसके अनुसार अन्तत मजदूरी श्रमिक परिवारो के जीवन–निर्वाह व्यय के ठीक बराबर होती है और यह समायोजन माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त के आधार पर स्वत ही हो जाता है। रिकार्डो ने बताया कि जीवन–निर्वाह व्यय (जो श्रमिको की आदतो एव जीवन–निर्वाह की सामाजिक एव अन्य दशाओ द्वारा निर्धारित होता है) श्रम के पुनरुत्पादन के लिए न्यूनतम आवश्यक मूल्य है जिस पर पीढ़ी–दर–पीढ़ी श्रम की पूर्ति स्थिर बनी रहती है।

(ii) मजदूरी कोष सिद्धान्त (Wage Fund Theory)- एडम स्मिथ एव जेम्स मिल के प्रभाव से रिकार्डो ने मजदूरी–कोष सिद्धान्त का भी समर्थन किया। उन्होने बताया कि सामान्यत जनसख्या मे बढ़ोत्तरी की प्रवृत्ति रहती है, अत श्रम के भरण–पोषण के लिए मजदूरी कोष के रूप मे अधिक प्रावधान करना पड़ता है। उन्होने यह भी बताया कि जब जनसख्या एव जीवन–निर्वाह मजदूरी दोनो बढ़ते है तो मजदूरी कोष भी बढ़ता है और विलोमश गिरता है। इस प्रकार, निष्कर्ष रूप मे, मजदूरी कोष जनसख्या एव श्रमशक्ति दोनो को नियत्रित करता है। रिकार्डो ने मजदूरी कोष एव जनसख्या मे धनात्मक सम्बन्ध माना और कहा कि "जनसख्या स्वय उन कोषो द्वारा सचालित होती

है जो इसे रोजगार प्रदान करते हैं, इसलिए यह पूजी मे वृद्धि एव कमी के साथ बढ़ती एव घटती है।''[11]

(iii) मांग एवं पूर्ति सिद्धान्त (Demand and supply theory)- जहाँ-तहाँ रिकार्डो ने मजदूरी के माग एव पूर्ति सिद्धान्त का भी समर्थन किया है। इसके अनुसार श्रम के पारिश्रमिक का निर्धारण श्रम की माग एव पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा सतुलन बिन्दु पर होता है। इस सदर्भ मे, रिकार्डो का मानना था कि (a) पारिश्रमिक निर्धारण मे सरकार कोई हस्तक्षेप नही करती। (b) समस्त श्रमिक समरूप एव समान कुशल है। (c) स्वरोजगार का अस्तित्व नही है। (d) गैर-प्रतिस्पर्द्धी श्रम-समूह नही है। (e) श्रम-समूहो मे अन्य किसी प्रकार की अपूर्णतायें नहीं है। परिणामस्वरूप, 'पूर्ण प्रतिसर्धा की मौजूदगी मे सभी श्रमिक एक समय मे एक समान मजदूरी प्राप्त करते है।'

उन्होने बताया कि श्रम की माग मुख्यत पूजी की मात्रा द्वारा निर्धारित होती है तथा दोनो मे धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जाता है, जबकि श्रम की पूर्ति मुख्यत जनसख्या पर निर्भर करती है और इन दोनो मे भी धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जाता है। उन्होने आगे बताया कि विकास की विभिन्न *अवस्थाओ मे श्रम की माग और पूर्ति की दशाये अलग-अलग रहती है और* ये मुख्यत उर्वर भूमियो की प्रचुरता पर निर्भर करती है तथा ''धन एव जनसख्या मे वृद्धि के साथ मजदूरी मे वृद्धि होती है।''[12] दूसरे शब्दो मे, उनके अनुसार लगान एव मजदूरी मे वृद्धि के घटक एक समान है।

रिकार्डो ने मजदूरी के विषय मे अन्य कई बाते भी कही है जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है--

(i) भूस्वामियो एव श्रमिको के हितो मे कोई टकराव नही है अर्थात् लगान मे होने वाले परिवर्तनो का श्रम पारिश्रमिक पर कोई प्रभाव नही पड़ता।

(ii) अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए श्रमिको को स्वय प्रयास करना चाहिये और इसका सबसे अच्छा उपाय है जनसख्या वृद्धि पर रोक। उन्ही के शब्दो मे, ''अपनी सतानो की सख्या सीमित रखने के अतिरिक्त श्रमिको की स्थिति सुधारने का अन्य कोई उपाय नही है। उनका भाग्य उनके स्वय के हाथ है।''

(iii) सभी श्रमिको को केवल लाभार्जन के उद्देश्य से ही काम पर

---

11 "Population regulates itself by the funds which are to employ it and therefore always increase or diminishes with the increase or dimunition of capital"

Recardo D

12 "Wages will have a tendency to rise with the progress of wealth and population"

Recardo D

लगाया जाता है और उनके पारिश्रमिक को बाजार की पूर्ण प्रतियोगी दशाओ पर छोड़ देना चाहिये ।

आलोचना (Criticism)-

रिकार्डो के मजदूरी विषयक विचारो की कटु आलोचना हुई है । इन्हे निरपेक्ष, अवास्तविक, कमजोर, असतोषजनक एव भ्रमपूर्ण माना गया है और कहा गया है कि इनमे मौलिकता का अभाव है । आलोचको के अनुसार रिकार्डो ने कानून एव रीति–रिवाजो की बिल्कुल अनदेखी करदी जो मजदूरी–निर्धारण मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है । इनका मुख्य आधार माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त है जो अपने आप मे त्रुटि रहित नही है । इसने मजदूरी की दर मे कमी एव वृद्धि के साथ ही जनसख्या मे कमी एव वृद्धि की जो परिकल्पनाये की है, वे यथार्थ से मेल नही खाती । रिकार्डो का यह मानना उनके गहरे निराशावादी होने का परिचायक है कि श्रम की मजदूरी जीवन–निर्वाह व्यय से ऊँची नही हो सकती । दूसरे शब्दो मे, उन्होने एक ऐसे स्थिर सिद्धान्त का समर्थन कर दिया जिसमे श्रम की कार्य–क्षमता मे वृद्धि के लिए कोई स्थान नही है । इस आधार पर यह सिद्धान्त अधूरा भी है क्योकि, यह मजदूरी निर्धारण मे श्रम की उत्पादकता अथवा कार्यदक्षता की भूमिका का नीचा मूल्याकन करता है और केवल जनसख्या एव श्रमशक्ति मे परिवर्तनो को ही पारिश्रमिक दरो के निर्धारण मे सक्रिय मानता है ।

(3) लाभ एवं ब्याज सिद्धान्त (Theory of Profit and Interest) :

रिकार्डो के अधकचरे एव निम्न कोटि के लाभ एव ब्याज विषयक विचारो को, जैसा कि प्रो. हैने ने कहा है, उनके वितरण सिद्धान्त का सबसे घटिया, एव असतोषनक भाग माना जाता है । 'पूजीपति उद्यमकर्त्ता' के रूप मे रिकार्डो द्वारा पूजीपति एव साहसी को उत्पादन का एक ही साधन मान लेने के कारण उन्होने लाभ एव ब्याज मे कोई आधारभूत अन्तर नही किया और कहा कि सीमात भूमि, जिसे कोई लगान नही मिलता , का उत्पादन मजदूरी एव लाभ का योग होता है । इस आधार पर रिकार्डो के अनुसार सीमात भूमि की उपज के मूल्य मे से मजदूरी घटा देने के पश्चात् जो राशि शेष रहती है, उसे पूजीपति उद्यमकर्त्ता का लाभ कहते है और यह एक अवशिष्ट आय होती है । सूत्र रूप मे,

लाभ = सीमात भूमि की उपज की बाजार कीमत–मजदूरी ।

एडम स्मिथ की भाति रिकार्डो ने भी ब्याज एव लाभ मे कुछ अतर किया और कहा कि जो राशि उधार ली गयी पूजी पर चुकायी जाती है, उसे ब्याज कहते है ।[13] जबकि लाभ स्वय की पूजी के विनियोजन से प्राप्त आय है। इस अतर के आधार पर रिकार्डो ने न तो ब्याज के किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और न इस विषय मे अपना चिन्तन ही आगे बढ़ाया । अत

स्पष्ट है कि वे लाभ मे से ही उधार ली गयी पूजी के बदले देय ब्याज का भुगतान करते है । इस आधार पर एक व्यवसाय के उत्पादन के मौद्रिक मूल्य मे से चुकायी गयी मजदूरी घटाने के बाद शेष राशि लाभ कहलाती है । रिकार्डो के अनुसार लगान मे परिवर्तन का तो लाभ पर कोई प्रभाव नही पड़ता किन्तु 'मजदूरी मे वृद्धि से लाभो मे कमी एव विलोमश वृद्धि होती है ।[14] इसी आधार पर उन्होने बताया कि यदि खाद्यान्न का वितरण काश्तकार एव श्रमिक के मध्य किया जाये तो श्रमिक का भाग जितना ज्यादा होगा, काश्तकार का भाग (लाभ) उतना ही कम होगा तथा भूमियो के सीमात मे क्रमश गिरावट से उसकी कुल उपज का एक बड़ा भाग मजदूरी मे जाने लगता है, अत लाभ गिर जाते हैं और इस क्रम मे एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब सम्पूर्ण उत्पादन मजदूरी के भुगतान मे चला जाता है और परिणामस्वरूप लाभ गिरकर शून्य हो जाता है । इसीलिए रिकार्डो ने लिखा है कि "*जैसे ही मजदूरी किसान की सम्पूर्ण आय के बराबर होगी*, विनियोजित पूजी पर लाभ एव पूजी सचय समाप्त हो जायेगे । फलत अतिरिक्त श्रम के लिए माग समाप्त हो जायेगी और जनसख्या वृद्धि चरम बिन्दु पर पहुच जायेगी ।" इसे उन्होने अर्थव्यवस्था मे गतिहीनता (stagnation) की स्थिति का प्रतीक माना ।

रिकार्डो के लाभ विषयक उपर्युक्त विचारो के आधार पर निम्नाकित निष्कर्ष निकाले जा सकते है–

(i) लाभ मे ब्याज एव साहसी की प्राप्तिया सम्मिलित की जाती है अर्थात् पूजीपति उद्यमकर्त्ता की मिश्रित आय है ।

(ii) यह एक अवशिष्ट आय है ।

(iii) लाभ पूजी की उत्पादकता का परिणाम है ।

(iv) मजदूरी एव लाभ मे विपरीत सम्बन्ध पाया जाता है किन्तु, लाभ मजदूरी पर आधारित नही रहते ।

(v) भविष्य मे जनसख्या, धन एव समाज की प्रगति मे वृद्धि से लाभो मे गिरावट की सम्भावना है ।

(vi) विभिन्न व्यवसायो के लाभो मे अन्तर के कारण पूजी एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय मे जाती है और इससे अन्तत सब व्यवसायो मे लाभ एक

---

13. किसी देश के धन का वह भाग जो उत्पादन मे प्रयुक्त होता है तथा जिसमे भोजन, वस्त्र, उपकरण, कच्चा माल, मशीन आदि, जो श्रम को प्रभावित करते है सम्मिलित किये जाते है, को रिकार्डो ने पूजी कहा ।

14. "Profits would be high or low in proportion as wages were low or high"

-Recardo D

समान होने की प्रवृत्ति रहती है।

(vii) न्यूनतम लाभ अनिवार्य है ताकि पूजीपति उद्यमकर्त्ता की जोखिम एव परेशानी की क्षतिपूर्ति हो सके।

(viii) रिकार्डो ने लाभ के 'उत्पादकता' एव 'गतिशील' सिद्धान्तो की ओर सकेत किया।

मूल्यांकन (Evaluation)- रिकार्डो के लाभ विषयक विचारो को अपरिपक्व, अस्पष्ट, अवैज्ञानिक एव त्रुटिपूर्ण कहा जाता है, क्योकि-

(i) लाभ एव ब्याज मे अन्तर स्पष्ट न कर इन दोनो को एक ही मान लिया जबकि वास्तव मे दोनो की प्रकृति बिल्कुल भिन्न है।

(ii) रिकार्डो भी माल्थस की भाति निराशावादी थे। उनके विचारो की पुष्टि नही हुयी। उन्होने बताया कि भविष्य मे जनसख्या बढ़ने से लाभ गिरेगे जबकि वास्तविक जगत मे लाभो का सृजन हुआ है।

(iii) रिकार्डो ने लाभ के घटको, प्रकृति एव कारणो की समुचित व्याख्या नही की।

(iv) हैने के मतानुसार रिकार्डो के लाभ विषयक विचार एक सिद्धान्त न होकर लाभ एव मजदूरी के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध पर कुछ टिप्पणिया (some remarks on the relation of profits to wages) है।

लगान, मजदूरी एवं लाभ में सम्बन्ध (Relation between Rent, Wages and Profits)-

ज्ञातव्य है कि लगान, मजदूरी और लाभ रिकार्डो के वितरण सिद्धान्त के प्रमुख घटक है। उन्होने बताया कि भूमिपति कुल उत्पादन मे से अपना लगान निकालकर शेष राशि या भाग श्रमिको एव पूजीपति उद्यमकर्त्ता को आपस मे बाटने के लिए दे देता है, जिसको लेकर इन दोनो के बीच सदा सघर्ष विद्यमान रहता है। दूसरे शब्दो मे, लाभ घटाये बिना श्रम की मजदूरी नही बढ़ती। अत श्रमिक जब अपनी मजदूरी में वृद्धि की माग करते है तो यह माग पूजीपति उद्यमकर्त्ता के हितो पर एक चोट होती है। इसी प्रकार जब नीची मजदूरिया देकर पूजीपति उद्यमकर्त्ता अपना लाभ बढ़ा लेते है तो श्रम का पुरस्कार उसके जीवन-निर्वाह व्यय से भी नीचे चला जाता है। फलत उसका दु ख-दर्द बढ़ जाता है और जनसख्या एव श्रम-शक्ति मे गिरावट होने लगती है। इन तीनो के आपसी सम्बन्ध एव अन्तर को सामाजिक प्रगति के परिप्रेक्ष्य मे ही देखा जा सकता है। जैसा कि रेखाचित्र सख्या-2 मे दर्शाया गया है, रिकार्डो के अनुसार सामाजिक प्रगति के साथ-साथ जनसख्या मे वृद्धि से लगान बढ़ते है और लाभ गिरते है जबकि मजदूरी जीवन-निर्वाह व्यय के बराबर ही बनी रहती है। ज्ञातव्य है कि, इनमें होने वाले ये परिवर्तन सापेक्ष होते है न कि निरपेक्ष। उदाहरण के लिए सामाजिक प्रगति के

साथ–साथ कुल लाभ बढ़ सकता है किन्तु लगान भुगतान–पश्चात् कुल उत्पादन मे से उसका प्रतिशत कम होता जाता है। इसी प्रकार मजदूरी की कुल राशि बढ़ेगी किन्तु प्रतिशत अशदान पूर्ववत् रह सकता है।

रेखाचित्र - 2

इन तीनो के आपसी सम्बन्ध को रेखाचित्र–3 की सहायता से भी समझा जा सकता है । जैसा कि इसमे दर्शाया गया है, AP एव MP क्रमश भूमिपति द्वारा काम मे लिये गये परिवर्तनशील साधनो– श्रम एव पूजी– की औसत उत्पादन एव सीमांत उत्पादन की रेखाये है । OW जीवन निर्वाह स्तर द्वारा निर्धारित न्यूनतम मजदूरी है, जिस पर श्रम की पूर्ति (WS) पूर्णत. लोचदार है और जब कोई भूमिपति परिवर्तनशील साधनो की OQ इकाइया काम पर लगाता है, तो श्रम की सीमात उत्पादकता और मजदूरी दर दोनो एक समान होते है । अब माना कि भूमिपति OQ_1 इकाइया ही काम पर लगाता है। इस स्थिति मे इनकी सीमात उत्पादकता Q_1B औसत उत्पादकता Q_1A एव जीवन–निर्वाह स्तर द्वारा निर्धारित मजदूरी Q_1C है । अब भूमिपति की कुल प्राप्तिया OQ_1AE है तथा उसे श्रम की सीमात उत्पादकता पर जो आधिक्य मिलता है, वह उसका लगान है ।
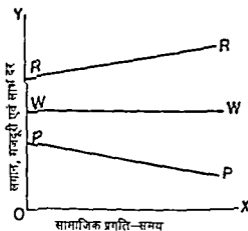
रेखाचित्र - 3
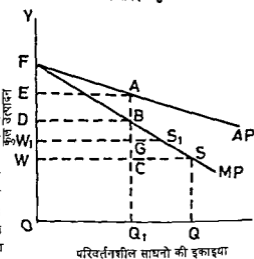
रेखाचित्रानुसार यह AB OQ_1 अथवा EABD = FDB है । अब शेष OQ_1BD राशि श्रम एव पूजीपति उद्यमकर्त्ता के बीच विभाजित होने के लिए शेष रह जाती है । OW पारिश्रमिक दर एव OQ_1 रोजगार स्तर होने के कारण इसमे से OQ_1CW राशि का भुगतान श्रम को मजदूरी के रूप मे कर दिया जाता है । अत WCBD राशि लाभ के रूप मे पूजीपति उद्यमकर्त्ता को मिल जाती है । जब जीवन–निर्वाह मजदूरी OW से बढ़कर OW_1 हो जाती है तो कुल लाभ गिरकर W_1G BD रह जाते है अर्थात् पहले जो लाभ था उसका $WCGW_1$ भाग मजूदरी के पास चला जाता है । रेखाचित्र से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि श्रम एव पूजी की इकाइयो मे उत्तरोत्तर वृद्धि से क्रमश लगान मे वृद्धि एव लाभ मे कमी होती जाती है । (ज्ञातव्य है कि मजदूरी जीवन निर्वाह व्यय पर स्थिर रहती है) किन्तु, लाभ मे गिरावट के लिए बढ़ता लगान उत्तरदायी नही है । जब श्रम एव पूजी की इकाइया बढ़ाकर OQ कर दी जाती है, तो लगान के भुगतान के पश्चात् जो राशि शेष रहती है वह श्रम की उत्पादन लागत होती है अत उनमे विभाजित हो जाती है और फलत लाभ गिरकर शून्य हो जाते है । यह स्थिति अर्थव्यवस्था की स्थिरावस्था की सूचक है जिसके सम्पूर्ण क्रम को रेखाचित्र सख्या–4 मे दर्शाया गया है ।

रेखाचित्र मे TWP कुल मजदूरी भुगतानो (Total wage payments) की रेखा है । यह दोनो आधारो पर 45^0को कोण बनाती है जो इस आशय की सूचक है कि जीवन–निर्वाह स्तर द्वारा निर्धारित मजदूरी दर पर कोई उद्यमकर्त्ता चाहे जितनी मात्रा मे श्रम की माग कर सकता है । अर्थात् इस दर पर श्रम का मागवक्र पूर्णत लोचदार होता है । अत TWP की रेखा समान दर एव गति से ऊपर उठती है । TP वक्र लगान भुगतान–पश्चात् कुल उत्पादन की रेखा है । इसका OY आधार की ओर उभार इस आशय का सूचक है कि शुरु से ही जैसे–जैसे जनसख्या बढ़ती है TP मे वृद्धि की गति क्रमश मद होती जाती है और इस क्रम मे एक स्थिति ऐसी आ जाती है जिसमे जनसख्या वृद्धि के साथ कुल उत्पादन अधिकतम होकर गिरने लग
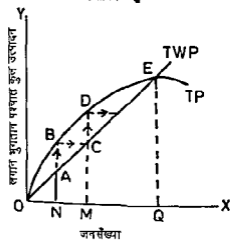
जाता है । E बिन्दु पर TP एव TWP की रेखाये एक दूसरी को काटती है,

जिसका आशय है कि जब जनसख्या बढ़कर OQ हो जाती है तो लाभ गिरकर शून्य हो जाते है । रेखाचित्र ने TWP के ऊपर TP का क्षेत्र लाभ का सूचक है जबकि OEQ क्षेत्र कुल चुकाई गयी मजदूरी का सूचक है । रेखाचित्रानुसार जब जनसख्या ON है तो कुल मजदूरी भुगतान NA एव कुल लाभ AB ON है। इस लाभ से प्रेरित होकर उद्यमकर्त्ता विनियोग बढ़ाते है और परिणामस्वरूप (जैसा कि रेखाचित्र मे तीर के निशान से दर्शाया गया है) बाजार मजदूरी दर बढ़ने मे कुल मजदूरी भुगतान बढ़कर MC हो जाता है । अब उद्यमकर्त्ताओ को CDOM लाभ मिलता है । इससे भी विनियोग मे वृद्धि होगी और जनसख्या बढ़ेगी तथा यह क्रम तब तक चलेगा जब तक कुल मजदूरी भुगतान एव कुल उत्पादन दोनो बराबर नही हो जाते । (रेखाचित्र मे E बिन्दु एव OQ जनसख्या स्तर)

2. मूल्य सिद्धान्त (Theory of Value)

यद्यपि, रिकार्डो ने मूल्य के किसी एकीकृत सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया तथापि अपने वितरण सिद्धान्त मे उन्होने स्थान–स्थान पर मूल्य की अवधारणा का प्रयोग किया है जिसके आधार पर उनके मूल्य सिद्धान्त का एक प्रारूप तैयार किया जा सकता है, जो निम्नांकित है–

रिकार्डो के अनुसार मूल्य के दो रूप– प्रयोग अथवा वास्तविक मूल्य (value in use) एव विनिमय मूल्य (value in exchange) है । उन्होने पानी (ऊँचा प्रयोग मूल्य एव नीचा विनिमय मूल्य) एव स्वर्ण (नीचा प्रयोग मूल्य एव ऊचा विनिमय मूल्य) के उदाहरण द्वारा इन दोनो के बीच अन्तर स्पष्ट किया और कहा कि मूल्य के इन दोनो रूपो मे विनिमय मूल्य अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी एव महत्त्वपूर्ण है । इसके निर्धारण के बारे मे उन्होने बताया कि यद्यपि, किसी वस्तु की उपयोगिता उसके विनिमय मूल्य के लिए बहुत जरूरी होती है (क्योकि जिस वस्तु मे उपयोगिता नही होगी उसका कोई मूल्य भी नही होगा) तथापि उपयोगिता किसी वस्तु के विनिमय मूल्य का माप नही होती । उनके मतानुसार इसका निर्धारण मुख्यत. वस्तु की सीमितता एव उसकी उत्पादन लागत द्वारा होता है । उन्होने बताया कि, यद्यपि दुर्लभ एव प्राचीन ऐतिहासिक महत्त्व की वस्तुओ की भी खरीद एव बिक्री होती है, किन्तु इनका, वास्तविक विनिमय मूल्य ज्ञात नहीं किया जा सकता है । दूसरे शब्दो मे, ये वस्तुए निरूत्पादनीय होती है अत. इनकी पूर्ति मे वृद्धि सम्भव नही और परिणामस्वरूप इनका मूल्य (उत्पादन बढ़ाकर) नही घटाया जा सकता । रिकार्डो ने बताया की ऐसी वस्तुओ की सख्या तुच्छ होती है । अत. वे ऐसी वस्तुओ के मूल्य के बारे मे ज्यादा चिंतित नही हुए । उन्होने कहा कि उन वस्तुओ का ही विनिमय मूल्य ज्ञात करना चाहिये जो आम–उपभोग की है और जिनका बार–बार उत्पादन कर उत्पादन लागत ज्ञात करना सम्भव है ।

अर्थात् उन्होने पुनरूत्पादनीय एव दैनिक उपभोग की वस्तुओ के विनिमय मूल्य को ही अधिक महत्त्व प्रदान किया ।

रिकार्डो ने विनिमय मूल्य के भी दो रूप (i) प्राकृतिक मूल्य और (ii) बाजार मूल्य माने ।

(i) प्राकृतिक मूल्य (Natural price)- उन्होने बताया कि किसी वस्तु का प्राकृतिक मूल्य उसके उत्पादन की श्रम लागत द्वारा निर्धारित होता है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने मूल्य के श्रम लागत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और कहा कि लगान और लाभ वस्तुओ के विनिमय मूल्य को प्रभावित नही करते । यह मूल्य किसी वस्तु की श्रम लागत के ठीक बराबर होता है । इसी मूल्य का विवेचन एव निर्धारण रिकार्डो के मूल्य विषयक चिंतन का केन्द्र बिन्दु रहा और कहा कि श्रम लागत ही वस्तुओ की सापेक्ष कीमतो का निर्धारण कर उनके विनिमय अनुपात निर्धारित करती है । यहा यह भी उल्लेखनीय है कि, यद्यपि प्रारम्भ मे रिकार्डो ने प्राकृतिक मूल्य के निर्धारण मे केवल श्रम लागत की ही महत्ता स्वीकार की किन्तु, बाद मे उन्होने अन्य कतिपय लागत घटको एव विशेषत अपने निकट मित्र मकलक के परामर्श से समय तत्त्व (time element) की महत्ता भी स्वीकार करली थी ।

(ii) बाजार मूल्य (Market price) बाजार मूल्य से रिकार्डो का आशय वस्तुओ के प्रचलित मूल्य से था, जिस पर वस्तुओ की, वास्तव मे, खरीद एव बिक्री होती है । रिकार्डो ने बताया कि यद्यपि, इस मूल्य का निर्धारण वस्तुओ की माग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा होता है, किन्तु इन दोनो म माग की शक्ति अपेक्षाकृत बहुत अधिक सक्रिय एव पूर्ति की शक्ति निष्क्रिय भूमिका निभाती है ।

आलोचना (Criticism)-

टॉरेन्स, हॉलैण्डर एव माल्थस आदि समकालीन लेखको एव विचारको ने रिकार्डो के मूल्य विषयक विचारो की आलोचना की और उन्हे बिखरा हुआ, असतुलित, अस्पष्ट, अधूरा एव असतोषप्रद बताया क्योकि,

(i) किसी वस्तु के मूल्य के निर्धारण मे श्रम लागतो के अलावा अन्य लागते—यथा पूजीगत लगाते आदि भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है ।

(ii) मूल्य निर्धारण मे उपयोगिता अर्थात् माग पक्ष की अनदेखी नही की जा सकती ।

(iii) श्रम पड़तो (labour inputs) का प्रमापित (standard) श्रम—लागत इकाइयो मे रूपान्तरण आसान कार्य नही है ।

(iv) रिकार्डो के मूल्य विषयक विचारो मे निश्चितता एव स्थायित्व का अभाव था । आरम्भ मे उन्होने इसके श्रम सिद्धान्त का गुणगान किया जबकि बाद मे कुछ अन्य घटको की महत्ता स्वीकार करली और अन्त मे उसे पुन

अस्वीकार कर दिया ।

रिकार्डो स्वय अपने मूल्य विषयक विचारो से सतुष्ट नही थे । उन्होने, इस बारे मे एक बार माल्थस को लिखा था कि 'हम दोनो विफल रहे है' (Both of us have failed) इसी प्रकार उन्होने अपने मित्र मकलक को भी लिखा कि मै स्वय अपने मूल्य सिद्धान्त से सतुष्ट नही हूँ । मेरी इच्छा है कि कोई अधिक योग्य व्यक्ति यह कार्य करे । इसकी कठिनाइया हल न होने मे स्वय सिद्धान्त का कोई दोष नही है बल्कि उस व्यक्ति का दोष है जो अपनी अयोग्यता के कारण ऐसा नही कर पाया है । '[15]

3. आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Development)-

यद्यपि रिकार्डो ने आर्थिक विकास का अपने वितरण सिद्धान्त जैसा, कोई पूर्ण एव एकीकृत सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं किया तथापि उनके आर्थिक चिंतन के आधार पर आर्थिक विकास के सिद्धान्त का एक सामान्य ढाचा तैयार किया जा सकता है, जिसे और किसी से नही तो भी, जैसा कि मायर एव बाल्डविन ने कहा है, एडम स्मिथ के सिद्धान्त से बेहतर कहा जा सकता है । उन्हीं के शब्दो मे, "एडम स्मिथ विकास के सिद्धान्त मे जो ठीक से नहीं समझ पाये रिकार्डो ने ठीक समझाया ।"

रिकार्डो ने आर्थिक विकास के एक प्रावैगिक सिद्धान्त की रूपरेखा प्रस्तुत की । इसके माध्यम से उन्होने मुख्यत एक पूजीवादी आर्थिक प्रणाली मे विकास की विभिन्न अवस्थाओ की प्रक्रिया समझायी और बताया कि इन अवस्थाओ मे यह क्यो एव कैसे आर्थिक विकास करती है । उन्होने इनका निरूपण मुख्यत एडम स्मिथ के पूजी सचयन, माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त, स्वय के वितरण सिद्धान्त, क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम, पूर्ण प्रतिस्पर्धा की उपस्थिति की मान्यता आदि के परिप्रेक्ष्य मे किया और बताया कि आर्थिक विकास के बीज मूलत पूजी विनियोजन एव लाभ मे निहित है । अब हम, आर्थिक विकास की विभिन्न अवस्थाओ के परिप्रेक्ष्य मे उनके विचारो का सक्षिप्त विवेचन करेगे—

प्रथम अवस्था- यह आर्थिक विकास की प्रारम्भिक अवस्था है । इसमे किसी देश की जनसख्या कम होती है और कृषि योग्य भूमि की बहुलता के कारण अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होती है । अधिकाश आर्थिक क्रियाये (उत्पादन सम्बन्धी) सरल श्रम—विभाजन के आधार पर मानवीय श्रम से ही पूर्ण करली

---

15 "I am not satisfied with the explanation which I have given of the principles which regulate value. I wish a more able pen would undertake it. The fault is not in the adequacy of the doctrine to account for all difficulties but in the adequacy of him who has attempted to explain it." Recardo D

जाती है। दूसरे शब्दो मे, मशीनीकरण की प्रक्रिया आरम्भ नही होती है। इस अवस्था मे, सामान्यतया, एक ही किस्म की एव श्रेष्ठतम कृषि-योग्य भूमि पर खेती की जाती है। अत भूमिपतियो को कोई लगान नही मिलता और सामूहिक उपज का वितरण श्रम एव पूजीपति उद्यमकर्त्ता के बीच होता है। जैसा कि रिकार्डो के मजदूरी सिद्धान्त मे बताया जा चुका है, श्रमिको को केवल जीवन-निर्वाह व्यय के बराबर मजदूरी दी जाती है अत पूजीपति उद्यमकर्त्ता ऊँचा लाभ कमाते है। इस लाभ का जो भाग उपभोग कार्यों मे व्यय नही करते उसका विनियोजन होता है और इससे जब पूजी निर्माण की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है तो अर्थव्यवस्था आर्थिक विकास की द्वितीय अवस्था मे प्रवेश कर जाती है।

द्वितीय अवस्था- आर्थिक विकास की प्रथम अवस्था के अन्त मे पूजी विनियोजन बढ़ने से द्वितीय अवस्था मे श्रम की माग बढ़ती है। यद्यपि, जनसख्या मे क्रमिक वृद्धि से श्रम की पूर्ति बढ़ती है किन्तु वह उसकी माग से नीचे रहती है फलत मजदूरिया बढ़ती है। इससे एक ओर उत्पादन की बाजार माग तथा दूसरी ओर श्रम की कार्यदक्षता बढ़ती है। इससे आर्थिक क्रियाओ मे विस्तार होता है और खाद्यान्न एव कच्चे माल की आपूर्ति के लिए घटिया किस्म की भूमियो पर खेती होने लगती है। इससे कृषि उत्पादो की कीमते बढ़ जाती है और भूमिपतियो को लगान मिलने लगता है तथा श्रमिक ऊँची मजदूरियो की माग करने लगते है। इस अवस्था मे जनसख्या वृद्धि के लिए यद्यपि, अनुकूल वातावरण बन जाता है तथापि श्रम की पूर्ति उसकी माग से कम रहती है। अत मजदूरी की दरे बढ़ती रहती है और परिणामस्वरूप प्रथम अवस्था की तुलना मे तो पूजीपति उद्यमकर्त्ताओ के लाभ घट जाते है। किन्तु, वे ऊँचे बने रहते है और परिणामस्वरूप विनियोजन बढ़ता है।

तृतीय अवस्था- रिकार्डो ने बताया कि इस अवस्था मे पूजीपति उद्यमकर्त्ता न केवल अपने लाभो मे हो रही गिरावट को रोकने तथा उन्हे एक सतोषप्रद किंतु, ऊँचे स्तर पर बनाये रखने के लिए मशीनीकरण का सहारा लेते है बल्कि श्रम की उत्पादकता मे वृद्धि से अपने लाभो मे वृद्धि की भी आशा रखते है। वे श्रम की मजदूरी वृद्धि की माग को स्वीकार करने के बजाय दबाने का प्रयास करते है। एक ओर जनसख्या मे क्रमिक वृद्धि जारी रहने से, इस अवस्था मे, श्रम की पूर्ति बढ़ जाती है जबकि दूसरी ओर मशीनीकरण के कारण उसकी माग काफी कम हो जाती है। इससे बेरोजगारी बढ़ने लगती है और आर्थिक क्रियाओ मे श्रम-विभाजन जटिल हो जाता है। मजदूरिया गिरती है तथा गिरकर प्राकृतिक अथवा जीवन-निर्वाह व्यय पर आ जाती है। ऐसी स्थिति मे पूजीपति उद्यमकर्त्ताओ के लाभ, जो द्वितीय अवस्था

मे कुछ कम हो गये थे, वापस बढ़ने लगते है और वे आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण कर लेते है ।

चतुर्थ अवस्था- रिकार्डो के अनुसार यह आर्थिक विकास की अंतिम अवस्था है । तृतीय अवस्था मे हुई लाभो मे वृद्धि से इस अवस्था मे पूजी विनियोजन बढ़ता है । जनसख्या मे क्रमिक वृद्धि के कारण उत्पादन की माग बनी रहती है तथा खाद्यान्न एव कच्चे माल की माग मे वृद्धि के कारण और घटिया किस्म की भूमियो पर खेती होने लगती है । इससे उत्पादन का बाजार मूल्य बढ़ जाता है और परिणामस्वरूप भूमिपतियो का लगान बढ़ जाता है । पूजीपति उद्यमकर्ता अधिक लाभ की आशा मे पूंजी विनियोजन एव मशीनीकरण बढ़ा देते है, किन्तु अन्तत उन्हे इस उद्देश्य मे विफलता मिलती है। इससे लाभ गिरने लगते है और कुछ समय पश्चात् गिरकर ने केवल शून्य बल्कि ऋणात्मक हो जाते है । इस स्थिति मे न पूजी–निर्माण के लिए कोष उपलब्ध होते है और न उनकी इस हेतु कोई माग होती है । अर्थव्यवस्था गतिहीनता की स्थिति मे पहुच जाती है और आर्थिक विकास की दर गिर कर शून्य हो जाती है । इस स्थिति मे केवल अनुत्पादक भूमिपतियो को ही लगान मिलता है ।

इस प्रकार रिकार्डो ने बताया कि लगान, मजदूरी एवं लाभ मूलत. पूंजी–निर्माण पर आश्रित है और इसका आर्थिक संकट, अति–उत्पादन एवं सामाजिक कल्याण से घनिष्ट सम्बन्ध है । उन्होने विकास को परिवर्तन की एक प्रक्रिया माना और कहा कि युद्ध, कर एवं फैशन से इसमे परिवर्तन होता है । उन्होने बताया कि इनसे उत्पादन का सारा ढाचा अस्त–व्यस्त हो जाता है और विदेशी व्यापार के जरिये आर्थिक रोगो का अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो जाता है। उन्होने आर्थिक सकटो को विकसित– पूंजीवादी उद्योग– प्रधान राष्ट्रो के लिए, अधिक घातक बताया । किन्तु, रिकार्डो ने उनके परिणामो को बहुत गम्भीर नही माना क्योकि उनका जे. बी. से के विचारो मे गहरा विश्वास था । अतः उन्होने कहा कि ये अल्पकालीन है और सामान्यतया एक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था मे अति–उत्पादन अथवा पूंजी आधिक्य की समस्या का उदय नही होता । उन्होने पूजीपति उद्यमकर्त्ताओ को यह संदेश दिया कि विलासिताओ की वस्तुओ पर व्यय करने की तुलना मे अनुत्पादक श्रम को रोजगार देने पर किया गया व्यय उत्तम है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने आर्थिक विकास के लिए रोजगार के स्तर मे वृद्धि को महत्त्वपूर्ण माना ।

आलोचना (Criticism)-

अनेक अर्थशास्त्रियो एवं विचारको ने रिकार्डो के आर्थिक विकास के सिद्धान्त की आलोचना की है । सामान्यता उनके इस सिद्धान्त मे अग्रांकित दोष है–

(i) रिकार्डो तकनीकी प्रगति का सही–सही अनुमान लगाने मे विफल रहे ।

(ii) वे क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता का सही–सही अनुमान नहीं लगा सके ।

(iii) उनके विचार अनेक त्रुटिपूर्ण मान्यताओ एव सिद्धान्तो पर आधारित है ।

(iv) आर्थिक विकास की प्रक्रिया इतनी सरल नही है जितनी उन्होने मान ली ।

(v) आर्थिक विकास मे सहायक शेष घटको का सही अनुमान नही लगा सके ।

4 विदेशी व्यापार का सिद्धान्त (Theory of International Trade)-

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एव भुगतान विधि के सम्बन्ध मे रिकार्डो ने कतिपय मौलिक विचारो एव सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया । वे एडम स्मिथ की भाति स्वतत्र व्यापार के प्रबल समर्थक एव सरक्षण की नीति के आलोचक थे । सन् 1820 मे ब्रिटिश ससद मे अपने एक भाषण मे उन्होने कहा कि, ''इग्लैण्ड विश्व का सर्वाधिक सुखी देश हो सकता है बशर्ते वह खाद्यान्न कानूनो की बुराइया त्याग दे ।''

(A) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सिद्धान्त :– रिकार्डो ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के तुलनात्मक लागत सिद्धान्त (Doctrine of comparative Costs)- का प्रतिपादन किया, जो निम्नाकित मान्यताओ पर आधारित था–

(i) स्वतत्र व्यापार की स्थिति विद्यमान है ।

(ii) श्रम ही उत्पादन का एकमात्र साधन है और वस्तुओ की उत्पादन लागत श्रम इकाइयो मे व्यक्त की जा सकती है ।

(iii) श्रम की सभी इकाइया समरूप एव समान कार्यदक्ष होती है ।

(iv) सिद्धान्त का स्पष्टीकरण केवल समान आर्थिक शक्ति वाले दो देशो एव एक समान आर्थिक महत्त्व की दो वस्तुओ के परिप्रेक्ष्य मे किया जा सकता है ।

(v) वस्तुओ के उत्पादन मे क्रमागत उत्पत्ति समता नियम क्रियाशील होता है ।

(vi) उत्पत्ति के साधन एक देश की भौगोलिक सीमा मे पूर्णत गतिशील एव विभिन्न देशो के बीच अगतिशील रहते है ।

(vii) दोनो देशो के मध्य परिवहन लागते स्थिर एव समान रहती है ।

सिद्धान्त की व्याख्या (Explanation of the Theory)- उपर्युक्त मान्यताओ को आधार मानकर अपने सिद्धान्तो की व्याख्या मे रिकार्डो ने कहा कि, ''दो व्यक्ति जूते एव टोपी दोनो ही वस्तु बना सकते है परन्तु इनमे से एक व्यक्ति

दोनो ही वस्तुओ के उत्पादन मे अधिक कार्यदक्ष है तथा टोपियां बनाने मे वह 20% एव जूते बनाने मे 33 1/3 % अधिक कार्यक्षता रखता है। रिकार्डो ने कहा कि, "इस स्थिति मे क्या यह दोनो के हित मे नहीं होगा कि अधिक कार्यदक्ष व्यक्ति जूते एव दूसरा केवल टोपिया बनाये।" अपनी इसी अवधारणा को रिकार्डो ने स्पष्टि आधार पर दो देशो के बीच व्यापार का कारण माना। उन्होने बताया कि भिन्न-भिन्न देशो को भिन्न-भिन्न वस्तुओ के उत्पादन मे अनुकूलताए प्राप्त होती है जिनके कारण किसी एक देश मे एक वस्तु एव दूसरे देश मे दूसरी वस्तु का उत्पादन सस्ता होता है। इसी आधार पर विभिन्न देश भिन्न-भिन्न वस्तुओ के उत्पादन मे विशिष्टता एव विशेषज्ञता प्राप्त कर लेते है। दूसरे शब्दो मे, भिन्न-भिन्न वस्तुओ के उत्पादन की तुलनात्मक लागतो मे अन्तर उत्पन्न हो जाता है।

रिकार्डो ने दो देशो (इग्लैण्ड एव पुर्तगाल) एव दो वस्तुओ (कपड़ा एव शराब) के उदाहरण द्वारा यह समझाया कि स्वतत्र विदेशी व्यापार मे ही दोनो देशो के आर्थिक हित अधिकतम एव सुरक्षित है। उन्होने बताया कि इन वस्तुओ की उत्पादन लागत के आधार पर ही कोई एक देश अपने यहा तुलनात्मक दृष्टि से कम उत्पादन लागत वाली वस्तु का प्रचुर मात्रा मे उत्पादन कर आधिक्य उत्पादन विदेशो को निर्यात करता है और बदले मे उस वस्तु का आयात करता है जिसके उत्पादन की तुलनात्मक लागत विदेश मे नीची एव स्वदेश मे ऊँची होती है। इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। माना कि पुर्तगाल एव इग्लैण्ड मे शराब एव कपड़े की एक-एक इकाई के उत्पादन की श्रम लागते निम्नाकित तालिका के अनुसार है—

देश	वस्तु	प्रति इकाई उत्पादन लागत (श्रम इकाइया)
(i) पुर्तगाल	शराब	90 (a^1)
	कपड़ा	80 (b^1)
(ii) इगलैण्ड	शराब	120 (a^2)
	कपड़ा	100 (b^2)

रिकार्डो ने बताया कि यदि $\frac{a^1}{a^2} \neq \frac{b^1}{b^2}$ है तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार होगा।

तालिका के अनुसार $\frac{a^1}{a^2} < \frac{b^1}{b^2} < 1$ है। अत पुर्तगाल शराब का निर्यात एव कपड़े का आयात और विलोमश इग्लैण्ड कपड़े का निर्यात एव

शराब का आयात करेगा। तथा यह स्थिति दोनो देशो के लिए हितकर होगी। इसे निम्नांकित विवेचन के आधार पर उचित ठहराया जा सकता है।

दोनो ही वस्तुओ की निरपेक्ष लागते पुर्तगल मे कम है। इससे ऐसा लगता है कि पुर्तगाल के लिए दोनो ही वस्तुओ का उत्पादन करना हितकर है। इसी प्रकार इग्लैण्ड मे दोनो ही वस्तुओ के उत्पादन की श्रम लागते ऊँची है अत ऐसा लगता है कि इग्लैण्ड के लिए दोनो ही वस्तुओ का पुर्तगाल से आयात करना हितकर है किन्तु ये दोनो ही निष्कर्ष भ्रामक है। केवल सापेक्ष लागतो के आधार पर ही यह कहा जा सकता है कि पुर्तगाल के लिए भी कपड़े का आयात एव शराब का निर्यात हितकर है अथवा इग्लैण्ड के लिए शराब का आयात एव कपड़े का निर्यात हितकर है।

एक बार हम यह मानले की दोनो देशो के बीच व्यापार नही होता और दोनो ही देश दोनो वस्तुओ की एक–एक इकाई का उत्पादन करते है। ऐसी स्थिति मे दोनो देशो द्वारा इन दोनो वस्तुओ की दो–दो इकाइयो पर कुल 390 श्रम इकाइया व्यय की जायेगी। इग्लैण्ड द्वारा दोनो वस्तुओ पर 220 एव पुर्तगाल द्वारा 170 इकाइया खर्च की जायेगी अथवा शराब की एक–एक इकाई पर दोनो देशो द्वारा कुल 210 एवं कपड़े पर कुल 180 श्रम इकाइया खर्च की जायेगी। यदि विशेषज्ञता के आधार पर पुर्तगाल शराब की दो एव इग्लैण्ड कपड़े की दो इकाइयो का उत्पादन करे तो दोनो द्वारा कुल 180+200 अर्थात् 380 श्रम इकाइया खर्च की जायेगी। स्पष्ट है कि, दोनो को कुल 10 श्रम इकाइयो की बचत होती है। अत विदेशी व्यापार हितकर है। इसे एक अन्य आधार पर भी उचित बताया जा सकता है, यथा– अपनी निरपेक्ष दक्षता के स्थान पर सापेक्ष दक्षता पर आधारित आर्थिक लाभ की दृष्टि से पुर्तगाल कपड़े की तुलना मे शराब की एक इकाई के उत्पादन मे अपने साधन लगाकर 10 श्रम इकाइयो की बचत कर लेता है और इस प्रकार अपने अधिकाधिक साधन शराब के उत्पादन मे लगायेगा। इसी प्रकार इग्लैण्ड अपने ससाधन शराब की तुलना मे कपड़े के उत्पादन मे लगाकर 20 श्रम इकाइया बचा लेता है अत वह अपने अधिकाधिक ससाधन कपड़े के उत्पादन मे लगायेगा। इससे दोनो देश अलग–अलग वस्तुओ के उत्पादन मे विशेषज्ञता प्राप्त कर लेते तथा पुर्तगाल मे शराब का आधिक्य एव कपड़े का अभाव और इग्लैण्ड मे कपड़े का आधिक्य एव शराब का अभाव हो जायेगा। रिकार्डो ने बताया कि दोनो देश अपने आधिक्य एव अभाव की समस्या का निराकरण अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से कर लेते हैं।

जब तक दोनो देशो के बीच व्यापार नहीं होता, तब तक इग्लैण्ड मे शराब की एक इकाई का विनिमय मूल्य कपड़े की 1 2 इकाइया होगा। इसी प्रकार पुर्तगाल मे कपड़े की एक इकाई का मूल्य शराब की 1 125 इकाइया

होगा । अब जब विदेशी व्यापार होने लग जाता है तो पुर्तगाल इग्लैण्ड को शराब का निर्यात करेगा क्योकि वहाँ शराब की एक इकाई के बदले कपड़े की 1 2 इकाइया मिलती है जबकि स्वदेश में केवल 88 (1/1 125 = 88) इकाइया ही मिल रही थी और इग्लैण्ड तब तक इसका आयात करता रहेगा जब तक उसे भुगतान मे कपड़े की 1 2 इकाइया या इससे कम मूल्य चुकाना पड़े। इसी प्रकार इग्लैण्ड पुर्तगाल को कपड़े का निर्यात करेगा क्योकि वहा इसकी इक इकाई के बदले शराब की 1 125 इकाइया मिलती है जबकि स्वदेश मे मात्र 83 (1/1 2 = 83) इकाइया ही मिल रही थी और पुर्तगाल तब तक इसका आयात करता रहेगा जब तक उसे भुगतान मे शराब की 1 125 इकाइया इससे कम मूल्य चुकाना पड़े ।

आलोचना (Cnucism)

यद्यपि पी टी एल्सवर्थ ने रिकार्डो के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के तुलनात्मक लागत सिद्धान्त को एक निर्विवाद सत्य माना, किन्तु बर्टिल ओहलिन एव फ्रैंक ग्राहम आदि आधुनिक अर्थशास्त्रियो ने इसकी कटु आलोचनाए की है जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(ı) यह सिद्धान्त वस्तुओ की उत्पादन लागतो को केवल श्रम लागते ही मानता है और उन्हे श्रम मे ही व्यक्त करता है । आलोचको के अनुसार वस्तुओ की उत्पादन लागत मे अन्य घटको यथा लगान ब्याज एव लाभ आदि की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है । अत इन्हे सम्मिलित करते हुए उत्पादन लागते मौद्रिक मूल्य' मे व्यक्त की जानी चाहिए ।

(ıı) आलोचको के अनुसार रिकार्डो की यह मान्यता गलत है कि विदेशी व्यापार पर किसी प्रकार के नियत्रण नही है । व्यवहार मे शायद ही कभी और कही ऐसी आदर्श स्थिति रही हो ।

(ııı) रिकार्डो ने अपने सिद्धान्त की पुष्टि क्रमागत उत्पत्ति समता नियम की क्रियाशीलता के परिप्रेक्ष्य मे की है । आलोचको के अनुसार इस नियम की व्यापक क्रियाशीलता नही देखी जा सकती और व्यवहार मे अन्तत क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम ही क्रियाशील होता है, जो देशो की उत्पादन विशेषज्ञता पर रोक लगा देता है ।

(ıv) आलोचको के अनुसार रिकार्डो की यह मान्यता निराधार है कि उत्पादन के साधन (विशेषत श्रम) राष्ट्रीय सीमाओ मे पूर्णत गतिशील एव विभिन्न देशो के मध्य अगतिशील रहते है । वास्तविकता तो यह है कि आर्थिक प्रेरणाये मिलने पर श्रम अन्तर्राष्ट्रीय बाजारो मे भी उतना ही गतिशील बन जाता है जितना वह राष्ट्रीय सीमाओ मे होता है ।

(v) इस सिद्धान्त मे वस्तुओ की परिवहन लागतो मे अन्तर को अस्वीकार किया गया है जबकि आलोचको के अनुसार कुछ वस्तुओ के सदर्भ

मे इन लागतो का अन्तर अत्यधिक महत्त्वपूर्ण एव कीमत को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख घटक बन जाता है। उदाहरण के लिए जर्मनी एक कोयला निर्यातक देश है जबकि उसके बदरगाह, जो ब्रिटेन के नजदीक है, ब्रिटेन से कोयला आयात करते है।

(vi) केवल दो देशो एव दो वस्तुओ के सदर्भ मे व्याख्या करके रिकार्डो ने अपने सिद्धान्त को बिल्कुल स्थिर एव अवास्तविक बना दिया।

(vii) यह सिद्धान्त इस बात की व्याख्या नही करता कि सामरिक महत्ता अथवा आर्थिक आत्मनिर्भरता की प्राप्ति के लिए कोई देश क्यो उन वस्तुओ का भी उत्पादन करने लग जाता है जिनके उत्पादन मे उसे किसी प्रकार की प्राकृतिक अनुकूलता अथवा विशेषज्ञता हासिल नही होती है।

(viii) रिकार्डो ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन समान आधार के दो देशो एव वस्तुओ के परिप्रेक्ष्य मे किया है, जबकि विदेशी व्यापार छोटे व बडे, गरीब व अमीर और विकसित व विकासमान उन सभी देशो के बीच होता है जिनका आर्थिक आधार समान नही होता। इसी प्रकार सब वस्तुए (उपभोक्ता व पूजीगत) आर्थिक दृष्टि से एक समान महत्त्व नही रखती।

(B) अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान विधि का सिद्धान्त- रिकार्डो ने स्वर्णमान की विद्यमानता स्वीकार कर विदेशी विनिमय दर निर्धारण के टकसाली समता दर सिद्धान्त का समर्थन किया। उन्होने बताया कि मुद्रा का परिमाण सिद्धान्त क्रियाशील होता है और दोनो ही व्यापारिक साथी देशो की अर्थव्यवस्थाये आर्थिक तेजी एव मदी के दोषो से मुक्त रहती है। उन्होने बताया कि जिस देश का व्यापार शेष अनुकूल होता है, उस देश मे स्वर्ण कोष आते है। इससे उस देश मे मुद्राचलन बढता है और वस्तुए महगी हो जाती है। इसके विपरीत जिस देश से स्वर्ण कोष निकलते है वहाँ मुद्रा पूर्ति घट जाने से कीमते नीची हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि दूसरी व्यापारिक अवधि मे दोनो देशो की स्थिति बदल जाती है। अत समायोजन की एक ऐसी प्रक्रिया चलती है जिसमे लगातार एव लम्बे समय तक किसी देश का व्यापार शेष न तो अनुकूल रहता है और न प्रतिकूल। इसे 'व्यापार शेष के स्वत निमयन का सिद्धान्त' कहा जा सकता है, जिसका प्रतिपादन रिकार्डो ने किया।

5. मुद्रा सिद्धान्त (Theory of Money)

रिकार्डो का मुद्रा सिद्धान्त पत्र मुद्रा के निर्गमन एव नियमन से सम्बन्धित है। वे परिवर्तनशील पत्र मुद्रा एव स्वर्ण पाटमान (gold bullion standard) के पक्षधर थे। उनकी इस विषय मे दी गई सिफारिशो को बुलियन कमेटी ने ज्यो का त्यो स्वीकार कर लिया था। वे पत्र मुद्रा को आर्थिक प्रगति का एक उपयोगी उपकरण मानते थे।

रिकार्डो एक व्यावहारिक विचारक एव बैक ऑफ इग्लैण्ड के एक

अशधारी थे । फलत इस बैक की मौद्रिक नीति मे उनकी गहन रुचि थी । वे फरवरी सन् 1797 के इग्लैण्ड के पत्र–मुद्रा सकट के प्रत्यक्षदर्शी थे । इस सकट के समय बैक ऑफ इग्लैण्ड के स्वर्ण कोष 10 मिलियन पौण्ड से गिरकर 1 5 मि पौण्ड रह गये थे । इस सकट मे मुद्रा मूल्य मे गिरावट से वस्तुओ की कीमते बहुत बढ़ गयी थी । परिणामस्वरूप देश के भूमिपति स्वर्ण मे लगान के भुगतान की माग करने लग गये थे । रिकार्डो ने इस स्थिति के लिए अति मुद्रा प्रचलन को जिम्मेदार माना । इसी सदर्भ मे सन् 1809 मे प्रकाशित उनका एक बहुचर्चित पम्पलेट (The high price of bullion, a proof of the depreciation of bank notes) मुद्रा मूल्य मे उनकी गहन रुचि का प्रतीक है । समस्या के समाधान के लिए रिकार्डो ने पत्र–मुद्रा की निकासी पर रोक लगाने का सुझाव दिया ताकि मुद्रा मूल्य मे गिरावट एव स्वर्ण कोषो का आहरण एव निर्यात रोका जा सके । उन्ही के शब्दो मे, "हमारे चलन के समस्त दोषो के उपचार के लिए मैने जिस उपाय का सूझाव दिया है वह यह है कि बैक को धीरे–धीरे प्रचलन मे नोटो की सख्या तब तक घटानी चाहिये जब तक वे घटकर उन सिक्को के मूल्य के बराबर न रह जाये जिनका वे प्रतिनिधित्व करते है । दूसरे शब्दो मे, जब तक स्वर्ण एव रजत धातुओ का मूल्य गिरकर उनकी टकसाली कीमत के बराबर न हो जाये ।"

वे एक मौद्रिक सिद्धान्ती (monetary theorist) थे और मुद्रा मूल्य के परिमाण सिद्धान्त के समर्थक थे । उन्ही के शब्दो मे, "जब स्वर्ण सस्ता होता है तो वस्तुए महगी एव जब स्वर्ण महगा होता है तो वस्तुए सस्ती होती है।"[16] इस कथन का आशय है कि स्वर्ण सस्ता होता है तो मुद्रा चलन बढ़ जाता है फलत वस्तुए महगी एव विलोमश सस्ती होती है । एक अन्य प्रसग मे उन्होने बताया कि, "कीमतो मे वृद्धि अथवा कमी प्रचलन मे चलन की मात्रा के आधिक्य अथवा अभाव के कारण होता है । यदि वह चलन अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य बहुमूल्य धातुओ से बना है तो उसके मूल्य के उतार– चढ़ाव स्वत ठीक हो जाते है ।"[17] रिकार्डो बैंकिंग नीति के राज्य नियत्रण के पक्षधर थे । उन्ही के सुझावो को ध्यान मे रखकर सन् 1820 एव सन् 1844 मे बैक ऑफ इग्लैण्ड अधिनियम मे परिवर्तन एव सशोधन किये गये थे ।

---

16. "When gold is cheap commodities are dear and when gold is dear, commodities are cheap." -Recardo D

17. "A rise or fall in prices is due to an excess or deficiency of the amount of currency in circulation If that currency consists entirely of the internationally accepted precious metals the fluctuations in the circulating medium will bring about their own correction." -Recardo D

6. लोक-वित्त का सिद्धान्त (Theory of Public Finance)

यद्यपि, रिकार्डो ने लोकवित्त के भी किसी सुव्यवस्थित सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया तथापि उनकी रचना Principles of Political Economy and Taxation' के एक तिहाई भाग मे किसी न किसी रूप मे, लोकवित्त (मुख्यत करारोपण एव सार्वजनिक ऋण) विषयक विवेचन किया गया है। इस सम्बन्ध मे निम्नाकित बिन्दु उल्लेखनीय है—

(A) करारोपण (Taxation)

(i) कर एक भार है और यह सार्वजनिक आय का सबसे प्रमुख स्रोत है।
(ii) सरकार अनेक प्रकार के कर लगा सकती है। यथा—भूमि कर, उपज कर, लगान कर, स्वर्ण कर, गृह कर वस्तु कर आदि—आदि।
(iii) लगान ही वास्तविक बचत है। अत उसी पर मुख्यत कर लगाया जाना चाहिये।
(iv) पूजी पर कर नही लगाना चाहिये। बल्कि केवल आय पर कर लगाना चाहिये।
(v) मजदूरी क्योकि, जीवन निर्वाह व्यय द्वारा सीमित रहती है अत उस पर कर नही लगाना चाहिये।
(vi) लाभ पर एक सीमा तक कर लगाया जा सकता है।
(vii) वस्तुओ की कीमतो पर कर लगाये जा सकते है।
(viii) कच्चे माल पर लगाये गये कर अन्तत उपभोक्ताओ पर पड़ते है।
(ix) आयात—निर्यात कर महत्त्वपूर्ण है।
(x) निर्यातो पर छूट देकर व्यापार एव धन मे वृद्धि की जा सकती है।
(xi) आयात कर स्वतत्र विदेशी व्यापार मे बाधक है और इग्लैण्ड मे खाद्यान्न के आयात पर लगे कर खाद्यान्न के ऊँचे मूल्य के लिए जिम्मेदार हैं।

रिकार्डो ने अनाज के आयात एव निर्यात पर ऊँचे शुल्क एव निर्यात पर छूटो को सबसे घटिया किस्म का करारोपण बताया।

यद्यपि, स्पष्ट नामोल्लेख तो नही किया तथापि उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रिकार्डो कर ढाचे मे विविधता, करो की उत्पादकता, करदान क्षमता के अनुसार करारोपण के समर्थक थे।

(B) सार्वजनिक ऋण (Public debt)

रिकार्डो सार्वजनिक ऋण द्वारा राजस्व जुटाने के कट्टर आलोचक थे। उन्होने कहा कि भला इसी मे है कि इस बीमारी से शीघ्र छुटकारा पा लिया जाये। इसके लिए उन्होने पूजी पर कर लगाने का भी समर्थन कर डाला जिसका उन्होने सामान्यतया विरोध किया था। उन्होने इसे देश के उद्योग एव उद्यम के गले मे एक भारी पत्थर बताया और कहा कि इससे अर्थव्यवस्था मे

मूल्यो का सतुलन भग हो जाता है । सरकार जितने ऋण लेगी, सार्वजनिक फिजूलखर्ची उतनी ही ज्यादा एव करो का भार उतना ही अधिक बढ़ेगा । उन्होने आशका व्यक्त की कि इससे बचन के लिए लोग देश छोडकर चले जायेगे । रिकार्डो के ये विचार अनुभूत सत्य थे । उन दिनो फ्रास से युद्ध के विरुद्ध बचाव के लिए ब्रिटिश सरकार ने भारी मात्रा मे सार्वजनिक ऋण ले रखे थे जिनसे इग्लैण्ड का वित्तीय ढाचा एव अनुशासन अस्त–व्यस्त हो गया था ।

7. अन्य (Others)

रिकार्डो के अन्य विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy)- राजनीति अर्थव्यवस्था की विषय सामग्री के बारे मे रिकार्डो का मानना था कि, ''व नियम जो इसके (सामूहिक उत्पादन) वितरण को सचालित करते है, का निर्धारण राजनीतिक अर्थव्यवस्था की प्रमुख समस्या है ।'' इसी प्रकार उन्होने माल्थस को एक पत्र मे लिखा कि, मै सोचता हूँ कि इसे (राजनीतिक अर्थव्यवस्था) उन कारणो ही जाच कहना चाहिये जो उद्योग के उत्पादन को उसे सृजित करने वालो के बीच विभाजित करते है ।'' दूसरे शब्दो मे, रिकार्डो ने धन के उत्पादन की तुलना मे वितरण की बातो को राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विषय–सामग्री मे प्रमुखता दी ।

(ii) मशीनों के प्रयोग (Uses of Machines)- मशीनो के प्रयोग से उत्पादन की श्रम–गहन तकनीको का प्रयोग बढ़ता है अत. रिकार्डो ने मशीनीकरण का समर्थन किया । उन्होने बताया कि इससे अतिरिक्त लाभो का सृजन होता है और श्रम एव पूजी की गतिशीलता मे वृद्धि होती है । उन्होने यह आशका भी व्यक्त की कि इससे बेरोजगारी बढ़ सकती है । किन्तु, कुल मिलाकर राष्ट्रीय आय एव उत्पादन मे वृद्धि एव देशवासियो के जीवन स्तर मे गुणात्मक सुधार के आधार पर उन्होने मशीनो के प्रयोग का समर्थन कर इसे इस युग की एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता बताया, जिस पर भावी प्रगति की रफ्तार निर्भर थी ।

रिकार्डो का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Recardo)

एक लेखक के रूप मे, आर्थिक विचारो के इतिहास मे जितनी आलोचना माल्थस की हुई उतनी ही, एक विचारक के रूप मे, रिकार्डो की हुई । दूसरे शब्दो मे, उन्हे आर्थिक विचारो के इतिहास का सर्वाधिक विवादास्पद विचारक माना जाता है ।

वस्तुत. रिकार्डो एक लेखक एवं शिक्षाशास्त्री नही बल्कि एक विशुद्ध विचारक थे । एक लेखक के रूप मे उनकी शैली बहुत कमजोर एव अभिव्यक्ति अत्यन्त दोषपूर्ण थी । किन्तु, एक विचारक के रूप मे भी उनके

चिन्तन मे सामन्जस्य एव निरन्तरता का अभाव था और वे उच्च वर्गीय बुद्धिजीवियो के सकीर्ण दायरे से बाहर नही निकल सके । इसीलिए, जैसा कि शुम्पीटर ने कहा है, ''उन्होने जो निष्कर्ष दिये उनसे ठीक विपरीत बाते सत्य के निकट थी । उनके विचारो को उनक उत्साही मित्रो एव अनुयायियो, जिनमे जेम्स मिल मकलक आदि प्रमुख है और जो तत्कालीन इग्लैण्ड मे ही अल्पसख्यक थे, ने प्रचारित कर परवान चढ़ा दिया ।'' इसीलिए कहा जाता है कि उन्होने केवल अपने मित्रो एव तत्कालीन इग्लैण्ड के लिए सोचा व लिखा।

उनके चितन एव सिद्धान्तो मे निराशावादी एव सुखवाद (Hedonism) की गहरी छाप थी । उन्होने जो कुछ कहा व लिखा उसका आधार केवल तर्क (logic) थे । बेन्थम की भाति वे राजनीतिक अर्थव्यवस्था को आगमन प्रणाली से बहुत दूर ले गये । दूसरे शब्दो मे, उन्होने केवल तर्क–वितर्क पर आधारित निगमन प्रणाली का प्रयोग किया । इसीलिए उन्हे 'अमूर्त तर्क का श्रेष्ठ उदाहरण' (supereme example of abstract reasonings) कहा जाता है, जिसने अर्थशास्त्र को सर्वप्रथम तर्क के फलविहीन मार्गो (fruitless paths of reasoning) पर धकेल दिया । किन्तु, वास्तव मे उनके चितन का गम्भीर दोष यह नही है कि उन्होने अपने निष्कर्षो की जाच मे साख्यिकीय सामग्री अथवा तथ्यो का प्रयोग नही किया बल्कि यह है कि उन्होने सच्चाई पर पर्दा डाला और वहा भी तथ्यो का प्रयोग नही किया जहा ऐसा करना आवश्यक एव सार्थक था और वे सुलभ एव पर्याप्त थे । इससे अर्थशास्त्र एक अमूर्त एव काल्पनिक दुनिया मे चला गया । उन्होने अपने सैद्धान्तिक विश्लेषण को तथ्यो के आधार पर कभी नही सुधारा और उसकी सर्वव्यापकता का ढोल पीटते रहे । यह आश्चर्य है कि एक व्यावहारिक विचारक होने के बावजूद वे तथ्यो की बजाय तर्क पर आश्रित रहे तथा अपने तर्को की काल्पनिक उदाहरणो से पुष्टि करते रहे । इनके साथ–साथ उन पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि आर्थिक क्रियाओ के नैतिक पक्ष पर अधिक बल देकर उन्होने आर्थिक चिंतन को एक गलत मोड़ प्रदान किया ।

सन् 1831 मे (Political Economic club) की एक प्रतिनिधि बैठक मे यह स्वीकार किया गया कि वे एक घटिया एव अस्पष्ट लेखक थे । उन्होने एक ही शब्द (term) का विभिन्न अर्थो मे प्रयोग किया । उनकी व्याख्या मे सम्बद्धता एव सम्पूर्णता का नितान्त अभाव है जिसकी उम्मीद रिकार्डो जैसे उच्च कोटि के विश्लेषणकर्त्ता से सहज ही मे नही की जा सकती ।

वे अनेक पूर्वाग्रहो से ग्रसित रहे, यथा–वे मानकर चलते थे कि सामाजिक ढाचा, उत्पादन तकनीके एव भौतिक परिवेश यथावत रहेगा और जनसख्या मे वृद्धि का क्रम जारी रहेगा । उन्होने यह भी मान रखा था कि मानवीय प्रकृति तर्क पर आधारित आदेशो की अनुपालना करती है और

करती रहेगी । इसीलिए जैसा कि **न्यूमैन** ने कहा है, ''उन्होने विश्लेषणात्मक तर्क का शतरज के खेल की भाति आनन्द उठाया और अपने कई सिद्धान्तो की प्रत्यक्षत दिखायी देने वाली कमियो से अपनी आखे बन्द रखी । वे उनकी सामान्य क्रियाशीलता स्वीकार करते रहे जबकि वास्तव मे केवल तत्कालीन इग्लैण्ड की परिस्थितियो तक ही सीमित थे । उन्होने अपने आधार वाक्यो एव पूर्व धारणाओ पर आधारित एक ऐसे कठोर, निरपेक्ष एव अति– बनावटी अर्थशास्त्र की रचना कर दी जिसने दुर्भाग्यवश कई दशको तक अर्थशास्त्र के विकास पर रोक लगादी ।'' एक अन्य सदर्भ मे उन्होने बताया कि 'रिकार्डोवादी अर्थशास्त्र के सम्बन्ध मे एक आधारभूत सत्य यह है कि उन्होने अक्सर सामान्य नियमो पर आधारित ऐसे प्रस्तावो का उल्लेख मात्र किया जो वास्तव मे क्रियान्वयन मे सीमित एव विशेष अभिधारणाओ पर आधारित थे।''

रिकार्डो पर एक आक्षेप यह भी लगाया जाता है कि उन्होने आर्थिक समस्याओ की अल्पकाल मे गम्भीरता एव जटिलता पर बिल्कुल ही ध्यान नही दिया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने अपने सम्पूर्ण विश्लेषण मे अल्पकाल मे होने वाले परिवर्तनो की महत्ता की अनदेखी की और उन्हे मात्र अस्थायी व्यवधान मानकर वे दीर्घकाल मे उनके स्वत ही ठीक होने का बनावटी राग अलापते रहे ।

अन्त मे, वे एक व्यक्तिवादी थे । उन्होने धन के लिए परिवार छोड़ा और धन कमाया तथा उसका उपभोग भी किया । उन्होने एडम स्मिथ के 'आर्थिक मानव' की परिकल्पना को स्वीकार किया जिसके लिए उनकी एव अर्थशास्त्र की कटु आलोचना हुई है ।

उपर्युक्त विवेचन रिकार्डो के मूल्याकन का एक पक्ष है । उनके मूल्याकन का दूसरा पक्ष, जो इससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है, का विवेचन निम्नाकित शीर्षक के अधीन किया जा रहा है ।

आर्थिक विचारों के इतिहास में रिकार्डो का स्थान
(Place of Recardo in the History of Economic Thought)

(1) एक महान अर्थशास्त्री एवं विचारक (A great Economist and a Thinker)- आर्थिक विचारो के इतिहास मे रिकार्डो का न केवल एक महत्त्वपूर्ण अपितु अग्रणी स्थान है । इसीलिए उन्हे आर्थिक विचारो के इतिहास का एक महान विचारक एव अर्थशास्त्री माना जाता है । 19वीं सदी के आर्थिक चिंतन एव अर्थशास्त्र के विकास को सम्भवत उन्होने एडम स्मिथ से भी ज्यादा प्रभावित किया । उन्होने न केवल आर्थिक विश्लेषण की विभिन्न शाखाओ मे महत्त्वपूर्ण परिमार्जन किये अपितु उनकी प्रणालियो एव सिद्धान्तो

ने बाद के अर्थशास्त्रियो पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव छोड़े । इसीलिए **अलेक्जेण्डर ग्रे** ने कहा कि, ''अगली पीढ़ी उनके सिद्धान्तो को दोहराने के अलावा कुछ नही कर सकी ।'' और **हैने** ने बताया कि, ''उनकी किसी भी पूर्ववर्ती से अधिक महत्त्वपूर्ण एक सेवा यह रही कि उन्होने अर्थशास्त्र को ज्ञान की अन्य शाखाओ, मुख्यत. नीति– शास्त्र एव सरकार से पृथक् कर दिया ।''

(2) अनेक सम्प्रदायों के पथ-प्रदर्शक (Pioneer of Many Schools of Thought)- रिकार्डो ने आर्थिक विचारो के अनेक सम्प्रदायो के जन्म एव विकास का मार्ग प्रशस्त किया । इनमे ऐतिहासिक, आस्ट्रियन एव समाजवादी–मार्क्सवादी सम्प्रदाय उल्लेखनीय है । इस सदर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि प्रारम्भिक आँग्ल समाजवादी विचारको को तो 'रिकार्डोवादी समाजवादी' कहकर सम्बोधित किया जाता है । रिकार्डो का मूल्य सिद्धान्त समाजवादी विचारधारा का प्रारम्भिक बिन्दु माना जाता है । उनके लगान सिद्धान्त ने वैयक्तिक सम्पत्ति पर आक्रमण का समाजवादियो का लक्ष्य निर्धारित कर दिया । साम्यवादियो पर रिकार्डो के वैचारिक प्रभाव के आधार पर ही **अलेक्जेण्डर ग्रे** ने कहा कि, ''यदि मार्क्स और लेनिन अवाक्ष मूर्ति के योग्य है तो पृष्ठभूमि मे कही न कही रिकार्डो की प्रतिमा के लिए भी स्थान होना चाहिए ।''[18]

(3) पूंजीवाद के आंतरिक संघर्षों को अनावृत करने वाले (Barer of the Inner conflicts of capitalism)- रिकार्डो ने तत्कालीन ब्रिटिश पूजीवादी व्यवस्था मे जो आतरिक सघर्ष चल रहे थे उन्हे अनावृत्त कर दिया । उन्होने समाज मे वर्ग–सघर्ष का जो खुलासा किया उससे प्राकृतिक व्यवस्था की अवधारणा की पोल खुल गयी । उन्होने स्पष्ट उल्लेख कर दिया कि भूमिपति बिना बोये ही काटते रहेगे और जैसे–जैसे जनसख्या बढ़ेगी, भूमियो का सीमात गिरेगा और उनके लगान बढ़ेगे । इसके अलावा उन्होने यह भी स्पष्ट कर दिया कि मजदूरो और पूजीपति उद्यमकर्त्ताओ के हितो के मध्य सघर्ष जारी रहेगा । वस्तुतः उन्होने पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की दैहिकी (Physiology) की खोज कर डाली ।

(4) परिशुद्ध विश्लेषणकर्त्ता एवं मौलिक विचारक (Rigorous Analyst and Original Thinker)- यद्यपि, रिकार्डो के चिंतन का क्षेत्र एडम स्मिथ के क्षेत्र से काफी संकीर्ण था; किन्तु, आर्थिक विषयो पर उनकी व्याख्या अधिक परिशुद्ध थी जिसने अर्थशास्त्र को अधिक वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया । उनके सिद्धान्तों की मान्यताये कमजोर एव अपवाद कम हैं । उन्होने अपने सभी

---

18. "If Marx and Lenin deserve busts, somewhere in the background, there should be room for an effigy of Recardo. -Gray A.

महत्त्वपूर्ण आर्थिक विचार न्यूनाधिक मात्रा मे अपने पूर्ववर्ती लेखको एव विचारको से लिये । उदाहरणार्थ– मजदूरी का श्रम सिद्धान्त पेटी एवं स्मिथ से, विभेदात्मक लगान का सिद्धान्त माल्थस एवं एण्डरसन से; ह्रासमान प्रतिफल नियम टरगो एव एण्डरसन से और जनसंख्या एवं आर्थिक विकास विषयक सिद्धान्त माल्थस से लिये । किन्तु, उन्होंने इन सभी सिद्धान्तो पर अपने वैयक्तिक विचारो की छाप छोड़ी । फलत. उन्हे एक मौलिक विचारक का सम्मान दिया जाता है । उन्होने अपने पूर्वगामियो के विचारो का अन्धानुकरण नही किया । उन्होने उनके काफी अशुद्ध एवं असामयिक विचारो को छोड़ दिया । विदेशी व्यापार, मुद्रा एवं बैंकिंग और वितरण के सिद्धान्तो के सम्बन्ध मे उनके विचार एकदम मौलिक थे । इसीलिए कहा जाता है कि आर्थिक चिंतन के भावी स्वरूप को एक नई एव निश्चित दिशा देने मे उनके प्रभाव एव महत्त्व को चुनौती देने वाला अन्य कोई विचारक आर्थिक विचारो के इतिहास मे नही है । वे अपने शिष्यो एवं विरोधियो के प्रेरणा स्रोत थे । मौद्रिक एवं वित्तीय मामलो मे उनके पम्पलेट पूर्ण एव प्रामाणिक थे । पत्र मुद्रा निर्गमन के लिए स्वर्ण कोषो की स्थापना के उनके सुझाव ने इंग्लैण्ड को गम्भीर मौद्रिक एवं वित्तीय सकट से उबार लिया था । उनके इस सुझाव के प्रभाव इतने दूरगामी रहे कि आज भी विश्व के विभिन्न देशो के केन्द्रीय बैंक उन्हीं के द्वारा दिये गये परामर्श के अनुसार आचरण कर रहे है ।

(5) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के महान प्रतिनिधि एवं सह-संस्थापक (Great Representative and Co-founder of Classical School) रिकार्डो प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के महान प्रतिनिधि थे । उन्होने न केवल एडम स्मिथ के विचारो को पूर्ण एवं व्यवस्थित किया, जिसके कारण वे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सह–संस्थापक कहलाये, अपितु उनके अधूरे कार्यों को भी पूर्ण किया । जैसा कि **एलेक्जेण्डर ग्रे** ने कहा है, "उनके हाथो प्रतिष्ठित आँग्ल राजनीतिक अर्थव्यवस्था अपने अतिम एव पूर्ण स्वरूप मे पहुची ।"[19] वे सबल व्यक्तित्व के धनी थे । यह उनकी अपनी शक्ति ही थी जिसने ऐसा प्रभाव जमाया कि वे तत्कालीन आर्थिक चिन्तन के प्रतिरूप बन गये । एक परिपक्व, गम्भीर एव कुशाग्र बुद्धि विचारक के रूप मे उनका स्थान अपनी पीढ़ी के अर्थशास्त्रियो मे बहुत ऊँचा है ।

(6) शैक्षिक दृष्टि से ईमानदार (Academically Honest)- शैक्षिक दृष्टि से रिकार्डो एकदम ईमानदार थे । बहुत बड़े भूमिपति बन जाने के बावजूद उनके लगान विषयक विचार पूर्ववत रहे । इतना ही नहीं ब्रिटिश ससद की सदस्यता ग्रहण कर लेने के बाद भी वे खाद्यान्न नियमो का लगातार विरोध करते रहे । यद्यपि, जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, वे कभी शिक्षा– शास्त्री नहीं रहे । किन्तु, समकालीन समस्याओ में उनकी सदा अभिरूचि रही । वे वास्तविक

धरातल पर ही रहे। उन्होने कभी कल्पना लोक मे विचरण नही किया।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रिकार्डो की महानता एक निर्विवाद सत्य है। वितरण की समस्याओ को सर्वप्रथम महत्त्व उन्होने ही प्रदान की। जहा एडम स्मिथ ने राष्ट्रो के धन के कारणो एव प्रकृति की खोज की वहा रिकार्डो ने उस धन के वितरण की समस्या का समाधान प्रस्तुत किया तथा आर्थिक प्रणाली के गतिशील सचालन के निर्धारण का कार्य अपने हाथ मे लिया और विभिन्न सामाजिक वर्गों के सापेक्षिक अशदानो (लगान, मजदूरी, लाभ आदि) के निर्धारण की तार्किक व्याख्या प्रस्तुत की। किन्तु, वे आलोचनाओ के घेरे में रहे। इसीलिए जीड एव रिस्ट का यह कथन सत्य है कि, ''अर्थशास्त्र मे स्मिथ के पश्चात् रिकार्डो दूसरा महानतम नाम है और उसके नाम के चारो ओर इतना अधिक वाद–विवाद केन्द्रित हो गया है जितना उसके गुरु के नाम के चारो ओर कभी नही रहा।''

प्रश्न

1 **रिकार्डो के प्रमुख आर्थिक विचारों का संक्षिप्त विवेचन कीजिये।**

2 **रिकार्डो के लगान सिद्धान्त का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।**

3 **''अर्थशास्त्र में स्मिथ के पश्चात् रिकार्डो का ही नाम सबसे उपर है।'' समझाइये।**

संकेत –सक्षेप मे कथन की व्याख्या कर रिकार्डो की प्रमुख देनो का उल्लेख करना है।

4 **रिकार्डो को प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का सह–संस्थापक क्यों माना जाता है? कारण सहित उत्तर दीजिये।**

संकेत – सक्षेप मे कथन का आशय समझाये एव बाद मे उनके प्रमुख कार्यों का सक्षिप्त विवेचन कर अन्त मे, निष्कर्ष दे कि किस प्रकार वे सह–सस्थापक कहे जाने के योग्य है।

5 **''रिकार्डो के विचार कहीं मौलिक नहीं थे।'' समीक्षा कीजिये।**

संकेत – रिकार्डो के प्रमुख विचारो के मूल स्रोत बताते हुए उनका विवेचन करे और अत मे निष्कर्ष दे कि उपर्युक्त कथन सही नहीं है।

6 **''रिकार्डो के मुद्रा एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार विषयक विचारों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिये।**

---

19 "In his hands classical English Political Economy reaches its final and complete form." -Gray A

7 आर्थिक विचारों के इतिहास में रिकार्डो का स्थान निर्धारित कीजिये।

संकेत – रिकार्डो के आर्थिक विचारों का संक्षेप में विश्लेषण कर उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन करें और अन्त में आर्थिक विचारों के इतिहास में उनकी भूमिका का उल्लेख कर निष्कर्ष दें कि वे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सह संस्थापक एवं महान विचारक थे।

5

समाजवादी सम्प्रदाय I : सिसमण्डी

(The Socialist School I : Sismondi)

"मैं निर्माताओं को लाखों के मालिक किसी एक व्यक्ति के अधीन नहीं बल्कि औसत साधनों वाले अधिसंख्यक पूंजीपतियों के हाथों में देखना चाहता हूं।"[1]
-सिसमण्डी

परिचय : समाजवाद के एक अग्रदूत
(Introduction : A Forerunner of Socialism)

माल्थस एव रिकार्डो के समकालीन जीन चार्ल्स लियोनार्ड सिमण्डी डी सिसमण्डी, जिन्होने बाद मे स्वय को केवल सिसमण्डी ही बताया, का आर्थिक विचारो के इतिहास मे विशिष्ट स्थान है। वे उदारवाद एव समाजवाद के बीच के एक इतिहासकार, आर्थिक विचारक एव अर्थशास्त्री है। प्रारम्भ मे वे उदार प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विचारो के समर्थक थे और उन्होने स्वय को सदैव एडम स्मिथ का विश्वसनीय अनुयायी ही बताया। किन्तु, बाद मे वे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र के लक्ष्यो, अध्ययन पद्धतियो एव कार्य विधियो से सहमत नहीं रहे। अत उसके कट्टर आलोचक बन गये और कहने लगे कि जीवन की व्यावहारिक समस्याओ से प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो का कोई सरोकार नही है। उन्होने मुख्यत पूजीवाद के दोषो, जिनमे विशेषत उत्पादन एव वितरण सम्बन्धी ढाचे की कमजोरिया अधिक महत्त्वपूर्ण एव उल्लेखनीय हैं, को उजागर किया। इसीलिए उन्हे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का प्रारम्भिक आलोचक एव समाजवादी चिन्तन का प्रारम्भिक बिन्दु एव अग्रदूत माना जाता है।

संक्षिप्त जीवन परिचय
(Brief Life Sketch)

सिसमण्डी का जन्म 9 मई सन् 1773 को जेनेवा (स्विटजरलैण्ड), जो उन दिनो सौम्य विश्वबधुत्व की एक स्थली (the seat of benign

---

1 "I hope to see manufactures in the hands of a great number of capitalist of average means, and not under the thumb of one single individual who constitutes himself master over millions."
Sismondi

cosmopolitanism) था, मे एक कुलीन पिसान (Pisan) खानदान मे हुआ। उनके पूर्वज इटली के मूल निवासी थे जो 16वीं सदी में फ्रास आ गये और बाद मे स्विटजरलैण्ड आकर बस गये थे। सिसमडी की प्रारम्भिक शिक्षा जेनेवा मे हुई। उसके पश्चात् वे इटली चले गये। 15 वर्ष की आयु मे ही परिवार की वित्तीय बर्बादी के कारण सिसमण्डी को अपना अध्ययन समाप्त कर Lyones मे एक बैंक मे नौकरी करनी पड़ी। इसी बीच कुछ समय के लिए उनका परिवार इग्लैण्ड आ गया जहा उन्होने अग्रेजी भाषा एव ब्रिटिश राजनीतिक अर्थव्यवस्था का ज्ञानार्जन किया। ऐतिहासिक एव आर्थिक विषयो मे उनकी गहन रुचि थी। सन् 1803 मे उन्होने एडम स्मिथ के आर्थिक चितन पर एक पुस्तक लिखी जिसने उनको एक उच्चकोटि के लेखक की प्रतिष्ठा प्रदान की। इसके पश्चात् उन्होने देश-विदेश का भ्रमण किया, इटली मे रहे और 16 साल तक इटली एव फ्रास के इतिहास पर लिखते रहे। सन् 1819 मे जब वे दुबारा आर्थिक विषयो की ओर मुड़े तो एडम स्मिथ के विचारो के एक आलोचक एव समाजवाद के एक अग्रदूत के रूप मे उभर कर सामने आये। वस्तुत सन् 1819 मे उन्होने अर्थशास्त्र पर जो पुस्तक लिखी उसने उन्हे एक उच्चकोटि के अर्थशास्त्री का दर्जा प्रदान कर दिया। इसी के जरिये उन्होने बाद के समाजवादियो के लिए एक मार्ग बनाया। सन् 1842 मे उनकी मृत्यु हुयी, जिससे बहुत पहले ही, एक आर्थिक विचारक के रूप में, उनकी ख्याति सारे योरोप मे फैल चुकी थी।

सिसमण्डी को प्रभावित करने वाले घटक

(Factors Influencing Sismondi)

सिसमण्डी को प्रभावित करने वाले प्रमुख घटक निम्नाकित थे--

(1) नैपोलियन के युद्ध (Napoleonic Wars)- इन युद्धो के बाद का समय योरोप मे मदी का समय था। इस दौरान पूजीवादी व्यवस्था का वर्ग-सघर्ष खुलकर सामने आ गया। इससे सिसमण्डी के आर्थिक चिन्तन को एक निश्चित दिशा एव विषय-सामग्री मिल गयी।

(2) भ्रमण (Tours) भ्रमण का शौक सिसमण्डी को विरासत मे मिला। सन् 1803 से 1819 तक उन्होने विभिन्न योरोपीय देशो का भ्रमण किया। इससे उन्हे दो लाभ मिले- (i) वे विभिन्न देशो के आर्थिक विचारको के सम्पर्क मे आये और (ii) उन्होने उन देशो की आर्थिक स्थिति अपनी आखो से देखी। इससे सिसमण्डी को आर्थिक विषयो पर लिखने के लिए प्रेरणा मिली।

(3) औद्योगिक क्रांति के दुष्प्रभाव (Evil Effects of Industrial Revolution)- इस समय तक औद्योगिक क्रांति के गम्भीर दुष्प्रभाव सामने आ चुके थे। श्रमिको को 15-20 घण्टे तक काम करना पड़ता था। स्त्रियो एव 11 वर्ष से भी छोटी आयु के बाल-श्रमिको का बुरी तरह शोषण हो रहा था।

मजदूरी की दरे बहुत गिर गयी थी और श्रमिक आधे भूखे रहते थे। मंदी के कारण बेकारी बहुत बढ़ गयी थी। इटली, स्विट्जरलैण्ड एवं इंग्लैण्ड मे श्रमिको की दुर्दशा वे अपनी आखो देख चुके थे। इससे सिसमण्डी के विचारो को प्रेरणा मिली।

(4) आर्थिक सकट (Economic Crises) सन् 1815, 1818 एव 1825 मे इग्लैण्ड मे औद्योगिक सकट आये। सन् 1825 के सकट मे लगभग 70 बैक फेल हो गये। इन सकटो ने पूजीवादी व्यवस्था के आर्थिक असतुलनो के कारण सम्भावित सकटो की अनिवार्यता सिद्ध करदी। अत इनकी रोकथाम के लिए सिसमण्डी ने उपाय सुझाये।

(5) पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारक (Predecessors and contemporary Thinkers) माल्थस एव रिकार्डो के अलावा सीनियर, जे बी से, रोबर्ट ओवन फ्रेडरिक लिस्ट आदि के अलावा उन्हे प्रभावित करने वालो मे एडम स्मिथ सबसे अग्रणी रहे। किन्तु, हैने के मतानुसार इटली के अर्थशास्त्री औरेस के विचारो का प्रभाव भी सिसमण्डी के जनसंख्या एव धन विषयक विचारो पर स्पष्टत दिखायी देता है।

(6) इतिहास (History) सन् 1803 से 1819 के बीच सिसमण्डी ने इतिहास का गहन अध्ययन किया और फ्रास एव इटली के इतिहास पर कुल 45 ग्रथ लिखे। इसस उनके आर्थिक चितन मे भारी बदलाव आया और परिणामस्वरूप उन्होने सन् 1819 मे प्रकाशित अपनी रचना मे जो विचार व्यक्त किये वे सन् 1803 मे प्रकाशित रचना के विचारो से काफी भिन्न थे।

प्रमुख कृतियाँ
(Major Works)

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, अर्थशास्त्र एव इतिहास सिसमण्डी के प्रमुख विषय रहे। उनकी मुख्य रचनाये निम्नाकित है—

रचना का शीर्षक	प्रकाशन वर्ष
(i) A Table of Agriculture in Tuskany	1801
(ii) Commercial Wealth	1803
(iii) History of French People (29 Volumes)	
(iv) History of Italian Republics (16 Volumes)	1803 1819
(v) New Principles of Political Economy	1819
(vi) Studies in Political Economy (2 Volumes)	1837-38
(vii) Political Economy and the Philosophy of Government. (collection of Essays)	–

(उनकी सभी रचनाये फ्रेंच अथवा इतालवी भाषा मे है। ऊपर वर्णित शीर्षक उनके अग्रेजी मे रूपान्तरण है)

सिसमण्डी की रचनाओं पर एक टिप्पणी
(A Note on the works of Sismondi)

सिसमण्डी 35—40 वर्ष तक विभिन्न विषयो पर सोचते व लिखते रहे। इस प्रसग मे उनकी निम्नाकित तीन रचनाये विशेष रूप से उल्लेखनीय है—

(i) Commercial Wealth- सन् 1803 मे प्रकाशित इस रचना का मूल शीर्षक "La Richesse commercial" है। इस रचना मे उन्होने मुख्यत एडम स्मिथ के ही आर्थिक विचारो की भूरि—भूरि प्रशसा की। इसीलिए उन्होने स्वय इसके बारे मे लिखा कि 'इस पुस्तक मे उन पाठको के लिए कुछ भी नया नही है जिन्होने एडम स्मिथ का पढ़ रखा है।' इस पुस्तक के लिखने का प्रमुख उद्देश्य फ्रास को ठीक वैसे ही परामर्श देना था जैसे परामर्श एडम स्मिथ ने 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' के माध्यम से इग्लैण्ड को दिये थे। इस पुस्तक मे उन्होने मुक्त व्यापार एव निर्बाधावाद की नीति के गुण—गान किये और फ्रास के लिए हितकर बताया। एडम स्मिथ की भाति सिसमण्डी ने भी अपनी इस रचना मे स्वहित मे सामाजिक हित की पूर्ति स्वीकार की और कहा कि "'सभी व्यक्ति जो अपना हित चाहते है, आवश्यक रूप से निरतर राष्ट्र के हित की पूर्ति कर देते है।"[2]

(ii) New Principles of Political Economy- सन् 1819 मे प्रकाशित इस रचना का मूल शीर्षक "Nouveaux Principes d' Economie Politique" है। इसके प्रकाशन से पूर्व वे फ्रास एव इटली का इतिहास लिखकर एक इतिहासकार बन चुके थे। किन्तु, इस पुस्तक के प्रकाशन से वे पुन एक अर्थशास्त्री के रूप मे जाने गये। सन् 1803 की अपनी रचना से भिन्न इसमे उन्होने प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन एव एडम स्मिथ और उनके अनुयायियो एवं समर्थको के विचारो पर कड़ा प्रहार किया। उनका मौलिक आर्थिक चिन्तन मुख्यत इसी कृति मे है। यह उल्लेखनीय है कि इसमे भी उन्होने एडम स्मिथ को अपने गुरु के रूप मे सम्मान दिया।

(iii) Studies in Political Economy- सन् 1837—38 मे प्रकाशित इस रचना का मूल शीर्षक "Etudes sur L' Economie Politique" है। इसके दो खण्ड है। इसमे सन् 1819 की रचना के प्रमुख विचारो की पुनरावृत्ति एवं पुनरावलोकन किया गया है।

सिसमण्डी के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Sismondi)

जिस प्रकार माल्थस एव रिकार्डो ने क्रमश. जनसख्या एवं लगान के

---

2. "All men, in seeking their own interest, incessantly tend to serve the national interest." -Sismondi

बारे मे विशेषज्ञ विचार पस्तुत किये उस प्रकार सिसमण्डी ने किसी प्रसग अथवा विषय विशेष को नही छुआ । जैसाकि उल्लेख किया जा चुका है, उनकी गणना प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के प्रारम्भिक आलोचको मे की जाती है । अपने इस रूप मे मूलत उनका उद्देश्य यह सिद्ध करना रहा कि एडम सिथ एव उनके सह–सस्थापको ने जो कुछ लिखा एव कहा वह निर्दोष नही है । उन्होने यह सिद्ध करने का प्रयास भी किया कि उनका चिंतन अनेक प्रसगो मे अत्यधिक सिद्धान्तवादी एव अव्यावहारिक था । इस हेतु उन्होने अनेक आर्थिक प्रसग छुये जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy)
2 जनसख्या (Population)
3 कृषक स्वामित्व एव कृषि (Peasant Proprietership & Farming)
4 मशीनीकरण (Mechanisation)
5 पूजी का केन्द्रीकरण (Concentration of capital)
6 प्रतिस्पर्धा (Competition)
7 वितरण (Distribution)
8 अति–उत्पादन (Over Production)
9 आर्थिक सकट (Economic Crisis)
10 वर्ग–सघर्ष (Class conflict)
11 राजकीय हस्तक्षेप (Government Intervention) एव
12 सुधार योजनाये (Reform Project)

अब हम, सक्षेप मे, इनकी व्याख्या करेगे –

1. राजनीतिक अर्थव्यवस्था (Political Economy)

अर्थशास्त्र, जिसे सिसमण्डी ने भी राजनीतिक अर्थव्यवस्था ही कहा, की विषय–सामग्री, क्षेत्र, प्रकृति, उद्देश्य एव अध्ययन पद्धति के सदर्भ मे उनके विचार अपने सभी पूर्ववर्ती अर्थशास्त्रियो एव विचारको से अधिक व्यापक एव निश्चित थे । इसीलिए उन्हे उनकी एक महत्त्वपूर्ण देन माना जाता है । उन्होने इन सबकी समन्वित एव एकीकृत व्याख्या की जिसका सक्षिप्त विवेचन निम्नाकित है–

(i) राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विषय–सामग्री एवं क्षेत्र (Subject matter and scope of Political Economy) ज्ञातव्य है कि, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के अनुसार राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विषय–सामग्री के प्रमुख विषय 'धन' एव 'आर्थिक मानव' थे । इससे तत्कालीन ब्रिटेन मे पूजीपतियो, मिल मालिको एव अमीरो को श्रमिको एव गरीबो के शोषण का खुला लाइसेस मिल गया, जिसका उन्होने भरपूर लाभ उठाया । इससे शास्त्र एव शास्त्री दोनो की बदनामी हुई और अर्थशास्त्र को घृणित एव निकृष्ट विज्ञान मानकर 'सुअरो का

दर्शन' (Pig philosophy) कहा जाने लगा।

यद्यपि, सिसमण्डी राजनीतिक अर्थव्यवस्था के सिद्धान्तो के सैद्धान्तिक पक्ष पर एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो के विचारो से एकदम समहत थे; किन्तु, अर्थशास्त्र की जो विषय–सामग्री ('धन' एव 'आर्थिक मानव') उन्होने बतायी उससे वे सहमत नही हुए। उन्होने बताया कि अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री का मुख्य विषय 'मानव का भौतिक कल्याण' है। उन्ही के शब्दो मे, "व्यापक रूप मे अर्थशास्त्र परोपकार का सिद्धान्त है और कोई भी ऐसा सिद्धान्त जिससे अन्तत मानव सुख मे वृद्धि नही होती, इसकी विषय–सामग्री मे स्थान पाने योग्य नही है।"[3]

सर्वप्रथम सिसमण्डी ने ही देशवासियो के भौतिक कल्याण मे वृद्धि को राष्ट्र का सच्चा धन बताया तथा एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो से भिन्न अर्थशास्त्र को एक सामाजिक एव मानव कल्याण का विज्ञान बताया। इसीलिए कहा जाता है कि 'जहाँ स्मिथ आदि ने राष्ट्र के धन मे वृद्धि का मार्ग बताया वहाँ सिसमण्डी ने यह कहकर मानव के भौतिक कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया कि धन के न्यायोचित वितरण द्वारा ही मानव कल्याण अधिकतम करने का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।' इसीलिए उन्होने तो यहाँ तक कह डाला कि, 'धन वास्तव मे तभी धन है जब उसका वितरण न्यायोचित हो और उससे मनुष्य के भौतिक कल्याण मे वृद्धि हो।' इस सदर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि, यद्यपि, रिकार्डो ने उत्पादन के वितरण को राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विषय–साम्रग्री मे सम्मिलित कर इसे अर्थशास्त्र की एक केन्द्रीय समस्या तो बता दिया किन्तु उन्होने अपने विश्लेषण मे 'मानवीय सुख' एव 'कल्याण' को सम्मिलित नही किया। वस्तुत. रिकार्डो के इस अधूरे कार्य को पूर्ण कर सिसमडी ने अर्थशास्त्र की महान सेवा की। योरोपीय देशो के भ्रमण के बाद वहाँ मुख्यत. फ्रास, इग्लैण्ड एव इटली मे, व्याप्त आर्थिक विषमताओ एव शोषण का अवलोकन कर उन्होने स्वय अनुभव किया कि चाहे किसी देश मे कितना ही धन क्यो न हो, जिसमे लाखो–करोडो लोग अपनी अनिवार्यताओ की पूर्ति के लिए तरसते रहते है, वह देश एव समाज कभी समृद्ध नही कहा जा सकता। इसीलिए उन्होने कहा कि 'सरकार का लक्ष्य मात्र धन सग्रह करना नही बल्कि देशवासियो के जीवन के उस आनन्द मे भागीदारी निभाना है जिसका 'धन' प्रतिनिधित्व करता है।' इसीलिए उन्होने सरकार द्वारा धन को नियत्रित करने के लिए मानवीय आर्थिक क्रियाओ मे राजकीय हस्तक्षेप का समर्थन किया था।

---

3 "Political Economy at its widest, is a theory of charity and any theory that upon last analysis has not the result of increasing happiness of mankind does not belong to the science at all." -Sismondi

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जहा स्मिथ एव उनके अनुयायियो ने उत्पादन एव वितरण पर ध्यान दिया वहा सिसमण्डी ने अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री मे उपभोग एव नीतिपरक सोच–विचार (ethical considerations) का समावेश किया और उसे एक सामाजिक विज्ञान का स्वरूप प्रदान किया। उन्होने बताया कि 'अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। इसे भली–भाति जानने के लिए विस्तृत अनुभव एव इतिहास का ज्ञान जरुरी है। इसका सम्बन्ध 'मनुष्य से सम्बन्धित धन' से है। यह मनुष्य की धन सम्बन्धी क्रियाओ का अध्ययन कल्याण की दृष्टि से करता है। इसीलिए इसकी विषय–सामग्री मे, अन्य बातो के अलावा, धन के उत्पादन, वितरण आदि की समस्याये एव उन्हे हल करने की दृष्टि से किये गये राजकीय हस्तक्षेप की क्रियाओ के अध्ययन पर बल दिया जाता है।

(ii) राजनैतिक अर्थव्यवस्था की प्रकृति (Nature of Political Economy)- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था को एक विज्ञान बताया था। किन्तु सिसमडी इसी से सतुष्ट नही हुए। उन्होने इसे एक आदर्श एव आचरण सम्बन्धी विज्ञान (Moral Science) माना और कहा कि इसके विभिन्न तथ्य परस्पर एक–दूसरे से सम्बद्ध रहते है। इसके अलावा उन्होने इसे विज्ञान के साथ–साथ एक कला भी माना। वस्तुत सिसमडी ने इसकी प्रकृति को इसके उद्देश्य से सम्बद्ध कर दिया था।

(iii) राजनैतिक अर्थव्यवस्था का लक्ष्य अथवा उद्देश्य (Aim or object of Political Economy)- एडम स्मिथ एव उनके समर्थको ने 'धन' को मानवीय आर्थिक क्रियाओ का लक्ष्य अथवा उद्देश्य बताया और कहा कि यदि कोई व्यक्ति इसे प्राप्त कर लेता है तो उसका जीवन सार्थक है। सिसमडी राजनीतिक अर्थव्यवस्था के इस सकीर्ण एव घृणित उद्देश्य से सहमत नही हुए। उन्होने 'मानव जाति के सुख' को इसका लक्ष्य माना। इस प्रकार प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने जहा इसका उद्देश्य बहुत सकीर्ण बना दिया था, सिसमडी ने उसे काफी व्यापक एव विस्तृत कर दिया। इस हेतु उन्होने समाज मे धन के न्यायोचित एव समान वितरण का समर्थन किया। उन्होने शास्त्र ही नही बल्कि शास्त्रियो के उद्देश्य की भी व्याख्या की ओर कहा कि, 'एक अर्थशास्त्री का प्रमुख उद्देश्य व्यावहारिक समस्याओ का समाधान खोजना व किसी परिवर्तन एव सुधार के तत्त्वों का विश्लेषण करना है।'

(iv) राजनैतिक अर्थव्यवस्था की अध्ययन पद्धति (Method of the study of Political Economy)- राजनीतिक अर्थव्यवस्था के अध्ययन की पद्धति की दृष्टि से सिसमंडी ने एडम स्मिथ एव माल्थस द्वारा प्रयोग मे लायी गयी आगमन पद्धति की प्रशसा की तथा रिकार्डो की आलोचना की जिन्होने केवल निगमन प्रणाली का प्रयोग कर तर्क–वितर्क द्वारा काल्पनिक निष्कर्ष प्रतिपादित किये।

रिकार्डो के अलावा उन्होने मकलक एव जे. बी. से द्वारा अपनायी गयी अध्ययन पद्धति की भी कड़े शब्दो मे भर्त्सना की, जो मूलतः रिकार्डो की अध्ययन पद्धति के अनुरूप थी। स्मिथ द्वारा अपनायी गयी अध्ययन पद्धति की प्रशसा करते हुए उन्होने कहा कि, 'उन्होने प्रत्येक तथ्य का उसके सामाजिक परिवेश मे अध्ययन करने का प्रयास किया और उसकी महान कृति वास्तव मे मानव जाति के इतिहास के एक दार्शनिक अध्ययन की प्रतिकृति है।' माल्थस की अध्ययन पद्धति से भी वे बड़े प्रभावित हुए और कहा कि, 'उन्होने आगमन एव निगमन प्रणालियो के मध्य बड़ी सावधानी से सतुलन स्थापित कर लिया।'

राजनीतिक अर्थव्यवस्था के अध्ययन के बारे मे सिसमंडी ने बताया कि इसका अध्ययन अनुभव, इतिहास एवं अवलोकन के सदर्भ मे किया जाना चाहिये। दूसरे शब्दो मे, उन्होने आगमन–ऐतिहासिक प्रणाली (Inductive Historical Method) के प्रयोग का समर्थन किया जो मूलतः आगमन एवं निगमन पद्धतियो का एक समन्वित रूप है। उन्होने सुझाव दिया कि 'अर्थशास्त्रियो को कभी भी काल्पनिक नियमो को शाश्वत सत्य मानकर उन्हे सभी परिस्थितियो मे लागू करने का प्रयास नही करना चाहिए।'

आलोचना (Criticism)

सिसमडी की राजनीतिक अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओ से सम्बद्ध उपर्युक्त व्याख्या की प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के समर्थको ने कटु आलोचना की। सक्षेप मे, इसकी निम्नाकित आलोचनाएं उल्लेखनीय हैं–

(i) **आर्थिक जीवन में राजकीय हस्तक्षेप** की भूमिका स्वीकार कर लेने से वैयक्तिक स्वतंत्रता का हनन हो जायेगा। जैसा कि जे. बी. से ने कहा, 'यदि हम खुशहाली को मेहनत एवं समझ–बूझ पर न छोड़कर राज्य पर छोड़ देगे तो हम मानव जाति के कल्याण को नुकसान ही पहुंचायेगे।' दूसरे शब्दो मे, राजकीय हस्तक्षेप एवं कल्याण मे सह–सम्बन्ध नही है।

(ii) अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री में 'कल्याण' की विचारधारा के समावेश से यह **नीतिशास्त्र के बहुत निकट** चला जायेगा और कोरा आदर्शवादी हो जायेगा।

(iii) आगमन एवं निगमन प्रणालियो के एक साथ प्रयोग से दोनो मे से **किसी भी प्रणाली का भली-भाँति प्रयोग नहीं** हो सकेगा और फलतः प्रतिपादित निष्कर्ष अपनी उपयोगिता खो देगे।

(iv) **मानव सुख या कल्याण अर्थशास्त्र का लक्ष्य नहीं** हो सकता। इसका लक्ष्य तो मनुष्य के आर्थिक व्यवहार की वैज्ञानिक व्याख्या करना है। यदि कल्याण को लक्ष्य मान लिया गया तो क्योकि इसे मापना कठिन है, अतः इस लक्ष्य की प्राप्ति भी संदिग्ध रहेगी।

2 जनसख्या (Population)

'जनसख्या' के विषय मे सिसमडी के विचार माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त से कुछ भिन्न थे । उन्होने जनसख्या एव उसके आकार के बारे मे एक विवेकसम्मत दृष्टिकोण अपनाया । उन्होने न तो अति आशावादी बनकर गोडविन एव प्रकृतिकवादियो की भाति जनसख्या मे होने वाली प्रत्येक वृद्धि को भावी समृद्धि का सूचक माना और न निराशावाद का शिकार बनकर जनसख्या मे होने वाली प्रत्येक वृद्धि को भावी अपशकुन का प्रतीक ही बताया। बल्कि उन्होने जनसख्या को देश मे उपलब्ध धन के परिप्रेक्ष्य मे देखा और बताया कि राष्ट्र के धन एव जनसख्या मे ऐसा सामजस्य एव अनुपात होना चाहिए कि देशवासियो का कल्याण अधिकतम हो सके ।

उन्होने जनसंख्या मे वृद्धि की दृष्टि से माल्थस की गुणोत्तर श्रेढ़ी मे वृद्धि (Encrease in Geometrical Progession) की अवधारणा को स्वीकार नही किया और कहा कि निम्नाकित दो शक्तियो की पारस्परिक क्रिया द्वारा जनसख्या का आकार एव उसमे वृद्धि की दर निर्धारित होती है ।–

(i) **अनुराग अथवा प्रेम-भाव** (affection) जिसके वशीभूत होकर लोग शादी एव सन्तानोत्पादन करते हैं । दूसरे शब्दो मे इससे जन्म दर प्रभावित होती है ।

(ii) **स्वार्थपरता एवं गणना** (Egoism and calculation) इससे जनसख्या वृद्धि पर रोक लगती है क्योकि दम्पत्ति यह सोचता है कि बच्चे हो अथवा नही।

माल्थस ने जीवन–निर्वाह के साधनो द्वारा जनसख्या की सीमा निर्धारित की । किन्तु, सिसमडी ने यह सीमा भी स्वीकार नही की । उन्होने बताया कि *'कार्य न मिलने की असमर्थता'* द्वारा जनसख्या की सीमा निर्धारित होती है । दूसरे शब्दो में, उन्होने बताया कि जब श्रमिको को यह दिखायी देने लग जायेगा कि रोजगार के अवसरो की सीमितता के कारण नये जन्म लेने वालो को रोजगार नही मिलेगा तो वे जनसख्या मे वृद्धि पर स्वत ही रोक लगा देगे । उन्होने तो यहा तक कहा कि जब रोजगार ही नही मिलेगा तो बच्चे पैदा करना तो दूर श्रमिक शादिया भी नही करेगे । सिसमण्डी ने इसे जनसख्या पर रोक की एक प्राकृतिक सीमा बताया ।

उन्होने बताया कि ज्यादा बच्चे होना अन्यायपूर्ण एव सामाजिक निर्दयता है । उन्होने वस्तुओ की भाति जनसख्या मे स्वत ही समायोजन की बात स्वीकार नहीं की और कहा कि जनाधिक्य के कारण ही श्रमिको को अनेक प्रकार के कष्ट झेलने पड़ते हैं । उन्होने यह भी कहा कि जब जनसख्या आवश्यकता से अधिक बढ़ जायेगी तब बाद के लोग शादी–विवाह के आनन्द एव वृद्धावस्था मे सुख–चैन से वचित हो जायेगे । अत उन्होने सुझाव दिया

कि इस समस्या के निराकरण के लिए तब तक गरीबो को शादी की छूट नही देनी चाहिये जब तक वे कुछ सम्पत्ति अर्जित कर अपने पैरो पर खड़े न हो जाये। उन्होने बताया कि जनसख्या मे वृद्धि एव कमी रोजगार प्रदान करने वाले पूजीपति उद्यमकर्त्ताओं की इच्छा पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दो मे, जब वे श्रम की माग और परिणामस्वरूप पारिश्रमिक दर में वृद्धि कर देते हैं तो जनसख्या मे वृद्धि एव विलोमश कमी होती है। अर्थात् सिसमण्डी 'ऊची मजदूरिया एव अधिक जनसख्या' (high wages & high population) के भ्रम से ग्रसित रहे। किन्तु, इसके साथ–साथ सिसमण्डी ने यह भी बताया कि वर्तमान औद्योगिक अस्थिरता के युग मे श्रम की मजदूरिया अनिश्चित रहती है। अत वह अपनी आय के सदर्भ मे अपने परिवार का आकार निश्चित नही कर पाता है। श्रमिको की सख्या अधिक न होने के बावजूद मशीनीकरण से बेरोजगारी एव जनाधिक्य की स्थिति उत्पन्न हो जाने की सम्भावनाओ को भी उन्होने तत्कालीन दशाओ मे स्वीकार किया और कहा कि, व्यावहारिक जीवन मे "श्रमिको की आय की गणना स्थिर नहीं रह पाती और उसे उनकी जानकारी के बिना, दूसरो के द्वारा बदल दिया (अर्थात् कम करना) जाता है। उद्यमी स्वय भी गलत गणना कर सकता है।"

सिसमण्डी, यद्यपि, जनसख्या मे वृद्धि के भय से आतकित तो नही थे, तथापि उन्होने इसकी गम्भीरता से इन्कार नहीं किया और माना कि आर्थिक अस्थिरता, अति–उत्पादन, आर्थिक सकट एव मशीनीकरण ने जनसख्या की समस्या उत्पन्न करदी है। उनका माल्थस की प्राकृतिक रुकावटो मे बिल्कुल भी विश्वास नहीं था। अत उन्होने जनसख्या मे अवाछनीय वृद्धि पर रोक लगाने मे सरकार की भूमिका स्वीकार की और कहा कि, "यह सरकार का दायित्व है कि वह श्रमिको को गरीबी एव बेरोजगारी की स्थिति से उबारे और जब तक वे एक निश्चित जीवन–स्तर प्राप्त न करले तब तक उनकी शादियो पर रोक लगा दे।"

3. कृषक स्वामित्व एवं कृषि (Peasant Proprietorship & Farming)

सिसमण्डी ने बताया कि अधिसख्यक जनसख्या (श्रमिक) के भूमि आदि सम्पति से वचित हो जाने के कारण ही वर्तमान औद्योगिक समाज मे अनेक दोष उत्पन्न हुए हैं। अत काश्तकारो को भू–स्वामित्व प्रदान किया जाये अथवा अनुपस्थित भूस्वामियो को समाप्त किया जाये अथवा भूमिपति एव काश्तकार का भेद समाप्त किया जाना चाहिये। फ्रास, स्विटजरलैण्ड एव इटली मे उस समय प्रचलित भू–व्यवस्था के अध्ययन ने सिसमडी को कृषक भू–स्वामित्व का समर्थक बना दिया। उन्होंने कहा कि कृषि मे सुधार के लाभ भूमिपतियो को नहीं बल्कि काश्तकारो को मिलने चाहिये। उन्होने इटली एव स्विटजरलैण्ड मे छोटे किसानो द्वारा पूरे किये गये काश्तकारी सुधारो की

सफलता की प्रशसा की । काश्तकार के श्रम एव उपकरणो के पूर्ण एव मितव्ययी प्रयोग के लिए उन्होने छोटी जोतो एव छोटे पैमाने पर कृषि का समर्थन किया और कहा कि काश्तकार उसकी समुचित निगरानी कर सकेगे । सामतवादी व्यवस्था से मुक्त होने के बाद फ्रास के किसानो द्वारा किये गये भूमि सुधारो की सफलता ने भी उन्हे किसानो को भूमि पर स्वामित्व प्रदान करने का समर्थक बना दिया ।

4 मशीनीकरण (Mechanisation)

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अर्थशास्त्री मशीनीकरण के समर्थक थे । उन्होने बताया कि इससे बेरोजगारी मे वृद्धि की कोई सम्भावना नही है, क्योकि जे बी से के बाजार नियम के अनुसार उपभोग एव उत्पादन मे स्वत ही सतुलन बना रहता है । उन्होने यह भी बताया कि मशीनीकरण से उत्पादन लागत घटती है और सस्ती कीमतो पर उपभोक्ता वस्तुओ की उपलब्धि से जब उनका उपयोग और परिणास्वरूप उत्पादन बढता है तो शुरू मे मशीनीकरण से जो श्रमिक बेरोजगार हुए थे उनसे कही अधिक श्रमिको के लिए रोजगार के नये अवसर सृजित हो जाते है । अत मशीनीकरण से उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी एक पूर्णत अस्थायी घटना है जिसका आर्थिक ढाचे एव जीवन पर अल्पकाल मे ही कोई विशेष प्रतिकूल प्रभाव नही पड़ता ।

किन्तु, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के उपर्युक्त विचारो से सिसमडी सहमत नही हुए । उन्होने मशीनीकरण को एक मिश्रित वरदान (mixed blessing) मानकर अत्यधिक एव अवाछनीय मशीनीकरण को हानिकारक बताया । उनके मतानुसार 'इससे बेरोजगारी बढती है और परिणामस्वरूप उनमे (श्रमिक) प्रतिस्पर्धा (कार्य चाहने की) बढ़ जाती है । फलत वे नीची मजदूरी दर पर ही कार्य करने को तैयार हो जाते है और परिणामस्वरूप उपभोग एव माग मे कमी से उत्पादन का स्तर गिर जाता है अथवा अति उत्पादन का आर्थिक सकट उत्पन्न हो जाता है ।' उन्होने एक अन्य आधार पर भी इसका कड़ा विरोध किया और कहा कि इससे उत्पन्न होने वाले कुल लाभो का अत्यल्प भाग ही श्रमिको को मिलता है । अत जब तक उपभोक्ताओ के साथ-साथ श्रमिको को इसके लाभ नही मिलते यह उचित नही है । मशीनीकरण का एक अन्य गम्भीर दोष उन्होने यह भी बताया कि इससे सम्पन्न देशो द्वारा गरीब एव छोटे देशो का शोषण किया जाता है और कुछ देश अन्य देशो की लागत पर पनपने लगते है ।

किन्तु, सिसमडी ने प्रत्येक अवस्था मे मशीनीकरण का विरोध नही किया । उन्होने बताया कि जब किसी वस्तु की बाजार माग उसके उत्पादन से आगे निकल जाये तो मशीनीकरण कर उत्पादन मे वृद्धि करना आवश्यक हो जाता है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने मशीनीकरण से पूर्व उत्पादो के बाजार

विस्तार पर बल दिया ताकि बढ़े हुए उत्पादन का समाज को तत्काल लाभ मिल सके। इसके अलावा उन्होने स्वीकार किया कि जब किसी उद्योग विशेष मे मशीनीकरण से उत्पन्न बेरोजगारी की समस्या का हल किसी अन्य उद्योग में मिल जाता है तो मशीनीकरण किया जा सकता है। उन्ही के शब्दो मे, "कोई भी व्यक्ति, एक श्रमिक के स्थान पर मशीन के प्रतिस्थापना से उत्पन्न लाभ को अस्वीकार नही कर सकता यदि इससे बेरोजगार हुए युवक को कहीं अन्यत्र रोजगार मिल जाये।"

मशीनीकरण के साथ–साथ सिसमडी ने नये आविष्कारो को भी हानिकारक बताया और कहा कि ये हमेशा बुरे परिणामो की ओर ले जाते है, क्योकि "मनुष्य अपनी समझ, शरीरिक बल, स्वास्थ्य एव प्रफुल्लता खो देता है।"[4] यह कथन एलेक्जेण्डर ग्रे का है जो उन्होने सिसमण्डी के आविष्कारो के सम्बन्ध मे विचारो को व्यक्त करने के सदर्भ मे कहा। उनका विश्वास था कि नये–नये आविष्कारो से श्रम–शक्ति की माग गिर जाती है और अर्थव्यवस्था क्षीण हो जाती है। किन्तु, सिसमण्डी ने प्रत्येक नये आविष्कार की, अपशकुन का प्रतीक मानकर, निन्दा नही की और कहा कि जब आविष्कारो से समाज की माग एव समृद्धि बढ़े तो ऐसे आविष्कारो का समर्थन किया जा सकता है। दूसरे शब्दो मे, उनके अनुसार केवल वे ही आविष्कार वाछनीय है जिनसे वस्तुओ का बाजार विस्तृत होता है।

मशीनीकरण एव आविष्कारो के दुष्परिणामो से बचने के लिए सिसमडी ने कतिपय सुझाव भी दिये, यथा–

(i) सभी देशो मे मशीनो एव आविष्कारो का एक साथ प्रयोग आरम्भ होना चाहिए ताकि एक देश को दूसरे देश के शोषण का अवसर न मिले।

(ii) मशीनीकरण एव नये आविष्कारो के लिए किसी साहसी को कोई विशेष सुविधा अथवा छूट नही दी जानी चाहिए।

(iii) इनके प्रयोग की तभी छूट दी जाये जब समाज इसकी माग करे। दूसरे शब्दो मे, इनका अधानुकरण नही किया जाना चाहिये।

5. पूजी का केन्द्रीकरण (Concentration of capital)

सिसमडी ने अर्थव्यवस्था की भौतिक सुख–समृद्धि के लिए पूजी प्रधान उद्योगो को एक आवश्यकता बताया। किन्तु, उन्होने आर्थिक शक्ति के कुछेक हाथो मे केन्द्रीकरण को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए घातक एव विकास मे एक बाधक माना। उन्होने बताया कि एक औद्योगिक समाज मे केवल दो वर्गों के हित सुरक्षित रहते है– (i) पूंजीपति और (ii) उनके (पूजीपतियो) भाड़े के टट्टू। पूजी के केन्द्रीकरण से इनके हित और अधिक सुरक्षित हो जाते है।

---

4 "Man loses in intelligence, in bodily vigour in health and gaiety" -Gray A.

उन्होने माना कि समाज के विभिन्न वर्गों के हित अलग–अलग है । यथा एक रोजगार शुदा श्रमिक का हित इसमे है कि वह 10 घण्टे के श्रम के बदले मिलने वाले पुरस्कार से अपने परिवार का भली–भाति भरण–पोषण करले । इसी प्रकार एक बेरोजगार युवक का हित इसमे है कि वह नीची मजदूरी पर भी अधिक घण्टे तक कार्य करके अथवा अपने छोटे –छोटे बच्चो एव औरतो को काम पर भेजकर जीवन–निर्वाह के साधन जुटाये । सभी वर्गों के हितो की पूर्ति मे पूजी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है । उन्होने बताया कि एक की पूजी हडप कर दूसरा वर्ग पूजी का केद्रीकरण कर लेता है और केन्द्रीकृत पूजी आर्थिक शोषण एव दमन का कारण बनती है । उन्ही के शब्दो मे, "कभी–कभी साहसी की आय श्रम के शोषण से प्राप्त आय का ही प्रतिनिधित्व करती है । लाभ मुख्यत इसलिए नही बढ़ता कि कोई उद्योग अपनी लागत के परिप्रेक्ष्य मे अधिक उत्पादन करता है, बल्कि इसलिए कि वह श्रमिको को समुचित प्रतिफल नही देता । ऐसा उद्योग अनिवार्यत एक सामाजिक बुराई है ।" इसी तर्ज पर सिसमडी ने पूजी के केन्द्रीकरण का विरोध किया । दूसरे शब्दो मे, 'वे आर्थिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण एव उत्पादन के छोटे पैमाने के समर्थक थे ।

6. प्रतिस्पर्धा (Competition)

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने खुली प्रतिस्पर्धा की वकालत की और कहा कि, एक तो इससे श्रम विभाजन को प्रोत्साहन मिलता है, दूसरे वस्तुओ की उत्पादन लागत एव फलस्वरूप कीमत गिरती है और तीसरे, उत्पादन की मात्रा मे वृद्धि एवं गुणवत्ता मे सुधार होता है । किन्तु, सिसमण्डी, जो गरीब श्रमिको के कष्टो से भली–भाति परिचित थे, उपर्युक्त तर्कों से सहमत नही थे। इसलिए उन्होने प्रतिस्पर्धा को श्रमिको एव पूजीपतियो दोनो के लिए घातक माना और कहा कि इसका सबसे घातक प्रभाव महिला एव बाल श्रमिको पर पड़ता है । प्रतिस्पर्धा मे उद्योगपति अपने–अपने उत्पादो की लागत घटाने के लिए अनेक ऐसी क्रियाये करते है जिनसे वह प्रतिस्पर्धा गलाकाट प्रतिस्पर्धा मे बदल जाती है । वे अपने उत्पादो की अधिक बिक्री के लिए श्रम का शोषण करते हैं जबकि लागत घटाने के लिए मानव शक्ति का शोषण करते है जिससे श्रम की जीवन–शक्ति पगु बन जाती है । जब वे नीची मजदूरी देकर अधिक काम करवाकर वस्तु सस्ती बेचते है तो उसके सस्तेपन का श्रमिको के लिए कोई महत्त्व नही रह जाता है । उन्होने छोटे उत्पादको के अस्तित्व के लिए भी प्रतिस्पर्धा को घातक बताया और कहा कि इसने मध्यस्थो, छोटे भू–स्वामियो, खुद–काश्तकारो, कुशल कारीगरो, छोटे उत्पादको एव छोटे व्यापारियो को, जो बडो की प्रतिस्पर्धा मे नहीं टिक पाते, समाप्त कर दिया है। उपभोक्ताओ के रूप मे देशवासियो को प्रतिस्पर्धा से जो लाभ (सस्ती, प्रमाणित एव पर्याप्त मात्रा मे वस्तुओ की उपलब्धता) मिलते

है, वे उत्पादक के रूप मे (नीची मजदूरियाँ, अधिक घटे कार्य, महिला एव बाल श्रम का शोषण आदि-आदि) समाप्त हो जाते है, इसीलिए उन्होने बताया कि 'यह जीवन शक्ति समाप्त करती है और श्रम जाति की शक्ति क्षीण करती है।''[5]

उन्होने कहा कि प्रतिस्पर्धा केवल तभी उचित मानी जा सकती है जब उससे समाज मे वस्तुओ की बढ़ी हुई माग को पूरा करने के लिए उत्पादन बढ़े। जब केवल बाजार हड़पन के लिए प्रतिस्पर्धा की जाती है, तो उसका समर्थन नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दो मे, वे असीमित एव अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा के विरुद्ध थे।

7 वितरण (Distribution)

सिसमण्डी से पहले तक यह माना जा रहा था कि अधिकतम उत्पादन से ही अधिकतम सुख एव समृद्धि सम्भव है। किन्तु, उन्होने, सर्वप्रथम, बताया कि उत्पादन कम होने पर भी यदि उसका वितरण समान एव न्यायपूर्ण है तो समाज का सुख बढ सकता है। दूसरे शब्दो मे, उन्होने बताया कि अधिकतम *उत्पादन आवश्यक रूप से अधिकतम सुख एव कल्याण का सूचक नही है।* इसी आधार पर उन्होने धन प्राप्ति की अधी दौड़ की निन्दा की। उन्होने भी कुल राष्ट्रीय उत्पादन का भू-स्वामी, पूजीपति एव श्रमिक मे वितरण किया। वे मानवता के समर्थक थे एव आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण के कटु आलोचक थे। अत उन्होने इन तीनो के बीच कुल उत्पादन के न्यायोचित वितरण द्वारा अधिकतम सामाजिक सुख प्राप्त करने की बात स्वीकार की।

8. अति उत्पादन (Over Production)

अधिकाश प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो का विश्वास जे बी से के बाजार *नियम मे था। अत वे अति उत्पादन की समस्या के भय से ग्रसित नही थे।* इस नियम के अनुसार 'पूर्ति स्वय अपनी माग सृज्ति करती है'। अत सामान्यतया या तो अति-उत्पादन की समस्या का उदय ही नही होता और यदि कभी होता है तो बाजार शक्तियाँ स्वत ही उसे तत्काल ठीक कर देती है। दूसरे शब्दो मे, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री सदैव उत्पादन मे वृद्धि को समृद्धि का *सूचक मानते रहे। किन्तु, सिसमण्डी का उनके इन विचारो मे विश्वास नही* था। उन्होने अति-उत्पादन को उत्पादन की माग और पूर्ति की शक्तियो मे कु-समायोजन से उत्पन्न एक गम्भीर दोष माना और कहा कि इसका अपने आप हल सम्भव नही है। इस विषय मे सिसमडी के विचार उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण देन माने जाते हैं। *उन्होने बताया कि वर्तमान के आर्थिक सकटो ने से के बाजार नियम की पोल खोलदी है। उन्होने यह भी बताया कि* अति-उत्पादन होगा और इसके लिए श्रम का 'सम्पति पर स्वामित्व से

---

5 "It saps the vitality and impairs the life energy of the race

अलगाव' जिम्मेदार है । अर्थात् श्रमिको की सारी सम्पति हडप लेने के बाद अब उन्हे केवल मजदूरी पर आश्रित रहना पड़ता है और यह मजदूरी इतनी नही होती जो बढ़े हुए उत्पादन की खरीद कर सके । उन्होंने बताया कि एक उद्योग–प्रधान पूजीवादी व्यवस्था मे कीमते गिर जाने के बावजूद उत्पादन मे अक्षुण्य वृद्धि जारी रहती है, क्योकि उत्पादन मे गिरावट की तुलना मे वृद्धि की क्रिया कही अधिक आसान होती है । उन्होने मुख्यत. बेरोजगारी मे वृद्धि, क्रय–शक्ति के ह्रास एव घोर विपत्तियो के आधार पर अति– उत्पादन को एक गम्भीर दोष माना और कहा कि या तो इसका समायोजन होगा ही नही और यदि होगा तो गम्भीर परिणाम भुगत चुकने के पश्चात् होगा । उन्ही के शब्दो मे, "हमे अपने आय सतुलन स्थापित हो जाने के खतरनाक सिद्धान्त से सावधान रहना चाहिये । यह सत्य है कि दीर्घकाल में एक विशेष प्रकार का सतुलन स्थापित होता है किन्तु ऐसा काफी कष्ट भुगत चुकने के बाद ही होता है ।"[6] अत सिसमडी ने सुझाव दिया कि अति उत्पादन की समस्या पर शुरू से ही कडी नजर रखनी चाहिये ताकि यह गम्भीर न होने पाये । सिसमडी के अनुसार अति–उत्पादन की समस्या को जन्म देने वाले प्रमुख कारणो को निम्नाकित तीन वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है–

(i) अर्थव्यवस्था की प्रतिस्पर्धी प्रकृति,

(ii) उत्पादन का निर्धारण वस्तुओ की बाजार माग के आधार पर न होकर पूजी की उपलब्धता के अनुसार होना और

(iii) श्रम का उत्पत्ति के अन्य साधनो एव सम्पत्ति से स्वामित्व हट जाना ।

इन तीनो के आधार पर उन्होने सामान्यतया अति उत्पादन के निम्नाकित कारण बताये–

(i) उत्पादको द्वारा भावी माग का सही–सही अनुमान न लगा पाना,

(ii) वस्तुओ की बाजार माग कम हो जाने के बावजूद उनके उत्पादन मे शिथिलता लाना सम्भव न होना,

(iii) प्रतिस्पर्धा मे बने रहने के लिए उत्पादको द्वारा नीची लागत पर ज्यादा उत्पादन करते रहने पर लगातार बल देना;

(iv) समाज मे धन के असमान वितरण से बढते उत्पादन की बाजार माग का सृजन न होना,

(v) अबाधित प्रतिस्पर्धा, श्रम–विभाजन, उत्पादन के बड़े पैमाने एव

---

6. "Let us beware of this dangerous theory of equilibrium which is supposed to be automatically established. A certain kind of equilibrium, it is true is re-established in the long run, but it is only after a frightful amount of sufferings." -Sismondi

मशीनीकरण के कारण उत्पादन का लगातार बढ़ते रहना और

(vi) उत्पत्ति के साधनो पर से श्रम का स्वामित्व हट जाने के कारण उसकी प्राप्तिया कम हो जाना और परिणामस्वरूप उसके द्वारा आधिक्य उत्पादन की माग न करना, आदि ।

सिसमडी ने बताया कि अति–उत्पादन की समस्या मुख्यत. *अनिवार्यताओ की वस्तुओ के उत्पादन के सदर्भ मे ही परिलक्षित होती है ।* उनके अनुसार इस समस्या के दो पक्ष है– (i) उत्पादित वस्तु की आवश्यकताओ की पूर्ति मे भौतिक माग कम हो जाना और (ii) समाज के लोगो की क्रय–शक्ति गिर जाना । अधिसख्यक गरीबों अर्थात् मजदूरो के पास क्रय–शक्ति का अभाव पाया जाता है । वे आधे भूखे एवं अर्द्ध नग्नावस्था मे रहते है । वे *अनिवार्यताओ की अतिरिक्त माग सृजित नहीं कर पाते ।* इसके विपरीत यद्यपि, अमीर पूजीपति उत्पादको के पास असीमित क्रय–शक्ति होती है, किन्तु, इसका अपेक्षाकृत बहुत छोटा भाग ही वे अनिवार्यताओ पर खर्च करते है । दूसरे शब्दो मे, *अनिवार्यताओ पर व्यय की उनकी अधिकतम सीमा* शीघ्र ही आ जाती है और जब उन्हे पूर्णतः सतुष्टि कर लेते हैं तो उनकी अतिरिक्त माग सृजित नही हो पाती । वस्तुतः वे पहले से ही अनिवार्यताओं को पूर्ण कर रहे होते है । अतः उनके द्वारा आधिक्य उत्पादन की खपत नही की जा सकती । हा, इसके विपरीत वे विलासिताओ की वस्तुओ पर अपनी *आय का व्यय लगातार बढ़ाते जाते है । अतः उनके सदर्भ मे अति–उत्पादन* की समस्या या तो उत्पन्न ही नही होती और यदि होती है तो वह स्थायी, लम्बी एव गम्भीर नही होती ।

उन्होने बताया कि अति–उत्पादन की समस्या कोई आकस्मिक भौतिक घटना नही है बल्कि यह एक गम्भीर समस्या एवं महत्त्वपूर्ण चुनौती है जो एक ओर समाज के सदस्यो की उपभोग सम्बन्धी आवश्यकताओ एवं दूसरी ओर उनकी भुगतान सामर्थ्य से जुड़ी हुई है । ये दोनो घटक एक दूसरे से स्वतंत्र हैं। उन्होने बताया कि जनसख्या बढ़ने पर भी उपभोग नहीं बढ़ेगा क्योंकि उसके पास उत्पादित वस्तुओ की खरीद के लिए क्रय–शक्ति का अभाव होगा । अतः सिसमण्डी ने अति–उत्पादन की समस्या का हल क्रय–शक्ति के सृजन में खोजा और कहा कि उत्पादक क्रियाओ द्वारा अथवा समाज में धन के वितरण को समान बनाकर नयी क्रय–शक्ति सृजित की जाये अथवा अमीरो के पास पड़ी निष्क्रिय क्रय–शक्ति को सक्रिय बनाया जाये । इस प्रक्रिया में उन्होने राजकीय हस्तक्षेप को नितान्त आवश्यक बताया ।

अति–उत्पादन की स्थिति कैसे उत्पन्न होती है ? के बारे मे सिसमण्डी ने दो विचार व्यक्त किये– (i) वार्षिक आय एवं वार्षिक उत्पादन मे अन्तर होना और (ii) गत वर्ष की आय को इस वर्ष के उत्पादन की खरीद पर खर्च

करना । उन्होने बताया कि इस समय–अतराल के कारण जब कभी पिछले वर्ष की आय आलोच्य वर्ष के उत्पादन से कम हो जाती है तो अति–उत्पादन की समस्या उत्पन्न हो जाती है ।

बाद के अर्थशास्त्रियो ने सिसमण्डी के उपर्युक्त विचारो की कटु आलोचना की है । उन्होने उनके विवेचन को अधूरा एव एक पक्षीय बताया है क्योकि उन्होने न्यून–उत्पादन की समस्या का कोई उल्लेख नही किया । इसके अलावा आधुनिक अर्थशास्त्री वार्षिक आय एव वार्षिक उत्पादन को एक ही वस्तु के दो किन्तु, एक समान माप मानते है । आधुनिक अर्थशास्त्री उनके इस विचार से भी सहमत नही हैं कि पिछले वर्ष की आय से अगले वर्ष मे उत्पादित वस्तुओ की खरीद की जाती है और फलत अति उत्पादन की समस्या उत्पन्न होती है । वस्तुत आय एव व्यय की अवधि एक ही रहती है । चाहे जो हो यह सही है कि उन्होने व्यापार चक्रो के अति–उत्पादन सिद्धान्त की नींव रखदी ।''[7]

9 आर्थिक संकट (Economic Crisis)

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, सिसमण्डी ने सन् 1815, 1818 एव 1825 के आर्थिक सकट अपनी आखो देखे । अत इनके उत्पन्न होने वाले कारणो की उन्हे प्रत्यक्ष जानकारी थी । उन्होने अति–उत्पादन मे आर्थिक सकट के बीज बताये और कहा कि यह उत्पादन क्षमता (capacity to produce) एव उपभोग क्षमता (capacity to consume) के बीच क्रमश बढ़ते अन्तर का परिणाम है । उनके अनुसार एक औद्योगिक समाज मे अधिकाश धन कुछेक पूजीपति उद्यमकर्त्ताओ के हाथो मे केन्द्रित हो जाता है और अधिकाश जनसख्या, जो श्रमिक होती है, गरीब होती है तथा उसकी समर्थ माग एव क्रय शक्ति काफी होती है, फलत प्रचलित बाजार कीमतो पर समस्त उत्पादन की बिक्री सम्भव नहीं हो पाती । इससे उत्पादित माल के ढेर जमा हो जाते हैं, जो अन्तत कीमतो मे गिरावट एव बेरोजगारी मे वृद्धि के जरिये पूजीवादी अर्थव्यवस्था को मदी के दल–दल मे धकेल कर गम्भीर आर्थिक सकट उत्पन्न कर देते हैं ।

इस प्रकार सिसमडी की आर्थिक सकट विषयक व्याख्या केवल अतिउत्पादन जनित थी । दूसरे शब्दो मे, उन्होने न्यून उत्पादन से किसी सकट के उदय का कहीं कोई सकेत नही दिया । उनके अनुसार पूजीवादी व्यवस्था मे धीरे–धीरे श्रम का उत्पादन के अन्य साधनो पर से स्वामित्व समाप्त हो जाता है और अन्त मे इस समाज मे केवल दो वर्ग शेष रह जाते है– (i) वे जो

---

7 "Sismondi was one of the first economists to study the business cycle being one of the originators of the over production theory " Newman

परिश्रम करते है (Those who toil) अर्थात् श्रमिक और (ii) वे जो सम्पत्ति रखते है (Those who posses) अर्थात् पूजीपति उद्यमकर्त्ता । इन दो वर्गों की उपस्थिति एव उनके पारस्परिक हितो मे टकराव मात्र से ही आर्थिक सकटो की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है । उन्होने बताया कि उत्पादन की बिक्री से प्राप्त कुल राजस्व का एक बडा भाग पूजीपति उद्यमकर्त्ता स्वय रख लेते है और उसके वास्तविक हकदार श्रम को न्यूनतम अथवा कामचलाऊ मजदूरी देकर टरका देते है । इससे श्रमिक–वर्ग के पास क्रय–शक्ति का अभाव हो जाता है । यही अन्तत सकट का सबसे प्रमुख कारण बनता है । इसके अलावा उत्पादन मे प्रतिस्पर्धा, बाजारो के ज्ञान का अभाव, माग की अपेक्षा पूजी की उपलब्धता के आधार पर उत्पादन करना आदि अन्य सहायक कारण है जो इस सकट की गम्भीरता को धीरे–धीरे बढ़ाते जाते है ।

किन्तु, जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, आय असमानता आर्थिक सकट का सबसे प्रमुख कारण है । उन्होने बताया कि सम्पन्न वर्ग के पास क्रय शक्ति की प्रचुरता के कारण वे केवल ऊँचे मूल्य की विलासिताओ की माग बढ़ाते है । इससे अर्थव्यवस्था मे उत्पत्ति के साधनो का आवटन बदलता है और परिणामस्वरूप उत्पादन का सम्पूर्ण ढाचा अस्तव्यस्त हो जाता है । यदि माग के अनुसार विलासिताओ की वस्तुओ का उत्पादन नही हो पाता है तो उनका आयात अथवा तस्करी होने लगती है । इससे सक्रमण काल बढ़ जाता है और औद्योगिक ढाचा बिगड़ जाता है । बेरोजगारी धीरे–धीरे पैर जमाने लगती है और आर्थिक भविष्य निराशावादी दिखायी देने लगता है । धीरे–धीरे उत्पादन के सभी दरवाजे बद हो जाते है और गरीब श्रमिक नियमित एव लम्बी बेकारी के शिकार हो जाते है ।[8]

उपर्युक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि सिसमण्डी ने पूजीवादी व्यवस्था एव आर्थिक सकटो मे सह–अस्तित्व देखा । इसीलिए उन्होने राजकीय हस्तक्षेप द्वारा संतुलित एव धीरे–धीरे आर्थिक विकास का समर्थन किया । इसीलिए वे आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण एव सम्पत्ति के न्यायोचित वितरण के समर्थक थे और इन्हे राष्ट्रहित मे आवश्यक मानते थे । उन्ही के शब्दो मे, "100 व्यक्ति, जो अपेक्षाकृत काफी कम सम्पन्न है, और जो अपेक्षाकृत कम गरीब 10–10 आदमियो को रोजगार देते हैं, की तुलना मे एक करोड़पति मालिक,

---

8 Production "closes its outlets on placing a steadily increasing number of poor workers in the service of the masters of production and exposing them to regular unemployment." -Sismondi

9 "The consumption of a millionaire master who employs 1000 men all earning but the bare necessities of life is of less value to the nation than 100 men each of whom is much less rich but who employ each 10 men who are much less poor." -Sismondi.

जो 1000 आदमियो को रोजगार देता है और जो केवल अपने जीवन की अनिवार्यताये पूरी कर पाते है, का उपभोग राष्ट्र के लिए कम महत्त्वपूर्ण है।''9

आर्थिक सकटो की रोकथाम के उपर्युक्त सुझावो के अलावा सिसमण्डी ने कुछ अन्य उपाय भी बताये जिनमे निम्नाकित मुख्य है–

(i) श्रमिको के पारिश्रमिक मे वृद्धि की जाये ताकि आधिक्य उत्पादन की माग का सृजन हो सके।

(ii) उत्पादन का नियत्रण उपभोक्ताओ की इच्छा एव सम्प्रभुता से होना चाहिये।

(iii) रोजगार के अवसरो मे वृद्धि कर सबको रोजगार दिया जाये।

आलोचना (Criticism)

बाद के अर्थशास्त्रियो द्वारा सिसमण्डी के 'आर्थिक सकट' विषयक विचारो की निम्नाकित आलोचनाये की गई है–

(i) सिसमण्डी के विचार एक पक्षीय है। आर्थिक सकट केवल अति–उत्पादन जनित ही नही बल्कि न्यून–उत्पादन के कारण भी उत्पन्न होते है।

(ii) अति–उत्पादन की स्थिति न होने पर भी माग एव उत्पादन मे कु–समायोजन से आर्थिक सकट उत्पन्न हो सकते है। सिसमण्डी इस स्थिति की कल्पना नही कर सके।

(iii) सिसमण्डी ने उपभोग एव माग को समानार्थी मान लिया जबकि वास्तव मे ये दोनो अलग–अलग है।

(iv) वे अस्थायी एव मौसमी उच्चावचनो की व्याख्या नही कर पाये।

(v) **जीद** एव **रिस्ट** के अनुसार 'अगर समाज मे धन का वितरण समान कर दिया जाये तो भी आर्थिक सकट रहेगे।

(vi) सिसमण्डी ने किसी उद्योग विशेष के सकट को ही राष्ट्रीय सकट का रूप दे दिया, जो अनुचित है।

उपर्युक्त आलोचनाओ के बावजूद उनकी व्याख्या सार्थक है। उन्होने विसगति के कारणो पर बल दिया और रिकार्डो एव जे बी से से पृथक् साम्य की अल्पकालीन एव प्राथमिक महत्ता पर बल दिया जिससे बाद के विचारको को महत्त्वपूर्ण दिशा–निर्देश मिले है। आर्थिक सकट के सदर्भ मे उनका यह निष्कर्ष सदा याद रहेगा कि, ''आज हम एक नये वर्ग का उदय देख रहे है जिसके पास कोई धन नही है। आज हम ऐसी स्थिति मे रह रहे है कि जिसका हमे कोई पूर्वानुमान नही था। आज जो परिश्रम करता है उसके पास धन नही है, यही खतरे की घटी है।''

10. वर्ग-संघर्ष (Class conflict)

सिसमण्डी ने अपने 'अति–उत्पादन' एव 'आर्थिक सकट' विषयक

विचारो के आधार पर औद्योगिक–पूजीवादी–समाज मे पनप रहे वर्ग–सघर्ष अथवा विभिन्न वर्गों के हितो मे पाये जाने वाले टकराव की व्याख्या की और इसे राजनीतिक अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख समस्या बताया। उन्होने माना कि मशीनो एव अन्य उपकरणो के निरतर बढ़ते प्रयोग से अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता बढ़ती है, किन्तु इसके लाभो का न्यायोचित वितरण नही हो पा रहा है। अत एक ओर ऐसा वर्ग बन रहा है जो मेहनत करता है किन्तु उसके पास धन नही है और दूसरी ओर एक अन्य वर्ग निरन्तर अपने धन मे वृद्धि करता जा रहा है, जिससे उसकी कार्यदक्षता का कोई सम्बन्ध नही है। उन्होने यह भी बताया कि अन्तत समाज मे मात्र इन्ही दो वर्गों का अस्तित्व रह गया है।

11. राजकीय हस्तक्षेप (Government Intervention)-

आरम्भ मे सिसमण्डी का 'स्वहित एव सामाजिक हित के सह–अस्तित्व' मे विश्वास था और इसी के आधार पर उन्होने मुक्त व्यापार एव निर्बाधावाद की नीति का समर्थन किया। किन्तु, बाद मे उन्हे इन हितो मे पारस्परिक विरोधाभाष नजर आया। अत वे आर्थिक जीवन एव क्रियाओ मे राजकीय हस्तक्षेप का न केवल समर्थन करने लग गये बल्कि उसे अनिवार्य मानने लगे। उन्ही के शब्दो मे, "निर्बाधावाद की नीति अविश्वसनीय सकट पैदा करती है अत आवश्यक है कि बड़ी मात्रा मे राजकीय हस्तक्षेप हो।"

उन्होने बताया कि निर्बाधावाद का समर्थन करते–करते आज का समाज खोखला हो गया है। आपसी हितो के टकराव के कारण समाज मे समन्वय के स्थान पर टकराव उत्पन्न हो गया है और गरीब एव श्रमिक वर्ग के पास अमीरो के सामने झुकने के अलावा कोई चारा नही रह गया है। उन्होने सकेत दिया कि गरीबो मे बढ़ता असतोष एक बड़ी चुनौती है जिसको राजकीय हस्तक्षेप द्वारा ही कम किया जा सकता है। इस रूप मे उन्होने जन कल्याणकारी एव समाजवादी राज्य की अवधारणा का श्रीगणेश किया।

12. सुधार योजनायें (Reform Projects)

सिसमण्डी ने अपने समकालीन समाज के अनेक दोष एव सकट देखे और पाया कि निर्बाधावाद की नीति ने अमीरो को गरीबो की लूट की जो खुली छूट दे रखी है, उसका वे भरपूर लाभ उठा रहे है। अत. उन्होने आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप की महत्ता स्वीकार की और सरकारी नीतियो से तत्कालीन समाज की बुराइयो के निराकरण की आशा की। इस हेतु उन्होने निम्नाकित सुझाव दिये—

(i) कृषको को भूस्वामित्व (Peasant proprietorship) प्रदान किया जाये ताकि उनकी सम्पत्ति एवं श्रम एक साथ मिलकर उत्पादन एवं आय मे वृद्धि कर सके।

(ii) कृषि एव उद्योगो मे उत्पादन के बडे पैमाने के स्थान पर छोटे पैमाने को प्रोत्साहन दिया जाये ताकि बड़े पैमाने के दोषो से समाज को छुटकारा मिल सके।

(iii) उद्योगो की प्रबन्ध व्यवस्था एव स्वामित्व स्वाधीन श्रमिको को सौप दिये जाये ताकि श्रमिको एव उद्योगपतियो के वर्ग समाप्त हो जाये।

(iv) सरकारी हस्तक्षेप बढ़ाया जाये ताकि महिला एव बाल श्रम के प्रयोग पर रोक लगायी जा सके तथा श्रमिको को व्यावसायिक गारटी एव स्वास्थ्यप्रद कार्य दशाये प्रदान की जा सके। इस के जरिये अवाछनीय मशीनीकरण एव आविष्कारो, अति उत्पादन आदि पर रोक लगाना भी सम्भव हो सकेगा।

(v) श्रमिको को सम्पत्ति दी जाये ताकि वे उसके स्वामित्व के आनन्द की अनुभूति कर सके।

(vi) बड़े पैमाने पर उत्पादन की अधी दौड़ पर रोक लगायी जाये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उन्होने किन्ही क्रातिकारी उपायो का सुझाव नही दिया बल्कि एक सुधारवादी विचारक के रूप मे अतरिम अवधि (Interim period) एव सक्रमणकाल के लिए केवल कुछ प्रशामक उपायों (palliative steps) का सुझाव दिया। इसीलिए बाद के अर्थशास्त्री उनके सुझावो से सतुष्ट नही हुए और वे निम्नाकित आलोचनाओ के पात्र बने—

(i) ये उपाय अव्यावहारिक एव अवैज्ञानिक है। विशेषत मशीनीकरण एव आविष्कारो पर रोक से समाज की तकनीकी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध हो जायेगा जिसके गम्भीर परिणाम निकलेगे।

(ii) ये उपाय तत्कालीन बुराइयो के निवारण के लिए एकदम अपर्याप्त थे।

(iii) वे अपने सुझावो को लागू करने के तरीके नही समझा पाये। अत उनके सुझाव केवल सैद्धान्तिक थे।

सिसमण्डी का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Sismondi)

सिसमण्डी एक बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी थे। वे एक साथ उच्च कोटि के इतिहासकार, अर्थशास्त्री, लेखक, विचारक, नीतिशास्त्री, समाजसुधारक एव महान मानवतावादी थे। उन्होने अर्थशास्त्र की तुलना मे इतिहास एव सामाजिक अर्थशास्त्र मे अधिक रुचि दिखायी और वास्तव मे वे उसी मे मौलिक रहे। इसीलिए प्रो हैने ने कहा है कि, 'वे मूलत एक इतिहासकार थे जो बाद मे समाज सुधारक बन गये और उनका अर्थशास्त्र नैतिक आदर्शों पर आधारित था।'

प्रो हैने के उपर्युक्त कथन की पुष्टि 'श्रमिक हितों' के बारे में उनके

दृष्टिकोण से हो जाती है । उन्होने श्रमिक हितो पर हो रहे कुठाराघातो की विशद् व्याख्या की और उन्हे सम्पत्ति पर मालिकाना हक प्रदान करने का सुझाव दिया । किन्तु, वे उन उपायो की भलीभाति व्याख्या नही कर पाये जिनके द्वारा वे श्रमिको को सम्पत्ति का मालिक बनाना चाहते थे । अत वे **कोरे सिद्धान्तवादी एव आदर्शवादी** ही सिद्ध हो सके ।

आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनके मूल्याकन का एक प्रमुख आधार प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के एक आलोचक एव प्रशसक के रूप मे किया जा रहा है । उन्होने तथ्यो एव तर्कों के आधार पर प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अनेक विचारो का खोखलापन उजागर कर उसके प्रथम आलोचक होने का सम्मान पाया । किन्तु, वे कोरे आलोचक नही थे । उन्होने केवल आलोचना के लिए ही आलोचना नही की । इसीलिए जहा प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के विचार उनके मन भाये वहा उनकी भूरि–भूरि प्रशसा करने से भी नही चूके । अपने इस रूप मे वे **एक उच्चकोटि के समालोचक थे ।**

यद्यपि, उन पर आदर्शवादी होने का आक्षेप लगाया जाता है क्योकि वे एक नीतिशास्त्री थे जिन्होने **आर्थिक मानव के स्थान पर 'नैतिक मानव' की कल्पना** की । किन्तु, वे एक **व्यावहारिक विचारक भी थे** । इसी हैसियत मे उन्होने यह कहा कि 'धन' तभी धन है जब उसका समाज मे न्यायोचित वितरण हो और इसलिए अर्थशास्त्र का सम्बन्ध केवल उस धन से है जो मनुष्य के लिए है ।

वे सदैव तर्क (reason) एव भावनाओ (sentiments) के बीच फसे रहे । एक ओर तार्किक आधार पर उन्होने पूजीवाद, पूजीपतियो एव धनवानो का समर्थन किया जबकि दूसरी ओर भावनाओ के वशीभूत हो वे धन एव सम्पदा के न्यायोचित वितरण का राग अलापते व आर्थिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण का समर्थन करते रहे । उन्होने कहा कि एक पूजीपति जो केवल अपना हित सोचता है सदैव राष्ट्र के लिए कार्य करता है । इसी प्रकार उन्होने समाज की प्रगति के लिए धनवानो की उपस्थिति को आवश्यक बताया और कहा कि इसके अभाव मे अज्ञानता, स्वार्थपरायणता एव बर्बरता का साम्राज्य रहता है और तो और उन्होने श्रमिको की शादी का लाइसेस ही उद्योगपतियो के हाथो सुपुर्द कर दिया । तर्क एव भावनाओ के बीच फसे रहने के कारण ही उनके विश्लेषणात्मक तर्क बहुत अधिक स्पष्ट एव निश्चित नही रहे । फलत उन पर **विरोधाभासों का शिकार** बने रहने का आक्षेप लगाया जाता है और कहा जाता है कि उनके विश्लेषण एव विचारो मे अनेक **अस्पष्टतायें एवं विसंगतियां** है और उनके अधिकाश सुझाव बहुत ही सामान्य एव चालू किस्म के है **जिनमें गहरे चिंतन एवं विद्वता का नितांत अभाव है ।**

उन्हे **माल्यस से भी अधिक निराशावादी विचारक** कहा जाता है । उन्होने एक ऐसे विश्व का चित्रण किया जो भूख, शोषण एव कष्टो का शिकार है ।

उन्होने श्रम-विभाजन, मशीनीकरण एव आविष्कारो को इसका उत्तरदायी माना। वे उपभोग-वृद्धि एव उसकी विविधता पर कोई विचार नही कर पाये और अति-उत्पादन की स्थिति को बहुत सामान्य एव अति कष्टदायी मान बैठे। यदि वे निराशावाद के घेरे से बाहर निकल पाते तो सम्भवत उनके निष्कर्ष एकदम भिन्न होते और वे मानव जाति के अधिक कर्मठ हितैषी सिद्ध होते।

किन्तु, इसका यह आशय नही है कि वे मानवता के विरोधी थे। वस्तुत **वे मानवता के समर्थक थे।** उन्होने केवल उत्पादन वृद्धि के लिए प्रतिस्पर्धा का समर्थन नही किया, बल्कि यह कहा कि जब एक उपभोक्ता के रूप मे प्रतिस्पर्धा हमसे अपने उपहार वापस छीन लेती है तो ऐसी प्रतिस्पर्धा से बचे रहना ही श्रेयस्कर है। दूसरे शब्दो मे, वे मानव जीवन के कष्टो को न्यूनतम करना चाहते थे। इस आधार पर उनके एव महात्मा गाधी के चितन मे दो प्रमुख समानताये देखी जाती है– (i) दोनो ने ही उत्पादन के क्षेत्र मे अवाछनीय मशीनीकरण का विरोध किया और (ii) दोनो ही मानव कल्याण मे वृद्धि के उपायो का सुझाव देते रहे। उनके **आर्थिक विचार उस समय की एक माग थे।** यद्यपि, आर्थिक सकट के कारणो, मशीनो के प्रयोग और आविष्कारो के सम्बन्ध मे उनके विचार अतर्कसगत थे किन्तु, उनके द्वारा प्रतिपादित ये सभी सिद्धान्त एव विचार उस समय की माग थे। उन्होने ऐसे समय एव उन सिद्धान्तो का विरोध किया जब और जिनका विरोध करना आवश्यक हो गया था। अपने इस रूप मे उन्होने **तत्कालीन समाज को सही राह दिखलायी।** उदाहरणार्थ, जब स्मिथ के विचारो से समाज मे धन की महत्ता बहुत बढ़ गयी और वह मनुष्य पर हावी होने लगा तो सिसमण्डी ने उसका विरोध कर समाज को सचेत कर दिया।

किन्तु, वे **एक अच्छी आर्थिक प्रणाली का चुनाव नहीं कर सके।** उत्पादन कुशलता के आधार पर उन्होने पूजीवादी व्यवस्था का समर्थन किया। जबकि वर्ग सघर्ष एव सकटो की सम्भावनाओ की प्रबलता के कारण उन्होने इसकी कटु आलोचना की। किन्तु 'निजी हित' एव 'निजी सम्पत्ति', जो पूजीवाद क प्रेरणा स्रोत है, का वे सदैव गुणगान करते रहे और समाजवाद को भूल गये। फिर भी यह सही है कि उन्होने सामतवाद एव आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण का लगातार विरोध किया जिसके बदले उन्हे भरपूर सम्मान मिला है।

उनके मूल्याकन का एक आधार यह भी है कि वे एक समाजवादी थे अथवा नही ? अब हम सक्षेप मे, इस पर विचार करेगे।

क्या सिसमंडी एक समाजवादी थे ? (Was Sismondi a Socialist?)

यह वाद-विवाद का विषय है कि सिसमण्डी एक समाजवादी थे अथवा नही ? अब हम, सक्षेप मे, इन दोनो मतो पर विचार करेगे–

(A) सिसमण्डी एक समाजवादी थे (Sismondi was a socialist)- प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विचारो की आलोचना सर्वप्रथम सिसमण्डी ने ही की थी (ज्ञातव्य है कि इस सम्प्रदाय के सभी विचारक पूजीवाद के कट्टर समर्थक थे), अत अर्थशास्त्रियो का एक वर्ग उन्हे समाजवादी मानता है। इसके समर्थन मे निम्नाकित तर्क दिये जा सकते है—

(i) सिसमण्डी के आर्थिक चितन का सबसे ज्यादा एव गहरा प्रभाव समाजवादी विचारको एव लेखको पर ही पड़ा है। 19वी सदी के उत्तरार्द्ध मे इन्होने उनके विचारो का भरपूर प्रयोग करते हुए समाजवाद को विकसित एव मजबूत किया था। यही नही उनके विचार बाद के महान समाजवादी लेखको से भी काफी मिलते है। उदाहरणार्थ, ल्युई ब्लाँक (प्रतिस्पर्धा के विरुद्ध दिये गये तर्क), प्रोधो (वैयक्तिक सम्पत्ति विषयक विचार, यथा—वैयक्तिक सम्पत्ति एक चोरी है और अन्यायपूर्ण है) रोडबर्टस (आर्थिक सकट का सिद्धान्त तथा यह सामान्यीकरण कि सामाजिक प्रगति का लाभ मुख्यत. अमीरो को ही मिलता है) तथा मार्क्स (वर्ग—सघर्ष, आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण, पूजीवादी शोषण आदि—आदि) आदि लेखक अपने—अपने विचारो के लिए उनके ऋणी है। अत उनकी गणना प्रारम्भिक समाजवादियो मे की जाती है।

(ii) उनके समाज सुधार अर्थात् सुधार योजनाये समाजवादियो से मिलती है।

(iii) 'सम्पूर्ण समाज अन्तत दो वर्गों—गरीब (श्रमिक) एव अमीर (पूजीपति उत्पादनकर्त्ता) मे विभाजित हो जाता है और अमीर गरीबो का शोषण करते है' की व्याख्या सर्वप्रथम सिसमण्डी ने ही की जिसे समाजवादियो ने ज्यो का त्यो स्वीकार कर लिया था।

(iv) समाजवादियो की भाति उन्होने भी आर्थिक क्रियाओ के नियमन, नियत्रण और सचालन मे राजकीय हस्तक्षेप की भूमिका की महत्ता स्वीकार कर राज्य के कार्य—क्षेत्र मे वृद्धि का सुझाव दिया।

(v) उन्होने समाजवादियो की भाति श्रम की महत्ता स्वीकार की और श्रमिको के हितो का समर्थन करते हुए उनकी सुरक्षा के लिए राज्य को उत्तरदायी बताया।

(vi) उन्हे इस आधार पर भी प्रारम्भिक समाजवादी माना जा सकता है कि उन्होने निर्बाधावाद एव मुक्त व्यापार की नीति का विरोध किया।

(vii) उन्होने अनेक श्रमकल्याण कार्यों एव योजनाओ, यथा—बाल—श्रम के प्रयोग पर रोक, रविवार की छुट्टी, काम के घण्टे घटाना, नियोक्ताओ द्वारा समाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करना आदि का समर्थन किया और फ्रास मे फैक्टरी अधिनियम लागू करने की आवाज सर्वप्रथमम उठायी।

(B) सिसमण्डी एक समाजवादी नहीं थे (Sismondi was not a Socialist)- वे कभी समाजवाद तक नही पहुचे। उन्होने जो कुछ सोचा, कहा व लिखा वह

उदारवाद एव पूजीवाद के विरुद्ध था न कि समाजवाद के पक्ष मे। अत जीड एव रिस्ट तथा अनेक अन्य विचारक एव अर्थशास्त्री उन्हे समाजवादी नही मानते। इनके समर्थन मे निम्नाकित तर्क दिये जा सकते है—

(i) उन्हे समाजवादी मान लेने पर वे केवल समाजवादी सम्प्रदाय से ही जुड जायेगे जबकि, वास्तव मे, उनके आर्थिक चिंतन पर अन्य अनेक सम्प्रदायो के आधारभूत आर्थिक विचार भी आधारित है।

(ii) एक उन्मुक्त एव स्वतत्र विचारक होने के कारण वे स्वय कभी किसी विचारधार विशेष से नहीं जुड़े।

(iii) उन्होने समाजवादियो की भाति न कभी क्राति का बिगुल बजाया और न कभी क्रातिकारी परिवर्तनो का सुझाव ही दिया। वे तो धीरे-धीरे एव बिना किसी को हानि पहुचाये परिवर्तन लाने के समर्थक थे।

(iv) उन्हे, पूजीवाद, पूजीपति एव अमीरो की महत्ता स्वीकार करने के कारण, समाजवादी नही कहा जा सकता।

(v) उन्होने न केवल पूजी एव भूमि से प्राप्त होने वाली आयो (क्रमश ब्याज एव लगान) की महत्ता स्वीकार की बल्कि उनमे उत्तरोत्तर वृद्धि, सुरक्षा एव गारटी का भी समर्थन किया था।

(vi) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के प्रति सिसमण्डी की निष्ठा जीवन पर्यन्त बनी रही, अत. वे कभी भी उससे अपना बौद्धिक नाता नही तोड पाये। फलत उन्हे समाजवादी कहना एक बड़ी भूल होगी।

(vii) वे सदैव वैयक्तिक स्वतत्रता एव निजी हित के समर्थक बने रहे जबकि समाजवाद मे इन दोनो के लिए कोई स्थान नही है।

(viii) वे निजी सम्पत्ति (जो समाजवादियो को फूटी आँख भी अच्छी नहीं लगती) के कभी विरोधी नही रहे बल्कि केवल उनका कुछेक हाथो मे केन्द्रीकरण का विरोध करते रहे। इसीलिए उन्होने कहा कि, "मै निर्माताओ को लाखो के मालिक किसी एक व्यक्ति के अधीन नही बल्कि औसत साधनो वाले अधिसख्यक पूजीपतियो के हाथो मे देखना चाहता हूँ।"

(ix) उन्होने श्रमिको के हितो का समर्थन तो किया, किन्तु श्रमिक वर्ग के रख-रखाव के सामाजिक दायित्व को कभी स्वीकार नहीं किया।

(x) उन्होने अपने समकालीन समाजवादी लेखको यथा-रोबर्ट ओवन, थाम्पसन एव फुरियर आदि की समाजवादी योजनाओ से कभी सहमति नही रखी और उनकी कटु आलोचना की।

(xi) वे न केवल साम्यवादी व्यवस्था के कट्टर विरोधी थे अपितु समाजवादी केन्द्रीय नियंत्रण, जिसमे वैयक्तिक स्वतत्रता पर अकुश लग जाता है, के भी आलोचक थे।

(xii) उन्होने वैयक्तिक आय मे वृद्धि पर रोक लगाने का कभी समर्थन नहीं किया।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है उनके समाजवादी होने के पक्ष मे दिये गये तर्कों की तुलना मे वे तर्क अधिक ठोस है जिनके आधार पर उन्हे एक समाजवादी मानने से इन्कार किया जाता है। अत. प्रो. जीड एव रिस्ट का यह कथन सही है कि "सिसमण्डी, जो स्वय एक समाजवादी नही थे, को समाजवादियो ने ज्यादा एव अधिक सावधानी से पढ़ा है और उन पर उनका प्रभाव सबसे अधिक दिखायी दिया है।"[10]

आर्थिक विचारों के इतिहास में सिसमण्डी का स्थान

(Place of Sismondi in the History of Economic Thought)-

आर्थिक विचारो के इतिहास मे सिसमण्डी का अपना विशिष्ट स्थान है जिसकी निम्नांकित तथ्यो एव तर्कों की सहायता से पुष्टि की जा सकती है।

(1) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के प्रथम आलोचक (Maidan Critic of Classical Tradition) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय, जिसे स्वय सिसमण्डी रूढ़िवादी सम्प्रदाय (orthodox tradition) कहा, के सबसे पहले आलोचक के रूप मे उनका नाम आर्थिक विचारो के इतिहास मे सदैव अमर रहेगा।16 साल तक (1803–1819) इतिहास के अध्ययन से उनके दृष्टिकोण मे भारी बदलाव आ गया और वे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के समर्थक से आलोचक बन गये। उन्होने मुख्यत. तीन मुद्दो पर उनका विरोध किया– (i) उत्पादन पर आवश्यकता से अधिक बल देना, (ii) हितो मे सामजस्य और (iii) निर्बाधावाद की नीति। उनके विचारो की व्यावहारिक महत्ता पर चिन्ता व्यक्त करते हुए उन्होने उनमे सुधारो का सुझाव दिया। उन्होने अपने अध्ययन एव अनुभव के आधार पर यह भी सिद्ध किया कि प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का आर्थिक चिंतन न केवल दोषपूर्ण था अपितु उसके तत्कालीन एव बाद के समाज एव आर्थिक चिंतन पर अनेक घातक एव दूरगामी प्रभाव पड़े। उदाहरण के लिए, उनके धन एव 'आर्थिक मानव' विषयक विचारो ने मानव जीवन का लक्ष्य सकीर्ण बना दिया और मनुष्य केवल धन कमाने की एक मशीन मात्र बन गया। सिसमण्डी ने इसे स्वीकार नही किया और मनुष्य के भौतिक सुख मे वृद्धि को अर्थशास्त्र एव मानव जीवन का लक्ष्य बना दिया।

(2) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के प्रमुख प्रशंसक (A great admirer of Classical Tradition)- सिसमण्डी निपट आलोचक नही थे। उन्हे जहाँ कहीं एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो के विचारो की प्रशसा करने का अवसर मिला, उन्होने उनका खूब गुण–गान किया। इसीलिए **प्रो. एरिक रोल** ने लिखा है कि,

---

10 "Sismondi, though not himself a socialist has been much read and carefully studied by socialists It is among them that his influence is most marked" -Gide & Rist

''सिसमण्डी ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय से अपना नाता पूरी तरह कभी नही तोड़ा। उनके मन मे स्मिथ के प्रति सदैव श्रद्धा रही और उन्होने सदैव प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आधारभूत सैद्धान्तिक ढाचे से सम्बन्ध बनाये रखने का दावा किया।'' वे फ्रास को एडम स्मिथ के आर्थिक चिंतन का ठीक वैसा ही लाभ दिलाना चाहते थे जैसा इग्लैण्ड को मिल रहा था।

(3) 19वीं सदी के आर्थिक एवं सामाजिक विचारों का स्रोत (A Source of economic and social ideas of 19th Century)- सिसमण्डी के चिंतन एव लेखन मे 19वी सदी के बहुत से आर्थिक एव सामाजिक विचारो एव सिद्धान्तो का स्रोत मिलता है। उनके चिंतन का तात्कालिक प्रभाव नगण्य था तथापि औद्योगिक–पूजीवादी–व्यवस्था के आधारभूत सघर्षों एव अन्य दोषो को सुनिश्चित कर उन्होने मुक्त–कीमत–तत्र की कार्य–प्रणाली का विरोध किया जो वस्तुत. पूजीवाद की सभी बुराइयो की जड़ है। इसी आधार पर आगे पूजीवाद एव समाजवाद के बीच वैचारिक युद्ध लडा गया जिसकी पृष्ठभूमि एव रूपरेखा स्वय सिसमण्डी ने तय की थी। इसीलिए जीड एव रिस्ट उनकी गणना उन अर्थशास्त्रियो मे करते है 'जिनके चिंतन का गहरा प्रभाव 19वी सदी मे कभी कम नही हुआ।'

(4) अनेक सम्प्रदायों के पूर्वगामी (Fore-runner of many schools of thought)- वस्तुत. सिसमण्डी के बाद का कोई सम्प्रदाय एव विचारक ऐसा नही है जिसके चिंतन पर उनके विचारो का प्रभाव न पड़ा हो। सक्षेप मे, निम्नाकित सम्प्रदायो पर उनके प्रभाव को आसानी से देखा जा सकता है–

(i) समाजवादी सम्प्रदाय (Social school of thought)- सिसमण्डी के विचार प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की तुलना मे समाजवादियो से अधिक मेल खाते है। उन्होने ही बताया था कि वर्तमान समाज सर्वहारा वर्ग (श्रमिक) की लागत पर जी रहा है। उन्होंने औद्योगिक इतिहास को दासता, सामतवाद एव पूजीवाद मे विभाजित किया और इस विभाजन के आधार पर वे कार्ल मार्क्स के अग्रदूत कहलाये। आर्थिक क्रियाओ मे राजकीय हस्तक्षेप का समर्थन कर उन्होने राजकीय समाजवाद (State Socialism) की नीव रखी। उनके सामाजिक विचारो ने रोबर्ट ओवन जैसे समाज सुधारको को प्रभावित किया। सक्षेप मे, समाजवाद के सभी प्रचलित रूप किसी न किसी रूप मे सिसमण्डी के ऋणी रहे है।

(ii) ऐतिहासिक सम्प्रदाय (Historical school of Thought)- ऐतिहासिक सम्प्रदाय वह सम्प्रदाय है जिसने अर्थशास्त्र के अध्ययन मे उस ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का प्रयोग किया जिसका समर्थन एव विकास सिसमण्डी ने किया था। इस सम्प्रदाय के प्रमुख विचारक रोशर, कार्ल नीज, हिल्डीब्रैण्ड, श्मोलर एव क्लिफलेसली आदि है।

(iii) **नव-प्रतिष्ठित (Neo-Classical school of Thought)**- इस सम्प्रदाय के अग्रणी विचारक प्रो अल्फ्रेड मार्शल है, जिन्होने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के चितन के दोषो का निवारण कर उन्हे सशोधित रूप मे प्रस्तुत किया। इनके चितन पर सिसमण्डी के विचारो का गहरा प्रभाव पडा। इसीलिए सन् 1890 मे उन्होने अर्थशास्त्र की एक नई एव कल्याण प्रधान परिभाषा दी और कहा कि 'धन' मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य 'धन' के लिये। दूसरे शब्दो मे, उन्होने मानव कल्याण को एक लक्ष्य तथा धन को उस लक्ष्य की प्राप्ति का एक साधन बताया।

(iv) **संस्थागत सम्प्रदाय (Institutional school of Thought)**- इस सम्प्रदाय के प्रमुख विचारक वेब्लेन एव मिचैल है। इनके विचारो पर भी सिसमण्डी के चितन का गहरा प्रभाव था और यदि सिसमण्डी को उस सम्प्रदाय का सस्थापक न माना जाये तो भी अग्रणी अवश्य कहा जा सकता है।

(v) **कल्याणकारी अर्थशास्त्र (Welfare Economics)**- इसके सूत्रधार प्रो पीगू थे जिनके विचारो पर सिसमण्डी के चिंतन का गहरा प्रभाव पड़ा था।

(vi) **अन्य**- कार्लायल, रस्किन, डिकिन्सन आदि दार्शनिको एवं समाज-सुधारको के चितन को भी सिसमण्डी ने प्रभावित किया था। ये सिसमण्डी के साथ प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सह-आलोचक थे।

(5) राजकीय हस्तक्षेप के प्रथम समर्थक (An Apostle of State Intervention)

सिसमण्डी को आर्थिक जीवन मे राजकीय हस्तक्षेप का समर्थन करने वाले पहले विचारक का सम्मान दिया जाता है। इसी आधार पर वे समष्टि अर्थशास्त्र (macro economics) की नीव रखने वाले एव प्रो जे. एम. कीन्स को प्रेरणा देने वाले विचारक माने गये।

(6) एक मौलिक एवं व्यावहारिक विचारक (An Original and Practical Thinker)

सिसमण्डी एक मौलिक एव व्यावहारिक विचारक थे। उन्होने किसी पूर्व लेखक के विचारो का अन्धानुकरण नही किया। वे न किसी सम्प्रदाय मे सम्मिलित हुए और न उन्होने अपना पृथक् सम्प्रदाय ही बनाया। आर्थिक सकट, अति-उत्पादन एव मशीनीकरण के बारे मे उनके विचार व्यावहारिक अनुभव पर आधारित थे। इसीलिए उनके विचार सत्य के बहुत नजदीक थे। उन्होने कल्पना लोक मे विचरण कर बौद्धिक खिलौनो का निर्माण नही किया। वे सामान्यतया पूर्वाग्रहो से ग्रसित नही रहे।

(7) सुधारों के समर्थक (An Advocate of Reforms)

एक इतिहासकार अर्थशास्त्री के रूप मे वे सुधारो के समर्थक थे। सामान्यजन के आर्थिक कल्याण पर पड़ने वाले प्रभावो के परिप्रेक्ष्य में वे

तत्काल सुधार चाहते थे । इसीलिए वे सामाजिक एव राजनीतिक संस्थाओ की स्थापना के प्रबल समर्थक थे ।

(8) एक महान अनुसंधानकर्त्ता (A Great Researcher)-

सिसमण्डी एक महान अनुसधानकर्त्ता थे । 1803–1819 के बीच उन्होने सार्थक ऐतिहासिक अनुसधान किये और आगमन प्रणाली को लोकप्रिय बनाया । इससे उनकी अभिरुचि अर्थशास्त्र मे जागृत हुई ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सिसमण्डी के आर्थिक चितन के दूरगामी प्रभाव पडे,जिनके लिए वे आर्थिक विचारो के इतिहास मे सदैव याद किये जाते रहेगे । **प्रो. अलेक्जेण्डर ग्रे** के मतानुसार, 'यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नही होगा कि सिसमण्डी का कोई भी मौलिक सिद्धान्त समय के सामने नही टिक सका फिर भी वे भुलाने योग्य नही है ।'' **प्रो. जीड** एव **रिष्ट** के शब्दो मे, ''समकालीन अर्थशास्त्रियो पर उनका प्रभाव बहुत कम रहा ।'' किन्तु, जैसा कि **एरिक रोल** ने कहा है ''उनकी वर्ग–सघर्ष विषयक व्यवस्था उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कार्ल मार्क्स की व्याख्या ।'' **न्यूमैन** आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान निर्धारित करने मे असफल रहे और कहा कि, ''अर्थशास्त्रियो के बीच सिसमण्डी का स्थान निश्चित करना दुष्कर है क्योकि प्रारम्भ मे जहा वे स्मिथ के शिष्य थे वहा बाद मे प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आलोचक बन गये । यद्यपि उन्होने स्वय को कभी समाजवादी स्वीकार नही किया किन्तु, फिर भी, वे औद्योगिक समाज की बुराइयो की क्रमबद्ध आलोचना करने वाले पहले अर्थशास्त्री थे ।'' अत. आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका नाम भुलाया नही जा सकता । यह एक चित्ताकर्षक तथ्य है कि 19वी सदी के अधिकाश महत्त्वपूर्ण आदोलनो को सिसमण्डी के चिन्तन से बल मिला ।

प्रश्न

1. **सिसमण्डी के प्रमुख आर्थिक विचारों का संक्षिप्त विवेचन कीजिये ।**

   संकेत : सक्षेप मे सिसमण्डी का परिचय देकर क्रमश उनके विभिन्न विचारो का उल्लेख करे ।

2. **क्या आप सहमत हैं कि 'सिसमण्डी एक समाजवादी थे' ? कारण सहित उत्तर दीजिये ।**

   संकेत : सिसमडी एव उनके आर्थिक विचारो का अति सक्षिप्त परिचय देकर उनके सामाजवादी होने एव न होने के समर्थन मे दिये गये तर्कों की विस्तृत व्याख्या देकर अत मे निष्कर्ष दे कि उन्होने उस सीमा तक प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सिद्धान्तो को अस्वीकार नही किया कि उन्हे

समाजवादी कहा जा सके ।

3. **सिसमण्डी के आर्थिक विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये और आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान निर्धारित कीजिये ।**

संकेत : प्रारम्भ मे उनके सिद्धान्तो की अति सक्षिप्त व्याख्या करे और तत्पश्चात् उनका आलोचनात्मक मूल्याकन कर बताये कि किस प्रकार एव कहा उनका स्थान आर्थिक विचारो के इतिहास मे सुरक्षित है ।

6

समाजवादी सम्प्रदाय II: रोबर्ट ओवन

(The Socialist School II : Robert Owen)

"क्या यह निष्कर्ष देना बहुत स्वाभाविक नहीं है कि ये (श्रमिक) अति नाजुक एवं जटिल यंत्र भी अपनी ताकत एवं कार्यदक्षता में वृद्धि कर लेंगे और बहुत मितव्ययी साबित होंगे, यदि उन्हें अच्छी स्थिति में रखा जाये और उनके साथ दया का व्यवहार किया जाये।" [1] ओवन

परिचय : एक साहचर्य समाजवादी एवं आँग्ल समाजवाद के जनक
(Introduction : An Associative Socialist and Father of English Socialism)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे 19वी सदी समाजवादी विचारधारा के जन्म एव विकास की सदी है। इसमे समाजवाद के जिन रूपो का जन्म एव विकास हुआ, उनमे एक साहचर्य समाजवाद है। यह समाजवाद का वह रूप है जिसमे उसके समर्थको ने सामाजार्थिक ढाचे मे आमूलचूल परिवर्तन किये बिना, केवल स्वैच्छिक सस्थाओ मे सुधार के जरिये, पूजीवाद के तथाकथित गम्भीर दोषो को दूर करने के उपायो का सुझाव दिया। किन्तु, उनके अधिकाश सुझाव अव्यावहारिक थे; अतः उन्हे अपने उद्देश्य मे अपेक्षित सफलता तो दूर, आशिक सफलता भी नही मिली। इसीलिए साहचर्य समाजवाद को 'आदर्श' अथवा 'काल्पनिक' (utopion) समाजवाद भी कहा जाता है। इग्लैण्ड मे इसका प्रचार–प्रसार रोबर्ट ओवन ने किया। इसीलिए उन्हे एक साहचर्य समाजवादी एव 'आँग्ल समाजवाद का जनक' कहा जाता है। वे माल्थस, रिकार्डो, सिसमण्डी आदि के समकालीन थे।

---

1 "Is it not quite natural to conclude that these infinitely more delicate and complex mechanisms will also increase in force and efficiency and will be really much more economical if they are kept in good working condition and treated with a certain measure of kindness?" Owen R

संक्षिप्त परिचय
(Brief Life Sketch)

रोबर्ट ओवन का जन्म 14 मई सन् 1771 को इग्लैण्ड मे न्यू टाऊन (New town) नामक स्थान पर उत्तरी वेल्स मे एक गरीब शिल्पकार (saddler and iron monger) परिवार मे हुआ। अपने परिवार की कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण 9 वर्ष की अल्पायु मे ही उनकी पढ़ाई–लिखाई छूट गयी। किन्तु, स्वाध्याय मे उनकी रुचि बनी रही और इतिहास, जीवनियो एव यात्रा–वृत्तान्तो के माध्यम से उन्होने अपनी ज्ञान–पिपासा स्वत ही शान्त की। अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए उन्होने छोटी उम्र मे ही एक वस्त्र विक्रेता के यहा, नौसीखिये के रूप मे कार्य करना आरम्भ कर दिया और थोड़े ही समय पश्चात् उसने उन्हे लिपिक बना दिया। किन्तु, ओवन यहा अधिक समय तक नही रुक सके और एक कताई मिल मे नौकरी करने लगे। 18 वर्ष की आयु मे उन्होने अपने बडे भाई से ऋण लेकर साझे मे मानचेस्टर मे कपड़ा मिल मे काम आने वाली मशीनो के निर्माण का कारखाना (Master Spinner) शुरू किया और अपना कारोबार बढ़ाने मे जुट गये। 25 वर्ष की उम्र मे अपने साझेदारो के साथ मिलकर M/S Charlton Twist Co ,Manchester की स्थापना की। इसी समय प्रसिद्ध उद्योगपति ड्रिंकवाटर ने उन्हे अपने यहा प्रबन्धक नियुक्त कर अपने व्यापार का एक चौथाई हिस्सेदार बना लिया। 30 वर्ष की आयु मे उन्होने Clyde Falls के निकट स्थित न्यू लानार्क (New Lanark) मिल खरीद ली। यह घटना उनके औद्योगिक एव व्यावसायिक जीवन का चरमोत्कर्ष थी। इस कपड़ा मिल मे लगभग 2000 श्रमिक काम करते थे। यही मिल उनके विचारो की सृजन स्थली, प्रयोगशाला एव प्रसारण–स्रोत बनी। सन् 1815 तक वे इसका सचालन करते रहे। यह उनके व्यस्त एव सक्रिय जीवन का प्रथम चरण था।

सन् 1815 से 1834 तक की अवधि उनके जीवन का दूसरा चरण थी। अपने जीवन के इस भाग मे उन्होने तत्कालीन आर्थिक प्रणाली मे व्याप्त गम्भीर दोष दूर करने के व्यावहारिक कदम उठाये। उन्होने अपना कारोबार बंद कर दिया एव सामुदायिक प्रयोगो के लिए योजनाये बनायी। इन्हे कार्यरूप मे परिणित करने के लिए उन्होने सन् 1825 मे New Harmony Colony, Indiana (U S A.) की स्थापना की। 30 हजार एकड़ भूमि खरीदकर अमेरिका मे बसायी गयी इस सहकारी बस्ती को वे सभी सामाजार्थिक बुराइयो से दूर रखकर एक आदर्श, स्वावलम्बी एव स्वशासी इकाई का रूप देना चाहते थे, किन्तु उन्हे अपने उद्देश्यो मे सफलता नही मिली। इस सामुदायिक बस्ती की स्थापना मे वे अपना 80% धन खो बैठे और उनके विचारो की काफी मजाक उड़ायी गयी। किन्तु, वे हतोत्साहित नही हुए। अपनी धुन के पक्के ओवन ने

अमरीका से वापस लौट कर इग्लैण्ड मे Orbiston (Scotland) एव Tytherly (Hampshire) मे दो वैसी ही सामुदायिक बस्तिया स्थापित की । इनकी स्थापना मे उन्होने अपना शेष बचा सारा धन भी लगा दिया, किन्तु, उनका यह परीक्षण यहा भी असफल ही रहा, यद्यपि, अतिम बस्ती कुछ वर्षों तक आबाद रही । सन् 1832 मे उन्होने 'ग्राण्ड नेशनल कन्सोलिडेटेड लेबर यूनियन' (Grand National Consolidated Labour Union GNCLU) एव 'नेशनल इक्वीटेबल लेबर एक्सचेज' (National Equitable Labour Exchange NELE) की स्थापना की । इनमे NELE का उद्देश्य सामान्य व्यापारिक व्यवहारो मे मुद्रा का प्रयोग समाप्त करना था । उनके इन सस्थाओ की स्थापना के व्यावहारिक कदम भी अन्तत अव्यावहारिक ही सिद्ध हुए ।

अपने जीवन के तीसरे चरण मे, जो सन् 1835 के बाद शुरू हुआ, उन्होने कारखानो मे सुधार सम्बन्धी अपने विचार प्रचारित किये । यद्यपि, इनकी सफलता मे स्वय उन्हे भी शका थी तथापि वे हताश नही हुए और सन् 1850 तक इस कार्य मे पूरे मनोयोग से जुटे रहे ।

अपने जीवन के चौथे एव अतिम चरण मे वे अधिक सक्रिय नही रहे और शान्तिपूर्ण जीवन जीते रहे । अपने व्यस्त एव सक्रिय जीवन के बाद लगभग 88 वर्ष की दीर्घायु मे सन् 1858 मे उनका निधन हो गया ।

रोबर्ट ओवन को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Influencing Robert Owen)

रोबर्ट ओवन के आर्थिक चिंतन पर मुख्यत निम्नाकित घटको का प्रभाव पड़ा –

(1) नैपोलियन के युद्ध (Napoleonic Wars)

नैपोलियन के युद्धो, उनके उतर प्रभावो एव इन दोनो की आशकाओ ने रोबर्ट ओवन के आर्थिक चितन को काफी प्रभावित किया, क्योकि, तत्कालीन सामाजार्थिक व्यवस्था मे जो भी दोष थे, उन्हे गम्भीर बनाने मे नैपोलिय के युद्धो का हाथ था ।

(2) औद्योगिक क्रांति के दुष्परिणाम (Evil effects of Industrial Revolution)

औद्योगिक क्राति के साथ ही इसके दुष्परिणाम सामने आने लग गये थे और जैसे–जैसे वह आगे बढ़ती गई उसके दुष्परिणामो की गम्भीरता भी बढ़ती गई । इसने सम्पूर्ण समाज को मात्र दो वर्गों–गरीब एव अमीर मे बॉट कर मुट्ठीभर अमीर पूँजीपतियो को अधिसख्यक गरीब श्रमिको के शोषण की सुविधा प्रदान करदी । ओवन ने गरीब सूती कपड़ा मिलो के श्रमिको की दुर्दशा बहुत निकट से देखी । जब उन्होने पाच–छ साल के बच्चो को कारखानो की चिमनियो मे घुसते, (रोटी–रोजी कमाने के लिए) श्रमिको को

लगातार बिना विश्राम के 17–18 घण्टे तक कार्य करते और महिला श्रमिको का शोषण होते देखा तो वे बहुत दु खी हुए और उनका मन उन उपायो की खोज मे लग गया जिनसे उनके जीवन को सुखमय बनाया जा सके ।

(3) पूर्ववर्ती एवं समकालीन विचारक (His Predecessors and Contemporary Thinkers)

पूर्ववर्ती विचारो मे एडम स्मिथ के विचारो का रोबर्ट ओवन पर काफी गहरा प्रभाव पडा । वे उनके आशावाद एव अहस्तक्षेप की नीति के प्रबल समर्थक बन गये और नये समाज की स्थापना की कल्पना मे इतने लीन हो गये कि वास्तविकता को भी भूल गये । सिसमण्डी, सेट साइमन, माल्थस, रिकार्डो और मिल आदि अनेक समकालीन विचारको के आर्थिक चितन का भी उन पर गहरा प्रभाव पड़ा था ।

(4) कुछ ऐतिहासिक घटनायें (Some Historical Events)

उसी समय घटित कुछ महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओ का भी रोबर्ट ओवन के विचारो पर गहरा प्रभाव पड़ा । सन् 1776 मे अमरीका का स्वतत्र होना और सन् 1789 मे फ्रास मे राज्य क्राति ऐसी ही ऐतिहासिक घटनाये है । अमेरिकी स्वतत्रता सग्राम उपनिवेशवाद एव आर्थिक शोषण के खिलाफ एक विजय थी जबकि फ्रास ने स्वतत्रता, समानता और भाईचारे का सदेश दिया । इन सभी घटको ने ओवन को एक निश्चित दिशा मे सोचने के लिए प्रेरित कर दिया था ।

(5) पारिवारिक पृष्ठभमि (Family Background)

ओवन एक गरीब शिल्पकार के बेटे थे । गरीबी ने न केवल उन्हे पढ़ने से रोक दिया बल्कि छोटी उम्र मे ही अपने परिवार के भरणपोषण के लिए काम करने को भी विवश कर दिया । उन्होने मेहनत और उसके बदले मिलने वाले प्रतिफल के अन्तर को अपनी आखो देखा और पाया कि औद्योगिक समाज का आधार केवल शोषण है । इसीलिए उन्होने कहा कि गरीब स्वय अपनी गरीबी के लिए जिम्मेदार नही है बल्कि वह सारा सामाजार्थिक परिवेश इसके लिए जिम्मेदार है, जिसे हम सबने मिलकर बनाया है ।

प्रमुख कृतियां
(Major Works)

रोबर्ट ओवन को रचनाओ अथवा कृतियो का धनी व्यक्ति (a man of numerous wntings) कहा जाता है । यद्यपि, वे अधिक पढ़े–लिखे नही थे तथापि एक अच्छे विचारक एवं लेखक थे । अपने लम्बे सक्रिय जीवन मे उन्होने अनेक निबन्ध एव पुस्तके लिखी जिनमे अग्राकित उल्लेखनीय है–

	रचना का शीर्षक	प्रकाशन वर्ष
1	A New view of Society	सन् 1813 14
2	The Book of the New Moral World	सन् 1820
3	Social Systems	सन् 1821
4	Catechism of the New Moral World	सन् 1834
5	What is Socialism ?	सन् 1841
6	The Human Race Governed Without Punishment	सन् 1858
7	अनेक निबन्ध जो समय–समय पर Economist, Orbiston, Register एव Co-operative Magzme आदि मे प्रकाशित हुए।	

रोबर्ट ओवन के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Robert Owen)

रोबर्ट ओवन के प्रमुख आर्थिक विचारो को, मोटे तौर पर, दो भागो– (i) यूटोपियाई, अर्थात् आदर्श अथवा काल्पनिक योजनाये और (ii) व्यावहारिक सुधार योजनाए, मे बाटा जाता है। किन्तु, अध्ययन की सुविधा के लिए हम इनका निम्नांकित शीर्षको मे विवेचन करेगे–

1 परिवेश का प्रभाव (Influence of Environments)
2 लाभो का उन्मूलन (Abolition of Profits)
3 राष्ट्रीय समता श्रम विनिमय (National Equitable Labour Exchange),
4 सामुदायिक जीवन (Community Living),
5 सुधारो के व्यावहारिक उपाय (Practical Measures of Reforms) और
6 सामान्य (General)।

अब हम इनका क्रमश संक्षिप्त विवेचन करेगे –

1. परिवेश का प्रभाव (Influence of Environments)

अपनी रचना 'A New View of Society के तीसरे लेख मे रोबर्ट ओवन ने मनुष्य पर परिवेश के प्रभाव का उल्लेख किया है जिसे उनका परिवेश सिद्धान्त (Theory of Environment) भी कहा जाता है। इसके अनुसार समाज मे रहने वाले लोगो के जीवन–चरित्र, खुशी एव कार्यदक्षता पर, अन्य सभी घटको, यथा–भौगोलिक, प्राकृतिक, भौतिक, सास्कृतिक आदि की तुलना मे, सामाजार्थिक परिवेश (Socio economic environment) का सबसे अधिक एव गम्भीर प्रभाव पड़ता है। **जीड एव रिस्ट** ने उनके विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए लिखा है कि, "मनुष्य सामाजिक परिवेश की उपज है। स्वभावत वह न अच्छा है और न बुरा। वह बिल्कुल वैसा ही है जैसा चारो ओर व्याप्त परिवेश ने उसे बनाया है और यदि वर्तमान मे मनुष्य बुरा है तो इसका कारण है कि उसके आस–पास का परिवेश अच्छा नही है।" **प्रो हैने**

ने भी उनके विचारो का उल्लेख करते हुए लिखा है कि, ''उनका विश्वास था कि प्रकृति से मनुष्य अच्छे है । बुराइया वस्तुओ की प्रकृति मे निहित नही है बल्कि पूजीवादी प्रणाली मे है, जो प्राकृतिक व्यवस्था (natural order) को दूषित करती है ।''

ओवन ने बताया कि परिवेश एव मनुष्य के आचरण मे प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध है । दूसरे शब्दो मे, यदि परिवेश अच्छा है तो आचरण अच्छा और विलोमश घटिया होता है । अत यदि कोई आदमी खराब है तो उसके बुरे आचरण के लिए समाज दोषी है क्योकि मनुष्य का व्यवहार उसके प्रतिवेश (surroundings) का मातहत है । अत उन्होने बताया कि परिवेश बदलकर मनुष्य को बदला जा सकता है ।

उन्होने यह भी बताया कि सामाजार्थिक बुराइयो का मूल कारण यह भ्राति है कि 'व्यक्ति स्वय अपने चरित्र का निर्माता है' । इसी आधार पर जीवन मे सफल एव सम्पन्न व्यक्ति असफल एव गरीब लोगो को उनकी अदक्षता, गरीबी एव बुरी आदतो के लिए जिम्मेदार ठहरा देते है । ओवन ने कहा कि 'वे भूल जाते है कि गरीब एव शोषित जैसे है उसके लिए वे स्वय नही बल्कि तुम (अमीर) जिम्मेदार हो, जिन्होने ऐसा सामाजार्थिक परिवेश उन्हे दिया है ।' दूसरे शब्दो मे, ओवन के मतानुसार कोई मनुष्य अपनी वर्तमान स्थिति के लिए स्वय जिम्मेदार नही है और वह मात्र परिवेश की उपज है । इसीलिए उन्होने कहा कि समाज ही तो पहले मनुष्य को अपराधी बना देता है और बाद मे वही उसे दण्डित कर देता है, अत यह अति अविवेकी है । इसी आधार पर ओवन ने तत्कालीन कारखाना प्रणाली को बुरा बताया और कहा कि श्रमिको की दुर्दशा के लिए वे स्वय नही बल्कि औद्योगिक परिवेश जिम्मेदार है, जिसे बदलकर उनकी स्थिति सुधारी जा सकती है । इस विषय मे उनके विचारो का उल्लेख करते हुए फ्रैंक नेफ ने कहा कि, ''सब सत्यो मे सबसे महत्त्वपूर्ण सत्य यह है कि मनुष्य का चरित्र उसके लिए बनाया जाता है, किन्तु उसे वह स्वय नही बनाता ।'' ओवन ने बताया कि प्रगति मे तीन प्रमुख बाधाये– (i) निजी सम्पत्ति, (ii) धर्म और (iii) विवाह की सस्था, है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने परिवेश के तीन प्रमुख घटक माने और कहा कि इसमे बदलाव अथवा रूपान्तरण शिक्षा मे प्रसार, सुविचारित वैयक्तिक आचरण एव राज्य द्वारा उठाये गये वैधानिक उपायो पर निर्भर करता है । शिक्षा के बारे मे रोबर्ट ओवन का मानना था कि यह सामाजिक रूपान्तरण (social transformation) का सबसे प्रभावी उपकरण है अत बच्चो को किताबी ज्ञान के स्थान पर व्यावहारिक सामान्य ज्ञान दिया जाना चाहिये ।

सुविचारित वैयक्तिक व्यवहार मे उन्होने मनुष्य की उन सभी क्रियाओ को सम्मिलित किया जिनसे उनका परिवेश बदलकर सुन्दरतम होता है और

वैधानिक उपायो के परिप्रेक्ष्य मे उन्होने सुझाव दिया कि वे सभी नियम समाप्त कर देने चाहिये जो यह मानकर चलते है कि 'व्यक्ति स्वय अपना निर्माता है ।' इस आधार पर वे सभी कानून समाप्त कर देने चाहिये जो लोगो को अपराध सिखाते है ।

आलोचना (Criticism)

रोबर्ट ओवन के परिवेश सिद्धान्त की निम्नाकित आलोचनाए की गई है–

(1) परिवेश एव मानवीय व्यवहार मे प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध मानना गलत है ।

(2) जब मनुष्य स्वय अपने परिवेश की उपज है तो वह अपने प्रयासो से इस परिवेश को कैसे बदल सकता है ? का जवाब ओवन नही दे पाये ।

(3) उनके इस सिद्धान्त ने पापियो एव दुराचारियो को वैयक्तिक उत्तरदायित्व से मुक्त कर दिया, जो उचित नही है ।

(4) इस सिद्धान्त के अनुसार सब श्रमिको को एक समान पारिश्रमिक मिलना चाहिए, क्योकि, उनकी दक्षता मे जो भी अन्तर है उसके लिए वे स्वय जिम्मेदार न होकर परिवेश जिम्मेदार है और जिस बात के लिए श्रमिक स्वय जिम्मेदार नही है उसके लिए उन्हे दण्ड नही दिया जा सकता । दूसरे शब्दो मे, उनका यह सिद्धान्त कार्यदक्षता मे अन्तर की अनदेखी करता है ।

उपर्युक्त आलोचनाओ के बावजूद परिवेश सिद्धान्त के आधार पर रोबर्ट ओवन ने परिस्थितियो के प्रभाव के विज्ञान (Science of the Influence of Circumstances) की खोज का दावा किया जिसके आधार पर उन्हे हेतु विज्ञान (Euology) का जनक कहा जाता है । (हेतु विज्ञान समाजशास्त्र की वह शाखा है जो मनुष्य पर परिस्थितियो के प्रभाव का विवेचन करती है)

2. लाभों का उन्मूलन (Abolition of Profits)

अपने समकालीन समाज की बुराइयो एव आर्थिक सकटो के लिए रोबर्ट ओवन ने लाभो के सृजन को उत्तरदायी माना । अत उन्होने इनके उन्मूलन का सुझाव दिया । उन्होने बताया कि लाभो के सृजन के कारण ही समाज की उत्पादन क्षमता एव क्रयशक्ति मे अन्तर उत्पन्न होता है, जिससे आर्थिक सकट जन्म लेते हैं । उन्होने बताया कि एक ओर मशीनीकरण के कारण श्रम की कार्यदक्षता बढ़ गयी और दूसरी ओर नेपोलियन के युद्धो की आशंका ने वस्तुओं की सरकारी खरीद मे वृद्धि कर दी । इन दोनो ही कारणो से उत्पादन मे वृद्धि हो गयी । जैसे ही युद्धो की आशका समाप्त हुयी वस्तुओ की सरकारी खरीद खत्म हो गयी और अति–उत्पादन की समस्या उत्पन्न हो गयी । यदि उत्पादक लाभ नहीं कमाते और श्रमिको को उनके परिश्रम का पूरा मूल्य चुका देते तो लोगो के हाथो मे क्रय–शक्ति होती। किन्तु, 'नीची

मजदूरियो एव ऊँचे लाभो' की शिकार जनता अपनी प्रभावपूर्ण माग मे वृद्धि करने मे असमर्थ थी, अत अति–उत्पादन का आर्थिक सकट उत्पन्न हो गया। दूसरे शब्दो मे, रोबर्ट ओवन को अति–उत्पादन के आर्थिक सकट का हल लाभो के समापन मे मिला।

रोबर्ट ओवन ने लाभो को श्रमिको के कष्टो का स्रोत माना और सुझाव दिया कि सामाजार्थिक परिवेश मे परिवर्तन के लिए लाभो का अन्त करना जरूरी है। उन्होने लाभो को अनुचित एव पाप बताया क्योकि इनके सृजन मे श्रम का शोषण निहित रहता है। लाभो के कारण ही उन्हे अपने श्रम के बराबर पुरस्कार नही मिल पाता और फलस्वरूप उनकी क्रय–शक्ति नीची रह जाती है। जब वस्तुओ की बाजार कीमत उनकी उत्पादन लागत से ऊची रखी जाती है तभी लाभो का सृजन होता है। इस प्रकार उन्होने बताया कि जब लाभ समाप्त होगे तभी श्रम का शोषण बद होगा।

रोबर्ट ओवन ने लाभो के सृजन मे मौद्रिक विनिमय व्यवस्था की महत्ता स्वीकार की और सुझाव दिया कि मुद्रा–विहीन समाज की स्थापना से ही लाभ समाप्त हो सकते है। उन्होने पूजीवादियो एव पूर्ण प्रतिस्पर्धा के समर्थको का यह निष्कर्ष स्वीकार नही किया कि पूर्ण स्पर्धा की विद्यमानता के कारण दीर्घकाल मे लाभ स्वत समाप्त हो जायेगे। इसके ठीक विपरीत उन्होने यह माना कि जहा प्रतिस्पर्धा रहेगी वहा लाभ रहेगे और परिणामस्वरूप इन्हे एक दूसरे से पृथक् नही किया जा सकता। उन्होने बताया कि प्रतिस्पर्धा एव लाभ दोनो ही खराब है क्योकि प्रतिस्पर्धा यदि 'युद्ध' है तो लाभ 'आपसी झगड़ो की लूट' है। इसीलिए रोबर्ट ओवन ने पूजीवादी प्रतिस्पर्धा प्रणाली के स्थान पर सहकारी उत्पादक सघो एव मुद्रा के स्थान पर श्रम–पत्रो का प्रयोग आरम्भ किया ताकि पूजीवाद एव मुद्रा के सुफल तो मिल जाये और दोष मिट जाये। दूसरे शब्दो मे, लाभो के अन्त के लिए उन्होने सुझाव दिया कि वस्तुए श्रम लागत मूल्य पर बिकनी चाहिये।

3. राष्ट्रीय समता श्रम विनिमय (National Equitable Labour Exchange)

लाभ समाप्त करने की अपनी योजना को सफल बनाने के लिए रोबर्ट ओवन ने उत्पादको एव उपभोक्ताओ के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक समझा। इस हेतु उन्होने अपने समर्थको के सहयोग से सितम्बर 1832 मे लदन मे राष्ट्रीय समता श्रम विनिमय' नामक एक विनिमय सस्था की स्थापना की और कुछ स्थानो पर उसकी शाखाये खोली। केन्द्रीय सहकारी उत्पादन समिति अथवा केन्द्रीय सहकारी भण्डार गृह जैसी इस सस्था के शुरू मे 840 श्रमिक सदस्य बने। ये वे औद्योगिक श्रमिक थे जो स्वय अपने औद्योगिक उत्पादो की बिक्री किया करते थे। ओवन की विनिमय सस्था ने सदस्यो के उत्पादो की उनके श्रम लागत मूल्य पर खरीद आरम्भ करदी और

बदले मे उन्हे सम-मूल्य के श्रम-पत्र (Labour notes) अर्थात् श्रम-मुद्राये देने की व्यवस्था की । श्रमिक इन श्रम-पत्रो के बदले केन्द्रीय सहकारी भण्डार अर्थात् विनिमय सस्था से आम उपभोग की दूसरी वस्तुए सम मूल्य पर खरीद सकते थे । इस प्रकार इस व्यवस्था के जरिये उन्होने उत्पादको एव उपभोक्ताओ के बीच की सभी मध्यस्थ एजेन्सिया समाप्त करदी । परिणामस्वरूप लाभ, मुद्रा, प्रतिस्पर्धा एव मध्यस्थो जैसी सभी पूजीवादी सस्थाओ की महत्ता रोबर्ट ओवन ने समाप्त करदी । किन्तु, अन्य परीक्षणो की भाति उनका यह परीक्षण भी विफल रहा, जिसके प्रमुख कारण निम्नाकित थे-

(1) यह व्यवस्था इस मान्यता पर आधारित थी कि सभी श्रमिक इमानदार एव सत्यवादी है और वे अपने उत्पादो की ठीक उतनी ही श्रम-लागत बतायेगे जितनी वास्तव मे उनके उत्पादन मे लगी है । किन्तु, ऐसा नही हुआ । सदस्यो ने अपने उत्पादो की झूठी एव ऊँची श्रम-लागत बताकर उनके बदले मे वास्तविक से अधिक श्रम-पत्र प्राप्त कर लिये ।

(2) इस प्रणाली मे सदस्य श्रमिको के उत्पादो के मूल्याकन की व्यवस्था दोषपूर्ण थी । शुरू मे जो मूल्य श्रमिको ने बताया उसे ही मान लिया गया और बाद मे जब श्रमिको की झूठ सामने आने लगी तो वस्तुओ का औसत श्रम-लागतो के आधार पर मूल्याकन किया जाने लगा, जिसमे अनेक त्रुटिया थी ।

(3) सदस्य श्रमिक अपने उत्पादो के ऐसे ढेर बेच गये जिनकी उपभोग के लिए माग नही की गई । अत इस व्यवस्था मे बिना बिके एव अनुपयोगी माल के भण्डार जमा हो गये ।

(4) रोबर्ट ओवन की इस योजना को खत्म करने के लिए कुछ स्वार्थी लोग इसके सदस्य बन गये । वे बाजार से खरीद कर ऐसी वस्तुए लाते और श्रम-पत्रो के बदले इस विनिमय सस्था को ऊचे मूल्यो पर बेच जाते जिन्हे इस सस्था के लिए वापस बेचना कठिन होता गया और मजबूर होकर व्यवस्था समाप्त करनी पडी ।

(5) श्रम-पत्र हस्तातरणीय थे, अत लदन के लगभग 3 हजार व्यापारी इसे विफल बनाने मे एकजुट हो गये । वे श्रमिको को श्रम-पत्रो के बदले वस्तुए बेचकर श्रम-पत्र इकट्ठे करने लगे । इस प्रकार इकट्ठे किये गये श्रम-पत्रो से वे समिति से वे सभी वस्तुए खरीदने लगे जो समिति ने सस्ते मूल्य पर श्रमिक सदस्यो को बिक्री के लिए रख छोड़ी थी । इससे समिति के पास सस्ते मूल्य की आम उपभोग की वस्तुओ का अभाव हो गया । जब व्यापारियो को यह मालूम हो जाता कि समिति के पास ऐसी सस्ती वस्तुए नही हैं तो वे उनसे श्रम-पत्र खरीदने बद कर देते । इस

स्थिति मे उनके श्रम–पत्र बेकार हो जाते।

(6) प्रारम्भ मे श्रम–मूल्य के आधार पर वस्तुओ का विनिमय अनुपात निर्धारित होता था, किन्तु, बाद मे विनिमय अनुपात अथवा विक्रय–मूल्य के आधार पर वस्तुओ का श्रम–मूल्य निर्धारित होने लगा और अन्तत यह व्यवस्था समाप्त करनी पडी।

उपर्युक्त कारणो से यद्यपि यह योजना विफल हो गयी तथापि ओवन ने अपनी इस योजना को मेक्सिको एव पेरू मे स्वर्ण की खानो की खोज से भी अधिक महत्त्वपूर्ण माना था।

4. सामुदायिक जीवन (Community Living)

ओवन ने पूँजीवाद के तथाकथित सभी दोष समाप्त कर समाज मे नवीन परिवेश का सृजन करने तथा उसमे उत्पादको एव उपभोक्ताओ को एक दूसरे के प्रत्यक्ष सम्पर्क लाने के लिए स्वावलम्बी सहकारी गावो अथवा साम्यवादी बस्तियो की स्थापना के जरिये सामुदायिक जीवन के नये स्वरूप का प्रस्ताव किया, जो साम्यवादी व्यवस्था के कम्यूनो के समकक्ष था। इनकी स्थापना के जरिये उन्होने श्रमिको को पुन खेती एव भूमि से जोडने का सपना देखा, इसीलिए इसे Return to spade अर्थात् "फावडे की ओर मुडने" का विचार कहा जाता है।

रोवर्ट ओवन ने योजना बनाई की एक सामुदायिक बस्ती मे 300 से 2000 तक कृषक एव श्रमिक परिवार हो (उन्होने 800 से 1200 परिवारो की बस्ती को एक आदर्श बस्ती बताया था)। ये सब परिवार एक छत के नीचे रहे, सब मिल जुलकर अपनी–अपनी सामर्थ्य के अनुसार उत्पादन सम्बन्धी क्रियाये पूरी करे और अन्त मे, सब मिलकर इस उत्पादन को, बिना यह देखे कि किसने कितना उत्पादन किया है, आपस मे बराबर–बराबर बाटले। ओवन ने ऐसी बस्तियो की स्थापना के तीन प्रयास किये।

आरम्भ मे उनके साथियो ने उनके इस विचार का समर्थन नही किया अत. वे अमेरिका चले गये जहा सन् 1824 मे इण्डियाना प्रान्त, मे अपनी जेब से धन खर्च कर 300 एकड भूमि पर 'न्यू हारमॉनी' नामक प्रथम सामुदायिक बस्ती स्थापित की। शुरू मे इस बस्ती मे 700 कृषक परिवार थे। ये सभी रैपीटस् (Rappites) धार्मिक सम्प्रदाय के अनुयायी थे जो सन् 1804 मे जर्मनी से अमरीका आकर बस गये थे। इस बस्ती के निर्माण मे ओवन को अमरीकी शिक्षाविद् मैक्लुर का सहयोग मिला। थोडे समय बाद इस बस्ती मे कुछ अन्य परिवार भी सम्मिलित हो गये और इसने कृषि के साथ–साथ उद्योगो की भी स्थापना करली।

किन्तु ओवन की यह योजना विफल रही। कुछ स्वार्थी एव अकर्मण्य

लोग इस बस्ती के सदस्य बन गये जो बिना मेहनत किये इसकी सदस्यता के लाभ लेने लगे । इससे दूसरे सदस्यो मे वैयक्तिक स्वतत्रता एव सम्पति की माग उठने लगी और परिणास्वरूप थोडे ही दिनो बाद वह बस्ती अन्य सामान्य बस्तियो जैसी होकर रह गयी । इससे ओवन के सम्मान को गहरा आघात लगा । उन्हे भी अपने धन के बर्बाद होने का दु ख हुआ और वे वापस इग्लैण्ड आ गये ।

सन् 1826 मे उन्होने अपने दो अनुयायियो के सहयोग से इग्लैण्ड मे ऑरबिस्टन (स्कॉटलैण्ड) नामक स्थान पर एक सामुदायिक बस्ती स्थापित की । इस क्षेत्र मे यह उनका दूसरा परीक्षण था । किन्तु, थोडे ही समय मे यह बस्ती भी भारी ऋण भार से दब गयी और विवश होकर सदस्यो को इसे निलाम कर देना पडा ।

सामुदायिक बस्तियो की स्थापना का तीसरा एव अतिम प्रयास ओवन ने इग्लैण्ड मे ही सन् 1839 मे टाइथेरली, क्वीन्सवुड (हैम्पशायर) मे किया । स्वय ओवन इस बस्ती के अध्यक्ष थे । सन् 1845 मे वित्तीय सकट के कारण यह बस्ती भी समाप्त हो गयी ।

5 सुधारों के व्यावहारिक उपाय (Practical Measures of Reforms)

रोबर्ट ओवन ने न केवल औद्योगिक श्रमिको की दुर्दशा को बहुत निकट से देखा अपितु श्रमिको के नियत्रण के दमनकारी उपायो का भी काफी बारीकी से अवलोकन किया जो तत्कालीन इग्लैण्ड मे मिल मालिक कर रहे थे । इन दोनो ही बातो से वे बहुत दु खी हुए । अत उन्होने श्रमिको के प्रति सहृदयता की महत्ता बतायी और कहा कि 'यह केवल भ्रातिमात्र है कि नीची मजदूरिया लाभ मे वृद्धि की सूचक है ।' इसके विपरीत उन्होने बताया कि श्रमिको के शारीरिक एव मानसिक स्वास्थ्य के रख–रखाव के लिए ऊची मजदूरिया अतिआवश्यक है । उन्होने यह भी बताया कि श्रमिको को कुपोषण से होने वाली अकाल मौतो से बचाने एव उनकी उत्पादकता मे गिरावट रोकने की दृष्टि से भी ऊची मजदूरिया वाछनीय है । उन्होने पूजीपति उद्योगपतियो को सचेत किया कि यदि उन्होने श्रमिको को समुचित पारिश्रमिक का भुगतान किये बिना अपने ऊचे लाभो का सृजन किया तो इसके परिणाम घातक होगे । उन्होने बताया कि जिस प्रकार मशीनो की सुरक्षा एव रख–रखाव जरूरी है उसी प्रकार श्रम शक्ति की सुरक्षा एव रख–रखाव भी जरूरी है । इतना ही नही उन्होने श्रम के रख–रखाव को पूजीगत साधनो के रख–रखाव से कही अधिक उपयोगी एव महत्त्वपूर्ण माना ।

रोबर्ट ओवन ने न्यू लानार्क मिल मे अपने उपर्युक्त विचारो को कसौटी पर चढाया । जब सन् 1801 मे उन्होने यह मिल सम्भाली थी तब उसकी एव वहा कार्यरत श्रमिको की स्थिति बहुत खराब थी । उन्होने माना कि नया

परिवेश श्रमिकों को भी नये श्रमिकों मे रूपान्तरित कर दगा । अत अपने अन्य साझेदारो के विरोध के बावजूद उन्होने श्रमिको के कल्याण की निम्नांकित योजनाये घोषित की ।

(1) 10 साल मे छोटी उम्र के बालको के श्रम का प्रयोग नही किया जायेगा।
(2) श्रमिको के बच्चो एव बाल श्रमिको को नि शुल्क नियमित एव अनिवार्य शिक्षा दी गयी ।
(3) श्रमिको के आवास के लिए आदर्श आवासीय सुविधाये उपलब्ध की गयी।
(4) कार्य के घण्टे 17 से घटाकर 10 कर दिये गये ।
(5) श्रमिको से गलतियो के लिए जुमाना वसूल करने की प्रथा समाप्त करदी गयी ।
(6) श्रमिको को नि शुल्क चिकित्सा सुविधाये दी जाने लगी।
(7) श्रमिको के मनोरजन की व्यवस्थाये की गयी ।
(8) सुरक्षा कोष की स्थापना कर श्रमिको को सामाजिक बीमा की सुरक्षा दी जाने लगी ।
(9) श्रमिको का स्वास्थ्यप्रद एव मितव्ययी जीवन के प्रति रुझान उत्पन्न किया गया ।

श्रम–कल्याण के उपर्युक्त व्यावहारिक उपायो का तत्काल ही अच्छा परिणाम सामने आ गया । सन् 1806 मे जब मदी के कारण यह मिल 4 माह तक बद हो गयी तब भी ओवन के सम्मुख श्रमिको को मजदूरी भुगतान मे कोई कठिनाई नही हुई और वे नियमित रूप से हजारो श्रमिको को वेतन चुकाते रहे । अन्य लोगो के लिए इन सुधारो के परिणाम चौकाने वाले थे । जन–धारणा के विपरीत उनकी कपड़ा मिल ने अपनी उत्पादकता एव लाभ मे उल्लेखनीय वृद्धि करली । इससे प्रोत्साहित होकर ओवन ने श्रमिको के लिए मिल का सहकारी केन्द्रीय भण्डार खोल दिया जहा से उन्हे सस्ते मूल्य पर आम उपभोग की वस्तुएँ दी जाने लगी । इससे न्यू लानार्क मिल एक आदर्श औद्योगिक प्रतिष्ठान एव सामुदायिक केन्द्र बन गयी और वह देशी एव विदेशी पर्यटको, समाज सुधारको और नियोक्ताओ के आकर्षण का एक केन्द्र एव प्रमुख पर्यटन स्थल बन गयी । प्रतिवर्ष हजारो लोग इस आदर्श रूप को देखने आने लगे । इससे ओवन की कीर्ति चारो ओर फैल गयी । वे अपने प्रयोगो को न केवल आगे तक जारी रखना चाहते थे अपितु, उन्हे बढ़ाना भी चाहते थे । वे इसे शून्य लाभ का एक आदर्श प्रतिष्ठान बनाना चाहते थे । किन्तु, उनके साझेदारो को यह परामर्श अच्छा नहीं लगा । अत उनकी साझेदारी ही टूट गयी । अब ओवन ने जर्मी बेन्थम, विलियम एलन एव जोसेफ फॉक्स को

अपना साझेदार बनाया। ये सभी सामाजिक परिवेश मे बदलाव के इच्छुक एव समर्थक थे।

रोबर्ट ओवन की औद्योगिक सुधार–सम्बन्धी यह योजना एकमात्र सफल योजना रही। किन्तु, यह योजना भी अन्तत इस मायने मे विफल रही कि इग्लैण्ड के अन्य उद्योगपतियो एव पूजीपतियो ने इन्हे स्वीकार नही किया। श्रमिको का शोषण पूर्ववत् जारी रहा। विवश होकर ओवन ने कानून का सहारा लिया और अधिनियम पारित करवाकर श्रमिको को राहत दिलाने की सोची। उन्ही के प्रयासो से सन् 1819 मे इग्लैण्ड मे फैक्टरी विधेयक पास हुआ जिसमे 9 साल से छोटे बच्चो के श्रम के कारखानो मे प्रयोग पर पहली बार रोक लगी।

6. सामान्य (General)-

इस वर्ग मे रोबर्ट ओवन के रोजगार, निजी सम्पत्ति एव श्रम विषयक विचार उल्लेखनीय है। उन्होने बताया कि किसी देश की समस्त कार्यशील जनसख्या को रोजगार दिलाना वहा की जिम्मेदार राष्ट्रीय सरकार का एक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। औद्योगिक काति के दुष्परिणामो के शिकार हुए लोगो की दुर्दशा देखने के पश्चात् उनके ये विचार बहुत प्रबल हो गये थे।

निजी सम्पत्ति के बारे मे ओवन की मान्यता थी कि यह सारी बुराइयो की जड है। यही एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति का दुश्मन बनाती है। अत इसे समाप्त कर देना चाहिये।

श्रम के बारे मे उनका मानना था कि श्रमिक जीवित मशीने है। जिस प्रकार मशीनो के रख–रखाव एव सार–सम्भाल से उनके मालिको को लाभ मिलते हैं उसी प्रकार श्रमिको के रख–रखाव से नियोक्ताओ के प्रत्यक्ष लाभ मिलते है। यही नही इससे उनके लाभो मे उत्तरोत्तर वृद्धि भी होती रहती है। अत मानव रूपी मशीनो का विकास होना चाहिये।

रोबर्ट ओवन का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Robert Owen)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे रोबर्ट ओवन की गणना उन विद्वानो मे की जाती है जो किसी लक्ष्य विशेष के लिए समर्पित रहे। तत्कालीन आँग्ल समाज के दोषो को जग–जाहिर कर नये समाज की स्थापना करना ही उनके सम्पूर्ण व्यस्त एव लम्बे जीवन का लक्ष्य रहा। वे श्रमिको के लिए इस धरती पर स्वर्ग लाना चाहते थे। समय एव धन की बर्बादी के बावजूद उनकी यह इच्छा उत्तरोत्तर प्रबल होती गयी। वे लाभो की लालसा, आर्थिक संकटो एव अन्य सभी दोषो से मुक्त एक हारमोनिक समाज की स्थापना के समर्थक थे। वे अपने परिश्रम एवं योग्यता से शीघ्र ही धनी बन गये। किन्तु, इसके

बावजूद वे पूजीवाद के कभी समर्थक नही रहे और एक पूजीपति एव मिल मालिक होने के बावजूद ब्रिटेन मे अग्रणी समाजवादी कहलाये ।

वे एक व्यावहारिक सुधारक थे । उन्होने श्रम की कार्यदक्षता को परिवेश की देन बताया और इसी आधार पर 'सबको समान मजदूरी' के आदर्श का प्रचार किया । किन्तु, वे एक ऐसे पूजीवादी समाज मे रहे थे जहा नियोक्ताओ का प्रभुत्व था अत । उनका आदर्श लोकप्रिय नही हुआ ।

आदर्श समाज की स्थापना मे उन्होने सदैव प्रतिस्पर्धा के स्थान पर सहकारिता (यद्यपि उन्होने इस शब्द का कही प्रयोग नही किया) एव श्रम–पूजी टकराव के स्थान पर दोनो मे सामजस्य एव सहयोग पर बल दिया ।

वे अपनी प्रकृति से ही अग्रगामी (Pioneer) थे । उनहोने 'लक्ष्य–प्राप्ति के अभियान' (Missionary march) मे कभी पीछे मुड़कर नही देखा । उन्होने अपनी किसी भी योजना को आसानी से विफल नही माना और उसका पूरा निचोड़ लिया । सत्य तो यह है कि, शोषित मानवता के लिए वे जो कुछ कर सकते थे, उन्होने वह सब किया ।

वे वैचारिक शक्ति के धनी थे । वे कोरे सिद्धान्तवादी नही बल्कि व्यावहारिक थे । उन्होने अपने श्रम–सुधार उस मिल मे लागू किये जिसके वे स्वय मालिक थे ।

वे व्यापारिक कौशल के धनी थे । अत शीघ्र ही धनी बन गये । पूंजीपति एव मिल मालिक होने के बावजूद वे मानव कल्याण के हितैषी एव उदारता की प्रतिमूर्ति थे । श्रमिक वर्ग सदा उनका ऋणी रहेगा और इग्लैण्ड का औद्योगिक इतिहास उनके नाम को कभी नही भुला सकेगा ।

वे लाभो को एक बुराई मानते थे, अत ऐसी उत्पादन व्यवस्था की खोज मे जुटे रहे जो बिना लाभो के काम कर सके । जैसा कि जीड एव रिस्ट ने लिखा है, "बिना लाभो की सहकारी सस्थाये सदैव रोबर्ट ओवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य रहेगा और इस आदोलन के विकास के साथ उनकी प्रसिद्धि जुड़ी रहेगी ।"

सिसमण्डी की भाति रोबर्ट ओवन ने भी किसी सम्प्रदाय की स्थापना नहीं की । उन्होने वर्ग–सघर्ष के नाम पर श्रमिको को एकजुट होने का भी कभी आह्वान नहीं किया । वे शिक्षा को एक बड़ी शक्ति मानते रहे और उसी से मानवता को सुधारने मे उनका विश्वास था ।

उन्होने किसी के विचारो का अन्धानुकरण नही किया । वे सहज ही मे किसी के विचारो से प्रभावित नहीं होते थे । उनके एक समकालीन आलोचक ने लिखा था कि, "वे ऐसे नहीं है जो किसी पुस्तक को पढ़कर किसी विषय पर अपनी पूर्व निर्धारित राय बदल ले ।"

वे अधिक पढ़े–लिखे नही थे । फिर भी, उनका चिंतन अपना था । वे केवल एक विचारक या अर्थशास्त्री ही नही बल्कि इनसे कही अधिक थे । इसीलिए अपने आदर्शों को पाने मे उन्होने जो कुछ कमाया वह सब खर्च कर दिया ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उनके मूल्याकन के अनेक स्वरूप है । सक्षेप मे, एक आर्थिक विचारक के रूप मे उन्होने न केवल लाभो की अवधारणा मे क्राति ला दी बल्कि सहयोग एव सगठन को निर्बाधावाद का एक विकल्प बना दिया । एक शिक्षक के रूप मे उन्होने ऐसे शिष्य छोड़े जिन्होने समाज के भले के लिए उनके सकल्पो को जीवित रखा । एक नेता के रूप मे उन्होने सहकारिता आदोलन को आधार स्तर पर नेतृत्व दिया । एक नियोक्ता के रूप मे न्यू लानार्क मिल मे उन्होने वह चमत्कार कर दिखाया जिसे बाद मे आज तक कोई विधान नही दिखा पाया । एक व्यक्ति के रूप मे वे महान मानवतावादी थे जिनका सम्पूर्ण जीवन मनुष्य जाति को समर्पित रहा ।

उपर्युक्त विवेचन से भिन्न उनके मूल्याकन का एक दूसरा पक्ष भी है । वे स्वभाव से हठीले थे । उनकी योजनाये बार–बार विफल होती रही फिर भी वे कल्पनालोक मे विचरण कर स्वय के लिए एक यूटोपियाई होने का सामान तैयार करते रहे । वे अपने हितो के बारे मे सदैव लापरवाह रहे । ब्रिटेन के मिल के मालिको ने उन्हे पागल घोषित कर दिया था । वे विरोधाभासो के शिकार होते रहे । एक ओर जहा उनका दर्शन साम्यवाद से बहुत मिलता है वहां दूसरी ओर वे समाजवाद के काफी निकट आ जाते है । उन्हे अपने नये समाज की स्थापना के सकल्प मे विफलताये हाथ लगी ।

आर्थिक विचारों के इतिहास में रोबर्ट ओवन का स्थान
(Place of Robert Owen in the History of Economic Thought)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे रोबर्ट ओवन को एक सम्मानजनक स्थान प्राप्त है । अत. उनका नाम उनकी निम्नाकित देनो के कारण सदैव याद किया जाता रहेगा–

(1) वे तत्कालीन इग्लैण्ड, जो पूजीवाद का एक गढ़ था, मे समाजवाद के जनक थे । सम्भवत. किसी पुस्तक के शीर्षक मे 'समाजवाद' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम उन्होने ही किया था ।

(2) वे सहकारी आदोलन के सस्थापक थे । उनकी राष्ट्रीय समता श्रम विनिमय की योजना ही आगे चलकर सहकारी आंदोलन की जननी मानी गयी । इस आदोलन को उनके शिष्यो ने आगे बढ़ाया था ।

(3) वे ब्रिटेन मे कारखाना विधान के जनक थे, जिसके फलस्वरूप बाल श्रमिको के कारखानो मे प्रयोग पर रोक लगायी गयी ।

(4) वे श्रम—कल्याण आदोलन के जनक थे। उन्होने उस समय श्रम कल्याण की योजनाओ का श्रीगणेश किया जब श्रम कल्याण के लिए कार्य करना तो दूर उसके बारे मे सोचना भी एक अपराध माना जाता था।

(5) वे हेतु विज्ञान के एक प्रणेता थे। आधुनिक समाजशास्त्रीय विवेचन मे समाजशास्त्र की इस शाखा की व्यापक महत्ता है।

(6) औद्योगिक मनोविज्ञान (Industrial Psychology) के क्षेत्र मे अपने योगदान के बदले भी उनका नाम सदैव याद किया जाता रहेगा। उन्होने बताया कि औद्योगीकरण की नीव सस्त एव शोषित श्रम द्वारा नही रखी जानी चाहिये तथा श्रम को जो भी दिया जायेगा वह उसका तत्काल प्रतिफल दे देगा, अत उसे शोषण का शिकार नही बनाया जाना चाहिये।

अन्त मे, प्रो. न्यूमैन के शब्दो मे, "रोबर्ट ओवन अपने समय के प्रसिद्ध विचारक थे। उन्हे काफी समर्थन प्राप्त था। वे सहकारी आदोलन के जनक थे। यदि उनके प्रयोग असफल हुए तो इसलिए कि उनके उद्देश्य ऊचे थे और उन्होने मनुष्य को एक पूर्ण एव विवेकशील प्राणी समझ लिया।" यदि वे मनुष्य को ऐसा समझने की भूल न करते तो शायद उनके चिंतन की दिशा कोई और होती। जीड एव रिस्ट के मतानुसार, 'समस्त समाजवादियो मे रोबर्ट ओवन का व्यक्तित्व अद्वितीय ही नही बल्कि विचित्र रूप से मौलिक भी है।" अत वे याद किये जाते रहेगे।

प्रश्न

1 **रोबर्ट ओवन के आर्थिक विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।**
संकेत : सक्षेप मे रोबर्ट ओवन का परिचय देकर उनके प्रमुख आर्थिक विचारो का विस्तृत विवेचन करे।

2 **साहचर्य समाजवाद से क्या आशय है ? क्या रोबर्ट ओवन को साहचर्य समाजवादी कहना ठीक है ?**
संकेत : सक्षेप मे साहचर्य समाजवाद का आशय समझाये तथा बाद मे रोबर्ट ओवन के यूरोपियाई विचारो की व्याख्या कर अत मे निष्कर्ष दे कि वास्तव मे वे साहचर्य समाजवादी थे।

3. **रोबर्ट ओवन के कार्यों का आलोचनात्मक विवेचन कर आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान निर्धारित कीजिये।**
संकेत : विभिन्न विचारो के परिप्रेक्ष्य मे उनका आलोचनात्मक परीक्षण करते हुए अन्त मे निष्कर्ष दे कि उनका नाम आर्थिक विचारो के इतिहास मे सदैव आदर के साथ लिया जाता रहेगा।

❏

7

समाजवादी सम्प्रदाय III : कार्ल मार्क्स
(The Socialist School III : Karl Marx)

"एक महत्त्वपूर्ण अर्थ में मार्क्सवाद एक धर्म है। सर्वप्रथम, इससे इसे मानने वालों को जीवन के सभी अंतिम लक्ष्य एवं घटनाओं तथा कार्यों को मापने का एक निरपेक्ष मापदण्ड मिल जाता है तथा दूसरे, यह व्यक्ति के मोक्ष के लक्ष्य का पथ-प्रदर्शक है और उन बुराइयों की ओर इंगित करता है जिनसे सम्पूर्ण मानव समाज अथवा उसके किसी वर्ग विशेष को बचाना है।"[1] —शुम्पीटर

परिचय : वैज्ञानिक समाजवाद के प्रणेता
(Introduction : An Exponent of Scientific Socialism)

पूजीवाद, जिसमे वर्ग–सघर्ष एव शोषण की प्रधानता रहती है, का एक ऐसे समाज मे रूपान्तरण जिसमे सब लोगो के परस्परिक हितो मे सामजस्य पर बल दिया जाता है, समाजवाद है। इस प्रकार समाजवाद एक वर्ग–विहीन एव शोषण से मुक्त आर्थिक, समाजिक एव राजनीतिक व्यवस्था है। इसके अनेक रूप है, जिनमे एक अति महत्त्वपूर्ण रूप 'वैज्ञानिक समाज्वाद' है। इसके बारे मे रोडबर्टस (Rodbertus) ने सर्वप्रथम बताया कि यह समाजवाद किसी पूर्व विचारित प्रयत्न का परिणाम नही बल्कि ऐतिहासिक एव प्राकृतिक प्रक्रिया एव विकास का परिणाम है और पूजीवाद के विकास मे ही समाजवाद के बीज विद्यमान रहते है। दूसरे शब्दो मे, उन्होने बताया कि जब अपनी बुराइयो एव दोषो के कारण पूजीवादी व्यवस्था स्वाभाविक मौत मर जाती है तो समाजवाद के लिए रास्ता साफ हो जाता है। इस प्रकार समाजवाद का आगमन अवश्यम्भावी घटना है। कार्ल मार्क्स ने भी समाजवाद के इसी रूप का समर्थन किया। रोडबर्टस ने भिन्न उन्होने इस

---

1 "Marxism in an important sense, is a religion. To the believer it presents first, a system of ultimate ends that embody the meaning of life and an absolute standard by which to judge events and actions and secondly a guide to those ends which implies a plan of salvation and the indication of the evils from which mankind or a chosen section of mankind, is to be saved." . Schumpeter J J

आर्थिक, सामाजिक एव राजनैतिक रूपान्तरण मे राज्य अथवा सरकार की भूमिका भी स्वीकार की। उन्होने बताया कि पूजीवाद एक ऐसी बुराई है जिसे अपनी स्वाभाविक मौत मरने मे काफी समय लगेगा। इस समय मे किसानो एव श्रमिको का शोषण होता रहेगा। अत क्रान्तिकारी उपायो द्वारा पूजीवादी व्यवस्था को समाप्त कर समाजवादी व्यवस्था की स्थापना शीघ्रातिशीघ्र करना समाज के व्यापक हित मे है। दूसरे शब्दो मे, कार्ल मार्क्स की व्याख्या अधिक कठोर एव व्यापक है। उनकी इस व्याख्या को अन्तर्राष्ट्रीय क्रातिकारी समाजवाद अथवा मार्क्सवाद एव स्वय उन्हे समाजवादी आन्दोलन का एक प्रभावशाली नेता एव प्रणेता कहा जाता है।

संक्षिप्त जीवन परिचय
(Brief Life Sketch)

कार्ल हेनरिक मार्क्स (Karl Heinrich Marx) का जन्म एक मध्यमवर्गीय यहूदी परिवार मे र्हिनेलैण्ड (दक्षिण–पूर्वी जर्मनी) मे कोब्लेज (Coblenz) के निकट ट्रिव्ज (Treves) नामक स्थान पर 5 मई सन् 1818 को हुआ। इनके पिता वकील एव लोक सेवक थे। जब मार्क्स की आयु मात्र 6 वर्ष की थी, तब उनका पूरा परिवार धर्म–परिवर्तन कर प्रोटेस्टेट (ईसाई मतावलम्बी) बन गया। मार्क्स की प्रारम्भिक शिक्षा स्थानीय स्कूल मे हुई। सन् 1830–35 के बीच उन्होने ट्रियर जिम्नेजियम नामक स्कूल मे शिक्षा प्राप्त की। 17 वर्ष की आयु मे सन् 1835 मे उन्होने विधिशास्त्र के अध्ययन के लिए बॉन विश्वविद्यालय मे प्रवेश लिया। किन्तु, अपना अध्ययन बीच मे ही छोड़कर, उन्होने एक वर्ष पश्चात् ही, सन् 1836 मे बर्लिन विश्वविद्यालय मे इतिहास, दर्शनशास्त्र एव विधिशास्त्र के अध्ययन के लिए प्रवेश ले लिया। यह विश्वविद्यालय उन दिनो प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक विचारक हीगल के चिंतन के अध्ययन के लिए विख्यात था। कुछ समय पश्चात् मार्क्स ने उच्चतर अध्ययन के लिए जेना विश्वविद्यालय मे प्रवेश ले लिया जहाँ से उन्होने सन् 1841 मे दर्शनशास्त्र मे पी एच डी की उपाधि प्राप्त की। मार्क्स की अध्ययन–अध्यापन मे शुरू से ही गहन रुचि थी। अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् उन्हे आशा थी कि शायद बॉन विश्वविद्यालय मे व्याख्याता के पद पर नियुक्ति मिल जायेगी। किन्तु, अपने उग्र विचारो के कारण उन्हे यह सफलता नही मिली। अत जनवरी सन् 1842 मे उन्होने कोलोगन मे र्हेनिश टाइम्स (Rhenish Times) नामक एक दैनिक पत्र के सम्पादन का कार्य शुरू कर दिया। उग्र विचारो का यह अखबार श्रमिक–वर्ग के हितो का कट्टर समर्थक था अत मार्च सन् 1843 मे सरकार ने एक वर्ष पश्चात् ही सेन्सरशिप लागू कर इसके प्रकाशन पर रोक लगा दी और मार्क्स को देश छोड़ने का आदेश दे दिया। इसी बीच सन् 1843 मे मार्क्स ने जेनी बॉन वेस्टफालन नामक एक महिला

सभासद युवती, जो उनकी बचपन की मित्र एव एक सरकारी अधिकारी की पुत्री थी, से शादी करली । अब मार्क्स फ्रास आ गये और दो वर्ष तक Franco-Germen year Books के सम्पादन का कार्य देखते रहे । मार्क्स के जीवन एव विचारो मे उनका दो वर्ष का फ्रास प्रवास बडा निर्णायक सिद्ध हुआ। इस अवधि मे उन्होने एक तो, सेट साइमन एव चार्ल्स फूरियर आदि समाजवादी विचारको की रचनाओ का अध्ययन किया और दूसरे, वे प्रोधो एव कैबेट आदि समाजवादियो के निकट सम्पर्क मे आये और उनसे उनका *वैचारिक आदान–प्रदान हुआ तथा तीसरे, उनकी मुलाकात एजिल्स से हुई जो* उनके जीवन के एक मात्र दोस्त बने । इन घटनाओ का परिणाम यह हुआ कि उनके विचार और अधिक उग्र एव परिवर्तन के समर्थक हो गये तथा उनका झुकाव पूजीवाद के विरुद्ध एव समाजवाद के पक्ष मे हो गया । उन्होने *श्रमिक–हितो के लिए आवाज उठाना आरम्भ कर दिया । तत्कालीन* फ्रास सरकार को उनके क्रान्तिकारी विचार अच्छे नही लगे अत फरवरी सन् 1845 मे उन्हे फ्रास से निकाल दिया । इधर–उधर भटकते मार्क्स बेल्जियम पहुचे और सन् 1848 तक ब्रुसेल्स मे रहे । यहाँ वे एजिल्स के साथ लेखन कार्य मे जुटे रहे । सन् 1847 मे वे साम्यवादी लीग के सदस्य बन गये । सन् 1848 मे फ्रास की क्राति की पूर्व सध्या पर उनकी प्रसिद्ध रचना 'साम्यवादी घोषणा–पत्र' (The Communist Manifesto) प्रकाशित हुई । इसके प्रकाशन ने समाजवाद की भावी ताकत दिखा दी । मार्क्स के साथ फ्रेडरिक एजिल्स इसके सह लेखक थे । इसी वर्ष मार्क्स वापस जर्मनी आ गये । किन्तु, सन् 1848 की क्रातिकारी गतिविधियो मे सक्रिय भूमिका निभाने के कारण सरकार ने उनकी गिरफ्तारी के आदेश निकाल दिये और उनके वापस ब्रूसेल्स जाने पर रोक लगा दी । फलत गिरफ्तारी के भय से डरकर मार्क्स भूमिगत हो गये और भागकर सन् 1849 मे इग्लैण्ड आ गये ।

इग्लैण्ड आने के पश्चात् मार्क्स इतिहास एव अर्थशास्त्र के अध्ययन मे लीन हो गये । उन्होने सन् 1848 की फ्रासिसी क्राति की असफलता के लिए अपरिपक्व चिन्तन एव सिद्धान्तो को जिम्मेदार माना । अत साम्यवादी क्राति को सफल बनाने के लिए वे ठोस विचारो एव सिद्धान्तो की खोज मे जुट गये । वे वर्षों तक ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी, लदन मे उसके खुलने से लेकर बद होने के समय तक उसके किसी कोने मे बैठे पढ़ते रहे । इस बीच वे साम्यवादी लीग (Communist Ligue), लदन के क्रियाकलापो मे भी सक्रिय भागीदारी निभाते रहे । । वे एक दैनिक पत्र न्यूयार्क ट्रिब्यून (New york Tribune) के लिए लेख भी लिखते थे, जो उनकी आजीविका के एकमात्र स्रोत थे । सन् 1852–62 के बीच उनके लगभग 500 लेख इसमे छपे । ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी में उठते–बैठते ही मार्क्स ने अपनी महान कृति ''दास कैपीटल'' (Das Kapital) की रचना आरम्भ की, जिसका प्रथम खण्ड सन् 1867 मे

प्रकाशित हुआ।

मार्क्स आजीवन गरीबी मे रहे उनके इकलौते पुत्र एडगर सहित उनके कई बच्चे भूख से मर गये। वे अपना पारिवारिक खर्च चलाने के लिए नियमित रूप से अपने दोस्त एजिल्स से आर्थिक सहायता लेते रहे। उनका स्वास्थ्य कमजोर था। जनवरी सन् 1882 मे उनकी पत्नी का निधन हो गया। वे अस्वस्थ रहने लगे। 14 मार्च सन् 1883 को उनका अस्वस्थ शरीर शात हो गया। उनका शव 17 मार्च सन् 1883 को लदन स्थित हाटगेट कब्रिस्तान मे दफनाया गया। उनकी शवयात्रा मे मात्र 8 व्यक्ति थे। दफनाने की अतिम रस्म उनके एकमात्र दोस्त एजिल्स ने पूर्ण की। वे अपने पीछे तीन पुत्रिया एव दास कैपीटल का अधूरा कार्य छोड गये।

अपने 65 वर्ष के जीवन काल मे मार्क्स मुख्यत तीन देशो–जर्मनी फ्रास और इग्लैण्ड मे रहे। उन्होने अपने जीवन के प्रथम 25 वर्ष जर्मनी मे और अतिम 34 वर्ष इग्लैण्ड मे बिताये। बीच के शेष 6 वर्षों मे वे मुख्यत फ्रास मे रहे। किन्तु, अपने क्रातिकारी विचारो के कारण वे कही निश्चित होकर नही रह सके।

कार्ल मार्क्स को प्रभावित करने वाले घटक

(Factor Influencing Karl Marx)

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, मार्क्स पूजीवाद का वैज्ञानिक समाजवाद अथवा अन्तर्राष्ट्रीय क्रातिकारी समाजवाद मे रूपान्तरण चाहते थे। वे श्रमिक वर्ग के हितो के कट्टर समर्थक और शोषण–विहीन समाज की स्थापना के लिए कृत–सकल्प थे। उन्हे प्रभावित करने वाले प्रमुख घटक निम्नाकित थे–

(1) हीगल के दार्शनिक विचार (Hegelian Philosophy) हीगल जर्मनी के एक दार्शनिक विचारक थे। उनका मत था कि प्रत्येक क्रिया की एक निश्चित प्रतिक्रिया होती है, परिणामस्वरूप समाज मे परिवर्तन एवं समन्वय की प्रक्रिया चलती रहती है। वे एक आदर्शवादी विचारक थे। अत उनका मानना था कि समाज का परिवर्तन किन्ही निश्चित आदर्शों के आधार पर होता है। हीगल के इन दार्शनिक विचारो का उन दिनो जर्मनी मे भारी बोलबाला था। मार्क्स को उनके ये विचार बड़े सकीर्ण लगे। वे उनके इस विचार से तो सहमत हुए कि समाज मे परिवर्तन वाछनीय है किन्तु, इन परिवर्तनो के पीछे आदर्शों की शक्ति को मार्क्स ने बकवास बताया। वे एक भौतिकवादी विचारक थे और वास्तविक घटको एव तथ्यो मे विश्वास करते थे। अत जहाँ हीगल ने द्वन्द्ववाद को आदर्शों पर आधारित माना वहाँ मार्क्स ने उसे भौतिकता के साथ जोड़ा और समाज की प्रगति के नियमो तथा सामाजिक परिवर्तनो के निर्धारक सिद्धान्तो की खोज करना आरम्भ कर दिया। वे वामपथी हीगलवादियो के

सम्पर्क मे आये और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के समर्थक बन गये । हीगल से अपने विचारो की भिन्नता दर्शाते हुए उन्होने लिखा कि, "हीगल की रचनाओ मे द्वन्द्ववाद अपने सिर पर खड़ा है जबकि मैने उसे पैरो के बल खड़ा कर दिया है।"

(2) पूर्ववर्ती विचारक (His Predecessors)- मार्क्स के पूर्ववर्ती विचारको मे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो (एडम स्मिथ एव रिकार्डो) के अलावा फ्रासिसी एव ऑग्ल यूटोपियन समाजवादी (चार्ल्स फूरियर, रोबर्ट ओवन), फ्रेड्रिक लिस्ट, सेट साइमन और सिसमण्डी आदि प्रमुख थे, जिनका उनके आर्थिक चिन्तन एव दर्शन पर गहरा प्रभाव पड़ा । रिकार्डो को तो वे स्वय अपना गुरु बताते थे। वस्तुत *रिकार्डो के मूल्य सिद्धान्त की नीव पर ही उन्होने अपनी आर्थिक* प्रणाली का विशाल प्रासाद खड़ा किया । यद्यपि, मार्क्स ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक चितन की कटु आलोचना की तथापि यह सही है कि मार्क्स के विचारो की आधारशिला प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र ही है । उनका मूल्य का श्रम–लागत सिद्धान्त एव बेशी मूल्य का सिद्धान्त एडम स्मिथ एव रिकार्डो के आर्थिक दर्शन पर आधारित है । इतना ही नही, उन्होने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की भाति न केवल निगमन प्रणाली का प्रयोग ही किया बल्कि उनकी ही भाति अपने सिद्धान्तो को सर्वव्यापक बताया । इसीलिए जीड एव रिस्ट ने लिखा कि, "मार्क्सवाद केवल प्रतिष्ठित तने पर उगी हुई एक शाखा मात्र है।"[2]

सेट साइमन, सिसमण्डी और फ्रेड्रिक लिस्ट से उन्होने बहुत कुछ सीखा । इसी प्रकार चार्ल्स फूरियर और रोबर्ट ओवन से, यद्यपि, वे नैतिक आधार पर सहमत नही थे तथापि समाजवाद का प्रारम्भिक पाठ उन्होने उन्ही से सीखा ।

(3) समकालीन विचारक एवं लेखक (Contemporary Thinkers and Writers) इनमे फ्रेड्रिक एजिल्स, प्रोधो, कैबेट, रोडबर्टस, लुडविग फ्यूरबैच आदि उल्लेखनीय है । इनमे एजिल्स के विचारो का उन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा । जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, वे उनके साथ Communist Manifesto' के सह–लेखक एव उनके एक मात्र एव अभिन्न मित्र तथा आर्थिक सहयोगी थे । अपने फ्रास प्रवास के दौरान वे मुख्यत. प्रोधो एव कैबेट के सम्पर्क मे आये । उन्होने इन सभी समाजवादी लेखको एव विचारको के आर्थिक दर्शन को अधिक वैज्ञानिक एव व्यावहारिक बनाया ।

(4) समकालीन आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति (Contemporary Economic and Political Situation)- मार्क्स आवश्यक रूप से तत्कालीन परिस्थितियो की

---

2. "Marxism is a branch grafted on the classical trunk" -Gide and Rist.

देन थे। वे स्वय जर्मनी के नागरिक थे। वहा की आर्थिक दशाओ का उन पर गहरा प्रभाव पडा। जर्मनी उन दिनो इग्लैण्ड एव फ्रास की तुलना मे न केवल औद्योगिक एव आर्थिक दृष्टि से पिछडा हुआ था बल्कि एक ओर राजनीतिक एकता एव दूसरी ओर आर्थिक समृद्धि के लिए प्रयत्नशील था। इस समय तक वहा पूजीवाद पूर्णत विकसित नही हो पाया था। किन्तु, मार्क्स इग्लैण्ड मे विकसित औद्योगिक-पूजीवादी-अर्थव्यवस्था के गम्भीर दोष देख चुके थे। वहा श्रम असतोष, श्रम-शोषण, वर्ग-सघर्ष, आर्थिक सकटो आदि का प्रभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा था। मार्क्स न केवल जर्मनी को अपितु सम्पूर्ण दुनिया को पूजीवाद के इन गम्भीर दोषो से बचाना चाहते थे। वे इसके उपाय सोचने लगे। उन्होने अध्ययन किया और ऐसे तथ्य खोज निकाले जिनके आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय क्रातिकारी समाजवाद के सिद्धान्तो का प्रतिपादन करना सुगम हो गया।

(5) भौतिकवाद एव इतिहास (Materialism and History) 18वी सदी के उत्तरार्द्ध मे भौतिकवाद जोर पकड गया और 19वी सदी के पूर्वार्द्ध मे जर्मनी एव फ्रास मे इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हो गया। स्वय मार्क्स इस हवा से अछूते नही रहे और वे भौतिकवादी बन गये। वे इतिहास क भी ज्ञाता थे। ऐतिहासिक तथ्यो के ज्ञान ने उन्हे समाजवाद के एक वैज्ञानिक सिद्धान्त के प्रतिपादन के लिए अभिप्रेरित कर दिया। वस्तुत उनके समकालीन ऐतिहासिक तथ्य ही उन उपायो की माग कर रहे थे जिनसे श्रमिको को पूजीवाद की तथाकथित बुराइयो से छुटकारा दिलाना सम्भव हो सकता था।

(6) साम्यवादी लीग एवं सन् 1848 की असफल क्रांति- सन् 1847 मे साम्यवादी लीग की स्थापना हो गयी। अब मार्क्स को अपने क्रातिकारी विचारो की अभिव्यक्ति के लिए एक मच मिल गया जिसका उन्होने भरपूर लाभ उठाया। सन् 1848 की फ्रासिसी क्राति विफल हो गयी। मार्क्स ने इसके लिए ठोस विचारधारा के अभाव को दोषी माना और वे इसके प्रतिपादन मे जुट गये।

प्रमुख कृतियाँ

(Major Works)

कार्ल मार्क्स की प्रमुख रचनाओ मे निम्नाकित उल्लेखनीय है—

	रचना का शीर्षक	प्रकाशन वर्ष
1	Introduction to a critique of Hegelian Philosophy of Rights.	1843
2	The Poverty of Philosophy A critique of Proudhon	1847
3	Discourse upon the Question of Free Exchange	1848
4	Communist Manifesto	1848

	रचना का शीर्षक		प्रकाशन वर्ष
5	Class struggles, in France 1848-1850		1850
6	An Introduction to the critique of Political Economy		1859
7	Das Kapital	Volume I	1867
	Volume II		1885
	Volume III		1894
	Volume IV		1805 1910

ज्ञातव्य है कि दास कैपिटल का दूसरा व तीसरा खण्ड उनकी मृत्यु के पश्चात् एजिल्स ने एव चौथा तथा अतिम खण्ड उनके एक शिष्य कोटस्की ने सन् 1810 तक प्रकाशित करवाया।

उनकी प्रमुख कृतियों पर एक टिप्पणी
(A Note on His Major Works)

मार्क्स लेखनी के धनी थे। विश्व इतिहास मे शायद ही किसी अन्य मौलिक विचारक एव लेखक ने इतनी कलम चलायी हो जितनी मार्क्स ने। 'साम्यवादी घोषणा-पत्र' एव 'दास कैपीटल' उनकी दो प्रमुख कृतियाँ है (किन्तु, उनके बारे मे यह कहा जाता है कि यदि ये दोनों समाप्त कर दी जाये तब भी मार्क्स का शेष साहित्य इतना है कि उन्हे भूलना असम्भव है) अब हम, सक्षेप मे, इन दोनो पर विचार करेंगे—

1. साम्यवादी घोषणा पत्र (Communist Manifesto)-

यह मार्क्स की महत्त्वपूर्ण रचना है जिसका प्रकाशन साम्यवादी लीग, लदन द्वारा जनवरी सन् 1848 मे किया गया। एजिल्स इसके सहलेखक थे और यह मूलत जर्मन भाषा में है। सन् 1848 मे ही इसका फ्रेंच एव पोलिश भाषाओ मे प्रकाशन हो गया। किन्तु, धीरे-धीरे इसका सभी प्रमुख योरोपीय भाषाओ मे प्रकाशन हो गया। अग्रेजी मे इसका प्रथम प्रकाशन सन् 1850 मे इग्लैण्ड मे और दूसरा सन् 1872 मे अमरीका मे हुआ।

इस पुस्तक मे मार्क्स ने पूजीवादी जुआ उतार फेकने के लिए मजदूरो का आह्वान किया। इसमे उन्होने बताया कि वर्तमान समाज दो प्रमुख वर्गों—पूजीपति एव श्रमिक मे विभाजित है। इन दोनो वर्गों के हित अलग-अलग एव इनके पारस्परिक सम्बन्ध अत्यन्त कटु है; क्योकि प्रथम वर्ग द्वारा आर्थिक सत्ता का केन्द्रीकरण कर लिया गया है और यह दूसरे वर्ग के शोषण मे लिप्त है।

चार खण्डो मे विभाजित इस पुस्तक के प्रथम खण्ड मे बताया गया कि तत्कालीन पूंजीवादी निर्धनता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी तथा उसमे वृद्धि की दर तत्कालीन समाज मे धन एव जनसख्या मे वृद्धि की दर से भी तीव्र थी। अत श्रमिक वर्ग का शोषण बढ़ता जा रहा था और उनके हित कुचले जा रहे थे । इसके रचनाकारो ने बताया कि श्रमिको को यह नही मानना चाहिए कि राज्य उनके हितो की रक्षा कर उन्हे पूजीपतियो के शोषण का शिकार होने से बचा लेगा । इसके विपरीत उन्होने यह कहा कि राज्य एक वर्ग विशेष (पूजीपति) की सस्था बन चुका है, अत श्रमिक स्वय अपने शोषण का प्रतिकार करे । उन्होने बताया कि श्रमिक धीरे–धीरे बूर्जुआ प्रधान समाज की कब्र खोदने के लिए सगठित होते जा रहे है । अत वह दिन दूर नही जब इस जुए को उतार फेकना सम्भव हो सकेगा ।

इस पुस्तक के दूसरे भाग मे लेखको ने बताया कि साम्यवादी दल कोई पृथक् दल नही बल्कि वह सर्वहारा वर्ग के हितो का ही एक समर्थक है और उसका मूल कार्य सर्वहारा वर्ग को सगठित करना है ताकि वे शासित से शासक बन सके और पूजीपतियो के विरुद्ध सघर्ष मे विजयी होने के बाद जब उत्पादन के समस्त साधन सामाजिक स्वामित्व मे आ जायेगे तो शोषण समाप्त हो जायेगा और वर्तमान पूजीवादी समाज का एक साम्यवादी समाज मे रूपान्तरण हो जायेगा ।

इसके तीसरे एव चौथे भाग मे दोनो लेखको ने तत्कालीन समाजवाद के विभिन्न रूपो की विस्तृत व्याख्या कर वैज्ञानिक समाजवाद की श्रेष्ठता दर्शायी ।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, मार्क्स एव एजिल्स ने अपने ब्रूसेल्स (बेल्जियम) प्रवास के दौरान साम्यवादी लीग को एक वैचारिक मच प्रदान करते के लिए इसकी रचना की थी और इसमे दोनो युवा लेखको का पूजीवाद के विरुद्ध तीव आक्रोश था । इसीलिए इसके प्रकाशन के पश्चात् तत्काल उन्हे वहा से निकाल भगाया । इसे 'राजनीतिक प्रचार का प्रथरत्न' (a masterpiece of political propaganda) एव 'अन्तर्राष्ट्रीय समाजवाद की प्रथम घोषणा' (first declaration of international socialism) भी कहा जाता है ।

2 दास कैपीटल (Das Kapital)

मार्क्स की यह महान कृति समाजवादियो एव साम्यवादियो का धर्म–ग्रन्थ है । मूल रूप से जर्मन भाषा मे लिखी गयी इस रचना को अंग्रेजी मे 'Capital' शीर्षक से ही जाना जाता है । इसका प्रथम खण्ड सन् 1867 मे प्रकाशित हुआ जबकि इसके दूसरे एव तीसरे खण्ड का प्रकाशन, मार्क्स की मृत्यु के पश्चात्, उनके साथी एजिल्स द्वारा क्रमश सन् 1885 एव 1894 मे किया गया । कुछ लेखको के अनुसार इसका एक ओर खण्ड भी है, जिसमे

मार्क्स के बेशी मूल्य के सिद्धान्त का विवेचन है। इसे इसका चौथा खण्ड कहा जाता है जिसका प्रकाशन सन् 1805–10 के बीच उनके एक अनुयायी **कोटस्की** द्वारा किया गया।

'दास कैपीटल' ने मार्क्स को एक धार्मिक व्यक्तित्व (a religious figure) प्रदान कर दिया। न्यूमैन ने इसे पूजीवाद के लिए कयामत के दिन वाली अर्थात् सर्वनाश करने वाली पुस्तक कहा है।[3] लोरिया के मतानुसार 'दास कैपीटल एक उत्कृष्ट रचना है, इसमे सब कुछ महान है। इसमे जो भी है उसकी किसी से तुलना नही की जा सकती और वह आश्चर्यजनक है।'[4] उन्होने लिखा है कि मार्क्स जानते थे कि दास कैपीटल का तीसरा खण्ड पूजीवाद के लिए 'मौत का झटका' होगा और वह उथल–पुथल मचा देगा। दुर्बल एव रोगी शरीर के धनी मार्क्स मे इतनी हिम्मत शेष नही रह गयी थी कि वे इससे उत्पन्न होने वाली बर्बादी एव सर्वनाश को देख पाते, इसलिए उन्होने अपने जीते–जी इसका प्रकाशन नही करवाया। इस प्रकार बर्बादी के निर्दयी कृत्य से पूर्व मार्क्स की लेखनी कपकपाने लगी और उनकी आत्मा दब गयी।

दास कैपीटल ने मार्क्स को एक उर्वर एव बहुफलदायी लेखक (a prolific writer) बना दिया। इसके प्रथम खण्ड का अग्रेजी मे अनुवाद सन् *1886 मे एव दूसरे तथा तीसरे खण्ड का क्रमश 1907 एव 1909 मे हुआ।* इसके पश्चात् तो यह विश्व की सर्वाधिक चर्चित पुस्तको की गिनती मे आ गयी। जैसा कि Encyclopedia Amencana ने लिखा है, "दास कैपीटल' पूजीवाद की सुव्यस्थित आलोचना था जिसमे मार्क्स की सामाजिक क्राति की अवश्यम्भाविता के सिद्धान्त एव पूजीवाद के स्वत विनाश की प्रवृत्तियो पर बल दिया गया।"[5] इसके प्रथम तीनो खण्डो को क्रमश 'Historical', 'Historico critical' एव 'Historico Litrary' कहा जाता है जबकि तथाकथित चौथा खण्ड Theory of Surplus value के नाम से विख्यात है।

मार्क्स के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Marx)

मार्क्स के प्रमुख आर्थिक विचारो का अध्ययन हम अग्राकित दो शीर्षको मे करेगे–

---

3 "Das capital is infact, the doomsday book of Capitalism" — Newman

4 Das captital "is a master piece where in all is great, all alike incomparable and wonderful." — Loria

5 Das Kapital was a systematic critique of capitalism with emphasis on its selfdestructive tendencies expounding Marx s theory of inevitability of social revolution." — Encyclopedia Americana

(A) सामान्य आर्थिक विचार (General Economic Ideas)

1 द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद,
2 इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या,
3 वर्ग–सघर्ष,
4 उत्पादन–प्रणाली,
5 मानव समाज का विकास,
6 मार्क्सवादी कार्यक्रम,
7 उपागम विधि,
8 मुद्रा,
9 श्रम–विभाजन,
10 वाणिज्यिक पूजी और
11 लगान ।

(B) आर्थिक सिद्धान्त (Economic Theories)

1 मूल्य का श्रम सिद्धान्त,
2 बेशी मूल्य का सिद्धान्त,
3 पूजी के सकेन्द्रण का सिद्धान्त,
4 पूजीवादी शोषण का सिद्धान्त और
5 आर्थिक विकास का सिद्धान्त ।

अब हम, सक्षेप मे, इन सबका विवेचन करेगे–

(A) सामान्य आर्थिक विचार (General Economic Ideas)-

मार्क्स के सामान्य आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1. द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद (Dialectical Materialism)

'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' मार्क्सवादी दर्शन की आधारशिला है । इसके द्वारा उन्होने भौतिक जगत मे हो रहे परिवर्तनो के क्रम की व्याख्या की है । इसके विवेचन से पूर्व, सक्षेप मे, द्वन्द्ववाद का अर्थ एव इसके बारे मे हीगल जिनका मार्क्स के चिंतन पर गहरा प्रभाव पड़ा था, के विचारो की जानकारी आवश्यक है ।

द्वन्द्ववाद का अर्थ (Meaning of dialecticalism) 'द्वन्द्ववाद' एक दार्शनिक विचार है । सरल शब्दो मे, दो परस्पर विरोधी शक्तियो मे सघर्ष को 'द्वन्द्व' कहते है । इस आधार पर 'द्वन्द्ववाद' किसी विचार अथवा अवधारणा मे पाये जाने वाले दोषो को दूर कर सत्य तक पहुचने की एक तकनीक है । इसके समर्थको के अनुसार इस ससार मे जो भी परिवर्तन होते है वे सब इसी 'द्वन्द्ववाद' के परिणाम है । इस तकनीक के प्रयोग के साथ मुख्यत हीगल, जो जर्मनी के एक दार्शनिक एव आदर्शवादी विचारक थे, का नाम जुड़ा हुआ है । उन्होने बताया कि परस्पर विरोधी शक्तियो तथा हितो मे टकराव के कारण ही

समाज मे परिवर्तन एव अन्त मे, एकरूपता एव सामजस्य की स्थापना होती है। इस क्रम मे, उन्होने बताया कि सर्वप्रथम किसी धारणा अथवा विचार के बारे मे कोई 'कथन' अथवा 'वाद' (thesis) होता है । यह सकारात्मक होता है। जो व्यक्ति इस 'वाद' से सहमत नही होते वे इसका 'प्रतिवाद' (antithesis) करते है । यह नकारात्मक होता है । 'वाद' एव 'प्रतिवाद' के मध्य कुछ समय तक सघर्ष चलता है । इस सघर्ष से एक तीसरी वस्तु 'सवाद' (synthesis) की उत्पत्ति होती है । यह एक निर्णायक स्थिति होती है, जो प्रथम दोनो स्थितियो से भिन्न एव उत्तम है क्योकि, इसमे उन दोनो की प्रमुख विशेषताये एव अच्छाइया रहती है । *किन्तु, यह विचार अर्थात् 'सवाद' स्थायी* नही रहता । थोडे ही समय पश्चात् इस 'सवाद' को लेकर लोगो मे पहले 'वाद' और फिर 'प्रतिवाद' आरम्भ हो जाता है । इस सघर्ष से एक नया एव उच्चकोटि का 'सवाद' उत्पन्न हो जाता है । कुछ समय पश्चात् पुन इस उच्चकोटि के 'सवाद' के बारे मे पहले 'वाद' और फिर 'प्रतिवाद' की शृखला आरम्भ हो जाती है । यही 'द्वन्द्ववाद' है और इससे उत्तरोत्तर उच्चत्तर 'सवादो पर पहुँचा जाता है ।

इस प्रकार हीगल के अनुसार प्रत्येक 'क्रिया' की अपनी एक निश्चित 'प्रतिक्रिया' होती है और दोनो मे परस्पर सघर्ष के फलस्वरूप एक तीसरी एव नयी स्थिति उत्पन्न हो जाती है । दूसरे शब्दो मे, प्रत्येक प्रारम्भिक स्थिति दूसरी विरोधी स्थिति को जन्म देती है और इन दोनो मे सघर्ष से तीसरी स्थिति उत्पन्न होती है । इसी आधार पर हीगल ने बताया कि मानव समाज परिवर्तन एव विकास की एक लम्बी कहानी है और इसका कारण परस्पर विरोधी शक्तियो का सार्वभौमिक, सार्वकालिक एव अनवरत सघर्ष है । उन्होने इसे जीवन का स्रोत एव दर्शन बताया । सक्षेप मे, द्वन्द्ववाद को निम्नाकित चार्ट की सहायता से समझाया जा सकता है—

द्वन्द्ववाद
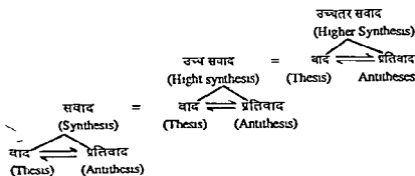
मार्क्स का द्वन्द्ववाद (Dialecticism of Marx)- हीगल के 'द्वन्द्ववाद' को मार्क्स ने ही सर्वप्रथम अर्थशास्त्र एव समाजशास्त्र पर लागू किया । उन्होने उनके 'आदर्शवादी द्वन्द्ववाद' के आधार पर 'भौतिकवादी द्वन्द्ववाद' अथवा 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' की चर्चा की और कहा कि मनुष्य की मानसिक चेतना उसके सामाजिक अस्तित्व का निर्धारण नही करती, जैसा कि हीगल ने माना बल्कि उसका सामाजिक अस्तित्व उसकी मानसिक चेतना का निर्धारक है । उन्होने बताया कि 'वाद' एक प्रचलित व्यवस्था एव 'प्रतिवाद' उसको चुनौती है । इन दोनो के बीच सघर्ष से एक नयी व्यवस्था उत्पन्न होती है, जिसे 'सवाद' कहते है । इसी आधार पर उन्होने कहा कि मानव समाज की आर्थिक प्रगति की कहानी 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' की एक कहानी है । इसके कारण ही समाज मे सदैव एक वर्ग का दूसरे वर्ग के साथ सघर्ष एव परिणामस्वरूप उत्थान >पतन >उत्थान > अर्थात् परिवर्तन का क्रम चलता रहा है ।

मार्क्स ने बताया कि वर्तमान पूजीवादी व्यवस्था भी इसी प्रकार के सघर्षो की एक लम्बी कहानी एव उसका एक अस्थायी परिणाम है । अत उन्होने माना कि जिस प्रकार किसी 'सवाद' मे 'वाद' और 'वाद' मे 'प्रतिवाद' के बीज रहते है उसी प्रकार वर्तमान पूजीवाद व्यवस्था के उत्थान मे उसके पतन के बीज निहित है और इसका पतन एव साम्यवादी व्यवस्था की स्थापना अवश्यम्भावी है । उन्ही के शब्दो मे, "इतिहास इस बात की पुष्टि करता है कि कोई भी मानवीय एव सामाजिक सस्था स्थायी नही है, अत पूजीवादी आर्थिक एव सामाजिक सस्थाए भी अस्थायी हैं ।"

इस प्रकार हीगल से भिन्न मार्क्स ने सामाजिक विकास को वैचारिक सघर्ष का परिणाम न मानकर भौतिक एव आर्थिक सघर्षों का एक परिणाम बताया और कहा कि समाज मे शक्ति प्राप्त करना चाहने वाले वर्ग का सदैव यह प्रयास रहता है कि पहले से मौजूद शक्तिशाली वर्ग को नष्ट कर दे और शक्तिशाली वर्ग का यह प्रयास रहता है कि वह नये वर्ग का सिर न उठाने दे । इस प्रकार जो सघर्ष चलता है वही परिवर्तन की सम्पूर्ण प्रक्रिया का मूल तत्त्व है । हीगल से उनके ये विचार इस मायने मे भिन्न हैं कि उन्होने जहाँ 'विचार' 'कल्पना' और 'आदर्श' को महत्ता दी वहाँ मार्क्स ने क्रमश 'क्रिया' 'वास्तविकता' एव 'भौतिकता' को प्राधान्य दिया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने हीगल के 'द्वन्द्ववाद' को भौतिक आधार प्रदान कर उसे आदर्शवादी से यथार्थवादी, काल्पनिक से वैज्ञानिक और आध्यात्मिक से भौतिकवादी बनाया। अत आदर्शों पर आधारित न होकर भौतिक जगत की वास्तविक घटनाओ पर आधारित होने के कारण, ही मार्क्स के द्वन्द्ववाद को 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' कहा जाता है । सार रूप मे, इसके अनुसार नियामक सत्ता भौतिक है न कि आध्यात्मिक ।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की प्रमुख विशेषतायें (Main features of dialectical materialism) मार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की प्रमुख विशेषताये निम्नांकित है–

(1) विभिन्न **आर्थिक घटनाओं में अन्तर्सम्बन्ध एवं अन्त निर्भरता** पायी जाती है।
(2) **आर्थिक परिवेश परिवर्तनशील है** और फलत उत्थान >पतन > उत्थान > का क्रम चलता रहता है।
(3) जब **'प्रतिवाद' में विस्फोटक शक्ति** इकट्ठी हो जाती है तो तीव्र क्रांतिकारी एव आमूलचूल परिवर्तन होता है।
(4) प्रत्येक **समाज में अन्तर्विरोध** के कारण वाद प्रतिवाद और 'सवाद' की श्रृंखला जारी रहती है। यही परिवर्तन एव विकास का मूलमंत्र है।
(5) किसी समाज की नीव उसकी आर्थिक प्रणाली एव उसमे **उत्पादन-सम्बन्धों पर आधारित** रहती है।
(6) परिवर्तन की **सम्पूर्ण प्रक्रिया में पदार्थ** (matter) प्रधान है। पदार्थ से उनका आशय भौतिक प्रकृति से है। इसी के सहारे विचारो एव व्यक्तित्वो का विकास होता है। इस आधार पर प्रत्येक व्यक्ति रगमच के एक कलाकार के समान है और जब समाज उसकी माग करता है तब उसका स्वत आविर्भाव हो जाता है।
(7) **वर्ग-सघर्ष अवश्यम्भावी** है और इतिहास आवश्यक रूप से समाज के विभिन्न वर्गो मे निरन्तर सघर्ष का एक अभिलेख है।

उद्देश्य एव मूल्याकन (Objects and evaluation) मार्क्स की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी व्याख्या के प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है–

(1) **इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या करना**– मार्क्स ने बताया कि इतिहास केवल भूतकालीन घटनाओ एव युद्धो का अभिलेख नहीं है बल्कि उससे कही अधिक एव मानव समाज के विकास की एक लम्बी एव सघर्षरत कहानी है। इसकी पुष्टि हेतु उन्होने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के आधार पर इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या की और परामर्श दिया कि मानव जाति का सम्पूर्ण इतिहास दुबारा एव इसी आधार पर लिखा जाना चाहिए।

(2) **वर्ग-सघर्ष की अनिवार्यता सिद्ध करना**– मार्क्स ने अपने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के जरिये समाज मे वर्ग–सघर्ष की अनिवार्यता सिद्ध की और बताया कि भिन्न-भिन्न उद्देश्य वाले वर्गों के बीच सघर्ष विकास के प्रत्येक चरण मे रहे है। उदाहरणार्थ आदि युग मे मालिक (वाद) एव दास (प्रतिवाद) मध्य युग मे सामत (वाद) एव किसान (प्रतिवाद) और वर्तमान युग मे पूजीपति (वाद) एव श्रमिक (प्रतिवाद) के बीच सघर्ष इसके परिचायक है।

(3) **क्रांति का औचित्य सिद्ध करना**– द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के सहारे

मार्क्स ने शोषित वर्ग द्वारा क्रांति का औचित्य सिद्ध कर दिया और श्रमिको का आह्वान किया कि 'विश्व के मजदूर एक हो जाओ और पूँजीवाद को समाप्त कर दो।'

(4) **समाजवाद की स्थापना**- मार्क्स ने पूजीवादी व्यवस्था मे गम्भीर दोष देखे, अत उसके स्थान पर समाजवाद की स्थापना का औचित्य एव अनिवार्यता सिद्ध की।

2 इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या (Materialistic Interpretation of History)-

इससे आशय वस्तुत मार्क्स के 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' से ही है।[6] इसके अनुसार मानवीय क्रियाओ एव प्रयासो का आधारभूत दर्शन भौतिक समृद्धि प्राप्त करना है। मार्क्स ने इसके द्वारा मानव एव परिवेश (environment) के मध्य सम्बन्ध एव निर्भरता की चर्चा की। यह आदर्शवाद से बिल्कुल भिन्न है।

मार्क्स ने बताया कि मानव समाज सदैव ऐसे भिन्न–भिन्न वर्गों मे विभाजित रहा है जो एक दूसरे को विपरीत दिशा मे खींचते रहे है। इसके अलावा प्रत्येक समाज का सामाजिक स्तर उसकी आर्थिक स्थिति से निर्धारित होता है, अत सम्पूर्ण मानव समाज का एक साथ एव ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे अध्ययन किया जाना चाहिये। इस प्रकार उनका ऐतिहासिक भौतिकवाद एक वैज्ञानिक धारणा है, जो मानव इतिहास की भौतिक आधार पर व्याख्या करता है। उन्होने बताया कि इतिहास का वर्तमान एव भविष्य से भी घनिष्ट सम्बन्ध है तथा समाज के ऐतिहासिक परिवर्तनो को 'उत्पादक के रूप मे मनुष्यो के पारस्परिक सम्बन्धो के आधार पर' समझा जा सकता है। दूसरें शब्दो मे, उन्होने बताया कि आर्थिक घटक सामाजिक परिवर्तनो मे निर्णायक भूमिका निभाते है। उनके मतानुसार समाज कोई जड़ एव पूर्वरचित सस्था नही बल्कि एक गतिशील एव सावयव रचना है। इसमे उत्पादन एव विनिमय की एक दी हुई स्थिति मे विभिन्न लोगो के बीच एक निश्चित सम्बन्ध रहता है। जैसे ही उत्पादन की कोई नयी तकनीक अपनायी जाती है तो उत्पादन प्रणाली बदलती है। मार्क्स के अनुसार, "भौतिक जीवन मे उत्पादन प्रणाली समाजिक, राजनीतिक एव आध्यात्मिक प्रक्रियाओ को समान रूप से प्रभावित करती है।" अर्थात् उनके मतानुसार समाज की आर्थिक व्यवस्था मे परिवर्तन से अन्य सस्थाए एव व्यवस्थाये स्वत ही बदल जाती हैं। इस प्रकार मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद का एक प्रमुख लक्षण 'आर्थिक निर्णयवाद' (economic determinism) है। उन्होने बताया कि जब आर्थिक घटको मे परिवर्तन से समाज के विभिन्न लोगो के बीच आर्थिक सम्बन्ध बदलते है तो

---

6 "It (materialistic interpretation of history) is the application of the principle of Dialectical Materialism to the development of society" -Sweezy P M

घटनाये निर्धारित होती है । इससे पिछड़े एव शोषित वर्गों को उपर उठने का अवसर मिलता है किन्तु, जो सत्ता मे होता है वह अपनी आर्थिक स्थिति मे बदलाव का विरोध एव प्रतिकार करता है । इससे वर्ग–सघर्ष की शुरूआत हो जाती है और क्रमश क्राति की पृष्ठभूमि बनती जाती है ।

मार्क्स ने बताया कि इसी आधार पर मानव समाज का स्वरूप बदला है और उसका प्रारम्भिक साम्यवादी से दासता, दासता से सामतवाद और सामतवाद से वर्तमान पूजीवादी अवस्था मे रूपान्तरण हुआ है । इसी आधार पर समाज स्वतत्र एव गुलाम, कुलीन एव गवार, मालिक एव सेवक, शिल्पकार सघ–मालिक एव कारीगर, पूजीपति एव श्रमिक और बुर्जुआ एव सर्वहारा वर्गों मे विभाजित रहा है । उन्होने बताया कि एक पूजीवादी अर्थव्यवस्था मे वर्ग–सघर्ष अवश्यमभावी है क्योकि, उत्पत्ति के बडे पैमाने तथा श्रम–विभाजन एव विशिष्टीकरण और मशीनो के बढते प्रयोग के कारण एक ओर उत्पादन जहा अधिकाधिक सामूहिक अथवा सामाजिक होता जा रहा है वहा दूसरी ओर उत्पादक इकाइयो का स्वामित्व कुछेक हाथो मे केन्द्रित हो जाने के कारण लाभ उत्तरोत्तर वैयक्तिक होते जा रहे है । उन्होने बताया कि वर्ग–सघर्ष मे उत्तरोत्तर वृद्धि से क्राति होगी और क्राति से पूजीवादी व्यवस्था का समाजवादी व्यवस्था मे रूपान्तरण हो जायेगा, जिसमे सम्पूर्ण समाज एक एव वर्ग–विहीन होगा । इस व्यवस्था मे उत्पत्ति के साधनो पर सामाजिक स्वामित्व होगा, उत्पादन समाज की आवश्यकतानुसार होगा, प्रत्येक व्यक्ति के साथ न्याय होगा और उसे उसकी सामर्थ्यानुसार पुरस्कार प्राप्त होगा । इस प्रकार जहा वर्ग–सघर्ष अवश्यम्भावी है वहा मार्क्स के अनुसार परिवर्तन भी अवश्यम्भावी है, जिसे रोकने की चेष्टा करना एक भूल एव बड़ी आर्थिक बर्बादी है । मार्क्स के अनुसार "सभी वर्तमान समाजो का इतिहास इसी वर्ग–सघर्ष का इतिहास है ।"[7] इसी आधार पर मार्क्स ने इतिहास के पुनरावलोकन की सिफारिश की । 'साम्यवादी घोषणा–पत्र' मे मार्क्स एव एजिल्स ने लिखा है कि, "ऐतिहासिक भौतिकवाद कोई हठीला विचार नही है; न ही यह कोई सूत्र है किन्तु, एक यथार्थ विज्ञान एव *वास्तविक अध्ययन तथा ऐतिहासिक अनुसधान का एक उपकरण है ।"*

आलोचना (Criticism)- मार्क्स की उपर्युक्त व्याख्या की निम्नाकित *आलोचनाए की जाती है*–

(i) इतिहास पर आर्थिक घटको के अलावा अन्य, यथा–सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक घटको का भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, जिसे मार्क्स ने बिल्कुल भुला दिया ।

(ii) समाज के ऐतिहासिक विकास का श्रेय केवल उत्पादन एव

7 "The History of all hitherto existing society is the history of class struggles " Marx K.

विनिमय की क्रियाओ, घटनाओ एव व्यवस्थाओ को ही नही दिया जा सकता।

(iii) सामाजिक विकास एव परिवर्तन के लिए क्राति ही एकमात्र विकल्प नही । विश्व इतिहास ऐसे उदाहरणो से भरा पड़ा है, जब शाति काल मे महत्त्वपूर्ण एव दीर्घजीवी सामाजिक परिवर्तन हुए है ।

3. वर्ग-संघर्ष (Class Struggle)

मार्क्स द्वारा की गई इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या मे वर्ग--सघर्ष की अवधारणा की व्यापक महत्ता है । वर्ग से उनका अभिप्राय किसी जाति, धर्म अथवा आय वर्ग से नही है बल्कि समाज के जिन लोगो के आर्थिक हित एक समान होते है, उन्हे मार्क्स ने एक वर्ग मे सम्मिलित किया है ।

इन वर्गों का निर्धारण किसी समाज मे रहने वाले लोगो के उत्पादन सम्बन्धो से होता है और भिन्न--भिन्न वर्गो के आर्थिक हित अलग--अलग होते है । अत इनमे आपस मे टकराव रहता है । इसीलिए जब भी और जैसे ही किसी समाज मे ये सम्बन्ध बदलते है, वर्ग भी बदल जाते है । मार्क्स के मतानुसार, ''वर्तमान के सभी समाजो का इतिहास वर्ग--सघर्ष का इतिहास है । स्वतत्र एव गुलाम, कुलीन एव गवार, मालिक एव सेवक, शिल्पी सघ--मालिक एव कारीगर और एक ही शब्द मे 'शोषक' एव 'शोषित' लगातार एक दूसरे के विरुद्ध रहे है और छुपे अथवा खुले रूप मे या तो समाज की क्रातिकारी पुनर्रचना हुई है अथवा परस्पर झगड़ने वाले वर्गों की सामान्य बर्बादी हुई है ।''[8]

मार्क्स ने बताया कि जैसे ही किसी प्रचलित उत्पादन विधि मे परिवर्तन होता है, सभी वर्गों को न्यूनाधिक लाभ मिलते हैं । फलत. सभी वर्ग उसका समर्थन करते है । किन्तु, थोड़े ही समय पश्चात् नये बने सम्बन्धो से लोगो के पारस्परिक हितो मे टकराव उत्पन्न हो जाता है क्योकि इनसे एक वर्ग को ज्यादा एव दूसरे वर्ग को कम लाभ मिलने लग जाते है । जिस वर्ग को लाभ मिलता है वह वर्ग उसका समर्थन एव दूसरे वर्ग विरोध करने लगते है । सामान्यतया सम्पन्न वर्ग समर्थन एव निर्धन वर्ग विरोध करता है । इससे वर्ग--सघर्ष आरम्भ हो जाता है । मार्क्स ने वर्ग--सघर्ष के क्रमिक इतिहास का उल्लेख करते हुए बताया कि प्रारम्भिक साम्यवादी समाज मे उत्पत्ति के साधनो पर सामाजिक स्वामित्व था और समाज मे केवल एक ही वर्ग था ।

---

8 "The history of all existing society is the history of class struggles Freeman and slave, patrician and plebeian, lord and serf, guild-master and journeyman, in a word oppressor and oppressed, stood in constant opposition to one another carried on uninterrupted now hidden, now open fight that each time ended either in a revolutionary reconstitution of society at large, or in the common ruin of contending classes"

Marx. K.

इस अवस्था मे जैसे ही किसी एक समाज अथवा कबीले ने किसी दूसरे समाज अथवा कबीले पर हमला किया पराजित समाज के लोगो ने मरने की बजाय जीवित रहना और विजयी समाज ने उन्हे मारने की बजाय गुलाब बनाकर रखना श्रेयस्कर समझा । इस प्रकार समाज मे दो वर्ग हो गये और इनके बीच ऐसे निश्चित उत्पादन सम्बन्ध स्थापित हो गये जिनसे मालिको अर्थात् विजेताओ को फायदा था क्योकि ये दास उत्पादन मे जितना योगदान करते *उससे कही कम भुगतान इन्हे जीवित रहने के लिए किया जाता था ।* इस प्रकार मानव समाज मे 'लाभ' सस्था का उद्भव हो गया । तब से लेकर आज तक हर काल एव समाज मे विभिन्न वर्ग, लाभ एव शोषण का सहअस्तित्व रहा है । शोषण के शिकार दास कालान्तर मे अपने शोषण के विरुद्ध सगठित हो गये और उत्पादन सम्बन्धो मे बदलाव की माग करने लगे । अब जो वर्ग-सघर्ष चला उसमे दास सेवक (serf) हो गये और इससे उत्पादन सम्बन्धो मे जो बदलाव आया उसे इस सेवक वर्ग ने दासता से बेहतर समझा क्योकि *अब इन्हे न केवल कुछ वैयक्तिक स्वत्रता मिल गयी अपितु निजी सम्पत्ति का* अधिकार भी मिल गया । इस नये समाज मे पूजीपति सामत बन गये । दूसरे शब्दो मे, मार्क्स ने बताया कि प्रत्येक समाज मे एक शोषक अर्थात् सम्पन्न और दूसरा शोषित अर्थात् गरीब वर्ग रहा है, जिन्हे हम क्रमश पूजीपति तथा 'श्रमिक' कह सकते है ।

मार्क्स ने बताया कि उत्पादन सम्बन्धो की पूजीवादी व्यवस्था मे समाज मे कुल तीन-वर्ग पूजीपति, श्रमिक एव मध्यम-वर्ग होते है । इनमे प्रथम दो वर्ग अधिक महत्त्वपूर्ण है जिनके बीच सघर्ष से तीसरे वर्ग का दूसरे वर्ग मे विलय हो जाता है । किन्तु, इससे दूसरे वर्ग की ताकत नही बढ़ती । फिर भी कुछ समय बाद केवल दो वर्ग रह जाते है जो एक दूसरे के आमने-सामने आ जाते है । इनमे पूजीपति वर्ग वह वर्ग होता है जिसका उत्पत्ति के साधनो पर स्वामित्व होता है और श्रमिक-वर्ग एक स्वामित्वविहीन वर्ग होता है ।

इस प्रकार *मार्क्स के अनुसार किसी समाज की सामाजिक, आर्थिक,* एव राजनैतिक अधि-सरचना उत्पादन सम्बन्धो द्वारा निर्धारित होती है और जैसे ही ये सम्बन्ध बदलते है, यह अधि-सरचना भी बदल जाती है । उन्होने बताया कि राज्य रूपी सस्था सदा से ही शोषक अर्थात् सम्पन्न वर्ग के हितो की समर्थक रही है । अत राज्य का स्वरूप वर्ग-राज्य का रहा है न कि जन-राज्य (class state and not a mass state) का । मार्क्स ने बताया कि, इतना ही नहीं, पूजीवादी राज्य मे श्रमिको एव गरीबो को धर्मभीरु बनाकर यह कहा जाता है कि उनकी जैसी भी स्थिति है, वही ईश्वर को मजूर थी और जो पूजीपति उत्पादन के क्षेत्र मे परस्पर प्रतिस्पर्धा करते हुए झगड़ते है, वे श्रमिको के विरुद्ध एकजुट हो जाते है । *श्रम-असतोष इससे और भड़क उठता है ।*

पूजीपति इसे कम करने अथवा दबाने के लिए कई प्रकार के प्रलोभन देते है। किन्तु, ये श्रमिको की न्यायोचित मागो की आवाज दबा नही सकते। अत अन्तत यह असतोष तभी समाप्त होता है जब पूजीवादी समाज का एक नये समाजवादी समाज मे रूपान्तरण हो जता है।

4. उत्पादन–प्रणाली (Production Method)

यद्यपि, यह इतिहास की भौतिकवादी–व्याख्या का ही एक भाग है, किन्तु विश्लेषण की सरलता के लिए इसका पृथक् विवेचन किया जा रहा है। जिस व्यवस्था द्वारा समाज मे भौतिक वस्तुओ का उत्पादन होता है, उसे उत्पादन–प्रणाली कहते है। यह समाजवासियो के मध्य विशिष्ट उत्पादन सम्बन्धो की जननी है। मार्क्स ने बताया कि उत्पादन–प्रणाली के दो निर्धारक घटक है–

(1) उत्पादन–शक्ति और (2) उत्पादन–सम्बन्ध।

(1) उत्पादन–शक्ति (Power of Production) यह उत्पादन प्रणाली की पहली शक्ति है। इसका निर्धारण श्रमिको की सख्या, उनकी कार्यक्षमता और उनके कार्यानुभव द्वारा होता है। मार्क्स के अनुसार लोगो के पारस्परिक सम्बन्ध उत्पादन शक्ति से जुडे रहते है। जैसे ही उत्पादन–शक्ति बदलती है, उत्पादन प्रणाली और फलस्वरूप लोगो के मध्य सामाजिक सम्बन्ध बदल जाते है।

(2) उत्पादन–सम्बन्ध (Production Relations)- उत्पादन प्रणाली की दूसरी महत्त्वपूर्ण–शक्ति उत्पादन सम्बन्ध है। इससे आशय उत्पत्ति के उन साधनो के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धो से है जो किसी वस्तु के सामाजिक *अर्थात् सामूहिक उत्पादन मे सम्मिलित होते है। ये सम्बन्ध मुख्यत दो घटको* से प्रभावित होते है– (i) साधनो की क्रियाशीलता और (ii) श्रमिको के मध्य कार्यों का आदान–प्रदान।

सक्षेप मे उत्पादन–प्रणाली को निम्नाकित चार्ट की सहायता से समझाया जा सकता है–

उत्पादन–प्रणाली

- उत्पादन–शक्ति
  - श्रमिको की सख्या
  - श्रमिको का कार्यानुभव
  - श्रमिको की कार्यदक्षता
- उत्पादन–सम्बन्ध
  - साधनो की क्रियाशीलता
  - श्रमिकों के मध्य कार्यों का आदान–प्रदान
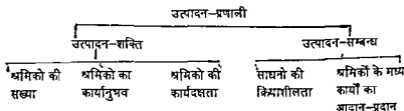
मार्क्स के मतानुसार उत्पादन–प्रणाली परिवर्तनशील एव विकासमान है । उत्पादन–शक्ति एव उत्पादन–सम्बन्धो मे परिवर्तन से उत्पादन–प्रणाली बदल जाती है । इन दोनो मे मार्क्स ने उत्पादन–सम्बन्धो को अधिक महत्त्वपूर्ण माना और बताया कि ये सम्बन्ध ही समाज की आर्थिक अधि–सरचना का निर्माण करते है । जैसे ही ये सम्बन्ध बदलते है, सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है । उदाहरणार्थ, औद्योगिक क्राति के पश्चात् जैसे ही उत्पादन–सम्बन्ध पूजीपतियो एव श्रमिको के रूप मे बदल गये, कृषि–प्रधान–सामतवादी–समाज पूजीवादी समाज मे बदल गया । इसी प्रकार जैसे ही वर्तमान वर्गो के मध्य सामाजिक सम्बन्धो मे बदलाव आयेगा, मार्क्स ने कहा, पूजीवाद समाप्त हो जायेगा ।

समाज एव उत्पादन–प्रणाली के विकास मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है । इसी आधार पर मार्क्स ने कहा कि मानव समाज के आर्थिक विकास का इतिहास और कुछ नही बल्कि केवल उत्पादन–प्रणाली के विकास का इतिहास है । उन्होने इसे निम्नाकित पाच युगो मे विभाजित किया–

(1) आदिम साम्यवादी युग– इस युग मे मानव समाज वर्गविहीन एव शोषण–विहीन था तथा उत्पत्ति के साधनो पर सारे समाज का स्वामित्व था ।

(2) दासता का युग– इस युग मे उत्पत्ति के साधनो पर कुछ प्रभावशाली लोगो ने स्वामित्व स्थापित कर लिया और समाज मालिक (वाद) एव दासो (प्रतिवाद) मे विभाजित हो गया ।

(3) सामन्तवादी युग– इस युग मे समाज भूमिपतियो (वाद) एव काश्तकारो (प्रतिवाद) मे विभाजित हो गया ।

(4) पूजीवादी युग– इस युग मे समाज पूजीपतियो एव श्रमिको मे विभाजित है ।

(5) साम्यवादी युग– मार्क्स के अनुसार यह अतिम युग होगा । इसमे उत्पादन के सभी साधनो पर सामाजिक स्वामित्व होगा । अत समाज मे शोषक एव शोषित वर्ग नही होगे । इसमे प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमतानुसार कार्य करेगा और आवश्यकतानुसार प्राप्त करेगा । यह समग्र मानसिक क्राति का युग होगा, जिसमे लोग सभी पारस्परिक राग–द्वेष भूलकर एक–दूसरे का दु ख–दर्द बाट लेगे । वस्तुत इस समाज मे कोई दु खी रहेगा ही नही ।

किन्तु, मार्क्स के उपर्युक्त विचारो की यह कहकर आलोचना की जाती है कि केवल उत्पादन–प्रणाली ही सामाजिक सम्बन्धो की एकमात्र निर्धारक नही है और साम्यवादी समाज की स्थापना एक स्वप्नमात्र है ।

5. मानव समाज का विकास (Evolution of Society)

मार्क्स का किसी अलौकिक शक्तियो मे विश्वास नहीं था । अत उन्होने

मानव समाज की उत्पत्ति एव विकास को ईश्वरीय देन नही माना और इसके विकास की वैज्ञानिक व्याख्या करने तथा इससे जुडे कुछ प्रश्न यथा–मानव समाज क्या एव क्यो है ? इसमे परिवर्तन कब एव क्यो होते है ? तथा भविष्य मे इसमे कब एव कैसे परिवर्तन हो सकते है ? का समाधान खोजने का प्रयास किया। उन्होने बताया कि भौतिक प्रकृति का स्वतन्त्र घटना–चक्र निरन्तर जारी रहता है और इसी से समाज का विकास होता है। इसी आधार पर, उदाहरण के लिए, जब एव जिस समाज को गाधी की जरूरत हुई तो गाधी का उदय हो गया और जिस समाज को गौर्वाचौफ की जरूरत हुई वहा वे सामाजिक रगमच पर उतर आये।

मार्क्स ने बताया कि मानव समाज मे अनेक विरोधाभाष है। किन्तु, वैज्ञानिक विधियो के प्रयोग से उन्हे दूर कर सामाजिक प्रगति का मार्ग ज्ञात किया जा सकता है। इसके लिए उन्होने समय–दूरदर्शी यत्र (time telescope) का प्रयोग किया और बताया कि सामाजिक विकास मे सामाजिक सम्बन्ध ही सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है क्योकि सभी राजनैतिक एव वैधानिक सस्थाओ का ढाचा सामाजिक सम्बन्धो पर ही आधारित रहता है। उन्होने कहा कि सामाजिक उत्पादन के कारण ही कोई व्यक्ति सामाजिक सम्बन्धो मे फँसता है, जिससे उसकी उत्पादन शक्तियो का विकास एव आपसी हितो तथा सामाजिक सम्बन्धो मे टकराव होता है। अत मार्क्स ने बताया कि सामाजिक रूपान्तरण (social change)) के जरिये सामाजिक सम्बन्ध बदलने चाहिये ताकि समाज की उत्पादक शक्तियो का यथोचित विकास हो सके। उन्होने कहा कि समाजवासियो के सामाजिक सम्बन्ध उत्पत्ति के साधनो पर उनके स्वामित्व के आधार पर तय होते है और एक ऐसे समाज, जिसमे निजी सम्पत्ति की सस्था विद्यमान है, मे स्पष्टत दो वर्ग–पूजीपति एव श्रमिक होगे।

मार्क्स ने बताया कि सम्पूर्ण आर्थिक प्रणाली उत्पादन की एक सामाजिक व्यवस्था है जिससे सभी सामाजिक एव आर्थिक सम्बन्ध निर्धारित होते है। उत्पादन प्रणाली मे परिवर्तन के साथ ही सामाजिक तथा आर्थिक सम्बन्ध बदल जाते है। इसीलिए मार्क्स पूजीवाद को कभी न बदलने वाली सामाजिक व्यवस्था नही मानते। उन्होने इसके ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश डाला जो मानव समाज के विकास की एक गाथा है।

6. मार्क्सवादी कार्यक्रम (Marxian Programme)

पूजीवादी समाज के साम्यवादी अथवा समाजवादी समाज मे रूपान्तरण के लिए मार्क्स ने एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। इस कार्यक्रम मे तीन प्रमुख बाते है– (i) निजी सम्पत्ति का उन्मूलन (ii) उत्पत्ति के साधनो का सामाजीकरण और (iii) पूजीपतियो की सम्पत्ति का हरण।

मार्क्स ने बताया कि श्रम के शोषण का प्रधान कारण निजी सम्पत्ति है जिसका सृजन 'बेशी मूल्य के सिद्धान्त' (theory of surplus value) के अनुसार

होता है । अत मार्क्स एव उनके अनुयायी इस संस्था को पूजीवाद के दोषो का मूल कारण मानते है और सबसे पहले इसे अपने आक्रमण का शिकार बनाते है अर्थात् निजी सम्पति का उन्मूलन करना चाहते है । इस हेतु, वे उत्पत्ति के साधनो के सामाजीकरण का सुझाव देते है ताकि 'बेशी श्रम' एव 'बेशी मूल्य' की स्थितिया उत्पन्न न हो । अन्त मे, वे सम्पूर्ण समाज के व्यापक हित मे पूजीपतियो की सम्पत्ति का हरण करते है । इसस उत्पादन एव उपभोग दोनो का सामूहीकरण हो जाता है । इससे समाज मे केवल मजदूरी पर जीवित रहने वाला वर्ग समाप्त हो जाता है । एक फ्रासिसी मार्क्सवादी **लैबरिओला** के शब्दो मे, "सर्वहारा वर्ग को एक ही बात पर केन्द्रित रहना चाहिये, और वह है–मजदूरी कमाने वालो का उन्मूलन ।"[9] इसे हेतु मार्क्स एव उनके अनुयायी वैधानिक उपायो मे विश्वास नही करते । वे कहते है कि समाजवाद श्रमिक एव निर्धन ही ला सकते है, अत उन्हे सगठित होकर राजनीतिक क्राति द्वारा सत्ता पलट कर देना चाहिये ।

7. उपागम विधि (Method of Approach)

मार्क्स ने अर्थशास्त्र को सामाजिक उत्पादक सम्बन्धो का अध्ययन बताया जिनसे समाज का आर्थिक शरीर बना हुआ है । उन्होने बताया कि अनेक विरोधाभासो की उपस्थिति के कारण आर्थिक प्रणाली मे सघर्ष, आदोलन और परिवर्तनो का दौर चलता है और अर्थशास्त्र का यह कार्य है कि इन विरोधाभासो की खोज करे । अपनी रचना Critique of Political Economy' की प्रस्तावना मे मार्क्स ने आर्थिक क्रियाओ को चार भागो– उत्पादन, उपभोग विनिमय और वितरण मे विभाजित किया और कहा कि इनमे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है । इनमे उत्पादन प्राकृतिक दशाओ से और वितरण सामाजिक नियमो से सचालित होता है तथा विनिमय की क्रियाये इन दोनो के मध्य रहती है । उन्होने उपभोग को उत्पादन का अत माना और कहा कि उत्पादन स्वय उपभोग का एक भाग है क्योकि इससे नयी आवश्यकताओ का जन्म होता है । उन्होने उत्पादन एव उपभोग को एक दूसरे का पूरक भी बताया और कहा कि उत्पादन उपभोग के लिए वह सामग्री प्रदान करता है जिससे और अधिक उत्पादन सम्भव होता है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने उपभोग को उत्पादक उपभोग एव उपभोगीय उत्पादन मे विभाजित किया । उनके अनुसार विनिमय भी उत्पादन का एक भाग है और पूर्णत उत्पादन द्वारा निर्धारित होता है । उन्होने वितरण के दो अर्थ–उत्पत्ति के साधनों का वितरण और उत्पत्ति की विभिन्न क्रियाओ मे समाज के सदस्यो का वितरण, बताये और कहा कि यह उत्पादन एव उपभोग की क्रियाओ मे हस्तक्षेप करता है ।

---

9 "The proletariat must learn to concentrate upon one thing-namely the abolition of wage-earners." Labriola.

8. मुद्रा (Money)-

मार्क्स ने मुद्रा के तीन प्रमुख कार्य बताये–

(1) मूल्य का सर्वमान्य मापक– मार्क्स ने बताया कि मुद्रा का सबसे पहला कार्य विभिन्न वस्तुओ का मूल्य व्यक्त करना है । उन्होने बताया कि यदि वस्तुओ का मूल्य स्वर्ण एव रजत मे व्यक्त किया जाता है तो जब तक इन दोनो बहुमूल्य धातुओ का मूल्य अर्थात् विनिमय अनुपात नही बदलता, तब तक आर्थिक प्रणाली मे कोई व्यवधान नही आयेगे । इसी आधार पर उन्होने इन दोनो धातुओ को 'विश्व मुद्राये' बताया ।

(2) कीमत का प्रमाप– इसे मार्क्स ने मुद्रा का दूसरा उपयोगी कार्य माना और कहा कि प्रतिदिन आरम्भ होते ही जितनी मुद्रा प्रचलन मे डाली जाती है वह सचलन मे जितनी वस्तुए होती है, उनकी कीमतो का योग होती है ।

(3) भुगतान का साधन– मार्क्स के अनुसार मुद्रा का तीसरा कार्य 'भुगतान का साधन' है ।

मुद्रा की मात्रा के बारे मे मार्क्स का मानना था कि किसी समयावधि मे मुद्रा की कुल उपलब्ध मात्रा दो घटको द्वारा निर्धारित होती है–

(i) सचलन मे वस्तुओ की कीमतो का योग और (ii) वह तीव्रता जिससे वस्तुए अपना रूप बदलती है ।

मुद्रा के उपर्युक्त कार्य स्वीकार करने के बावजूद मार्क्स मुद्रा को पूजीपतियो के हाथो मे श्रमिको के शोषण का आधार एव उपकरण मानते थे । अत उनके सामजवादी समाज मे मुद्रा जैसी अनुपयोगी सस्था के लिए कोई स्थान नही था । दूसरे शब्दो मे, मार्क्स ने मुद्रा को एक अनावश्यक एव अवाछनीय आर्थिक सस्था बताकर मुद्रा–विहीन समाज की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया ।

9. श्रम–विभाजन (Division of Labour)

मार्क्स ने श्रम–विभाजन के दो रूपो का उल्लेख किया– (1) वस्तु के निर्माण मे श्रम–विभाजन और (2) समाज मे श्रम विभाजन ।

(1) वस्तुओं के निर्माण में श्रम-विभाजन– इस श्रम–विभाजन के दो रूपो का मार्क्स ने उल्लेख किया –

(i) वह रूप जिसमे विभिन्न श्रमिक एक ही कार्यशाला मे एक ही स्वामित्व मे किसी वस्तु का आदि से लेकर अत तक निर्माण करते है । इसमे उत्पादन–पैमाना छोटा होता है ।

(ii) इस रूप मे विभिन्न श्रमिक बड़े पैमाने पर, एक ही कार्यशाला मे, कार्य को अनेक विधियों मे बांटकर अलग–अलग विधियो का कार्य अलग–अलग श्रमिक समूहो मे पूर्ण करते है । इसमे विभिन्न कारीगर अपनी

स्वतन्त्रता एव क्षमता खो देते है और वे किसी कार्य विशेष के एक भाग मे ही निपुण रह जाते है । इसे जटिल श्रम–विभाजन भी कहते है ।

(2) समाज में श्रम-विभाजन– मार्क्स ने समाज मे सामाजिक श्रम–विभाजन का भी उल्लेख किया है । यह वह स्थिति है जिसमे, मनोवैज्ञानिक कारणो से, एक जाति, परिवार अथवा वर्ग के सदस्य एक ही कार्य करते है । इस प्रकार के पृथक्–पृथक् समुदाय पृथक्–पृथक् वस्तुओ का उत्पादन कर उनका विनिमय करते है । इसमे श्रमिक किसी दूसरे को अपना श्रम नही बेचते ।

सामाजिक श्रम–विभाजन, जिसे सरल श्रम–विभाजन भी कहते है, उत्पादो की खरीद एव बिक्री पर आधारित रहता है जबकि वस्तु के निर्माण मे श्रम–विभाजन मे बहुत से श्रमिक अपना श्रम किसी एक पूजीपति को बेचते है । इस श्रम–विभाजन मे ससाधन किन्ही गिने–चुने हाथो मे केन्द्रित हो जाते है । अत. श्रम–विभाजन का यह रूप, मार्क्स ने, पूजीवादी तरीके की एक देन माना । इसमे श्रमिक स्वय अपना स्वामी नही रहता बल्कि वह किसी दूसरे के लिए मजदूरी पर कार्य करता है ।

10. वाणिज्यिक पूंजी (Commercial Capital)

मार्क्स के अनुसार उत्पादन के क्षेत्र मे पूजी के दो कार्य है–

(1) औद्योगिक कार्य और (2) वाणिज्यिक कार्य ।

(1) औद्योगिक कार्य– इससे मूल्यो का सृजन अर्थात् वस्तुओ एव सेवाओ का उत्पादन होता है । यह कार्य उद्योगपति करते है ।

(2) वाणिज्यिक कार्य– इसके द्वारा औद्योगिक कार्य से सृजित मूल्यो का क्रय–विक्रय होता है । यह कार्य व्यापारी करते है ।

मार्क्स के अनुसार वाणिज्य अनुत्पादक है । यह सृजित कुल मूल्यो (अर्थात् कुल उत्पादन) मे कोई निरपेक्ष एव मात्रात्मक वृद्धि नही करता बल्कि केवल सृजित मूल्यो का मुद्रा मे और मुद्रा का सृजित मूल्यो मे रूपान्तरण करता है । किन्तु, इससे वस्तुओ के मूल्य अर्थात् कीमते बढ़ जाती है । मार्क्स ने बताया कि जब औद्योगिक कार्य से वाणिज्यिक कार्य को पृथक् किया जाता है तो बढ़ा हुआ मूल्य व्यापारियों को लाभ के रूप मे मिल जाता है । अपने कार्य को जारी रखने के लिए व्यापारी एक निश्चित मात्रा मे पूजी चाहते हैं ताकि समुचित मात्रा मे लाभ कमा सके । मार्क्स ने इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया । उनके अनुसार माना कि एक उत्पादक ने 30,000 गज लिनेन का उत्पादन किया । यह उस उत्पादक की वस्तु–पूंजी है । उसने इसे एक व्यापारी को बेच दिया अर्थात् अपनी वस्तु पूंजी को मुद्रा मे बदल लिया । यह रूपान्तरण का प्रथम चरण है । उत्पादन प्रक्रिया जारी रखने के लिए लिनेन की बिक्री से प्राप्त मुद्रा की सहायता से उत्पादक धागे एवं

कोयला खरीदता है जबकि व्यापारी चुकाये गये मूल्य की वसूली के लिए इसकी उपभोक्ताओ को बिक्री करता है। यह रूपान्तरण का दूसरा चरण है। इस प्रकार वाणिज्यिक पूजी केवल रूपान्तरण मे सहयोग करती है।

11 लगान (Rent)

ज्ञातव्य है कि, मार्क्स के अनुसार एक पूजीवादी व्यवस्था मे केवल दो प्रकार की आय होती है– (i) मजदूरी और (ii) बेशी मूल्य। अत उन्होने लगान को बेशी मूल्य का ही एक भाग माना। इस दृष्टि से उनका लगान सिद्धान्त केवल उनके मूल्य के श्रम सिद्धान्त का क्रियान्वयन मात्र है।

मार्क्स ने लगान को विभेदात्मक लगान (differential Rent) बताया और उसके एकाधिकारी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जो निजी सम्पत्ति एव लगान के मध्य पाया जाने वाला सम्बन्ध दर्शाता है। उनके सिद्धान्त की दो प्रमुख विशेषताये है– (i) मार्क्स का विभेदात्मक लगान भूमियो की गिरती उत्पादकता का एक परिणाम (जैसा कि रिकार्डो ने माना) नही। (ii) लगान सापेक्ष नही बल्कि निरपेक्ष होता है। उनका यह सिद्धान्त 'बेशी मूल्य' एव 'उत्पादन–कीमत' की अवधारणाओ पर आधारित है। मार्क्स ने बताया कि यदि पूजीपति अपनी वस्तु का उसके मूल्य से नीची उत्पादन कीमत पर उत्पादन करने मे सफल हो जाता है तो वह अतिरिक्त लाभ कमा लेता है। यही अतिरिक्त लाभ मार्क्स के मतानुसार लगान है। प्रतिस्पर्धी बाजार दशाये यह अतिरिक्त लाभ अर्थात् लगान समाप्त कर देती है। फिर भी यदि कोई उत्पादक उत्पादन लागत के रूप मे यह अतिरिक्त लाभ प्राप्त करने मे सफल हो जाता है तो उसके इस लाभ को लगान कहते है। दूसरे शब्दो मे, उन्होने उस 'बेशी लाभ' को ही विभेदात्मक लगान माना जो लाभ की सामान्य दर पर एक आधिक्य के रूप मे मिलता है।

(B) आर्थिक सिद्धान्त (Economic Theories)

उपर्युक्त सामान्य आर्थिक विचारो के अलावा मार्क्स ने कतिपय मौलिक आर्थिक सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 मूल्य का श्रम सिद्धान्त (Labour Theory of Value)-

मार्क्स ने यह सिद्ध करने के लिए कि पूंजीवादी आर्थिक ढांचे मे पूजीपति श्रमिको का शोषण करते है, मूल्य का श्रम लागत सिद्धान्त प्रतिपादित किया। इसीलिए जी डी एच कौल ने उनके इस सिद्धान्त को मूल्य की बजाय पूंजीवादी शोषण (Capitalistic exploitation) का सिद्धान्त कहा है।

मार्क्स ने एडम स्मिथ एव रिकार्डो द्वारा प्रतिपादित मूल्य के श्रम सिद्धान्त का विस्तार कर अपना सिद्धान्त रखा और कहा कि वर्तमान मे प्रचलित विनिमय के तरीको से शोषण होता है और पूंजीपति श्रम के शोषण

पर ही टिके रहते है । अपने इस सिद्धान्त के प्रतिपादन मे उन्होने दो शब्दो– *श्रम–शक्ति (Labour Power) एव श्रम–समय (Labour time) का प्रयोग* किया । मार्क्स ने माना कि श्रम–शक्ति मे श्रम–मूल्य (Labour Price) होता है अत एक पूजीपति श्रम नही खरीदता बल्कि श्रम–शक्ति खरीदता है क्योकि उसमे प्रयोग मूल्य (Use Value) होता है । वह बदले मे उसका विनिमय मूल्य चुकाता है । दूसरे शब्दो मे, वह श्रमिक को 'श्रम–शक्ति' के लिए श्रम–समय के आधार पर भुगतान देता है (श्रम–शक्ति के बराबर नही) और उसके द्वारा उत्पादित माल की बिक्री से भुगतान वापस प्राप्त कर लेता है ।

मूल्य का आधार (Basis of Value)- ज्ञातव्य है कि मूल्य के दो रूप– वास्तविक अथवा प्रयोग मूल्य (use value) और विनिमय मूल्य (exchange value) है । मार्क्स के अनुसार किसी वस्तु मे ये दोनो ही मूल्य अस्थिर रहते है । श्रम इन दोनो ही मूल्यो का सृजन करता है । मार्क्स इन दोनो मे विनिमय मूल्य को अधिक महत्ता देते है । उनके अनुसार यही मूल्य समाज के विभिन्न *लोगो के मध्य सम्बन्ध व्यक्त करता है । वे कहते है कि प्रयोग–मूल्य* उपयोगिता पर आधारित है और क्योकि उपयोगिता सापेक्ष, विषयगत और अमापनीय है, अत प्रयोग मूल्य अधिक महत्त्वपूर्ण नही है । इसके सम्बन्ध मे श्रम का केवल गुणात्मक महत्त्व है । किसी विशेष किस्म का श्रम ही प्रयोग मूल्य उत्पन्न कर सकता है । अत मार्क्स विनिमय मूल्य के आधार पर ही *किसी वस्तु का मूल्य निर्धारित करते है और कहते है कि "मूल्य मानवीय श्रम* का प्रतिफल मात्र है ।" दूसरे शब्दो मे, मार्क्स किसी वस्तु के उत्पादन मे लगे श्रम को ही उसके विनिमय मूल्य का आधार मानते है । इस प्रकार इसके सदर्भ मे श्रम का परिमाणात्मक महत्त्व होता है ।

मार्क्स के अनुसार क्रेताओ के लिए किसी वस्तु का उपयोग मूल्य एव विक्रेताओ के लिए विनिमय मूल्य अधिक महत्त्वपूर्ण होता है । इसलिए किसी वस्तु का प्रयोग मूल्य उत्पन्न होने से पहले ही वह विनिमय मूल्य से गुजर जाती है । इस प्रक्रिया मे केवल वस्तुओ का विनिमय मूल्य एव स्वामित्त्व बदलता है।

मूल्य का निर्धारण कैसे ? (How Value is determined ?)- मार्क्स ने बताया कि मूल्य का निर्धारण श्रम द्वारा ही किया जाना चाहिए क्योकि यही *एकमात्र ऐसी वस्तु है जो सब वस्तुओ के उत्पादन मे सम्मिलित रहती है ।* स्वय उन्ही के शब्दो मे, "वह सामान्य वस्तु क्या है जिसके कारण हम कहते हैं कि पाच पलग एक मकान के बराबर है । अरस्तु का कहना है कि ऐसी कोई वस्तु वास्तविक वस्तु नहीं है, किन्तु क्यो नही है ? पलगो से तुलना करने पर मकान अवश्य ही किसी ऐसी चीज का सकेत करता है जो मकान एव पलग दोनों मे है । यह सामान्य वस्तु 'श्रम' है ।" अत उन्होने बताया कि "मूल्य और कुछ नहीं बल्कि वस्तुओ के निर्माण मे प्रवाहित किया गया श्रम–समय

है।''[10] और जब कई श्रमिक मिलकर किसी वस्तु का उत्पादन करते है तो उनका वैयक्तिक श्रम सामाजिक श्रम बन जाता है । वस्तुए सामाजिक श्रम का रूपान्तरण मात्र है ।

मार्क्स ने बताया कि, क्योकि किसी वस्तु के निर्माण मे जितना श्रम लगता है उसी के आधार पर उसका मूल्य निर्धारित होता है, श्रम न केवल वस्तु के मूल्य का आधार अपितु उसका वास्तविक सार भी है । उदाहरणार्थ, यदि X वस्तु की एक इकाई के उत्पादन मे Y वस्तु की एक इकाई के उत्पादन से किसी श्रमिक को दुगना समय लगता है तो उनके बीच विनिमय अनुपात 1X = 2Y होगा । अपने इस रूप मे मार्क्स का मूल्य सिद्धान्त मूलतः मूल्य का श्रम–लागत सिद्धान्त (Labour cost Theory of Value) ही है । मार्क्स ने बताया कि किसी वस्तु विशेष का मूल्य तब तक स्थिर रहता है जब तक उसके निर्माण मे लगने वाला श्रम–समय स्थिर रहता है । ज्ञातव्य है कि, वस्तुओ के निर्माण मे लगने वाले औसत सामाजिक समय के आधार पर ही मूल्य का निर्धारण होता है । इसीलिए कहा जाता है कि श्रम–समय से मार्क्स का अभिप्राय. किसी वैयक्तिक श्रमिक द्वारा किसी वस्तु विशेष के निर्माण मे लगाये गए श्रम से नहीं है बल्कि श्रम की उस मात्रा से है जो उसे वस्तु को बनाने के लिए आवश्यक होती है अर्थात् उस समय से है जो सामाजिक दृष्टि से उसके उत्पादन के लिए आवश्यक होता है। इसी आधार पर वह वस्तु महगी नही होती जिसका उत्पादन कोई आलसी श्रमिक करता है और विलोमश कोई दूसरी वस्तु सस्ती नहीं होती ।

मार्क्स ने बाजार मूल्य, जिस पर वस्तुओ का क्रय–विक्रय होता है, का भी उल्लेख किया और कहा कि इसमे परिवर्तन के आधार पर ही उत्पादन के साधन विशेषत. श्रमिक एक उद्योग से दूसरे उद्योग मे गतिशील होते है । उदाहरणार्थ, विनिमय मूल्य 1X = 2Y होने पर, यदि बाजार मूल्य 1X = 1Y हो जाता है तो इसका आशय होगा कि X वस्तु के बाजार मूल्य मे गिरावट और Y वस्तु के बाजार मूल्य मे वृद्धि हो गयी । फलतः X वस्तु के उत्पादक को हानि एव Y वस्तु के उत्पादक का लाभ बढ़ जायेगा । अब उत्पत्ति के साधन X वस्तु के उत्पादन से निकलकर Y वस्तु के उत्पादन मे हस्तातरित होने लगेगे और यह क्रम तब तक चलता रहेगा जब तक दोनो का विनिमय अनुपात अर्थात् मूल्य बदलकर 1X = 2Y नहीं हो जाता ।

महत्त्व (Significance)- मार्क्स के मतानुसार एक पूजीवादी आर्थिक प्रणाली मे मूल्य के श्रम–लागत सिद्धान्त की व्यापक व्यावहारिक महत्ता है । यही, मूलतः वह शक्ति है, जो समस्त उत्पादक एजेन्सियो को एकसूत्र मे बाधकर वैयक्तिक श्रम को कुल वास्तविक सामाजिक श्रम मे बदल देती है ।

---

10. "Value is nothing but the labour-time transmitted to the commodity."

इसके द्वारा अनजाने मे ही उत्पत्ति के विभिन्न साधनो का विभिन्न वस्तुओ के उत्पादन मे *आवटन और वस्तुओ के उत्पादन की मात्रा एव उनका विनिमय* अनुपात निर्धारित हो जाता है । मार्क्स के शब्दो मे, "वैयक्तिक पूजीपति परस्पर केवल वस्तुओ के स्वामियो के रूप मे मिलते है और उनमे से प्रत्येक अपनी वस्तु का ऊचे मूल्य पर विक्रय चाहता है । किन्तु, आतरिक नियम व उनकी आपस की प्रतिस्पर्धा एक दूसरे पर दबाव के द्वारा अपना प्रभाव दिखाते है, जिससे विभिन्नताए समाप्त हो जाती हैं । केवल एक आतरिक नियम के नाते और वैयक्तिक साधन के दृष्टिकोण से एक अधे नियम के नाते मूल्य अपना प्रभाव डालना है और आकस्मिक उच्चावचनो के मध्य उत्पादन का सामाजिक साम्य बनाये रखता है ।"

कार्ल मार्क्स ने अपने मूल्य सिद्धान्त को वस्तुओ का वस्तु–पूजा सिद्धान्त (Doctrine of Fetishism of commodities) कहा और बताया कि वस्तुओ का विनिमय मूल्य समाज के विभिन्न सदस्यो के पारस्परिक सम्बन्धो पर आधारित है न कि *वस्तुओ के आपसी सम्बन्धो पर* । अत जब हम किसी एक वस्तु का मूल्य किसी दूसरी वस्तु मे व्यक्त करते हैं तो समाज के विभिन्न सदस्यो के पारस्परिक सम्बन्धो को दोहराते है ।

आलोचना (Criticism)- यद्यपि, मार्क्स का यह सिद्धान्त उनके चिंतन की एक महत्त्वपूर्ण देन है, तथापि इसकी निम्नांकित आलोचनाए की जाती है–

(i) **मौलिकता का अभाव (Lack of Originality)**- आलोचको के अनुसार इस सिद्धान्त मे *कोई मौलिकता नहीं है । उनके अनुसार यह एडम स्मिथ एव* रिकार्डो के मूल्य सिद्धान्त से किसी मायने मे श्रेष्ठ अथवा निर्दोष नहीं है ।

(ii) **एक पक्षीय (One sided)**- इस सिद्धान्त मे मूल्य निर्धारण मे केवल लागत अर्थात् पूर्ति पक्ष की महत्ता स्वीकार की गयी है । दूसरे शब्दों मे, यह मूल्य के निर्धारण मे माग की शक्ति एव वस्तुओ की अल्पता की अनदेखी *करता है, अत एक पक्षीय है ।*

(iii) **अवैज्ञानिक (Unscientific)**- यह सिद्धान्त मूल्य की अवैज्ञानिक व्याख्या करता है । इसके अनुसार एक तो उन प्रकृतिदत्त वस्तुओ का कोई *मूल्य नही हो सकता जिनके उत्पादन मे किसी किस्म का मानवीय श्रम नहीं* लगा और दूसरे, जिस वस्तु के निर्माण मे जितना ज्यादा श्रम लगता है उसका मूल्य उतना ही ऊचा होता है । *आलोचको के अनुसार ये दोनो ही निष्कर्ष* अवैज्ञानिक हैं । वास्तविकता तो यह है कि उपयोगिता ही किसी वस्तु के मूल्य की महत्त्वपूर्ण निर्धारक शक्ति है । जब भी कोई पूजीपति किसी वस्तु के उत्पादन के बारे मे सोचना आरम्भ करता है, वह सबसे पहले उपयोगिता की अवधारणा का ही सहारा लेता है । यह और भी आश्चर्य की बात है कि मार्क्स

मूल्य के लिए उपयोगिता को तो स्वीकार करते है[11] किन्तु उसके निर्धारण मे उसकी उपेक्षा कर देते है ।

(iv) उत्पत्ति के अन्य साधनों की महत्ता की उपेक्षा (Ignores the significance of other factors of production) अकेला श्रम उत्पादन नही कर सकता, अत किसी वस्तु के उत्पादन मे श्रम के अलावा कई साधन यथा–भूमि, पूजी आदि भी भागीदार बनते है । ये सभी साधन आर्थिक महत्त्व के है। अत मूल्य निर्धारण मे उनकी महत्ता एव लागत की अनदेखी नही की जा सकती ।

(v) अवास्तविक (Unrealistic)- आलोचको के अनुसार व्यवहार मे ऐसा कोई सबूत नही मिलता जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि मूल्य केवल वस्तु के उत्पादन मे लगे श्रम का ही प्रतिनिधित्व करता है । इसके विपरीत यह प्रामाणिक है कि बाजार मूल्य के निर्धारण मे वस्तु की माग और उसकी तुलनात्मक न्यूनता अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है ।

(vi) श्रम की किस्म में भिन्नता की उपेक्षा (Ignores difference in Quality of Labour)- मार्क्स का यह मानना त्रूटिपूर्ण है कि सारे श्रमिक सामान रूप से कार्य–दक्ष है और समस्त श्रमिक छोटी–छोटी इकाइयो मे विभाज्य है ।

(vii) समान वस्तुओं के श्रम-समय में अन्तर (Difference in the labour time of identical products)- व्यवहार मे, एक समान वस्तुओ के उत्पादन मे लगा श्रम–समय अलग–अलग होता है जबकि उनका बाजार मूल्य बराबर होता है । मार्क्स का मूल्य सिद्धान्त इसके कारण का स्पष्टीकरण नही करता ।

(viii) विरोधाभासों से परिपूर्ण (Full of paradoxes)- इस सिद्धान्त मे अनेक विरोधाभास है । उदाहरण के लिए, यह मूल्य सिद्धान्त एक विशुद्ध वस्तुनिष्ठ (objective) एव वास्तविक सिद्धान्त है जो श्रम–समय की भाववाचक (abstract) अवधारणा पर आधारित है । यही कारण है कि 'दास कैपिटल' के तीसरे खण्ड मे स्वय मार्क्स ने अपने इस सिद्धान्त की विफलता स्वीकार कर ली ।

2. बेशी मूल्य का सिद्धान्त (Theory of Surplus Value)-

बेशी मूल्य का सिद्धान्त कार्ल मार्क्स की मानव जाति को सबसे महत्त्वपूर्ण देन है । उन्होने बताया कि श्रम के अलावा भूमि आदि शेष सभी साधन, जिन्हे स्थायी पूजी (constant capital) कहा जा सकता है, ऐसे साधन है जो उत्पादन मे सहयोग तो करते है किन्तु किसी बेशी का सृजन नही करते।[12]

---

11 "Nothing can have value without being an object of utility" — Marx K.

12 "It is strikingly clear that means of production never transfer more value to the product than they themselves lose during the labour process by the destruction of their own use value." -Marx. K.

जबकि, जैसाकि, उन्होने बताया पूजीवादी व्यवस्था मे पूजीपति दो चीजो का उत्पादन करता है– एक, वस्तुए और दूसरी, बेशी मूल्य । जहा पहली चीज के उत्पादन मे उत्पादन के सभी साधन अपनी भागीदारी निभाते है वहाँ 'बेशी मूल्य' के सृजन का एकमात्र स्रोत मानव श्रम है क्योकि इसमे विलक्षण उत्पादन क्षमता है जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नही । इस विलक्षणता के कारण ही श्रम मे उत्तरोत्तर वृद्धि, पूजी मे बचत एव मानव सभ्यता का विकास होता जा रहा है । मार्क्स ने बताया कि पूजीवादी व्यवस्था मे समाज दो वर्गों (i) उत्पादको (जिनका उत्पादन के साधनो अर्थात् स्थायी पूजी पर स्वामित्व होता है) एव (ii) श्रमिको (जो अपना श्रम बेचते है) मे विभाजित हो जाता है। इन दोनो वर्गों मे से वस्तुओ का उत्पादन श्रमिका वर्ग करता है किन्तु, उस पर स्वामित्व एव विक्रय अधिकार पूजीपति वर्ग का होता है । दूसरे शब्दो मे, मजदूरी प्रणाली द्वारा पूजीपति श्रमिको को उनके द्वारा उत्पादित वस्तु से पूर्णत अलग कर उन्हे उनकी विलक्षणता का लाभ लेने से वचित कर देते है । यह वर्ग श्रमिको को मजदूरी के रूप मे वस्तु की बिक्री से प्राप्त पूरा मूल्य नही चुकाता, जबकि वास्तव मे इस मूल्य का सृजन श्रमिक ही करते हैं, अत वे ही इसके असली हकदार है । दूसरे शब्दो मे, वे मजदूरो को उनके श्रम का पूरा मूल्य नही चुकाते । उनके श्रम मे ऊँचा 'प्रयोग–मूल्य' होता है जबकि वास्तव मे पूजीपति उन्हे नीचा 'विनिमय–मूल्य' चुकाते है । श्रमिको द्वारा सृजित मूल्य और उन्हे चुकाये गये मूल्य (मजदूरी) के अन्तर को मार्क्स ने 'बेशी मूल्य' कहा और बताया कि इसकी राशि जितनी ज्यादा होती है, श्रम का शोषण एव पूजीपति का लाभ उतने ही ज्यादा एव विलोमश कम होते है । दूसरे शब्दो मे, शोषण एव लाभ मे धनात्मक सम्बन्ध है, फलत बिना शोषण मे वृद्धि के लाभ मे वृद्धि नही हो सकती । इस आधार पर एक श्रमिक अपने द्वारा किये गये कार्य के कुल समय मे से केवल कुछ ही समय तक अपने लिए कार्य करता है और इस समय मे किये गये श्रम को मार्क्स ने आवश्यक श्रम (necessary labour) कहा है । इस श्रम के बदले मे प्राप्त होने वाली मजदूरी से वह जीवन–निर्वाह के साधन जुटाता है । श्रमिक के कार्य का शेष समय, जिसके बदले उसे किसी प्रकार का प्रतिफल नही मिलता, पूजीपति बेगार के रूप मे ले लेता है । इसे मार्क्स ने बेशी–श्रम (surplus labour) कहा है, जिसके बदले श्रमिक की बजाय पूजीपति को 'बेशी मूल्य' प्राप्त होता है । इसी बेशी को श्रम का शोषण कहते है । यदि श्रमिक को उसकी मेहनत का पूरा मूल्य मजदूरी के रूप मे चुका दिया जाये तो पूजीपति को 'बेशी मूल्य' प्राप्त नही हो सकता । किन्तु, व्यवहार मे ऐसा नही है । श्रम नाशवान है और श्रमिक असगठित है । उनकी सौदेबाजी की शक्ति दुर्बल है । पूजीपति उन्हे उतनी ही मजदूरी देते है जितनी उन्हे जीवन–निर्वाह हेतु खर्च चलाने के लिए देनी जरूरी होती है । उनकी शेष कमायी को पूजीपति उनके बचत–श्रम से

अपनी तिजौरियो मे भर लेते है ।

'बेशी मूल्य' के सिद्धान्त को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है । यदि किसी श्रमिक को 10 घण्टे कार्य करने के उपरात 8 घण्टे मे किये कार्य से सृजित मूल्य के बराबर ही पारिश्रमिक दिया जाता है (यह मानते हुए कि उसका जीवन–निर्वाह व्यय चलाने के लिए इतना भुगतान पर्याप्त है) तो स्पष्ट है कि उसके शेष दो घण्टे के कार्य का सृजित मूल्य उसे नही दिया गया । यह मूल्य पूजीपति कच्चे माल, मशीनो एव उपकरणो, जिन्हे मार्क्स ने स्थायी पूजी कहा है, पर वैयक्तिक अधिकार एव स्वामित्व के बल पर अपनी तिजोरी मे ले जाता है जो उसका लाभ एव श्रम का शोषण है । अत. सक्षेप मे–

बेशी मूल्य (अर्थात् 'अ')	=	श्रम द्वारा उत्पादित वस्तु की बिक्री से प्राप्त कुल कीमत (अर्थात् 'क')	=	श्रम को चुकायी गई मजदूरी (अर्थात् 'म')

अत. सूत्र रूप मे

अ = क – म, होता है ।

उपर्युक्त समीकरण मे 'अ' का मान धनात्मक होता है और यह जितना ज्यादा होता है पूजीपति का लाभ उतना ही अधिक होता है । मार्क्स ने बताया कि समस्त पूजीपति 'अ' के मान को अधिकतम करने मे प्रयासरत है, वे पिशाच है और श्रमिको का रक्त पी–पीकर मोटे होते जाते है ।

'बेशी मूल्य' को 'श्रम–समय (Labour-time) एव 'श्रम–शक्ति' (Labour-Power) के अन्तर के आधार पर भी समझा जा सकता है । 'श्रम–समय' से आशय श्रम के प्रयोग–मूल्य (use value) एव 'श्रम–शक्ति' से आशय श्रम से प्राप्त कुल उत्पादन से है जिसकी बिक्री पूजीपति करता है । श्रम मे उसके प्रयोग–मूल्य से कही अधिक श्रम–शक्ति पायी जाती है, किन्तु क्योकि श्रम को उसकी श्रम–शक्ति के आधार पर भुगतान नही दिया जाता बल्कि उसके प्रयोग–मूल्य के आधार पर मजदूरी दी जाती है अत. पूजीपति के पास 'बेशी–मूल्य' का सृजन होता है ।[13]

---

13 "The distinction between labour time (or the use value of labour) and labour power (which is exchanged in the market) gives rise to surplus value "

संक्षेप मे, बेशी मूल्य की सम्पूर्ण व्याख्या को निम्नांकित चार्ट मे श्रृंखलाबद्ध रूप मे व्यक्त किया जा सकता है–

चार्ट : 'बेशी मूल्य का सृजन
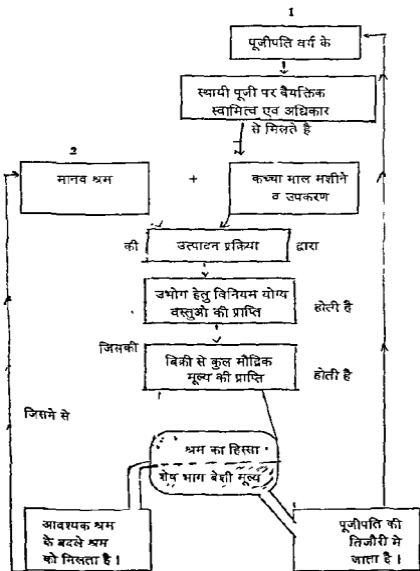
बेशी मूल्य में वृद्धि के उपाय (Methods of increase in Surplus Value)- मार्क्स ने बताया कि निजी लाभ को अधिकतम करने की दौड़ मे लगे पूंजीपति लगातार 'बेशी मूल्य' मे वृद्धि के उपाय खोजते रहते है । इन उपायो मे निम्नाकित मुख्य है--

(i) **कार्य के घण्टों में वृद्धि** (to lengthen the working day)- उदाहरण के लिए कार्य के घण्टे 10 से बढ़ाकर 11 अथवा 12 कर दिये जाये ।

(ii) **जीवन-निर्वाह व्यय को कम समय में जुटा लेने योग्य बनाकर**- यदि 8 घंटे की बजाय 7 घण्टे के श्रम के बदले मे ही श्रमिक को जीवन-निर्वाह व्यय चलाने योग्य मूल्य मिल जाता है तो पूजीपति का 'बेशी मूल्य' बढ़ जाता है । उत्पादन विधियो एव श्रम की कार्यदक्षता मे वृद्धि कर देने से ऐसा सम्भव है ।

मार्क्स ने तो मुख्यत इन दो उपायो का ही विवेचन किया है किन्तु बेशी मूल्य मे वृद्धि के कुछ अन्य,उपाय भी बताये जा सकते है, यथा-

(iii) **पुरुष श्रम के स्थान पर महिला एवं बाल श्रम का प्रयोग**- इन्हे पुरुष श्रमिको की तुलना मे कम मजदूरी दी जाती है जबकि कार्य लगभग उतना ही करते है ।

(iv) **मशीनीकरण**- इससे श्रम की कार्यदक्षता बढ़ जाती है ।

मार्क्स ने 'बेशी मूल्य' के दो रूप बताये --

(i) **निरपेक्ष बेशी मूल्य**- इसका सृजन उन सभी उपायो मे होता है जिनसे या तो श्रमिको को ज्यादा घंटे काम करना पड़ता है अथवा उससे उतने ही घण्टो मे पहले से अधिक कार्य करवा लिया जाता है ।

(ii) **सापेक्ष बेशी मूल्य**- उसका सृजन उन सभी उपायो से होता है जिनसे श्रमिक का जीवन-निर्वाह व्यय कम समय मे जुटा लेना सम्भव हो जाता है ।

मार्क्स के अनुसार सामान्यतया पूजीपति 'निरपेक्ष बेशी मूल्य' मे वृद्धि को अधिक पसद करते है । इस हेतु, सामान्यतया, वे कार्य के घंटो मे वृद्धि का उपाय ही अधिक पसद करते है ।

'बेशी मूल्य' की दर (Rate of Surplus Value or S') मार्क्स के अनुसार पूजी के दो रूप है-

(i) **स्थायी पूंजी** (Constant capital or C)- स्थायी पूजी से उनका आशय मशीनो, उपकरणो एव कच्चे माल से है । उत्पादन प्रक्रिया मे स्थायी पूजी जितनी समाप्त होती है ठीक उतना ही उत्पादन के रूप मे मूल्य सृजित होता है । मार्क्स ने इसे भूतकालीन एकत्रित श्रम (congealed past labour) कहा ।[14]

---

14 "Constant capital or c is only congealed past labour and its contribution to the creation of exchange value is only equal to the labour so congealed in it."

(ii) **परिवर्तनशील पूंजी** (Variable capital or v) परिवर्तनशील पूजी से मार्क्स का आशय उस पूजी से था जो श्रम–शक्ति पर व्यय की जाती है। यही पूजी वस्तु के मूल्य मे परिवर्तन उत्पन्न करती है और इसी से 'बेशी मूल्य' का सृजन होता है।[15] इसी आधार पर मार्क्स ने 'बेशी मूल्य' को परिवर्तनशील पूजी का अनुपात बताया। उन्होने कहा कि पूजीपति C + V से उत्पादन आरम्भ करता है और अत मे C + V + S प्राप्त करता है। ये तीनो ही किसी वस्तु के मूल्य के घटक है। उन्होने 'बेशी मूल्य की दर' (S^1) को इस प्रकार व्यक्त किया–

$$S^1 = \frac{\text{बेशी मूल्य (Surplus value or s)}}{\text{परिवर्तनशील पूजी (Variable capital or v)}} \text{ or } \frac{\text{बेशी मूल्य (Surplus vlaue or s)}}{\text{श्रम–शक्ति का मूल्य (Value of Labour Power)}} \text{ or } \frac{\text{बेशी श्रम (Surplus labour)}}{\text{आवश्यक श्रम (Necessary Labour)}}$$

अर्थात् $S^1 = S/V$ होता है और कहा कि इससे शोषण के अश की गणना की जा सकती है।[16] जैसा कि उल्लेख किया जा चुका, विभिन्न पूजीपति अपना लाभ बढ़ाने के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धा करते है। मार्क्स ने बताया कि लाभ की दर (P) बेशी मूल्य (S) और कुल पूजी अनुपात (C/C+V) के बराबर होती है। अर्थात् P = S/C+V।

इस सदर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि पूजी की सावयव सरचना (Organic composition of capital) जितनी ऊची होती है (अर्थात् कुल पूजी मे परिवर्तनशील पूजी की मात्रा ज्यादा) लाभ की दर उतनी ही नीची एव विलोमश. ऊची होती है। मार्क्स ने लाभ एव बेशी मूल्य की दर के पारस्परिक सम्बन्ध को निम्नाकित सूत्र से व्यक्त किया–

$$P = S^1 \frac{V}{C+V}$$

बेशी मूल्य की एक दी हुई दर पर पूजीपति अधिक श्रम को रोजगार मे लगाकर (अर्थात् अधिक परिवर्तनशील पूजी का विनियोजन कर) कुल बेशी मूल्य मे वृद्धि का प्रयास करते है। इसके साथ–साथ वे बेशी मूल्य की दर मे वृद्धि का भी प्रयास करते है। जैसा कि मार्क्स ने बताया, बेशी मूल्य की दर

---

15 "Variable capital or V is used to purchase labour power. It is not only able to reproduce its exchange value but produces a surplus value also."

16 "The rate of surplus value is therefore an exact expression for the degree of exploitation of labour power by capital or of the labourer by the capitalist." Marx K.

प्रत्यक्षत पूजी की सावयव सरचना मे परिवर्तन के साथ बदल जाती है। इसकी प्रक्रिया समझाते हुए उन्होने बताया कि किसी वस्तु का विनिमय मूल्य उसके उत्पादन मे लगे सामाजिक दृष्टि से अनिवार्य श्रम–समय द्वारा निर्धारित होता है। जब एक पूजीपति पूजी की सावयव सरचना बदलने मे सफल हो जाता है तो वह वस्तु की पूर्व मात्रा का कम श्रम–समय के रूप मे कम लागत पर उत्पादन करने मे सफल हो जाता है क्योकि बाजार मे सभी उत्पादको का उत्पादन सामाजिक दृष्टि से आवश्यक किन्तु समान मूल्य पर बिकता है अत जो उद्योगपति पूजी का सावयव ढाचा अपने अनुकूल करने मे सफल हो जाता है वह अधिक लाभ कमा लेता है। इस प्रकार 'बेशी मूल्य' की कुल मात्रा एक ओर 'बेशी मूल्य की दर' एव दूसरी ओर विनियोजित परिवर्तनशील पूजी पर निभर करती है।

मार्क्स ने बताया कि व्यवहार मे पूँजीपति कुल पूजी सरचना मे स्थिर पूजी बढ़ाते जाते है जिससे लाभ एव उसकी दर गिर जाती है और पूजीवादी अर्थव्यवस्था समाप्ति की ओर अग्रसर होने लगती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'बेशी मूल्य' के सिद्धान्त के जरिये मार्क्स ने बताया कि पूजीपतियो एव श्रमिको के मध्य सघर्ष का कारण आर्थिक है। लेनिन ने मार्क्स के बेशी मूल्य के सिद्धान्त की प्रशसा करते हुए लिखा कि "बेशी मूल्य का सिद्धान्त ही मार्क्स के आर्थिक सिद्धान्त की आधारशिला है।" जीड एव रिस्ट के मतानुसार, "इसकी मौलिकता इसमे है कि यह श्रम के शोषण एव शोषको के लालच के घिसे–पिटे पारस्परिक विरोध की चर्चा नही करता बल्कि यह दर्शाता है कि किस प्रकार श्रमिक उस समय भी लूटा जाता है जब उसे वह सब नही मिलता जिसे पाने का वह पात्र है।"

आलोचना (Criticism)- आर्थिक साहित्य को मार्क्स की एक महत्त्वपूर्ण देन होने के बावजूद उनका यह सिद्धान्त दोष रहित नही है। सक्षेप मे, इसकी निम्नाकित आलोचनाए की जाती हैं—

(i) मार्क्स इस आशय की **वैज्ञानिक व्याख्या** नहीं कर पाये कि किस प्रकार श्रमिक को अपना जीवन–निर्वाह व्यय चलाने के लिए उस श्रम से कम श्रम की आवश्यकता पड़ती है जो वह पूजीपति को देता है ? क्या पूरे समय कार्य करने से सृजित मूल्य की प्राप्ति पर ही जब उसका जीवन–निर्वाह व्यय पूर्ण होता है तो पूजीपति उसे पूरा भुगतान दे देगा ? का मार्क्स सही हल नही खोज पाये।

(ii) मार्क्स की यह **मान्यता दोषपूर्ण** है कि केवल परिवर्तनशील पूजी ही बेशी मूल्य का सृजन करती है, स्थिर पूजी नही। वास्तव मे फर्मे स्थिर पूजी मे वृद्धि करके भी अपना लाभ बढ़ाती हैं।

(iii) आलोचकों के अनुसार श्रम को भुगतान करने के पश्चात् **शेष मूल्य**

को **'बेशी मूल्य' कहना उचित नहीं** है क्योकि सामाजिक उत्पादन मे भागीदार अन्य साधनो को भी पुरस्कार चुकाना पडता है अन्यथा उनका शोषण आरम्भ हो जायेगा । दूसरे शब्दो मे, श्रम की मजदूरी के अलावा पूजी का ब्याज, भूमि का लगान और साहसी का लाभ भी उत्पादन लागत के अग है । अत इन्हे घटाने के पश्चात् शेष बची राशि को ही 'बेशी मूल्य' माना जाना चाहिये ।

उपर्युक्त आलोचनाओ के बावजूद यह एक निर्विवाद सत्य है कि इस सिद्धान्त के जरिये मार्क्स ने न केवल पूजीपतियो के नृशस एव अमानवीय कृत्यो की पोल खोल दी बल्कि यह भी बता दिया कि पूजीवादी शक्ति का वास्तविक रहस्य एव उत्पत्ति स्रोत क्या है ? उन्हे यह रहस्य एव स्रोत 'बेशी मूल्य' के सृजन मे मिला । अन्त मे, जैसा कि **स्तेपानोवा** ने कहा, "मानव समाज के विकास की भौतिक व्याख्या के बाद सर्वहारा वर्ग के इस प्रतिभासम्पन्न सिद्धान्तकार का 'बेशी मूल्य का सिद्धान्त' उनकी दूसरी बड़ी खोज थी ।"

3. पूंजी के संकेद्रण का सिद्धान्त (Theory of Capital Concentration)-

पूजी के सकेन्द्रण के सिद्धान्त से आशय मार्क्स के पूजी–सचय एव पूजीवाद के पतन सम्बन्धी सिद्धान्त से है । मार्क्स ने बताया कि पूजीवादी आर्थिक प्रणाली एव उत्पादन व्यवस्था मे आतरिक विरोधाभाष पाये जाते हैं जिनके कारण पूजीपति परस्पर प्रतिस्पर्धा कर एक दूसरे से अधिक 'बेशी मूल्य' सृजित करना चाहते हैं । अपने इस लक्ष्य की शीघ्र प्राप्ति के लिए वे कुछ ऐसे कदम उठा लेते है जिनसे अन्तत लाभ दर गिर जाती है और आर्थिक सकटो की एक ऐसी श्रृखला आरम्भ हो जाती है जिसमे इनकी पुनरावृत्ति होती जाती है और परिणामस्वरूप इनकी गम्भीरता बढ़ती जाती है । इसी आधार पर मार्क्स ने कहा कि पूजीवाद का पतन अवश्यम्भावी है क्योकि इसके उत्थान मे ही इसके विनाश के बीज मौजूद है । दूसरे शब्दो मे, जिन घटको ने इसका विकास किया है, वे ही इसका विनाश कर डालेगे । अत पूजीवाद का भविष्य अनिश्चित एव अन्धकारपूर्ण है ।

मार्क्स के अनुसार 16वी सदी से पहले तक उत्पादन का पैमाना छोटा था । तब उत्पादक स्वय अपने श्रम एव पूजी के सहयोग से वस्तुओ का उत्पादन एव बिक्री करते थे । इस समय तक पूजी उत्पादन का एक हानिरहित साधन था । योरोप मे, 16वी सदी मे पुनर्जागरण से एक नये युग का सूत्रपात हुआ । इस युग मे नये–नये आविष्कारो, परिवहन एव सचार साधनो मे प्रसार, बैको, नये–नये बाजारो और राष्ट्रवादी राज्यो की स्थापना से कुछ बड़े पूजीपति पनप गये । अब छोटे उत्पादको के लिए इनसे प्रतिस्पर्धा करना कठिन हो गया । फलत जो पहले वस्तुओ का निर्माण कर उन्हे बेचते थे, अब अपना श्रम बेचने के लिए विवश हो गये और समाज में एक

सम्पत्तिहीन वेतनभोगी वर्ग का उदय हो गया । कालान्तर मे इससे समाज मे दो स्पष्ट वर्ग–पूजीपति एव श्रमिक बन गये । स्पष्ट है कि पूजी एव पूजी–सचय से समाज मे ये वर्ग बने । प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो से भिन्न मार्क्स ने बताया कि पूजी–सचय किसी त्याग अथवा कष्ट का परिणाम नही बल्कि श्रम के शोषण का परिणाम है । उन्होने पूजी सकेन्द्रण को कजूस व्यक्ति के धन सचय के समान मानते हुए कहा कि दोनो मे सिर्फ इतना ही अन्तर है कि पूजीपति आर्थिक दृष्टिकोण से अर्थात् आत्म सम्मान की भावना से प्रेरित होकर अथवा गलाकाट प्रतिस्पर्धा मे सफल होकर पूजी सचय करता है जबकि कजूस आदत से लाचार होकर धन–सग्रह करता है । जिस प्रकार कजूस की क्रिया समाज के लिए अहितकार है उसी प्रकार पूजीपति की क्रिया अहितकर है । उन्होने बताया कि पूजी–सचय से उत्पादन के मूल्यो एव समाज की क्रय–शक्ति मे अन्तर उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है । इससे अति उत्पादन एव परिणामस्वरूप आर्थिक मदी की स्थिति उत्पन्न होती है । जिससे पूजीपति एक–एक कर दिवालिया होने लगते है । इससे एक ओर आर्थिक शक्ति मुट्ठीभर उद्योगपतियो के हाथो मे केन्द्रित हो जाती है जबकि दूसरी ओर अधिकाश जनसख्या श्रमिक बन जाती है । अब जैसे–जैसे इन श्रमिको का शोषण बढ़ता जाता है, उनमे असतोष बढ़ता जाता है और अन्तत पूजीवाद के स्थान पर समाजवाद की स्थापना की पूरी तैयारी हो जाती है । इस प्रकार मार्क्स को पूजी–सकेन्द्रण मे पूजीवाद के सर्वनाश के बीज मिले । सक्षेप मे, उन्होने पूजीवाद के पतन के निम्नाकित कारणो का उल्लेख किया है जो मूलत पूजी सकेन्द्रण से उत्पन्न होते है–

(1) लाभों में वृद्धि की लालसा– मार्क्स के अनुसार पूजीवाद मे पूजीपतियो की लाभो मे वृद्धि के प्रति लालसा बढ़ती जाती है और इसी से उसके विनाश की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है ।

(2) उत्पादन का बड़ा पैमाना– मशीनीकरण, श्रम–विभाजन एव विशिष्टीकरण और गुप्त समझौतो एव गठबधनो के कारण पूजीवादी व्यवस्था मे न केवल उत्पादन का पैमाना उत्तरोत्तर बड़ा होता जाता है बल्कि विभिन्न वस्तुओ के उत्पादन मे आर्थिक एकाधिकार भी स्थापित होते जाते हैं । इससे धीरे–धीरे छोटे एव मध्यम आकार वाले उत्पादक समाप्त होकर श्रमिको की जमात मे सम्मिलित होते जाते है । मार्क्स के अनुसार इससे वेतनभोगी/औद्योगिक श्रमिको की एक सुरक्षित सेना बन जाती है जो अन्तत पूजीवाद के विनाश का कारण बनती है ।

(3) आर्थिक संकट– मार्क्स ने बताया कि श्रम को उसके परिश्रम के अनुपात मे पारिश्रमिक नही मिलता । इससे उनका उपभोग या तो स्थिर रहता है अथवा गिर जाता है । फलत अति उत्पादन की सम्भावना लगातार

बनी रहती है, जिससे पूजीवाद को गम्भीर खतरा है । उन्होने बताया कि जब अति उत्पादन के कारण उत्पादन प्रक्रिया रुक जाती है तो श्रमिक बेरोजगार हो जाते है और औद्योगिक सुरक्षित सेना परिवर्तन पर उतर आती है ।

(4) निर्धनता में वृद्धि– मार्क्स के अनुसार पूजीवादी व्यवस्था मे निर्धनता मे निरन्तर गुणात्मक एव परिमाणात्मक वृद्धि होती जाती है और किसी दिन पूजीवाद आवश्यक रूप से इन निर्धनो के आक्रोश का शिकार बन जाता है ।

(5) खेतों एवं गाँवों से जनसंख्या का पलायन– मार्क्स ने बताया कि लोग खेती एव गाँव छोड़कर रोजगार की तलाश मे भाग रहे है । इससे वहा बेरोजगारो का जमघट हो गया है और यही जमघट एक दिन पूजीवाद के पतन का कारण बन जायेगा ।

(6) संयुक्त पूंजी कम्पनियों में वृद्धि– इन कम्पनियो का सचालन इनके मालिक नही बल्कि डायरेक्टर एव वेतनभोगी अधिकारी और कर्मचारी करते है । इससे मालिक–मजदूर सम्बन्ध समाप्त हो गये है और यह सम्बन्ध विच्छेद पूजीवाद के लिए एक गम्भीर चुनौती है ।

(7) आर्थिक एकाधिकारों की स्थापना– जैसे–जैसे इन एकाधिकारो की सख्या बढ़ती जा रही है, आर्थिक सत्ता कुछ गिने–चुने हाथो मे केन्द्रित होती जा रही है और श्रम का शोषण बढ़ रहा है । मार्क्स के अनुसार ये एकाधिकार पूजीवाद के विनाश के कारण बनेगे ।

(8) लाभ दर में गिरावट– मार्क्स ने बताया कि जैसे–जैसे पूजी का जमघट बढ़ेगा, लाभ दर गिरेगी । इससे कई पूजीपति दिवालिया होकर धीरे–धीरे श्रमिको की जमात मे सम्मिलित होते जायेगे । जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, लाभ की दर बेशी मूल्य एव पूजी की कुल मात्रा एव उसकी सावयव सरचना पर निर्भर करती है ।

सूत्र रूप मे,

$$\text{लाभ दर (P)} = \frac{\text{बेशी मूल्य (S)}}{\text{स्थायी पूजी (C) + परिवर्तनशील पूजी (V)}} \quad \text{अर्थात्} \quad P = \frac{S}{C+V}$$

अथवा S/V V/C+V अथवा S/V 1/C/V+1 होती है । इसे ही मार्क्स ने पूजी की सावयव सरचना कहा है । मार्क्स ने बताया कि जैसे–जैसे इस सरचना मे स्थायी पूजी का अनुपात बढ़ेगा श्रमिको पर किया जाने वाला व्यय (अर्थात् परिवर्तनशील पूजी) घटेगा । इससे बेशी मूल्य की एक दी हुई दर पर पूजीपतियो के लाभ गिरेंगे और इस क्रम मे एक स्थिति ऐसी आ जायेगी जब

आधिक्य मूल्य गिरकर शून्य हो जायेगा और परिणामस्वरूप पूजीवाद समाप्त हो जायेगा।

लाभ दर मे गिरावट की प्रक्रिया समझाते हुए मार्क्स ने बताया कि पूजीवादी व्यवस्था मे आरम्भ मे रोजगार स्तर बढ़ता है और अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार की स्थिति की ओर अग्रसर होती है किन्तु, पूजीवादी आर्थिक ढाचे मे आन्तरिक विरोधाभाष क्रियाशील होने लगते है। इससे मजदूरी की दर और 'बेशी मूल्य' की दर गिरने लगती है। इसस आधिक्य उत्पादन का सकट उत्पन्न हो जाता है क्योकि अर्थव्यवस्था के उत्पादन का मूल्य उस राशि से अधिक हो जाता है जो उसकी खरीद के लिए श्रमिको को मजदूरी के रूप मे मिलता है। दूसरे शब्दो मे, उत्पादन की माग के अभाव के कारण सकट का उदय होता है और लाभ दर गिरती है। धीर-धीरे यह सकट गम्भीर होता जाता है। इससे बचने के लिए पूजीपति पूजी की सावयव सरचना बदलकर बेशी मूल्य की दर मे वृद्धि का प्रयास करते है। किन्तु, उन्हे एक तो, अपेक्षित सफलता नही मिलती और दूसरे, इसमे सब पूजीपति सफल नही हो पाते। अत एक के बाद दूसरे सकट की पुनरावृत्ति आरम्भ हो जाती है जो अन्तत पूजीवाद को समाप्त कर देती है।

(९) श्रमिकों में वर्ग-चेतना- पूजी के सकेन्द्रण से श्रमिको मे वर्ग चेतना का उदय होता है। मार्क्स ने बताया कि, 'पूजीवाद श्रमिको की सख्या मे वृद्धि कर उन्हे सगठित समूहो मे एकत्रित कर देता है, यह उनमे वर्ग-चेतना उत्पन्न करता है, उनमे पारस्परिक सहयोग एव सम्पर्क स्थापित करने के लिए विश्व-स्तर पर साधन प्रदान करता है, उनकी क्रय-शक्ति कम करता है और उनका शोषण बढ़ाकर उन्हे बदला लेने के लिए प्रेरित करता है। इसीलिए मार्क्स ने कहा कि, वास्तव मे, वर्तमान पूजीवाद वर्ग-सघर्ष की उत्पत्ति है और इसका परिणाम यह होगा कि आज जो शोषक है कल उनका शोषण किया जायेगा।

पूजी के संकेन्द्रण का परिणाम (Result of capital concentration)- मार्क्स ने बताया कि पूजी के सकेन्द्रण का अवश्यम्भावी परिणाम सामाजिक क्राति एव सत्ता हस्तातरण है। उन्होने बताया कि क्राति अवश्यम्भावी है। आवश्यक होने पर इस हेतु हिंसात्मक उपाय भी अपनाये जा सकते है। उन्होने बताया कि यह क्राति केवल श्रमिक ही कर सकते है। क्योकि अन्य सभी वर्गों का कोई न कोई स्वार्थ पूजीवाद मे पूरा होता रहता है। अत श्रमिक ही सगठित होकर पूजीपतियो से सत्ता छीनेगे। दूसरे शब्दो मे, भले ही अन्य वर्ग परिवर्तन चाहते हो किन्तु, केवल श्रमिक वर्ग के नेतृत्व मे ही पूजीवाद पर विजय पायी जा सकती है।

व्याख्या की निम्नांकित आलोचनायें की जाती है–

(i) **यह धारणा निराधार है कि पूंजीवाद एवं कुटीर तथा लघु उद्योगों में सह–अस्तित्व नहीं है** और पूजीवाद का दानव इन सबको निगलकर अपना स्वरूप भीमकाय कर लेगा। जापान सदृश्य पूजीवादी देशो मे ऐसा नही हुआ है।

(ii) आलोचको के अनुसार मार्क्स की **लाभ–दर की गणना विधि अधूरी एवं दोषपूर्ण है।** इस पर वस्तु की माग एव पूर्ति की दशाओ का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। उसके अलावा मार्क्स ने कहा कि स्थिर पूजी मे वृद्धि से लाभ गिरता है जबकि, वास्तव मे, इससे ठीक विपरीत स्थिति भी देखी गयी है।

(iii) मार्क्स के विचारो की **इतिहास ने पुष्टि नहीं की।** जिन देशो (विशेषत. इग्लैण्ड एव फ्रास) के पूजीवाद के दोषो के आधार पर मार्क्स ने अपने विचार रखे, वहाँ आज भी पूजीवाद जोर पकड़ता जा रहा है। इसके विपरीत रूस एव चीन जैसे उन देशो मे समाजवाद की स्थापना हो गयी जहाँ इससे पूर्व पूजीवाद या तो था ही नही और यदि था तो उसमे वे सभी परिकल्पित दोष नही थे जो मार्क्स ने बताये।

4. पूंजीवादी शोषण का सिद्धान्त (Theory of Capitalistic Exploitation)-

मार्क्स ने बताया कि पूजीवाद और श्रम–शोषण एक दूसरे के पूरक है। दूसरे शब्दो मे, मार्क्स को पूजीवाद की विशेषताओ मे ही पूजीवादी शोषण नजर आया। इस सदर्भ मे निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय है—

(1) उत्पादन के साधनों पर श्रमिकों का स्वामित्व नहीं (No ownership of *Labour over Factors of Production*)- पूजीवादी *व्यवस्था मे श्रमिको का श्रम* के अलावा उत्पत्ति के अन्य सभी भौतिक साधनो पर से स्वामित्त्व छिन जाता है और वे अपने श्रम को वस्तुओ की भाति बेचने को विवश हो जाते है। उन्ही के शब्दो मे, "पूजीवाद की विशेषता यह है कि स्वय श्रमिक की दृष्टि मे भी *श्रम–शक्ति* जो उसकी *सम्पत्ति है, एक वस्तु का रूप धारण* कर लेती है और उसका श्रम मजदूरी–श्रम बन जाता है।" क्योकि श्रम नाशवान है और श्रमिको की सौदेबाजी करने की शक्ति दुर्बल है, पूजीवाद मे श्रमिक आवश्यक रूप से शोषण के शिकार बने रहते है।

(2) समाज का विभाजन (Division of Society)- मार्क्स ने बताया कि पूजीवादी समाज दो वर्गों–पूजीपति (शोषणकर्त्ता) और श्रमिक (शोषित) मे विभाजित हो जाता है। यद्यपि, समाज मे कुछ अन्य एव छोटे वर्ग यथा–कृषक, व्यापारी एव भूमिपति आदि होते है किन्तु, एक तो उनकी कोई निर्णायक भूमिका नही रहती और दूसरे अन्ततः ये भी श्रमिक वर्ग मे सम्मिलित हो जाते है। इस वर्ग के हित पूंजीपतियो के हितो से बिल्कुल भिन्न होते है। अतः वे इनके हितो को कुचलकर अपने हित पूरे करते जाते हैं और

इस प्रकार शोषण की प्रक्रिया जारी रहती है ।

(3) बड़े पैमाने पर उत्पादन (Large-scale Production)- मार्क्स ने बताया कि पूजीवाद मे मुख्यत वर्तमान कारखाना प्रणाली एव मशीनीकरण के सहयोग से श्रम–विभाजन एव विशिष्टीकरण के आधार पर बड़े पैमाने पर उत्पादन होता है और छोटे पैमाने पर उत्पादन की मौजूदगी के बावजूद उसकी कोई निर्णायक भूमिका नही रहती है । मार्क्स ने बताया कि बड़े पैमाने पर उत्पादन के सभी तथाकथित दोषो की मार श्रमिक वर्ग को सहनी पड़ती है ।

(4) लाभ के लिए उत्पादन (Production for Profit)- मार्क्स ने बताया कि 'पूजीवाद मे उत्पादको का उत्पादन का प्रमुख लक्ष्य लाभ अधिकतमीकरण है। अत वे सामाजिक हित मे नही बल्कि केवल निजी लाभ मे वृद्धि के लिए उत्पादन करते है ।' दूसरे शब्दो मे, वस्तुओ का उत्पादन उनकी उपयोगिता के आधार पर नही बल्कि विनिमय मूल्य के आधार पर किया जाता है । अर्थात् वे केवल ऊचे मूल्य वाली वस्तुओ का उत्पादन करते है ताकि अपने लाभ बढ़ा सके भले ही उनसे समाज का अहित और श्रम का शोषण हो । मार्क्स ने वस्तु विनिमय प्रणाली को C = C = O (i) से व्यक्त किया अर्थात् वस्तु (commodity or C) के बदले वस्तु के विनिमय से कोई आधिक्य शेष नही रहता (अर्थात् शून्य शेष रहता है) । मुद्रा (M) के प्रयोग से समीकरण (i) बदलकर C = M = C = O (ii) हो जाता है । इस स्थिति मे भी लाभ एव शोषण के लिए कोई स्थान नही है क्योकि केवल प्रयोग–मूल्यो (use values) का विनिमय किया जाता है अथात् वस्तु बेचकर मुद्रा और मुद्रा खर्च कर वस्तुए खरीद ली जाती है और इस प्रकार समान मूल्य का समान मूल्य से प्रतिस्थापन हो जाता है । किन्तु पूजीवाद मे उपर्युक्त विनिमय समीकरण बदलकर M = C < M' = P (iii) हो जाता है । इसका आशय है कि पूजीपति मुद्रा (M) के साथ बाजार मे प्रवेश करता है । इससे वह श्रम सहित अन्य साधन खरीद कर वस्तुओ का उत्पादन (C) प्राप्त करता है अर्थात् पूजीपति अपनी मुद्रा से केवल उन्ही वस्तुओ का क्रय करता है जिनके प्रयोग मूल्य मे विनिमय मूल्य प्रदान करने का विशिष्ट गुण होता है । इन वस्तुओ मे प्रधान वस्तु मानवीय श्रम है जिसका पूजीवादी बाजार मे खुला व्यापार चलता है । इन से प्राप्त उत्पादन को पूजीपति ने जितनी मुद्रा लगायी थी उससे अधिक मुद्रा (M') के बदले समाज के लोगो (जिनमे अधिकाश वे श्रमिक ही होते है जिन्होने उन वस्तुओ का उत्पादन किया था) को बेच देते है । M' की राशि M से जितनी अधिक होती है, पूजीपति का लाभ (P) उतना ही ज्यादा होता है और यह लाभ ही श्रम का शोषण है । दूसरे शब्दो मे, M एव M' का अन्तर प्रयोग–मूल्य एव विनिमय मूल्य का अन्तर है जिससे 'बेशी मूल्य' का सृजन होता है । पूजीपति ऊचे

प्रयोग मूल्य के बदले श्रम को नीचा विनिमय मूल्य देकर उसका शोषण करते है । अत मार्क्स के अनुसार जहाँ पूजीवाद होगा वहाँ आवश्यक रूप से श्रम का शोषण रहेगा ।

5. आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Developement)-

मार्क्स का आर्थिक विकास का सिद्धान्त वस्तुत पूजीवादी विकास का सिद्धान्त है । इसकी प्रमुख विशेषताये निम्नाकित है--

(1) सरल पुनरूत्पादन योजना की स्थिर अवस्था (Stationary state of simple Reproduction plan) इससे आशय आर्थिक विकास की स्थिर अवस्था से है । मार्क्स अपना सिद्धान्त एक ऐसी अवस्था से आरम्भ करते है जिसमे पूजी सचय नही होता फलत प्रारम्भिक पूजीनिवेश से जो उत्पादन होता है उसकी बिक्री से प्राप्त आगम का पुन विनियोजन कर दिया जाता है । इसीलिए मार्क्स ने इसे सरल पुनरुत्पादन योजना की स्थिरावस्था बताया । यह निम्नाकित मान्यताओ पर आधारित है--

(i) अर्थव्यवस्था स्थिर है और उसमे शुद्ध विनियोग नही होते है ।
(ii) पूजीपति उत्पादन प्रक्रिया से सृजित सम्पूर्ण बेशी मूल्य का उपभोग कर लेते है ।
(iii) श्रम को जीवन--निर्वाह स्तर के बराबर मजदूरी मिलती है ।
(iv) अर्थव्यवस्था स्थिर एव गतिहीन है और उसमे कुल उत्पादन की मात्रा पूर्ववत रहती है ।
(v) पूजीगत एव उपभोग उद्योगो के मध्य सम्बन्ध काफी घनिष्ट एव सीधे होते है ।

उपर्युक्त मान्यताओ के आधार पर मार्क्स ने इस अवस्था की व्याख्या के लिए उत्पादन के क्षेत्र को दो भागो-- (i) पूजीगत वस्तुओ का उत्पादन करने वाले उद्योग और (ii) उपभोक्ता वस्तुओ का उत्पादन करने वाले उद्योग, मे बाटा । उन्होने पूजीगत उद्योगो द्वारा सृजित कुल मूल्य को $C^1 + V^1 + S^1 = W^1$ (i) एव उपभोक्ता उद्योगो द्वारा सृजित कुल मूल्य को $C^2 + V^2 + S^2 = W^2$.. (ii) मे व्यक्त किया (समीकरणो मे C = स्थायी पूजी, V = परिवर्तनशील पूजी, S = बेशी मूल्य एव W = कुल मूल्य के सूचक है)

मार्क्स ने आगे बताया कि दोनो प्रकार के उद्योगो की स्थिर पूजी ($C^1 + C^2$) पूजीगत उद्योगो के कुल मूल्य (W^1) के और पूजीगत उद्योगो का कुल मूल्य उनमे लगी कुल पूजी (स्थायी एव परिवर्तनशील पूजी का योग) एव सृजित बेशी मूल्य के बराबर हो सकती है । अत सूत्र रूप मे,

$$C^1 + C^2 = W^1 = C^1 + V^1 + S^1 \quad \text{.. (iii)}$$

अर्थात्

$$C^2 = V^1 + S^1$$

होता है । दूसरे शब्दो मे, उपभोक्ता उद्योगो की स्थायी पूजी – पूजीगत उद्योगो की परिवर्तनशील पूजी एव बेशी मूल्य के बराबर होती है ।

(2) विकास के लिए उपभोग नहीं विनियोग आवश्यक (Investment not the consumption is more Important for Development)- मार्क्स ने आर्थिक विकास की गतिशील प्रकृति स्वीकार की और कहा कि विकास के लिए उपभोग नही बल्कि विनियोग आवश्यक है । क्योकि, विनियोजन के लिए कोष पूजी सचय से प्राप्त होते है अत सही मायने मे विकास के लिए पूजी सचय आवश्यक है । अत पूजीपतियो को बेशी मूल्य का उपभोग नही बल्कि सचय करना चाहिए । इसीलिए मार्क्स ने कहा कि "सचय करो, सचय करो यही ब्रह्म उपदेश है । अर्थात् सचय जितना ज्यादा होगा नये विनियोग उतने ही अधिक और परिणाम– स्वरूप विकास की गति तेज होगी ।

(3) पूजी सचय में वृद्धि का परिणाम आर्थिक विकास (Capital Accumulation Results into Economic Development)- मार्क्स ने बताया कि पूजी सचय मे वृद्धि से विनियोजन और विनियोजन मे वृद्धि से श्रम की माग बढ़ती है क्योकि, श्रम ही बेशी मूल्य का एकमात्र स्रोत है । पूजीपति श्रमिको को उनके द्वारा निष्पादित कार्यो से कम पारिश्रमिक चुकाते हैं । श्रमिको की रक्षित सेना की मौजूदगी के कारण वे ऐसा करने मे सफल भी हो जाते है । इससे उनकी सचय–सामर्थ्य और बढ़ जाती है तथा अधिकाधिक सचय के लिए विभिन्न पूजीपति परस्पर प्रतिस्पर्धा करते है ।

(4) प्रतिस्पर्धी पूजीवाद का एकाधिकारी पूजीवाद में रूपान्तरण (Transformation of competitive capitalism into Monopolistic capitalism)- मार्क्स ने बताया कि पूजीवादी समाज मे मत्स्य न्याय चलता है जिसके परिणामस्वरूप छोटे पूजीपतियो का बडे पूजीपति सफाया करते जाते है और इस प्रकार प्रतिस्पर्धी पूजीवाद का एकाधिकारात्मक पूजीवाद मे रूपान्तरण हो जाता है तथा आर्थिक शक्ति कुछेक एकाधिकारी उद्योगपतियो के हाथो मे केन्द्रित हो जाती है । जैसे–जैसे प्रतिस्पर्धी पूजीवाद का एकाधिकारी पूजीवाद मे रूपान्तरण होता जाता है तो जो छोटे पूजीपति समाप्त होते जाते है वे श्रमिको की जमात मे सम्मिलित होकर श्रम की रक्षित फौज मे वृद्धि करते जाते है ।

(5) पूजीवाद का समाजवाद में रूपान्तरण (Transformation of Capitalism into Socialism)- जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, पूजीवाद मे अनेक दोष एव विसगतिया उत्पन्न हो जाती है । इससे विकास प्रक्रिया अवरुद्ध होने लगती है । श्रमिक निरन्तर बढ़ते शोषण एव बेरोजगारी के विरुद्ध एकजुट होकर अपने अधिकारो की माग करने लग जाते है और वर्ग–सघर्ष बढ़ जाता है । अन्तत यह सघर्ष ही पूजीवादी व्यवस्था को समाप्त

कर उसके स्थान पर समाजवादी व्यवस्था की स्थापना कर देता है । यह पूजीवादी विकास के सिद्धान्त की चरम स्थिति (climcx) है । इसके पश्चात् समाजवासियो के उत्पादन सम्बन्धो मे आमूलचूल परिवर्तन हो जाता है क्योकि समाजवादी व्यवस्था मे उत्पत्ति के साधनो पर राज्य का एव साम्यवादी समाज मे सम्पूर्ण समाज का स्वामित्व स्थापित हो जाता है ।

मार्क्सवाद पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी

(A Critical Note on Marxism)

परिचय (Introduction)

मार्क्स से आशय अन्तर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी समाजवाद अथवा वैज्ञानिक समाजवाद के उस रूप से है जिसका प्रतिपादन 19वी सदी के उत्तरार्द्ध मे कार्ल मार्क्स एव उनके मित्र एजिल्स ने किया । दूसरे शब्दो मे दार्शनिक ऐतिहासिक, राजनीतिक एव आर्थिक सिद्धान्तो पर आधारित मार्क्स एव एजिल्स की व्यापक विचारधारा को मार्क्सवाद कहते है । सन् 1848 मे 'साम्यवादी घोषणा–पत्र' के प्रकाशन के पश्चात् यह विचारधारा न केवल लोकप्रिय होती गयी अपितु एक मानव धर्म एव युग धर्म बन गयी । इसीलिए प्रो शुम्पीटर ने कहा है कि "एक महत्त्वपूर्ण अर्थ मे मार्क्सवाद एक धर्म है । सर्वप्रथम इसके मानने वालो को जीवन के सभी अंतिम लक्ष्य एव घटनाओ तथा कार्यो को मापने का एक निरपेक्ष मापदण्ड मिल जाता है तथा दूसरे यह मनुष्य के मोक्ष के लक्ष्य का पथ–प्रदर्शक है और उन बुराइयो की ओर इगित करता है जिनसे सम्पूर्ण मानव समाज अथवा उसके किसी वर्ग विशेष को बचाना है ।" इसी प्रकार जोन बेल के शब्दो मे, "मार्क्सवाद, ईसाई धर्म एव इस्लाम से भी अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है क्योकि आधुनिक विश्व मे जितने भी प्रगतिशील सामाजिक परिवर्तन दिखायी दे रहे है, वे सब मार्क्सवाद के ही परिणाम है ।" सन् 1883 मे मार्क्स की मृत्यु के पश्चात् एजिल्स और उनके पश्चात् मार्क्स के अनुयायियो एव समर्थको, जिनमे सोवियत सघ मे लेनिन एव स्टालिन और जर्मनी मे कोटस्की एव रोजलक्जेम्बर्ग विशेष रूप से उल्लेखनीय है ने कतिपय सम–सामायिक परिवर्तनो एव सशोधनो के साथ इस धर्म अथवा क्रांतिकारी विचारधारा को लोकप्रियता के नये सोपानो पर पहुचाया एव क्रमश आगे बढाया । वस्तुत यह एक व्यावहारिक विचारधारा एव जन–आदोलन है । इसीलिए इसके समर्थक आज विश्व के सभी देशो मे मिलते है ।

मार्क्स की प्रमुख विशेषतायें (Main features of Marxism)-

मार्क्सवाद, विस्तृत अर्थ मे, समाजवाद का ही एक परिष्कृत एव सशोधित रूप है । किन्तु, वास्तव मे समाजवाद का केवल यही एक ऐसा रूप है जिसमे एक साथ एक ओर मौलिकता तथा दूसरी ओर तार्किक सगति का

साहचर्य देखने को मिलता है। सक्षेप मे, मार्क्सवाद की निम्नाकित विशेषताये उसे समाजवाद के अन्य रूपो से पृथक् कर देती है–

(i) **वैज्ञानिक समाजवाद (Scientific Socialism)** मार्क्सवाद पूजीवाद के पतन एव समाजवाद के अभ्युत्थान की न केवल तार्किक अपितु वैज्ञानिक व्याख्या करता है। इसीलिए इसे 19वी सदी के पूर्वार्द्ध के काल्पनिक समाजवाद से भिन्न वैज्ञानिक समाजवाद माना गया है।

(ii) **वर्तमान पर बल (Emphasis on Present)**- काल्पनिक समाजवादियो ने वर्तमान की उपेक्षा कर भावी समाज का एक सुन्दर एव व्यापक चित्र प्रस्तुत किया। किन्तु वे यह नही बता पाये कि यह सामाजिक रूपान्तरण कब और कैसे होगा ? दूसरे शब्दो मे उन्होने वर्तमान की अवहेलना कर भविष्य के लिए सपने सजोये। इससे भिन्न मार्क्स ने भविष्य की तुलना मे वर्तमान को ही अधिक महत्त्वपूर्ण माना और कहा कि समाज के भावी स्वरूप का निर्धारण समाज का भावी नेतृत्व ही करेगा अत उन्होने मुख्यत समाज मे व्याप्त–सघर्ष एव उसके सगठनात्मक ढाचे मे सुधार से ही अपना सम्बन्ध बनाये रखा।

(iii) **वास्तविकता पर आधारित (Based on Reality)** मार्क्स से पहले का सारा समाजवादी चितन आदर्शो पर आधारित होने के कारण अवास्तविक एव काल्पनिक था। इससे भिन्न मार्क्सवाद समाजवाद का वह रूप है जो वास्तविकता पर आधारित है। इसमे थोथे आदर्शो के लिए कोई स्थान नही है। इसीलिए मार्क्स ने कहा कि, ''उनके सैद्धान्तिक निष्कर्ष किसी भी रूप मे विश्व सुधारको द्वारा प्रतिपादित काल्पनिक सिद्धान्तो पर आधारित नही है, बल्कि, हमारी आखो के सामने चल रहे ऐतिहासिक आदोलन मे वर्ग–सघर्ष से उत्पन्न वास्तविक सम्बन्धो का साधारण शब्दो मे स्पष्टीकरण मात्र है।'' इसी आधार पर मार्क्स ने कहा कि 'जो वास्तविक है वही उचित है और जो उचित है वही वास्तविक है।'

(iv) **क्रांतिकारी स्वभाव (Revolutionary Nature)**- मार्क्सवाद अपनी प्रकृति से ही क्रातिकारी है। इस क्राति का उद्देश्य अमीरो को गरीबो के अधीन करना है। समाजवाद के अन्य सभी रूपो से यह इस मायने मे भी भिन्न है कि इसके अनुसार समाज मे अमीर–गरीब, मालिक–मजदूर और सम्पन–विपन के बीच की खाई, जो निरन्तर गहरी होती जा रही है, को शातिपूर्ण तरीको से पाटना असम्भव है। अत इसे पाटने के लिए क्राति जरूरी है। इतना ही नही इसे शीघ्रातिशीघ्र पाटने के लिए उन्होने भले ही, सिद्धान्त रूप मे, शातिपूर्ण उपायो की बात कही हो किन्तु, व्यवहार मे रक्तमयी क्राति का भी खुलकर समर्थन कर दिया और कह दिया कि यद्यपि इससे कुछ कष्ट होगे, किन्तु पूजीपतियो के चगुल से मुक्त होकर प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने का यही

एकमात्र उपाय है।

(v) **अन्तर्राष्ट्रीय फैलाव (International coverage)** क्रांतिकारी होने के साथ–साथ मार्क्सवाद का स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय है। इसीलिए इसे क्रांतिकारी अन्तर्राष्ट्रीय समाजवाद कहा जाता है। मार्क्स ने समस्त विश्व के मजदूरों को पूँजीवाद के विरुद्ध संगठित होकर क्रांति का बिगुल बजाने का आह्वान किया। मार्क्सवाद से भिन्न समाजवाद के अन्य सभी रूप (फेबियन समाजवाद, राज्य–समाजवाद, साहचर्य समाजवाद आदि) केवल राष्ट्रीय आंदोलन थे। मार्क्स ने न केवल इस आंदोलन को राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर निकाला अपितु अन्तर्राष्ट्रीय बना दिया और विभिन्न देशों के श्रमिक आंदोलनों को परस्पर समर्थन देने का आह्वान किया। इसीलिए प्रो. हैने ने कहा कि 'मार्क्स के हाथों समाजवाद ने भौतिक वस्त्र धारण कर लिये और इसका क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय हो गया।' उनके मतानुसार, अपने इस रूप में मार्क्सवाद राष्ट्रीय उद्योगवाद, साहचर्यवाद एवं राजकीय समाजवाद से बिल्कुल भिन्न हो गया है।'[17]

(vi) **श्रमिक वर्ग का समाजवाद (Socialism of Labour class)**- समाजवाद के अन्य सभी रूपों में सिद्धान्ततः समाज के सभी वर्गों के हितों की रक्षा की बात कही गयी है। इसके विपरीत मार्क्सवाद का कहना है कि सारे समाज के हित श्रमिकों के हितों में ही सन्निहित है, अतः उनके हितों की रक्षा की जानी चाहिये। इसीलिए मार्क्सवाद को श्रमिकवर्ग का समाजवाद कहा जाता है। मार्क्स ने श्रमिकों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए उन्हें राजनैतिक सत्ता हस्तांतरित करने का समर्थन किया और कहा कि श्रमिक वर्ग को सत्ता मिल जाने के पश्चात् भावी सामाजिक व्यवस्था स्वतः ही ठीक हो जायेगी।

(vii) **वर्ग–संघर्ष (Class conflict)**- मार्क्सवाद वर्ग–संघर्ष से सम्बद्ध है। मार्क्स ने बताया कि, 'विद्यमान सम्पूर्ण सामाजिक इतिहास वर्ग–संघर्ष का इतिहास है।'' दूसरे शब्दों में, उन्होंने बताया कि वर्तमान में विद्यमान वर्ग–संघर्ष आदि काल से चला आ रहा है। जैसे ही समाज में किसी एक वर्ग का उदय होता है दूसरा वर्ग नष्ट हो जाता है। किन्तु यह वर्ग–संघर्ष सदा विद्यमान नहीं रहेगा और जैसे ही पूँजीवाद समाप्त होगा, वर्गविहीन समाज की स्थापना हो जायेगी। इस प्रकार मार्क्सवाद सम्पूर्ण विश्व में एक वर्ग विहीन समाज की स्थापना के लिए प्रयत्नशील है। अपने इस रूप में तो यह राज्य की भूमिका भी स्वीकार नहीं करता अर्थात् मार्क्सवादी व्यवस्था में राज्यरूपी संस्था का कोई अस्तित्व नहीं है। जैसा कि प्रो. गीड एवं रिस्ट ने कहा है,

---

17 "With Marx socialism took on a purely material stic garb, and became international or cosmopolitan in its scope as contrasted with the National Industrialism or Associationism or state socialism of his various predecessors." Haney L.H

'वर्ग–सघर्ष वह वाक्याश है जिसने मार्क्सवाद की सफलता मे काफी योगदान दिया है । अधिकाश श्रमिक जो सिद्धान्तो का एक शब्द नही जानते, वे भी इस गुर को कभी नही भूलेगा ।''

(viii) **भौतिकवादी उपागम (Materialistic Approach)**- मार्क्सवाद का उपागम भौतिकवादी है । दूसरे शब्दो मे, इसमे थोथे आदर्शों एव झूठे आश्वासनो के लिए कोई स्थान नही है । यह केवल आर्थिक तथ्यो को महत्त्व देता है । मार्क्स ने बताया कि समाज की अधिकाश क्रियाओ का आधार आर्थिक है । अत परिवर्तन एव क्राति का आधार भी आर्थिक है । उन्होने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या की । दूसरे शब्दो मे, उन्होने बताया कि किसी भी समाज का इतिहास आर्थिक घटको से निर्धारित होता है ।

(ix) **बेशी मूल्य की अवधारणा (Concept of Surplus Value)**- यह अवधारणा मार्क्सवाद की एक आधारभूत विशेषता है । मार्क्स ने बताया कि श्रम मे विलक्षण उत्पादन शक्ति है जिससे बेशी मूल्य का सृजन होता है और यह मूल्य श्रम के शोषण का एक रूप है जो पूजीपतियो की तिजौरियो मे इकट्ठा होता जाता है । उन्होने बताया कि एक श्रमिक जितने मूल्य का सृजन उत्पादन प्रक्रिया मे करता है, उसे उससे कम भुगतान किया जाता है । इन दोनो का अतर ही 'बेशी मूल्य' है । इसी से समाज मे द्वन्द्व एव वर्ग–सघर्ष चलता है । सरल शब्दो मे, बेशी मूल्य की अवधारणा मार्क्सवाद का केन्द्र बिन्दु है ।

(x) **प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र पर आधारित (Based on Classical Economics or Classicism)**- मार्क्सवाद के सभी प्रमुख सिद्धान्तो की जड़े प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के सिद्धान्तो मे है । इसीलिए कुछ अर्थशास्त्रियो ने न केवल मार्क्स को प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का अतिम अर्थशास्त्री बता दिया बल्कि जीड एव रिस्ट ने मार्क्सवाद को प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र रूपी तने पर उगी एक टहनी बताया । इस आधार पर भी मार्क्सवाद समाजवाद के अन्य रूपो से बहुत भिन्न है क्योकि वे सभी जहा प्रतिष्ठित विचारधारा के कट्टर आलोचक है वहाँ मार्क्सवाद उस पर आधारित है और उसके सहारे विकसित हुआ है । इसी प्रकार समाजवाद के अन्य रूपो के समर्थको ने जहाँ प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो को गालिया दी वहाँ मार्क्स ने उन्हे अपना गुरु एव मार्ग–दर्शक माना ।

मार्क्सवाद की लोकप्रियता के कारण
(Causes of the Popularity of Marxism)

मार्क्सवाद ही एक ऐसी विचारधारा है, जो मार्क्स के जीवन काल से लेकर आज तक अपनी लोकप्रियता ज्यो की त्यो बनाये हुए है । सोवियत सघ के विघटन के बावजूद मार्क्सवाद से लोगो का मोह भग नही हुआ है और इस विघटन के लिए समाजवादी सिद्धान्तो की अपेक्षा उनके दोषपूर्ण क्रियान्वयन को अधिक जिम्मेदार बताया जा रहा है । दूसरे शब्दो मे, मार्क्सवाद एक

वैचारिक क्राति का रूप ले चुका है। सक्षेप मे इसकी लोकप्रियता के प्रमुख कारण निम्नाकित हैं–

(i) मार्क्स के विचार बड़े **समयानुकूल** थे। उस समय तक औद्योगिक क्राति के अनेक गम्भीर दोष सामने आ चुके थे और औद्योगिक राष्ट्रो मे श्रमिक सगठित होकर पूजीवादी शोषण के विरुद्ध अपनी आवाज बुलन्द करने लग गये थे। ऐसे समय मे मार्क्स एव उनकी रचनाये शोषित मानवता के हृदयहार बन गये और आज भी है।

(ii) 19वी सदी के मध्य अधिकाश योरोपीय देश **सक्रमणकाल** से गुजर रहे थे। अत समय की माग थी कि पुराने ढाचे मे शीघ्रातिशीघ्र आमूलचूल परिवर्तन कर नयी व्यवस्था की स्थापना की जाये।

(iii) सन् 1848 की फ्रास की क्राति की विफलता एव जर्मनी के आर्थिक पिछड़ेपन मे समाजवादी विचारधारा के बीज अकुरित होने अवश्यम्भावी थे।

(iv) मार्क्सवाद काल्पनिक आदर्शों की अपेक्षा वस्तुस्थिति की चर्चा करता है और **दलितों की स्थिति में सुधार के** व्यावहारिक एव क्रातिकारी **उपाय** बताता है।

(v) मार्क्सवाद के पास **आकर्षक नारों का** जितना **बल है** सम्भवत उतना किसी धर्म–आदोलन के साथ भी नही रहा।

(vi) अपने विविध रूपो के कारण समाजवाद आम आदमी की समझ से बाहर होता जा रहा था। मार्क्स ने इसके विभिन्न रूपो को मिलाकर **वैज्ञानिक समाजवाद** का प्रतिपादन कर दिया और उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्रातिकारी समाजवाद का रूप दे दिया। समाजवाद की इस पुनर्व्याख्या एव पुनर्रचना से इसकी लोकप्रियता का मार्ग खुला।

(vii) मार्क्स ने भौतिक साधनो के परिप्रेक्ष्य मे **आदर्श समाज की स्थापना** का विचार रखा जो लोगो को मन भाया।

(viii) मार्क्स को लेनिन, स्टालिन और माओत्सेतुग जैसे निष्ठावान समर्थक एव अनुयायी मिले।

(ix) मार्क्सवाद का विश्वास है कि **'सिद्धान्त'** एव **'व्यवहार'** तथा **'वास्तविक'** एव **'उचित'** को **एक दूसरे से पृथक् नहीं** किया जा सकता। इससे मार्क्सवाद की लोकप्रियता को बल मिला है।

(x) **सोवियत संघ की चमत्कारिक सफलताओं** ने भी मार्क्सवाद की लोकप्रियता बढ़ाने मे उल्लेखनीय भूमिका निभायी।

उपर्युक्त कारणो के आधार पर सहज ही मे यह कहा जा सकता है कि पिछले 140–145 वर्षों मे मार्क्सवाद ने विश्व स्तर पर लोगो के विचारो को

जितना उद्वेलित किया है, उतना सम्भवत. अन्य किसी विचारधारा ने मानवजाति के इतिहास मे नही किया।

मार्क्सवाद की आलोचना (Criticism of Marxism)-

अपनी व्यापक लोकप्रियता के बावजूद मार्क्सवाद शुरू से ही विवादो से घिरा रहा है। सक्षेप मे, इसकी प्रमुख आलोचनाए निम्नाकित है—

(A) सैद्धान्तिक आलोचना–

सैद्धान्तिक आधार पर मार्क्सवाद मे निम्नाकित दोष है—

(i) **मौलिकता का अभाव (Lack of Originality)** मार्क्सवाद मे मौलिकता का अभाव है। मार्क्स ने जो कुछ सोचा व लिखा वह उनका अपना नही बल्कि प्रतिष्ठित विचारो एव लेखो का रूपान्तरण एव परिष्कार मात्र है।

(ii) **अतार्किक (Illogical)-** आलोचको के अनुसार मार्क्स एक कुशल तर्कशास्त्री नहीं थे। तार्किक पुष्टि सम्भव न होने के कारण उनके अधिकाश विचार एव सिद्धान्त तर्क—दोष से ग्रसित है। उदाहरणार्थ—

(a) मार्क्सवाद की यह मान्यता दोषपूर्ण है कि केवल आर्थिक घटक ही इतिहास का सृजन करते है। आलोचको के मतानुसार इसके सृजन मे आर्थिक घटको के अलावा राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक एव सास्कृतिक घटक भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इनकी महत्ता की अनदेखी से न केवल इतिहास अधूरा रह जायेगा अपितु इसके परिणाम भी गम्भीर होगे।

(b) मार्क्सवाद का मूल्य सिद्धान्त तार्किक दोषो से ग्रसित है। इसमे श्रम के अलावा मूल्य एव लागत को प्रभावित करने वाले अन्य घटको की महत्ता की उपेक्षा की गयी है। इससे यह सिद्धान्त काल्पनिक अधूरा, एकपक्षीय एव अवैज्ञानिक हो गया है।

(c) मार्क्स का 'बेशी मूल्य' का सिद्धान्त भी तार्किक दृष्टि से दोषपूर्ण है क्योकि वह स्वय उनके दोषपूर्ण मूल्य सिद्धान्त पर आधारित है।

(d) उनके पूजीवाद के पतन के सिद्धान्त का भी तार्किक आधार पर उचित नहीं ठहराया जा सकता है।

(B) व्यावहारिक आलोचना–

मार्क्सवाद मे अनेक व्यावहारिक दोष है उदाहरणार्थ—

(i) उसका यह मानना आज तक सही सिद्ध नही हुआ है कि पूजीवाद मे मध्यम वर्ग समाप्त हो जाता है और समाज मे केवल पूजीपति और श्रमिक दो ही वर्ग रहते है।

(ii) उसकी यह भविष्यवाणी सही सिद्ध नहीं हुई है कि पूजीवाद अपनी

स्वाभाविक मौत मर जायेगा। इसके विपरीत न केवल पूजीवाद उत्तरोत्तर जोर पकड़ता जा रहा है बल्कि सोवियत सघ के विघटन से उल्टे यह सिद्ध हो गया है कि समाजिक एव साम्यवादी व्यवस्थाए मरणासन्न हो चली हैं।

(iii) इग्लैण्ड एव फ्रास को छोड़ विश्व के शेष सभी देशो मे पूजीवाद मार्क्स के पश्चात् पनपा है। यदि मार्क्सवाद का व्यावहारिक पक्ष कमजोर न होता तो पूजीवाद की जडे इतनी विस्तृत एव गहरी नही हो पाती।

(iv) समाजवादी देशो से पूजीवादी देशो को श्रम का पलायन होता रहा है क्योकि इन देशो मे श्रमिको के वेतन एव भत्तो मे उल्लेखनीय वृद्धि हो गयी है। अत मार्क्सवाद की यह भविष्यवाणी भी गलत सिद्ध हुई कि पूजीवादी व्यवस्था मे श्रम शोषण एव गरीबी बढ़ेगी।

(v) मार्क्स की यह अवधारणा भी गलत सिद्ध हुई कि पूजीवाद मे उत्पादन का बडा पैमाना कुटीर एव लघु उद्योगो को समाप्त कर देगा। जापान की पूजीवादी–उद्योग प्रधान–विकसित अर्थव्यवस्था मे इन दोनों मे परस्पर अनूठा सामजस्य है।

(vi) मार्क्सवाद की ऐतिहासिक पुष्टि नही हुई। जैसा मार्क्स ने सोचा उसके अनुरूप सबसे पहले ब्रिटेन मे और तत्पश्चात् फ्रास मे समाजवाद आना चाहिये था क्योकि औद्योगिक क्राति के दुष्परिणाम क्रमश वही सबसे पहले सामने आये। इसके विपरीत मार्क्सवाद का प्रथम सूर्य सोवियत सघ मे उगा और बाद मे यह चीन मे फलीभूत हुआ जहा स्वय पूजीवाद प्रारम्भिक अवस्था मे था और सिसकिया भर रहा था।

(vii) वास्तव मे समाजवाद एव साम्यवाद का जो रूप दुनिया ने देखा है वह मार्क्सवाद से भिन्न है। मार्क्सवाद मे वर्ग विहीन समाज की स्थापना की भविष्यवाणी की गयी थी जबकि सोवियत सघ, चीन एव अन्य सभी समाजवादी देशो मे सम्पन्न एव विपन्न के दो स्पष्ट वर्ग रहे है। इतना ही नहीं, इन देशो मे भी सम्पन्न एव उच्च वर्ग ने निर्धन एव निम्न वर्ग पर न केवल शासन ही किया है बल्कि क्रूर अत्याचार भी किये है। समाजवादी रोमानिया के शासक निकोलाई चाउशेस्क्यू एव उनके परिवार के सदस्यो के शोषण एव आतक को शायद ही कभी मानव समाज भुला पायेगा।

प्रो अलेक्जेण्डर ग्रे ने मार्क्सवाद के एक आलोचक इतिहासकार का उल्लेख किया है, जिसने लिखा कि, "अन्य कोई वैचारिक प्रणाली इतनी दिवालिया नहीं है जितनी कि मार्क्सवादी प्रणाली। एजिल्स ने सभी उद्देश्यो के लिए उसके इतिहास दर्शन को अस्वीकार कर दिया। उसके आर्थिक सिद्धान्तों की भ्रातियो को इतनी बेरहमी से एव

बार–बार प्रकाश मे लाया गया कि अब उनमे किसी परीक्षा मे पूछने योग्य कोई सतोषजनक प्रश्न भी नही मिलता। उसकी भविष्यवाणिया भी पूरी नही हो सकी।"[18]

(viii) मार्क्स ने धर्म को गरीबो का नशा बताकर उस पर प्रहार किया किन्तु वर्तमान मे मार्क्सवाद बेरोजगार युवको (विशेषत बौद्धिक एव भावनात्मक दृष्टि से असतुष्ट) का एक नशा बन गया है।

परम्परावाद एव मार्क्सवाद पर एक टिप्पणी

(A Note on Classicism and Marxism)

ज्ञातव्य है कि प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विचारको (एडम स्मिथ, माल्थस, रिकार्डो आदि) एव मार्क्स के आर्थिक चितन को क्रमश परम्परावाद एव मार्क्सवाद कहा जाता है। इन दोनो के बीच घनिष्ट सम्बन्ध है जिसे व्यक्त करते हुए प्रो जीड एव रिस्ट ने मार्क्सवाद को परम्परावादी तने पर विकसित हुई एक टहनी बताया। अर्थात् उनके अनुसार मार्क्सवाद का आधार परम्परावादी आर्थिक दर्शन है। यद्यपि वैयक्तिक आधार पर मार्क्स ने सभी परम्परावादी विचारको की आलोचना की किन्तु सामूहिक रूप से परम्परावादी दर्शन की प्रशसा की जो इस बात का प्रमाण है कि वे उनके आर्थिक चितन से बहुत प्रभावित थे। अब हम सक्षेप म मार्क्सवाद पर परम्परावाद के प्रभाव का विवेचन करेगे–

(1) मार्क्सवादी सिद्धान्तों पर प्रभाव (Impact on Marxian Doctrines)- जैसा कि मार्क्स को प्रभावित करने वाले घटको मे उल्लेख किया जा चुका है, मार्क्स अपनी विचारधारा एव सिद्धान्तो के लिए न केवल पूववर्ती एव समकालीन समाजवादी विचारको के ऋणी है बल्कि उनके चितन पर सर्वाधिक प्रभाव प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक चितन अर्थात् परम्परावाद का पड़ा है। मार्क्स ने जो कुछ लिखा व कहा उसे आसानी से एडम स्मिथ, रिकार्डो एव अन्य प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो की रचनाओ मे खोजा जा सकता है। मार्क्स ने अपनी रचना The Critique of Political Economy मे स्वीकार किया है कि उन्होने वर्षों तक लगातार ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी, लदन मे अपनी ऐतिहासिक कृति Das Kapital की रचना के लिए विषय–सामग्री एकत्रित करने के उद्देश्य से प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन का गहन अध्ययन किया था। इसीलिए कहा जाता है कि मार्क्सवाद कोई मौलिक चिंतन नही बल्कि परम्परावादी सिद्धान्तो का मार्क्स द्वारा रूपान्तरण मात्र है। प्रो जीड एव रिस्ट के अनुसार, "मार्क्सवाद के सिद्धान्त प्रत्यक्षत 19वी सदी

18. "No system of thought has suffered such a complete bankruptcy as the Marxian... His prophecies have perversely refused to be fulfilled." -Gray A

के प्रारम्भिक अर्थशास्त्रियो–मुख्यत रिकार्डो के सिद्धान्तो से उदित हुए है।'' अर्थात् मार्क्स पर रिकार्डो का सबसे गहरा प्रभाव पड़ा। इसके अलावा एडम स्मिथ के आर्थिक एवं दार्शनिक चिंतन की भी मार्क्सवाद पर गहरी छाप दिखायी पडती है। मार्क्सवाद के निम्नांकित सिद्धान्तो पर परम्परावाद का प्रभाव विशेषत उल्लेखनीय है–

(i) **मूल्य सिद्धान्त**– मार्क्स ने बेशी मूल्य के सिद्धान्त का प्रतिपादन कर आर्थिक प्रणाली को मूल्य के श्रम–लागत सिद्धान्त एव बेशी मूल्य के सिद्धान्त पर आधारित किया। इसके अनुसार एक श्रमिक को मजदूरी के रूप मे जो कुछ मिलता है वह उससे कही अधिक उत्पन्न करता है अर्थात् श्रमिक को उसके द्वारा पूर्ण किये गये कार्य के अनुपात मे मजदूरी नही मिलती और यह अन्तर जो 'बेशी मूल्य' है, पूजीपति हडप लेते है। पूजीपति सदैव इसमे वृद्धि के लिए प्रयासरत रहते है, फलत श्रमिको के सकट बढ़ते जाते है। मार्क्स के इस सिद्धान्त पर एडम स्मिथ एव रिकार्डो के विचारो का गहरा प्रभाव है।

ज्ञातव्य है कि सर्वप्रथम एडम स्मिथ ने और तत्पश्चात् रिकार्डो ने मूल्य के श्रम लागत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। स्मिथ ने बताया कि यदि X वस्तु के उत्पादन मे 4 और Y वस्तु के उत्पादन मे 12 घण्टे लगते है तो दोनो वस्तुओ का मूल्य (अर्थात् विनिमय अनुपात) 3X = 1Y होगा। इसे आगे बढ़ाते हुए रिकार्डो ने कहा कि मूल्य के दो रूप– प्रयोग मूल्य (Value in use) एव विनिमय मूल्य (Value in exchange) है, जिनमे विनिमय मूल्य महत्त्वपूर्ण है, जिसका निर्धारण वस्तु की दुर्लभता एव उसके उत्पादन मे लगे श्रम की मात्रा द्वारा होता है। इन्ही विचारो को आधार बनाकर मार्क्स ने अपना सिद्धान्त प्रतिपादित किया।

(ii) **लगान सिद्धान्त**– मार्क्स पूजीवादी शोषण का कारण खोज रहे थे। यह कारण उन्हे रिकार्डो के लगान सिद्धान्त मे मिल गया। रिकार्डो ने बताया कि लगान एक अनर्जित आय है, भू–स्वामी परजीवी है, वे सम्पत्ति इकट्ठी करते है और अपनी आर्थिक शक्ति बढ़ाते है। इसी आधार पर मार्क्स ने निजी सम्पत्ति की सस्था को श्रम के शोषण से विकसित सस्था पाया और इसके उन्मूलन मे ही उन्हे श्रमिको का हित नजर आया। इसीलिए उन्होने इसकी समाप्ति के लिए विश्वभर के मजदूरो को एक होने का आह्वान किया।

(2) मार्क्स की अध्ययन पद्धति पर प्रभाव (Impact on Marxian Methodology)– परम्परावादी अर्थशास्त्रियो (मुख्यत एडम स्मिथ एव माल्थस) की भाति मार्क्स ने भी अर्थशास्त्र के अध्ययन की आगमन प्रणाली का प्रयोग किया। मार्क्स हर घटना की ऐतिहासिक पुष्टि के पक्षधर थे। इसीलिए उन्होने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या का समर्थन किया।

(3) मार्क्स की शैली पर प्रभाव (Impact on Marxian Style)- एडम स्मिथ

की भाति कार्ल मार्क्स ने भी अपने सिद्धान्तो को सार्वभौमिक एव सार्वकालिक बताया और कहा कि ये सारे विश्व की शोषित मानवता के उद्धार के लिए है। इसके अलावा आलोचको ने स्मिथ एव मार्क्स की शैली मे भी इतनी समानता देखी है कि कतिपय महत्त्वपूर्ण एव ज्वलत प्रश्न (यथा– एकाधिकारी मूल्य, एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा मे मूल्य आदि) जो स्मिथ ने छोड दिये, उन्हे मार्क्स ने भी नही छुआ। आलोचको के अनुसार एडम स्मिथ (वेल्थ आफ नेशन्स) एवं मार्क्स (दास कैपीटल) की प्रसिद्ध रचनाओ के शीर्षक मे भी इस बात की स्पष्ट झलक दिखायी देती है कि मार्क्स परम्परावादियो की शैली से काफी प्रभावित रहे।

नि सदेह मार्क्स परम्परावादियो के ऋणी थे। किन्तु इसके बावजूद यह सही है कि जहा परम्परावादियो के विचार अधूरे, अस्पष्ट एव अपरिपक्व थे वहा मार्क्स ने जो कुछ लिखा वह डके की चोट पर लिखा और वह इतना पूर्ण एव परिपक्व था कि उसे परम्परावाद से भिन्न मार्क्सवाद के नाम से सम्मानित किया गया। वस्तुत मार्क्स ही प्रथम विचारक एव लेखक थे जिन्होने न केवल आर्थिक प्रणाली की सम्पूर्णता (totality) का वैज्ञानिक विवेचन किया बल्कि आर्थिक प्रणाली एव व्यावहारिक जीवन की समस्याये हल करने का प्रयास भी किया। इस हेतु उन्होने अपने सभी सिद्धान्तो की ऐतिहासिक तथ्यो द्वारा पुष्टि की और उन्हे कोरे आदर्शवाद के आवरण से बाहर निकाल कर व्यावहारिकता का जामा पहनाया। इसीलिए परम्परावादियो ने जहा परिवेश को स्थायी बताया वहा मार्क्स ने कहा कि सभी सामाजार्थिक दशाए परिवर्तनशील है। इसी आधार पर जहा परम्परावाद को कोरा सिद्धान्त कहा जाता है, वहा मार्क्सवाद को सिद्धान्त के साथ–साथ एक व्यावहारिक शक्ति भी माना गया है जिसके द्वारा मार्क्स ने परम्परावाद को चुनौती दी और समकालीन एव बाद के सम्प्रदायो की चुनौती स्वीकार की।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर, सहज ही मे यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि मार्क्स को परम्परावादी अर्थशास्त्रियो की श्रेणी मे अतिम अर्थशास्त्री कहने का कोई औचित्य नही है।

मार्क्स का आलोचनात्मक मूल्याकन
(Critical Appraisal of Karl Marx)

मार्क्स एक अर्थशास्त्री से कही अधिक थे। उन सदृश्य दार्शनिक विचारक एव अर्थशास्त्री के कार्यों एव चिंतन का मूल्याकन करना एक जटिल कार्य है। उन्होने अपने जीवन काल मे जो साहित्य रचा उससे कही अधिक महत्त्वपूर्ण साहित्य उनकी मृत्यु के पश्चात् एजिल्स एव कोटस्की ने 'दास कैपिटल' के शेष तीन खण्डो मे प्रकाशित कर दिया। उनके अनुयायियो एव समर्थको ने जिस उत्साह एव मनोयोग से उनके विचारो एव सिद्धान्तो की

व्याख्या एव प्रचार–प्रसार किया है, उससे उनके मूल्यांकन का कार्य और जटिल हो जाता है । यह कहना त्रुटिपूर्ण नही होगा कि आर्थिक विचारो के इतिहास मे जिस प्रकार माल्थस एव रिकार्डो क्रमश सर्वाधिक, विवादस्पद लेखक एव विचारक माने जाते है, उसी प्रकार कार्ल मार्क्स सर्वाधिक विवादास्पद लेखक एव विचारक है । वे एक ओर प्रशसा, भर्त्सना एव कटु आलोचना के पात्र रहे है तो दूसरी ओर यह भी सत्य है कि उन्हे लोगो ने जितना पढ़ा है उतना अन्य किसी विचारक को नही पढ़ा गया और उन पर जितना विचार–विमर्श हुआ है उतना सम्भवत अन्य किसी प्रथम श्रेणी के लेखक पर नही हुआ । यदि आलोचको ने उन्हे देहधारी शैतान (devil in carnate) कहा है तो समर्थको ने उन्हे मानव जाति का ऐसा उद्धारक बताया है जिसने ईसा मसीह एव मोहम्मद साहब से भी अधिक प्रभावशाली धर्म (अर्थात् मार्क्सवाद) चलाया ।[19]

अब हम क्रमश उनकी आलोचना एव समर्थन मे व्यक्त किये गये विचारो का, सक्षेप मे विवेचन करेगे –

मार्क्स के विपक्ष में तर्क (Case Against Marx)-

कार्ल मार्क्स के विचारो एव सिद्धान्तो के आधार पर उनके विपक्ष मे *निम्नांकित बाते कही जा सकती है–*

(i) एक क्रान्तिकारी न कि सुधारक (Revolutionary and not a reformative)- मार्क्स के विचार क्रातिकारी थे । इसीलिए उन्हे अव्यवस्था फैलाने वाला कहा जाता है । आधुनिक रचनात्मक दृष्टिकोण वाले विचारको एव लेखको से भिन्न उन्हे विनाश चाहने वाला माना गया है, जिन्होने स्थापित सामाजार्थिक एव राजनैतिक सस्थाओ को परिवर्तन एव सशोधन द्वारा सुरक्षित रखने की अपेक्षा उन्हे समूल उखाड़–फेकने एव उनके स्थान पर नयी संस्थाए स्थापित करने की बात कही । अपने ऐसे उग्रवादी विचारो के कारण ही अध्ययन समाप्ति के पश्चात् बॉन विश्वविद्यालय मे उन्हे प्राध्यापक के पद पर नियुक्ति नही मिली । उनका राज्य द्वारा किये जाने वाले आर्थिक एव सामाजिक सुधारो मे विश्वास नही था । वे इन्हे एकदम अस्थायी एव पूजीपतियो का षड्यन्त्र मानते थे । वे चाहते थे कि श्रमिक सगठित होकर बलपूर्वक पूजीवाद को समाप्त करदे और उसके स्थान पर नयी सामाजार्थिक व्यवस्था की स्थापना करले ।

(ii) मौलिकता का अभाव (Lack of Originality)- आलोचको के अनुसार मार्क्स के विचारो मे कोई मौलिकता नही है । उनके अनुसार वास्तव मे उन्होने

19 "He (Marx) has been an object of praise, abuse and criticism and all that, and at the same time one who has been most vehemently discussed. His views have been used to *prove him a devil incarnate or a saviour of mankind who founded a religion even more potent than Christ or Mohammed."*

जो कुछ सोचा और लिखा उसे आसानी मे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की रचनाओ मे खोजा जा सकता है। इस दृष्टि से उन्होने केवल प्रतिष्ठित आर्थिक चितन का परिष्कार किया और इसी आधार पर कुछ आलोचक उन्हे मात्र प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का अतिम अर्थशास्त्री और उनकी रचना 'दास कैपिटल' को समाजवाद की प्रस्तावना के स्थान पर परम्परावाद का उपसहार मानते है।[20] इतना ही नही, आलोचक इसकी मौलिकता मे तो यहाँ तक आशका व्यक्त करते है कि मार्क्स उसे कोई मौलिक शीर्षक नही दे सके अर्थात् आलोचको के अनुसार उन्होने इसके नामकरण मे एडम स्मिथ की रचना "वेल्थ ऑफ नेशन्स्" के शीर्षक की नकल की है।

प्रो जीड एव रिस्ट, शुम्पीटर और हैने के विचारो मे मार्क्स की विषय-सामग्री मौलिक नही थी। उनका मूल्य सिद्धान्त, लाभ तथा मजदूरी के पारस्परिक सम्बन्ध की विवेचना एव लगान सिद्धान्त प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के विचारो से एकदम मेल खाते है। शुम्पीटर के मतानुसार तो यह आश्चर्य है कि मार्क्स ने उनमे अपनी ओर से कुछ भी नही जोड़ा। विषय-सामग्री के अलावा मार्क्स की शैली भी मौलिक नहीं थी। शुम्पीटर के मत मे उन्होने हमेशा रिकार्डो के उपकरणो का प्रयोग किया।[21]

(iii) **पक्षपातपूर्ण विद्वता (Biassed scholarship)**- आलोचको के अनुसार मार्क्स की विद्वता निष्पक्ष नही थी। वे षड्यत्रकारी थे। उन्होने वैज्ञानिक खोजो का राजनैतिक उद्देश्यो की पूर्ति के उपकरणो के रूप मे प्रयोग किया।

(iv) **झूठे भविष्यवक्ता (False prophet)** आलोचको के अनुसार मार्क्स की लगभग सभी भविष्यवाणिया गलत निकली है और इस दृष्टि से वे एक झूठे भविष्यवक्ता थे। उदाहरण के लिए, समाजवादी क्राति विकसित-उद्योग प्रधान-पूजीवादी राष्ट्रो (इग्लैण्ड एव फ्रास) मे न होकर गरीब एव पिछड़े सोवियत सघ एव चीन मे हुयी। वे पूजीवाद मे परिवर्तन की प्रकृति का सही-सही अनुमान लगाने मे विफल रहे और उसका पतन अवश्यम्भावी बता दिया जबकि उसकी जड़े उत्तरोत्तर गहरी होती जा रही है। वे पूजीवाद मे श्रम के शोषण के बारे मे भी भ्रमित रहे और कह दिया कि इसमे आवश्यक रूप से शोषण होगा, जबकि सारी दुनिया से अमरीका को प्रतिभा का पलायन इस आशय का सूचक है कि वहा श्रम का शोषण नही हो रहा है और इसीलिए पूजीवादी व्यवस्था उनके लिए आकर्षक का केन्द्र बनी हुई है। झूठी भविष्यवाणियो के कारण ही वे उन दर्जनो क्रातिकारियो मे से एक थे जो अपने मिशन मे विफल रहे। जहा की स्थिति देखकर वे दुखी हुए वहां श्रम खुशहाल

---

20. "Das kapital instead of being the prologue to the communal critique, is simply the epilogue of the bourgeois economics," -Labriola.
21. "He always used Recardian tools" -Schumpeter J J

है। वस्तुत वे भविष्य की तुलना मे भूत की अच्छी व्याख्या करने मे ही सफल हो सके और वर्तमान से हमेशा कुंठित रहे। हैने के मतानुसार "तार्किक दृष्टि से उनका कोई सिद्धान्त खरा नही है। उनका दर्शन अवास्तविक एव एक--पक्षीय रहा है और उनकी भविष्यवाणियो की पुष्टि नही हुयी है।"[22]

(v) **जनतंत्र की भूमिका की उपेक्षा (Ignored the role of Democracy)**- मार्क्स पूजीवाद के दोषो को दूर करने मे जनतत्र की भूमिका का अनुमान नही लगा पाये। वास्तविकता तो यही है कि लोकतत्र ने पूजीवाद को उसकी तबाही से बचा लिया है।[23] आज जहा लोकतंत्र मजबूत है वहा देशवासी सुखी एव समृद्ध है और वहा श्रम का शोषण मार्क्स के अनुभूत एव कल्पित शोषण से कम है। जनतत्र की पूजा ने पूजीवाद को जहा ताकत दी है वहा उसकी उपेक्षा ने समाजवादी अर्थव्यवस्थाओ को धराशायी कर दिया है।

(vi) **यथार्थवादी नहीं (Note a realist)**- आलोचको के अनुसार मार्क्स यथार्थवादी विचारक नही थे। उन्होने वास्तविक एव यथार्थवादी मध्यवर्ती बाजार दशाओ, यथा—एकाधिकारात्मक प्रतिस्पर्धा, अपूर्ण प्रतिस्पर्धा, राजकीय हस्तक्षेप आदि का अस्तित्व स्वीकार न कर वास्तविकता से मुँह मोड़ लिया और केवल सैद्धान्तिक एव बौद्धिक खिलौनो के निर्माण मे जुट गये। यद्यपि, उन्होने ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का प्रयोग किया तथापि जैसा कि प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्रवेत्ता लास्की ने कहा है उनका मूल्य सिद्धान्त तथ्यो पर *आधारित न होकर काल्पनिक था। इस दृष्टि से उनके सिद्धान्त एव व्यवहार मे अन्तर रहा।*

(vii) **एक वर्ग विशेष के विचारक (Thinker of a particular class)**-मार्क्स एक वर्ग विशेष (श्रमिक वर्ग) के ही विचारक थे। उनका समाजवाद सबका समाजवाद नही बल्कि मार्क्स और उनके मजदूर साथियो का समाजवाद था। इसीलिए उनके समाजवाद ने श्रमिको के जख्म भरने की अपेक्षा गहरे कर दिये और उन्हे बगावत एव तोड़फोड़ के लिए उकसा दिया।

(viii) **अपरिपक्व विचार (Immature Ideas)**- आलोचको के अनुसार मार्क्स एक अपरिपक्व विचारक थे। एरिक रोल ने उनके मूल्य सिद्धान्त एव *कुछ अन्य आलोचको ने उनके 'बेशी मूल्य' के सिद्धान्त एव पूजीवादी व्यवस्था के विनाश सम्बन्धी सिद्धान्त को घटिया एव उनकी वैचारिक अपरिपक्वता का* प्रमाण बताया है।

(ix) **घटिया विरासत (Shoddy legacy)**- आलोचको, जिनमे एरिक रोल मुख्य है, के अनुसार मार्क्स ने भावी पीढ़ी के लिए कोई आर्थिक या

---

22. "None of his theories have stood the test of logical examination his philosophy has *been found unreal and one sided. His prophecies have not been verified*" -Haney L. H.
23. "Political democracy has saved capitalism from destruction." Newman P.C.

राजनीतिक विज्ञान नही छोड़ा, बल्कि एक राजनीतिक मूर्तिपूजा (a political idolatory) छोड़ी, जिसे आलोचक एक अविवेकी अथवा एक विवेक विरोधी विरासत मानते है। इस दृष्टि से मार्क्स भावी समाज की अपेक्षाओं के अनुकूल नही निकले।

(x) **अवैज्ञानिक विधि (Unscientific Method)**- कार्ल मार्क्स ने आर्थिक अनुसधान की वैज्ञानिक विधि नही अपनायी। वे इस मत से प्रभावित रहे कि 'पूजीवादी व्यवस्था की नियति उसका समाजवाद मे रूपान्तरण है।' इसके पश्चात् बिना उधर–उधर देखे, सोचे–समझे इस लक्ष्य की खोज मे जुट गये। वे पूर्वाग्रहो से ग्रसित रहे। उनकी अनेक व्याख्याये अनुमानो पर आधारित है। उदाहरणार्थ, उनका यह मानना उचित नही है कि समाज का प्रत्येक वर्ग सगठित है और विभिन्न वर्ग परस्पर सघर्षरत रहते है। वास्तव मे वे आधुनिक जटिल समाज की सरचना का सही–सही अनुमान नही लगा पाये। वास्तविकता तो यह है कि उनका अपना श्रमिक वर्ग भी दुनियाँ मे कही सगठित नही है। इन भ्रातियो के शिकार मार्क्स के निष्कर्ष एव उन तक पहुँचने की विधिया दोषपूर्ण है।

(xi) **तार्किक विसगतिया (Logical Irrelevancy)**- मार्क्स के लगभग सभी सिद्धान्तो मे विसगतिया है। उदाहरणार्थ, उनका मूल्य सिद्धान्त समयावधि के परिप्रेक्ष्य मे मजदूरी–निर्धारण की कोई चर्चा नही करता। इसी प्रकार स्थायी एव परिवर्तनशील पूजी मे उनके द्वारा किया गया अन्तर भी तर्कसगत नही है। इसके अलावा उनके आधिक्य मूल्य, पूजीवादी विकास एव आर्थिक विकास के सिद्धान्त भी तार्किक दोषो से ग्रसित है।

(xii) **दूरदर्शिता का अभाव (Lack of foresight)**- मार्क्स मे दूरदर्शिता का अभाव रहा। वे यह नही सोच पाये कि पूजीवाद एक महान एव क्रियाशील शक्ति है जिसे समाप्त नही किया जा सकता बल्कि उसके साथ एक समझौता कर सामजस्य स्थापित किया जा सकता है। इस अदूरदर्शिता के कारण ही उनका सम्पूर्ण विश्व मे आमूलचूल परिवर्तन का स्वप्न मात्र एक समाजवादी नारा बनकर रह गया और शातिकाल मे सोवियत सघ एव पूर्वी योरोपीय देशो की समाजवादी आर्थिक प्रणालियो का खुली एव बाजार प्रधान पूंजीवादी अर्थव्यवस्थाओ मे रूपान्तरण हो गया। बीसवी सदी का अतिम चतुर्थांश मार्क्स के विचारो के खोखलेपन को निरन्तर उजागर करता जा रहा है।

अन्त मे, मार्क्स को अपने विचारो के खोखलेपन की भनक अपने जीवन काल मे ही लग गयी। सन् 1848 की फ्रांस की क्राति विफल हो गयी, उन्होने अपने मूल्य सिद्धान्त की स्वय ही आलोचना की, उन्होने अपनी रचना के शेष खण्डो का प्रकाशन रोक दिया और जीवन के अतिम वर्षों मे जब उनके क्रातिकारी विचारो की कमजोरियाँ एव बुराइया उजागर होने लगीं तो उन्होंने

शातिपूर्ण उपायो से सामाजिक रूपान्तरण का समर्थन करना आरम्भ कर दिया।

मार्क्स के पक्ष में तर्क (Case for Marx)

उपर्युक्त व्याख्या मार्क्स के मूल्याकन का अधूरा एव नकारात्मक पक्ष है। वास्तव मे मार्क्स इससे कही अधिक है । सक्षेप मे, इनके पक्ष मे निम्नाकित बिन्दु उल्लेखनीय है–

(i) एक प्रभावशाली विचारक एक मौलिक लेखक (An effective thinker and an Original Writer) मार्क्स एक प्रभावशाली विचारक थे । वे प्रथम विचारक थे जिन्होने श्रमिक वर्ग के समाजवाद का समर्थन किया । उनसे पहले के सभी समाजवादी विचारक मध्यवर्गीय उदार समाजवादी थे जिनके चिंतन का उन लोगो के मस्तिष्क एव आत्मा पर कोई प्रभाव नही पड़ा जिनके लिए उन्होने समाजवादी आदोलन का सूत्रपात किया । इसके विपरीत मार्क्स इतने प्रभावशाली विचारक सिद्ध हुए कि उन्होने श्रमिक वर्ग के मस्तिष्क एव मानस को झकझोर दिया । वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होने समाजवाद को एक आर्थिक सिद्धान्त का रूप दिया । इसीलिए जहा अन्य समाजवादी आये और चले गये वहा मार्क्स अपना नाम अमर कर गये । वे एक ऐसे विचारक है जिन्होने विश्व भर के सभी वर्गों के लोगो को प्रभावित किया है । इसीलिए कहा जाता है कि मार्क्स ने जितने लोगो को प्रभावित किया है उतने लोगो को शेष सब समाजवादी विचारक मिलकर भी प्रभावित नही कर पाये है । एक प्रभावशाली विचारक होने के साथ–साथ वे एक आशावादी विचारक भी थे । वे परिवर्तन के समर्थक थे । इसके अलावा उनका चिंतन मौलिक था । प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आलोचको मे वे पहले मौलिक विचारक थे जिन्होने उनके सैद्धान्तिक एव अव्यावहारिक आर्थिक दर्शन को व्यावहारिक बनाने हेतु उसे वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया ।

मार्क्स ने बहुत लिखा और इतना लिखा कि लिखते–लिखते ही मर गये, जिसको उनके एक साथी एव एक अनुयायी ने प्रकाशित करवाया । वे एक उच्चकोटि के एव मौलिक रचनाकार थे । वे एक धनी एव सतुलित मस्तिष्क के मालिक थे । उन्होने अपने सिद्धान्तो के प्रतिपादन मे ऐतिहासिक तथ्यो का प्रयोग किया । उन्होने पूजीवादी आर्थिक प्रणाली की इतनी विस्तृत एव आलोचनात्मक व्याख्या की कि अमर हो गये । उनकी अभिरुचि मात्र राजनीतिक अर्थव्यवस्था मे नही थी बल्कि समाज की सम्पूर्णता मे उन्हे मानव जाति का हित सुरक्षित नजर आया और वे इसी की खोज मे जुट गये । यही कारण है कि उनकी शिक्षाओ एव चिंतन पर उनके बाद भी अथाह साहित्य लिखा गया है । यह उनके चिन्तन एव लेखन की मौलिकता का ही प्रमाण है कि 'दास कैपिटल' की तुलना धर्म ग्रथो से और मार्क्सवाद की तुलना

मानव–धर्म से की जाती है।

(ii) एक महान मानवतावादी (A Great Humanaterian)- मार्क्स एक महान मानवतावादी थे। समाज मे वर्ग–सघर्ष के कारण और उसके निराकरण की खोज मे उन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर दिया। चाहते तो अन्य विचारको एव लेखको की भाति वे भी कितना ही धन–सग्रह कर सकते थे। किन्तु, न उन्होने कभी स्वय के लिए और न अपने परिवार के लिए सोचा। उनके बच्चे रोटी के अभाव मे काल के ग्रास बन गये, किन्तु वे अपने पथ पर अडिग रहे। वे आधे भूखे और आधे नगे रहे। एजिल्स के रूप मे उन्हे एक भामाशाह मिल गया जो जिन्दगी भर उनके रसोई खर्च का भार वहन करता रहा। किन्तु, उन्हे सबके सुख मे ही अपना सुख नजर आया। समर्पण का ऐसा उदाहरण इतिहास मे कोई अन्य नही।

(iii) श्रमिक-हितों के प्रबल समर्थक (A Profound Advocate of the Interests of Labourers)- मार्क्स श्रमिक–हितो के प्रबल समर्थक थे। वे आर्थिक एव राजनैतिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण चाहते थे तथा उसे श्रमिको के हाथो मे सौपने के पक्षधर थे। वे पूजीपतियो द्वारा श्रमिको के शोषण के कट्टर विरोधी थे और मानते थे कि पूजीपतियो के हाथो मे सत्ता के केन्द्रीकरण से यह शोषण ओर बढ़ जायेगा। अत उन्होने श्रमिको का आह्वान किया कि सगठित होकर सत्ता छीन लो ताकि आज तुम पर जो शासन कर रहे है वे कल तुम्हारे शासित बन जाये।

(iv) एक महान दार्शनिक एवं विश्लेषक (A great philosopher and an Analysist)- हीगल के दार्शनिक विचारो के प्रभाव मे आकर वे एक महान दार्शनिक विचारक बन गये। उनका द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद दर्शनशास्त्र के क्षेत्र मे उनकी गहरी पहुँच का परिचायक है। इसका बाद के आर्थिक विचारो पर गहरा प्रभाव पड़ा है। एक विश्लेषक के रूप मे उन्होने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की भाति आर्थिक विश्लेषण और राजनीतिक दर्शन तथा नीति के बीच सामजस्य की स्थापना की। 'उन्होने यह नही किया और वह नहीं किया' के आधार पर उन पर जो भी आक्षेप लगाये जाते हैं वे सब बेबुनियाद है। वस्तुत आज तक कोई भी अर्थशास्त्री सब प्रश्नो का हल नही खोज पाया है। अत अनुत्तरित प्रश्न सदैव रहेगे।

(v) एक यथार्थवादी विचारक (A Realistic Thinker)- मार्क्स एक यथार्थवादी विचारक थे। उन्होने स्पष्ट शब्दो में उल्लेख किया कि प्रत्येक वैज्ञानिक खोज का कोई न कोई व्यावहारिक उद्देश्य होना चाहिए और प्रत्येक सामाजिक विज्ञान को यथार्थ विज्ञानो की भाति सही होना चाहिए। यद्यपि, उन पर यह आक्षेप लगाया जाता है कि मध्यवर्ती बाजार दशाओ की उपस्थिति की अनदेखी कर वे वास्तविकता से दूर निकल गये किन्तु, वास्तव

मे, उनके शोषण एव पूजी के केन्द्रीकरण विषयक विचारो मे अपूर्ण प्रतिस्पर्धा का अस्तित्व स्वीकार कर लिया गया अत इस आधार पर उनके यथार्थवादी होने मे कोई आशका व्यक्त नही की जा सकती।

(vi) एक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति (A Genious)- मार्क्स एक बहुमुखी एव प्रतिभासम्पन्न व्यक्तित्व के धनी थे। वे अपनी व्याख्याओ मे कही पर भी शकालु एव अन्तर्मुखी नजर नही आये। वे एक साथ एक दार्शनिक, अर्थशास्त्री, वैज्ञानिक, समाजशास्त्री और इतिहासकार थे। प्रो एलेक्जेण्डर ग्रे के शब्दो मे, ''मार्क्स केवल अर्थशास्त्री ही नही बल्कि एक समाजशास्त्री, श्रमिक वर्ग के रक्षक, शिक्षक और पैगम्बर थे।'' प्रो पी सी न्यूमैन के मतानुसार, ''वे 19वी सदी के क्रातिकारी तथा श्रम—आदोलन के बौद्धिक नेता थे। अपने पूर्ववर्ती लेखको से भिन्न उनके समाजवादी सिद्धान्त का सीधा लक्ष्य जन—समूह था, उनकी विद्वता उच्चकोटि के विशुद्ध अर्थशास्त्रियो से कहीं ज्यादा थी और आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनके सिद्धान्त अपने मौलिक गुणो के कारण सम्मिलित किये जाते है।''

(vii) एक प्रभावी विचारक (An Effective Thinker)- मार्क्स आर्थिक विचारो के इतिहास के एक प्रभावशाली विचारक है। उनके विचार काफी समय तक विशाल जन—समूह के लिए बलपूर्वक सच्चाई बने रहेगे और प्रवाहित होते रहेगे क्योकि वे प्रभावशाली है। इस दृष्टि से इनका ठीक उसी तरह सही होना आवश्यक नही है जिस प्रकार युद्धप्रिय दर्शन का। किन्तु जिस प्रकार युद्धदर्शन को केवल युद्ध मे भाग लेने वालो की भावनाओ के अनुकूल होना ही पर्याप्त है उसी प्रकार मार्क्स के विचारो का शोषित—वर्ग की भावनाओ के अनुकूल होना ही पर्याप्त है। सम्भवत आर्थिक विचारो के इतिहास मे अन्य किसी विचारक एव लेखक ने मार्क्स जैसा वैचारिक तूफान खड़ा नही किया। यही नही उनके जितने और जैसे कट्टर समर्थक हैं वैसे अन्य किसी विचारक एव लेखक के नही। उनके समर्थको ने न केवल उनके दर्शन का प्रचार—प्रसार ही किया है अपितु वे उनके प्रति पूर्णत समर्पित रहे हैं। उन्होने मार्क्स को अपना इष्टदेव मानकर उनकी उपासना की है। उन्ही के बताये मार्ग पर चलना आरम्भ कर लेनिन एव स्तालिन ने रूस मे तथा माओत्से तुग एव चाउ—एन—लाई ने चीन मे समाजवाद की अधिसरचना तैयार की। उनके प्रभावी विचारक होने का उससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि एक ओर जहा समाजवादी अर्थव्यवस्था टूट रही है वहीं साथ ही साथ सब देशो मे श्रमिक सघ मार्क्स के बताये मार्ग पर चलकर श्रम—हितो की रक्षा के लिए लगातार प्रयत्नशील है। कल्याणकारी राज्य की विचारधारा और समाज के समाजवादी ढाचे की स्थापना के लक्ष्य को मार्क्सवाद से बहुत बल मिला है।

आर्थिक विचारों के इतिहास में मार्क्स का स्थान
(Place of Marx in the History of Economic Thought)

मार्क्स के बिना आर्थिक विचारो का इतिहास अधूरा है । उन्हे बिना किसी वाद–विवाद के 19वी सदी का सबसे प्रमुख विचारक एव लेखक कहा जाता है । अपनी सदी के शेष सभी विचारको एव लेखको के कार्यों से उनका कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण एव युग परिवर्तनकारी है । यदि अन्य सभी लेखको का कार्य खत्म भी हो जाये तो भी सम्भवत कोई फर्क नही पड़े । किन्तु, मार्क्स को निकाल देने पर आर्थिक विचारो के इतिहास मे जो अभाव उत्पन्न होगा उसे पूरा करने का कोई दूसरा विकल्प नही है । उनका चिंतन 'मार्क्सवाद' एक महान शक्ति एव विश्व भर का आकर्षण केन्द्र है । इसलिए विश्व की प्रत्येक आर्थिक, सामाजिक एव राजनीतिक व्यवस्था मे उनके कट्टर अनुयायी एव समर्थक है । निम्नाकित बिन्दुओ के आधार पर आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान निर्धारित किया जा सकता है–

(1) **क्रांतिकारी अन्तर्राष्ट्रीय समाजवाद के प्रणेता (Exponent of Revolutionary International Socialism)-**

मार्क्स को बिना किसी मत–मतान्तर एव छानबीन के क्रांतिकारी अन्तर्राष्ट्रीय समाजवाद का प्रणेता कहा जा सकता है क्योकि उन्होने इसे सर्वप्रथम काल्पनिक आदर्शों से उपर उठाकर वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया । उनका यह समाजवाद सर्वव्यापी समाजवाद है । वेब्लेन के शब्दो मे, "मार्क्स के हाथो समाजवाद का स्वरूप विशुद्ध भौतिकवादी बन गया और उसका क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय अथवा विश्वव्यापी हो गया ।"[24] समाजवाद के प्रमुख प्रणेता के रूप मे मार्क्स की भूमिका का उल्लेख करते हुए प्रो एलेक्जेण्डर ग्रे ने लिखा है कि, "सुनिश्चित तथ्य यह है कि बाद के समाजवाद पर मार्क्स का ही प्रभुत्व रहा और जब कभी बाद के समुदायो ने उन्हे अस्वीकार किया तो उनका आविर्भाव मार्क्स से प्रतिक्रिया के कारण ही हुआ ।" उनका समाजवाद श्रमिक वर्ग का समाजवाद था । स्वय मार्क्सवाद इसका कोई विशिष्ट रूप न होकर एक ऐसा मानवतावादी आदोलन है, जिसका इतिहास मे और कोई सानी नहीं है । अपने पूर्ववर्ती समाजवादियो से भिन्न उन्होने नैतिक एव आध्यात्मिक आधार पर समाजवाद का समर्थन नहीं किया बल्कि वे आर्थिक कारणो से श्रमिको को पूजीपतियो के शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए समाजवाद चाहते थे । वे अपनी मृत्यु के पश्चात् भी समाजवादी आदोलन को आगे बढ़ाने के लिए एक महत्त्वपूर्ण शक्ति बने हुए हैं ।

---

24. "With Marx Socialism took on a purely materialistic garb and became international or cosmopolitan in its scope." Veblen T

(2) एक महान विचारक (A Great Thinker)-

आर्थिक विचारो के इतिहास मे एक महान एव मौलिक विचारक के रूप मे मार्क्स का नाम सदैव सम्मान के साथ लिया जाता रहेगा । द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या, पूजीवादी शोषण का सिद्धान्त, बेशी मूल्य का सिद्धान्त आदि कतिपय ऐसे विचार एव सिद्धान्त है जो सदा महत्त्वपूर्ण बने रहेगे । एक विचारक के रूप मे उन्होने आर्थिक विचारो के इतिहास को 'बेशी मूल्य' एवं 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' जैसे वैचारिक उपकरण (ideological tools) प्रदान किये जिनके सहारे यह इतिहास आगे बढ़ा है ।

(3) एक महान लेखक (A Great Writer)

मार्क्स एक उच्चकोटि के लेखक थे । समाजवाद के सम्पूर्ण इतिहास मे विचारको एव लेखको की सूची मे कार्ल मार्क्स को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है । मार्क्सवादी उन्हे अपना पैगम्बर एव उनकी रचना 'दास कैपिटल' को अपना धर्म-ग्रथ मानते है । इस रचना को 19वी सदी की सर्वोत्कृष्ट रचना कहा जा सकता है । **प्रो शुम्पीटर** के मतानुसार, "मार्क्स उच्च कोटि के अर्थशास्त्रियो मे अग्रणी थे जिन्होने यह देखा और व्यवस्थित ढग से बताया कि आर्थिक विश्लेषण को कैसे ऐतिहासिक विश्लेषण मे बदला जा सकता है और विश्लेषणात्मक इतिहास को कैसे Histoire raisonee मे बदला जा सकता है ।" न्यूमैन के मतानुसार एक महान लेखक की हैसियत से मार्क्स ने आधुनिक अर्थशास्त्रियो को उनके बौद्धिक पूर्वगामियो से कही अधिक प्रभावित किया है । यह बात विशेष रूप से मार्क्स द्वारा चयनित समस्याओ के परिप्रेक्ष्य मे कही जा सकती है ।[25] दूसरे शब्दो मे, बाद के सभी सम्प्रदाय मार्क्स के विचारो के ऋणी है ।

(4) प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के रचनात्मक आलोचक (A Creative Critic of *Classical Economic Thought*)-

मार्क्स ने प्रतिष्ठित आर्थिक चिंतन के आधार पर अपनी वैचारिक अधिसरचना तैयार कर मार्क्सवाद का प्रतिपादन किया किन्तु उन्होने उनके विचारो का कही अन्धानुकरण नही किया । ठीक इसी प्रकार उन्होने प्रतिष्ठित सिद्धान्तो की ईर्ष्या के वशीभूत आलोचना नही की । वे इतिहास और अर्थशास्त्र के विद्यार्थी थे और आर्थिक जीवन की गतिशीलता मे उनका विश्वास था, अत उन्होने जो भी आलोचना की वह रचनात्मक थी और उससे

25 *"In the light of modern economic thought, Marx, strangely enough, is more nearly the spiritual kinsman of the modern economists that their own intellectual forbears. This is especially true of his choices of problems."* Newman P C.

किसी न किसी नये विचार अथवा सिद्धान्त का विकास हुआ। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र के समस्त आलोचको मे मार्क्स ही सबसे अधिक रचनात्मक आलोचक रहे।

(5) एक प्रारम्भिक संस्थानिकवादी (An Early Institutionalist)-

मार्क्स ने बड़ी चतुराई से सामाजार्थिक चितन को इतिहास एव सिद्धान्त के साथ जोड़ा और इस दृष्टि से आर्थिक विचारो के इतिहास मे उन्हे प्रारम्भिक सस्थानिकवादी माना जा सकता है।

मार्क्स एक जीवत व्यक्तित्व था; वह एक आदोलन था, वह उस समय की सबसे बड़ी पुकार था। आर्थिक विचारो के इतिहास मे उन्हे एक साथ उच्च कोटि के लेखक, विचारक, दार्शनिक, समाज सुधारक, आलोचक, अनुसधानकर्त्ता, विश्लेषणकर्त्ता, क्रांतिकारी और इन सबसे भी बढ़कर एक महान् मानवतावादी कहा जाता है। आर्थिक विचारो के सम्पूर्ण इतिहास मे सम्भवत. इतने अलकरण और किसी विचारक एव लेखक को नही दिये जा सकते। **स्पीगल** के मतानुसार "वे एकनिष्ट अर्थात् सच्चे हठधर्मी थे जिन्होने दर्शन, इतिहास एव अर्थशास्त्र के सयोजन से अथक् उत्साह के साथ एक सदेश की व्युत्पत्ति की।[26] यही सदेश मार्क्सवाद था। **प्रो. मेयर एवं बाल्डविन** के मतानुसार "हमे मार्क्सवाद समझना चाहिए क्योकि यह आज सबसे प्रभावशाली राजनीतिक धर्म है जो विकसित एव विकाशील दोनो ही प्रकार के देशो का भविष्य सुधारने में सहायक है।" आधुनिक अर्थशास्त्रियो मे उन्होने कीन्स को बहुत अधिक प्रभावित किया, जिन्होने समष्टि आर्थिक विश्लेषण का विस्तृत ढाचा तैयार किया। व्यापार चक्र एव प्रभावपूर्ण माग विषयक उनके विचार इस सदी के अर्थशास्त्रियो से बहुत मेल खाते हैं। कीन्स के अलावा शुम्पीटर एव मिचैल आदि के व्यापार–चक्र सम्बन्धी सिद्धान्तो पर अन्य सभी की तुलना मे मार्क्स का प्रभाव सबसे अधिक है। नि.सदेह यदि मार्क्स का जन्म न होता तो मानव समाज एव आर्थिक विचारो के इतिहास का स्वरूप कोई और होता। अन्त मे, निष्कर्ष रूप मे, **किरकुप** का यह कहना समीचीन है कि 'मार्क्स अपनी सदी के सबसे बड़े विचारक थे।'[27]

---

26. "He was a single minded fanatic who derived from the fusion of philosophy history and economics a massage which he drove home with unrelenting zeal" Spiegel
27. "In the combination of learning philosophic acumen and literary power he is second to no economic thinker of the 19th century" Kirkup

प्रश्न

1. **मार्क्स के प्रमुख आर्थिक विचारों एवं सिद्धान्तों का संक्षिप्त विवेचन कीजिये।**
   संकेत : अति सक्षेप मे मार्क्स का परिचय देकर उनके मुख्य–मुख्य विचारो एव सिद्धान्तो का विवेचन करदे।
2. ***मार्क्सवाद पर एक आलोचनात्मक निबन्ध लिखिये।***
   संकेत : मार्क्स के प्रमुख सिद्धान्तो का हवाला देते हुए मार्क्सवाद की प्रमुख विशेषताओ, लोकप्रियता के करणो एव अन्त मे आलोचनाओ का विवेचन करे।
3. **"बेशी मूल्य का सिद्धान्त' मार्क्सवाद का केन्द्र बिन्दु है।" समीक्षा कीजिये।**
   संकेत : प्रथम भाग मे सक्षेप मे इस कथन का आशय समझाये तत्पश्चात् बेशी मूल्य के सिद्धान्त की सविस्तार व्याख्या कर आलोचनाएँ बताये और अन्त मे निष्कर्ष दे कि यह उनके आर्थिक सिद्धान्तो मे कितना महत्त्वपूर्ण है।

4 **''मार्क्सवाद'' परम्परावादी तने पर विकसित हुई एक शाखा है।" कथन की समीक्षा कीजिये।**
   संकेत : यह दर्शाते हुए प्रश्न हल करे कि मार्क्स के सभी सिद्धान्तो, अध्ययन पद्धतियो एव शैली पर परम्परावादियो का व्यापक प्रभाव है।

5 **मार्क्स का मूल्यांकन कर आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान निर्धारित कीजिये।**
   संकेत : प्रश्न के दो भाग है। प्रथम भाग मे मार्क्स का मूल्याकन करें और दूसरे भाग मे आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान निर्धारित करते हुए निष्कर्ष दे कि वे 19वी सदी के सबसे महान विचारक थे।

6 **'धन के संकेन्द्रण' एवं 'आर्थिक संकट' के विषय में मार्क्स के विचारों का परीक्षण कीजिये।**

8

ऐतिहासिक सम्प्रदाय : जर्मन एवं ब्रिटिश ऐतिहासिक आलोचक

(The Historical School : German and British Historical Critics)

"एक सामाजिक प्राणी के रूप में मनुष्य सभ्यता का शिशु और इतिहास का उत्पाद है। उसकी आवश्यकताएँ, उसका बौद्धिक दृष्टिकोण, भौतिक वस्तुओं से उसका सम्बन्ध और अन्य व्यक्तियों से उसके संबंधन सदैव एक समान नहीं रहे हैं। भूगोल उन्हें प्रभावित करता है, इतिहास उनमें संशोधन करता है जबकि शिक्षा में प्रगति उनका पूर्णतः रुपान्तरण कर सकती है।[1] हिल्डेब्रैण्ड।

परिचय : इतिहासवाद

(Intoroduction : The Historicism).

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक सिद्धान्तो की प्रतिक्रिया एव आलोचना के साथ-साथ आर्थिक चिंतन के जिन अन्य एव नये सम्प्रदायो का विकास हुआ, उनमे एक अति महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय ऐतिहासिक सम्प्रदाय है। इसके प्रवर्त्तको को ऐतिहासिक आलोचक भी कहते है। इन आलोचको ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की 'आर्थिक नियमो की सार्वभौमिकता' के निष्कर्ष को चुनौती दी तथा उनके (मुख्यतः डेविड रिकार्डो) द्वारा अपनायी गयी अर्थशास्त्र के अध्ययन की, तर्क पर आधारित, निगमन प्रणाली (Deductive method) का विरोध किया और सार्थक परिणामो पर पहुँचने के लिए तथ्यो एव आँकड़ो पर

---

1 "Man as a social being is the child of civilization and product of history. His wants, his intellectual outlook, his relation to material objects, and his connexion with other human beings have not always been the same. Geography influences them, history modifies them, while the progress of education may entirely transform them."

Hildebrand B

आधारित अध्ययन की आगमन प्रणाली (Inductive method), जिसे ऐतिहासिक प्रणाली भी कहा जाता है, के प्रयोग की सिफारिश की। इसीलिए इन ऐतिहासिक आलोचको के वैचारिक ढाँचे को आर्थिक विचारो के इतिहास मे ऐतिहासिक सम्प्रदाय अथवा इतिहासवाद के नाम से जाना जाता है। सक्षेप मे, ऐतिहासिक सम्प्रदाय का उद्‌भव एव विकास प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन एव अध्ययन पद्धति के विरुद्ध एक तीव्र प्रतिक्रिया था। इसलिए प्रो सेलिगमैन ने इसे परम्परावाद के विरुद्ध एक बगावत (a rebellion against classicism) कहा! इस सम्प्रदाय की दो प्रमुख शाखाएँ है–

I जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय और
II ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय।

अब हम इन दोनो का क्रमश सविस्तार विवेचन करेगे–

I जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय
(German Historical School)

परिचय (Introduction)

यद्यपि, 18 वी सदी के उत्तरार्द्ध मे कई जर्मन अर्थशास्त्री एव विचारक प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो (मुख्यत रिकार्डो) के अनुयायी बन गये और उन्होने उनके आर्थिक विचारो का प्रचार–प्रसार शुरू कर दिया, किन्तु 19वी सदी के आरम्भ मे नैपोलियन के युद्धो के पश्चात् जब यह स्पष्ट हो गया कि प्रतिष्ठित सिद्धान्तो की सहायता से जर्मनी की समस्याये हल नही हो सकती तो वहा इन विचारो की आलोचना होने लग गयी। सामान्यतया ऐसे सभी आलोचको को सामूहिक रूप से जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय कहा जाता है। दूसरे शब्दो मे, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय जर्मन विद्वानो के उस समूह का नाम है जिसने ऐतिहासिक आगमन प्रणाली के प्रयोग का समर्थन किया तथा तत्कालीन दशाओ में, यह मानते हुए कि एडम स्मिथ एव रिकार्डो के जमाने से अब लोगो के इतिहास एव आर्थिक व्यवहार मे परिवर्तन हो गया है, आर्थिक सामान्यीकरणो (economic generalisations) की निरपेक्षता के स्थान पर सापेक्षता पर बल दिया और कहा कि सामान्य सिद्धान्तो के प्रतिपादन (general theorisation) से पूर्व मानव समाज के विकास की प्रवृत्ति का अध्ययन किया जाना चाहिये। इस सम्प्रदाय ने, यद्यपि, 19 वी सदी के दूसरे चतुर्थांश के आरम्भ में ही प्रतिष्ठित सिद्धान्तो पर प्रहार करना आरम्भ कर दिया था, किन्तु इसकी विधिवत घोषणा सन् 1843 मे तब हुयी जब एक प्रमुख आलोचक रोशर की ऐतिहासिक रचना 'Grundriss' (Outline of Lectures on Political Economy According to the Historical School) का प्रकाशन हुआ। इस सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो, जिनमे रोशर, कार्ल नीज और हिल्डेब्रेण्ड आदि अग्रणी है, के विचार इस शताब्दी क अन्त तक दुनिया के जर्मन भाषा–भाषी

देशो मे लगभग 40 वर्ष तक छाये रहे। इन्होने आर्थिक नियमो के निरपेक्ष अध्ययन की अपेक्षा उनके सापेक्ष अध्ययन पर बल दिया और जैसे–जैसे यह सम्प्रदाय जोर पकड़ता गया, प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो का खोखलापन सामने आता गया और फलत वे पतनोन्मुख होते गये।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का मानना था कि क्योकि अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और एडम स्मिथ से लेकर आज तक मनुष्य के आर्थिक व्यवहार एव आर्थिक जगत मे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके है, अत इन परिवर्तनो का सांख्यिकीय सामग्री की सहायता से व्यापक विश्लेषण एव अध्ययन कर अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री के अध्ययन सम्बन्धी अनुकूल सामान्य सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया जाना चाहिये ताकि अर्थशास्त्र को अधिक ठोस, निश्चित एव वैज्ञानिक स्वरूप दिया जा सके। दूसरे शब्दो मे, इन आलोचक अर्थशास्त्रियो ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र की काल्पनिक अवधारणाओ का अन्त कर उसे वास्तविक जीवन का सच्चा प्रतिनिधि बनाने का प्रयास किया। प्रो हैने ने इस सम्प्रदाय के परिचय मे बताया कि जब हम ऐतिहासिक सम्प्रदाय की चर्चा करते है तो हमारा आशय " उस विस्तृत आदोलन से होता है जिसमे वे सब जर्मन अर्थशास्त्री सम्मिलित है जो नियमो एव सस्थाओ की सापेक्षता, विश्वसनीय ऐतिहासिक समको के आधार पर तर्क की आगमन प्रणाली एव मानवीय उद्देश्यो व समाजिक विज्ञानो के अन्तर्सम्बन्धो पर बल देते है।"[2] इस सम्प्रदाय का मुख्य उद्देश्य अर्थशास्त्र के अध्ययन की आगमन प्रणाली अपनाकर सम्पूर्ण विश्व की आर्थिक सस्थाओ के विकास की विस्तृत एव वैज्ञानिक खोज करना था। वे ऐतिहासिक तथ्यो के आधार पर ऐसे निष्कर्ष देना चाहते थे जो तर्क–वितर्क पर आधारित निगमन निष्कर्षों को गलत सिद्ध कर सके और उनके सिद्धान्त प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो से अच्छे बन सके। न्यूमैन के अनुसार उनका उद्देश्य, "एक नये अर्थशास्त्र की रचना का था जो प्रत्येक देश की वास्तविक दशाओ के अनुरूप होगा और जो सही तौर पर निर्देशन करेगा क्योकि यह कल्पनाओ पर आधारित न होकर वास्तविक दशाओ पर आधारित होगा।"[3] अपने इन उद्देश्यो मे उन्हे सन् 1840–60 के बीच तो कोई उल्लेखनीय सफलता नही मिली किन्तु, सन् 1870–90 के बीच आशातीत सफलता मिली और यह

---

2. "We mean a broad movement embracing all those economists who emphasized the relativity of laws and institutions, the inductive method of reasoning from concrete historical data and the inter relations among human motives and among the social sciences." Haney L. H

3 "To Establish a new economics which would rest upon bedrock which would a genuine guide because it represented actual, not hypothetical conditions" Newman P C

सम्प्रदाय क्रमश विकास करता गया । यह एक विचित्र सयोग है कि इस सम्प्रदाय के सभी विचारक विभिन्न जर्मन विश्वविद्यालयो मे लम्बे–लम्बे समय तक प्राध्यापक रहे । इस दृष्टि से यह सम्प्रदाय जर्मन बुद्धिजीवियो का एक आदोलन रहा ।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय को प्रभावित करने वाले घटक
Factors Affecting German Historical School)

सक्षेप मे, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के उद्भव एव विकास के लिए निम्नाकित घटको को उत्तरदायी माना जा सकता है–

(1) तत्कालीन जर्मनी की आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति (Economic and Political Condition of Contemporary Germany)-

19वी सदी के उत्तरार्द्ध तक आते–आते इगलैण्ड और फ्रास प्रतिष्ठित आर्थिक चितन का पूरा लाभ उठा चुके थे किन्तु जर्मनी अब भी आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से एक पिछड़ा राष्ट्र था क्योकि

(i) वहाँ का आर्थिक जीवन सदियो पुरानी राजनीतिक प्रथाओ एव सस्थाओं के शिकजे मे जकडा हुआ एव निस्तब्ध था ।

(ii) वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था दोषपूर्ण थी । वह 300 छोटे–छोटे राज्यो मे विभाजित था और उसकी सीमाये असुरक्षित थी ।

(iii) सरकारी तत्र का लगाव देश की आर्थिक प्रणाली मे सुधार की अपेक्षा राजनीतिक व्यवस्था से अधिक था ।

(iv) वहाँ आर्थिक जीवन मे निर्बाधावाद की अपेक्षा सरकारी हस्तक्षेप को महत्ता प्राप्त थी । अत आर्थिक समस्याये मुक्त एव प्रतिस्पर्धी बाजार दशाओ के स्थान पर सरकारी प्रशासको द्वारा हल की जाती थी ।

उपर्युक्त दशाओ के आधार पर जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो ने बताया कि वे सभी नुसखे जो प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने बताये हैं, जर्मनी के लिए समयानुकूल एव उपयोगी नही है । अत आर्थिक चितन को एक दिशा देने की आवश्यकता अनुभव हुई, जिसके परिणामस्वरूप इस सम्प्रदाय का उद्भव एव विकास हुआ ।

(2) पूर्वगामी विचारक (Predecessors)

इनमे सिसमण्डी, हीगल, सैवाइनी, एडम मूलर और फ्रेड्रिक लिस्ट आदि उल्लेखनीय है । इन सबने आर्थिक घटनाओ की ऐतिहासिक तथ्यो एव सामाजिक दशाओ के परिप्रेक्ष्य मे व्याख्या पर बल दिया । इससे इतिहास वादियो को प्रेरणा मिली । सक्षेप मे, उनका योगदान इस प्रकार रहा–

(i) **सिसमण्डी**– सिसमण्डी इतिहासवादियो के पूर्वगामी विचारको मे

अग्रणी थे । उन्होने राजनीतिक अर्थव्यवस्था को नीतिशास्त्र की एक शाखा मानकर, रिकार्डो के सामन्यीकरणो की आलोचना करते हुए ऐतिहासिक तथ्यो के आधार पर उसके अध्ययन का समर्थन किया था ।

(ii) **हीगल**– जर्मन दार्शनिक हीगल व्यक्तिवाद एव प्रकृतिवाद के विरोधी थे । उनका कहना था कि वैयक्तिक आधार पर व्यक्ति का कोई विशेष महत्त्व नही है तथा उसका महत्त्व केवल समाज एव राष्ट्र के सदस्य के रूप मे ही है । अत उन्होने राज्य के ऐतिहासिक अध्ययन को महत्ता दी और राष्ट्रीय राज्य का समर्थन किया जिसमे राज्य व्यक्ति से उपर रहता है । उनके ये विचार प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन से भिन्न थे जिसमे व्यक्तिवाद एव प्रकृतिवाद का खुलकर समर्थन किया गया था । राष्ट्रवाद की भावना से अभिप्रेरित जर्मन विचारको को हीगल के विचार ही अच्छे लगे ।

(iii) **सैवाइनी**– ये जर्मनी के प्रसिद्ध विधिवेत्ता थे । उन्होने बताया कि कानून व्यवस्था सापेक्ष है और समकालीन सामाजिक स्थिति की देन है । उनके इन विचारो से अर्थशास्त्रियो ने आर्थिक घटनाओ की सापेक्षिक एव ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य मे व्याख्या करनी आरम्भ करदी ।

(iv) **एडम मूलर**– जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय पर तात्कालीन प्रभाव मूलर के विचारो का पडा । इन्होने राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मे वास्तविक धन की उपस्थिति पर बल दिया और कहा कि राज्य अर्थव्यवस्था का भूत से घनिष्ट सम्बन्ध है,अत वर्तमान को जानने के लिए इतिहास का ज्ञान आवश्यक है ।

(v) **फ्रेड्रिक लिस्ट**– जर्मन राष्ट्रवाद के कट्टर समर्थक फ्रेड्रिक लिस्ट ने अपने अध्ययनो मे ऐतिहासिक तथ्यो एव सांख्यिकीय सामग्री का खुलकर प्रयोग किया और निष्कर्ष दिया कि प्रत्येक राष्ट्र विकास की पाँच क्रमिक अवस्थाये पार कर अतिम अवस्था मे पहुचता है । उनके आर्थिक राष्ट्रीयतावाद एव भावी उत्पादन क्षमता के सिद्धान्त ऐतिहासिक अध्ययन पर आधारित थे और इन्हे व्यापक लोकप्रियता मिली थी । अत ऐतिहासिक सम्प्रदाय के समर्थको ने भी ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का प्रचार–प्रसार आरम्भ कर दिया ।

(3) अन्य कारण (Other Factors)-

अन्य कारणो मे जर्मन राष्ट्रवाद की भावना का विकास, समाजवादियो की तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था की आलोचना, प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो एव नियमो की निरपेक्षता एव सार्वभौमिकता की अस्वीकृति, बढ़ता औद्योगीकरण आदि प्रमुख थे, जिन्होने ऐतिहासिक सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो को अभिप्रेरित किया ।

ज्ञातव्य है कि जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के लगभग सभी प्रमुख

विचारक राजनीति विज्ञान एव अर्थशास्त्र के प्राध्यापक थे । वे अपनी कक्षाओ मे वे ही सिद्धान्त पढाते आ रहे थे जिनकी वे अनावश्यक एव अवधिपार बताकर आलोचना करते आ रहे थे । अत वे अर्थशास्त्र के अध्ययन की एक ऐसी पद्धति के विकास मे जुट गये जिसमे ऐतिहासिक तथ्यो का अनुसरण आर्थिक सामान्यीकरण करें अर्थात् जिसमे तथ्यो एव आँकडा के आधार पर आर्थिक निकष्य निकाले जाये । यही पद्धति ऐतिहासिक आगमन पद्धति थी ।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का वर्गीकरण एवं विकास

(Classification and Development of German Historical School)

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के विभिन्न विचारको के आर्थिक विचारो मे व्यापक असमानताये है । तथापि सामान्य सिद्धान्तो पर आम समहति की दृष्टि से एव अध्ययन की सुविधा के लिए उन्हे निम्नाकित तीन भागो मे बाटा जाता है—

1 प्रारम्भिक जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय,
2 नवीन जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय और
3 नवीनतम जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय ।

1 प्रारम्भिक जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय (Early German Historical School)

विशेषताएं- इस सम्प्रदाय की प्रमुख विशेषताये निम्नाकित थी–

(i) इस सम्प्रदाय के प्रमुख विचारक रोशर, हिल्डेब्रैण्ड और कार्ल नीज थे । उन्होने किसी मौलिक अथवा रचनात्मक सिद्धान्त का प्रतिपादन न कर मुख्यत प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्त का खण्डन किया ।

(ii) इनका कार्य नकारात्मक एव विध्वसात्मक था । तथापि ऐतिहासिक सम्प्रदाय के ढाँचे को विकसित करने की दृष्टि से ये सम्मान पाने के योग्य थे ।

(iii) इनके लक्ष्य समान नही थे रोशर हिल्डेब्रैण्ड और नीज तीनो ही अपने उद्देश्यो को समान शब्दो मे व्यक्त नही कर पाये ।

(iv) इन्होने विभिन्न सामाजिक विज्ञानो की पारस्परिक निर्भरता पर बल दिया ।

(v) अर्थशास्त्र के क्षेत्र को विस्तृत करने मे सभी अर्थशास्त्रियो की भूमिका महत्त्वपूर्ण एव सम्मान पाने योग्य है ।

प्रमुख विचारक – इस सम्प्रदाय के प्रमुख अर्थशास्त्रियो एव विचारको का सक्षिप्त परिचय निम्नाकित है–

(1) विल्हम रोशर (Wilhelm Roscher सन् 1817–1896 ई)

प्रो रोशर की भाषा, न्यायशास्त्र, इतिहास, वाणिज्य एव राजनीतिशास्त्र मे गहन रुचि थी । गोटिंगन एव बर्लिन विश्वविद्यालयो मे उच्च शिक्षा प्राप्त

कर आप सन् 1844 मे गोटिंगन विश्वविद्यालय मे और तत्पश्चात् सन् 1848 मे लिपज़िग विश्वविद्यालय मे इतिहास एव राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त हुए और जीवनपर्यन्त अध्ययापन कार्य करते रहे। सम–सामयिक विषयो पर लेखो के अलावा आपकी निम्नाकित रचनाएं विशेषत उल्लेखनीय है–

(1) Outline of Lectures on Political Economy According to the Historical School अर्थात् "Grundriss' ---- -- (1843)

(2) History of English Political Economy in the 16th and 17th century i.e System of Political Economy (5 Volumes) (1854) (1859) (1881) (1886) (1894)

(3) History of Political Economy in Germany (1874)

प्रमुख आर्थिक विचार (Major economic ideas) रोशर, जिन्हे जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का सस्थापक कहा जाता है, के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जिसके अध्ययन मे अन्य सामाजिक विज्ञानो यथा–विधिशास्त्र, राजनीतिशास्त्र एव सभ्यता के इतिहास आदि का सहयोग नितान्त आवश्यक है।

(ii) आर्थिक समस्याओ का अध्ययन केवल समकालीन सामाजार्थिक समस्याओ एव सम्बन्धो के आधार पर ही नही किया जा सकता बल्कि इस हेतु औद्योगिक एव व्यापारिक समस्याओ का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे अध्ययन किया जाना चाहिए।

(iii) मानव जाति का सम्पूर्ण इतिहास क्रमिक विकास से आगे बढ़ा है अत आर्थिक सिद्धान्तो के प्रतिपादन मे ऐतिहासिक आगमन प्रणाली के आधार पर विभिन्न कालो, समाजो एव व्यक्तियो का अध्ययन आवश्यक है।

(iv) किसी भी आर्थिक सस्था का अल्पकाल मे एव एक देश विशेष के संदर्भ मे निरपेक्ष मूल्याकन नही किया जा सकता।

(v) निगमन प्रणाली पर आधारित अर्थशास्त्र का कोई नियम सार्वभौमिक एव सार्वकालिक नही है।

उपर्युक्त विचारो के प्रभाव से रोशर ने तथ्यो एव आँकड़ो पर आधारित अर्थशास्त्र के अध्ययन की आगमन प्रणाली का प्रयोग किया और मुख्यत निम्नाकित चार बाते, जैसा कि उन्होने 'Grundriss की प्रस्तावना मे उल्लेख किया है, सिद्ध करने का प्रयास किया–

(i) राजनीतिक अर्थव्यवस्था एक सापेक्ष विज्ञान है।

(ii) व्यक्तियो के मध्य विद्यमान वर्तमान आर्थिक सम्बन्ध राज्य की विशिष्ट प्रकृति एव उसके सास्कृतिक विकास के प्रतीक है।

(iii) आर्थिक नियमो के प्रतिपादन के लिए अधिक से अधिक लोगो से सूचनाये प्राप्त की जानी चाहिये।

(iv) विभिन्न आर्थिक सस्थाएँ आशिक रूप से अच्छी एव आशिक रूप से बढ़िया है अर्थात् उनकी निरपेक्ष व्याख्या सम्भव नही है।

निष्कर्ष– प्रो जीड एव रिस्ट के अनुसार 'रोशर के विचारो मे वैज्ञानिकता एव मौलिकता का सर्वथा अभाव था।' तथापि यह सत्य है कि वे जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के सस्थापक एव इस आदोलन के एक अग्रणी नेता थे। जैसा कि उन्होने स्वय उल्लेख किया, 'वे अर्थशास्त्र के लिए वही करना चाहते थे जो सैवाइनी ने न्यायशास्त्र के लिए किया।' समकालीन लेखक एव अनुयायी उनका बहुत सम्मान करते थे। श्मोलर ने उन्हे अर्थशास्त्रियो मे एक सार्वभौमिक दक्ष एव शिष्ट इतिहासकार माना।[4] वे अपनी धुन के पक्के थे। 'History of Political Economy of Germany' नामक अपनी पुस्तक मे उन्होने आगमन प्रणाली का प्रयोग करते हुए एक हजार से अधिक अर्थशास्त्रियो एव लेखको के विचार सम्मिलित किये। इसीलिए नीज ने कहा कि उनका कार्य अर्थशास्त्र मे सुधार करने की अपेक्षा इतिहासवाद को पूर्ण करना था।[5] उन्होने 52 वर्ष तक जर्मन विश्वविद्यालयो मे अध्यापन कार्य किया अत जर्मनी के युवको पर उनके विचारो का गहरा प्रभाव पड़ा। इसीलिए बाद के विचारको ने उन्ही के बताये मार्ग पर चलकर ऐतिहासिक सम्प्रदाय का विकास किया।

(2) ब्रूनो हिल्डेब्रैण्ड (Bruno Hildebrand : 1812-1878)

समाज सुधारक, सम्पादक एव प्राध्यापक के रूप मे ख्यातिप्राप्त अर्थशास्त्री हिल्डेब्रैण्ड का जन्म न्यूमबर्ग मे हुआ। इतिहास एव दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर आप मारबर्ग विश्वविद्यालय मे राजनीति विज्ञान के प्राध्यापक नियुक्त हुए। किन्तु, सरकार से मतभेदो के कारण आप यह नौकरी छोड़ कर स्विटजरलैण्ड गये, जहा 1861 मे जर्मनी वापस लौटने तक, आपने ज्यूरिक एव बर्न विश्वविद्यालयो मे प्राध्यापक पद पर रहते हुए अध्यापन कार्य किया। जर्मनी वापस लौटने के पश्चात् आप जेना विश्वविद्यालय मे राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक बने और जीवनपर्यन्त इसी पद पर रहे। अर्थशास्त्र, साख्यिकी,

---

4 "Roscher is the most universally trained cultural historian among the economists" -Schmoller G

5 His work meant "a Completion of historiography rather than a correction of political economy" Knies K G A

आर्थिक इतिहास राजनीतिशास्त्र और वित्त आपके प्रिय विषय थे । सन् 1848 मे आपकी प्रसिद्ध रचना The National Economy of the Present and Future जिसे जर्मन भाषा मे सक्षेप मे, "Nationalokonomie" कहा जाता है, का प्रकाशन हुआ । सन् 1883 मे आपने "Year book for Economics & Statistics का प्रकाशन आरम्भ किया और 1873 तक इसका सम्पादन किया एव अपने अनेक लेख प्रकाशित करवाये । सन् 1872 मे आपने Verein Fur Social Politik नामक एक सामाजिक सस्था की स्थापना की । वर्षो तक आपने साख्यिकी ब्यूरो, बर्न के लिए कार्य किया । सन् 1864 मे आपने सयुक्त थूरिन्जियन राज्य के साख्यिकी ब्यूरो की स्थापना की एव जीवन भर उससे जुडे रहे ।

प्रमुख आर्थिक विचार (Major Economic ideas)- हिल्डेब्रैण्ड के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) आर्थिक नियम सार्वभौमिक, सार्वकालिक और निरपेक्ष नही होते बल्कि काल एव स्थान सापेक्ष होते है ।
(ii) आर्थिक नियमो पर आर्थिक घटको के अलावा नैतिक, आध्यात्मिक एव धार्मिक घटको का भी प्रभाव पड़ता है ।
(iii) अर्थशास्त्र एव अर्थव्यवस्था का उद्देश्य सामाजिक हित मे वृद्धि करना है।
(iv) आर्थिक समस्याओ का अध्ययन आगमन प्रणाली के आधार पर ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे किया जाना चाहिये ।
(v) अर्थशास्त्र को राष्ट्रीय विकास एव वृद्धि का एक विज्ञान होना चाहिये । इसी आधार पर उन्होने आर्थिक विकास के नियमो की चर्चा की और उसकी तीन अवस्थाये– प्राकृतिक अवस्था, मौद्रिक अवस्था और साख अवस्था बतायी ।

निष्कर्ष – हिल्डेब्रैण्ड की परम्परावादी निष्कर्षों के प्रति निष्ठा रही । अत वे कोई बड़ा एव मौलिक कार्य नही कर पाये । इसी आधार पर उनके सहयोगी कार्लनीज ने उनकी आलोचना की थी । प्रो हैने के अनुसार, "उनकी समाजवाद की आलोचना प्रशसनीय थी किन्तु उनकी प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के बारे मे जानकारी पूर्ण नही थी ।"6

(3) कार्ल गस्टव अडोल्फ नीज (Karl Gustav Adolf Knies 1821-1898)

प्रारम्भिक जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय की तिकड़ी (trio of the early historical school) मे कार्ल नीज अतिम थे । इनका जन्म मारबर्ग मे हुआ और आप मारबर्ग, फ्रीबर्ग एव हीडेलबर्ग विश्वविद्यालयो मे तीस वर्ष तक

---

6. "His Criticism of socialism is admirable, but he shows a lack of thorough understanding of the founders of the classical school." Haney L H

राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक रहे । यही उन्हे जे बी क्लार्क एव सेलिगमैन सदृश्य प्रतिभा सम्पन्न शिक्षार्थियो का शिष्यत्व मिला । सन् 1853 मे प्रकाशित रचना "Political Economy from the Stand point of the Historical Method", जिसे सक्षेप मे *'Geschichtlichen'* कहा जाता है, उनकी सबसे प्रमुख रचना थी। इसके अलावा आप द्वारा रचित दो अन्य पुस्तके Money and credit (1879) एव The Rail Roads and Their Effects (1883) भी काफी महत्त्वपूर्ण मानी गयी है ।

प्रमुख आर्थिक विचार (Major economic ideas)- कार्ल नीज के आर्थिक विचारो मे निम्नलिखित उल्लेखनीय है–

(i) आर्थिक नियम जैसी कोई चीज नही है, प्रत्येक वस्तु का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे अध्ययन होना चाहिये अर्थात् उन्होने आर्थिक नियमो के अस्तित्व, उनकी सर्वव्यापकता एव निरपेक्षता पर करारी चोट की ।

(ii) आर्थिक सस्थाए और चितन परिवर्तनशील है, अत आर्थिक सामान्यीकरणो मे सार्वभौमिक वैधता नही रहती ।

(iii) आर्थिक प्रणाली ऐतिहासिक विकास का परिणाम है, अत कोई आर्थिक प्रणाली पूर्ण एव अतिम नही है ।

(iv) ऐतिहासिक प्रणाली के प्रयोग से ही सार्थक निष्कर्ष दिये जा सकते है । किन्तु, अर्थशास्त्र मे यह तभी स्वीकार की जायेगी जब ऐतिहासिक अनुसधान ही अर्थशास्त्र का एक महत्त्वपूर्ण कार्य हो ।

(v) प्राकृतिक नियम एव सामाजिक घटनाएँ अलग–अलग है ।

(vi) अर्थशास्त्र विभिन्न समयो तथा युगो मे प्रचलित आर्थिक विकास सम्बन्धी विचारो का इतिहास है ।

(vii) आर्थिक सामान्यीकरण केवल समकालीन भावनाओ का प्रतिनिधित्व करते है ।

(viii) वितरण की समस्याओ के समाधान मे सामाजिक सस्थाएँ एव समस्याये महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है ।

निष्कर्ष :- कार्ल नीज अपने विचारो की उपयुक्तता एव औचित्य से सतुष्ट थे, किन्तु, वे किसी नये अर्थशास्त्र की रचना नही कर सके । तथापि वे अपने शेष दो सहयोगियो की अपेक्षा ऐतिहासिक पद्धति का प्रबल समर्थन एव प्रयोग कर सके । किन्तु, जैसा कि उन्होने स्वीकार किया, सामाजार्थिक सस्थाए बदलती है, अत उन्होने आवश्यक रूप से किसी एक ही अध्ययन पद्धति के प्रयोग पर बल नही दिया । उनकी रचना 'Money and Credit' मुख्यत निगमन प्रणाली के आधार पर ही लिखी गयी थी । वे एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे । श्मोलर के विचार मे उन्हे राष्ट्रो की प्रकृति का अच्छा ज्ञान था

और वे आधुनिक जर्मन अर्थशास्त्र के सैद्धान्तिक निर्माता थे ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि इस सम्प्रदाय के तीनो विचारको के योगदान मे प्रकृति एव विस्तार की दृष्टि से व्यापक असमानताये है । तथापि वे तीनो प्रतिष्ठित आर्थिक विचारको के आलोचक थे और उन्होने उनके इस निकर्ष को अस्वीकार कर दिया कि आर्थिक नियम सार्वभौमिक, निरपेक्ष, वास्तविक एव पूर्ण होते है । उन तीनो ने ही निगमन की अपेक्षा आगमन तर्क स्वीकार किया और ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति के प्रयोग का समर्थन किया । उन्होने विश्लेषण का आधार व्यक्ति (जैसा कि प्रतिष्ठित सम्प्रदाय ने माना था) के स्थान पर समाज को बनाया और आर्थिक औचित्य के स्थान पर समाज की सम्पूर्णता (totality of the society and not the economic rationality) पर बल दिया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने अर्थशास्त्र के क्षेत्र को काफी विस्तृत कर दिया ।

2 नवीन जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय (Later German Historical School)

विशेषतायें .- इस सम्प्रदाय की प्रमुख विशेषताये निम्नाकित थी–

(i) इस सम्प्रदाय के विचारको एव लेखको ने अपने पूर्ववर्ती तीन प्रमुख विचारको द्वारा विकसित वैचारिक ढाँचे एव निर्देशक सिद्धान्तो के आधार पर ऐतिहासिक अनुसधानो द्वारा कुछ रचनात्मक विचार प्रस्तुत किये । इसीलिए इन्हे सकल्पवादी अर्थशास्त्री कहा जाता है ।

(ii) प्राकृतिक एव सामाजिक नियमो का सह–अस्तित्व स्वीकार कर इन्होने हिल्डेब्रैण्ड एव कार्ल नीज ने आर्थिक नियमो सम्बन्धी जो वाद–विवाद आरम्भ किया, उसे समाप्त कर दिया ।

(iii) प्रारम्भिक सम्प्रदाय के लेखको ने आगमन प्रणाली के प्रयोग का समर्थन तो किया किन्तु वे उसका व्यवहार मे प्रयोग नही कर पाये । उनके इस अधूरे कार्य को इन अर्थशास्त्रियो ने पूर्ण किया ।

(iv) इस सम्प्रदाय क पूर्ववर्ती विचारको ने जहा प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो के पूरक के रूप मे अपने विचार व्यक्त किये वहा उनसे बिल्कुल भिन्न दृष्टिकोण अपनाया और ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का अनुभूत अध्ययनो से प्राप्त साख्यिकीय सामग्री के आधार पर प्रयोग किया ।

प्रमुख विचारक– इस सम्प्रदाय के विचारको मे निम्नाकित मुख्य है–

(1) गस्टव वान श्मोलर (Gustav Van Schmolller 1838 1917)

जर्मन अर्थशास्त्रियो मे इक महान् अर्थशास्त्री श्मोलर वर्षो तक हैले, स्ट्रासबर्ग तथा बर्लिन विश्वविद्यालयो मे प्राध्यापक रहे । इन्ही के प्रयासो से जर्मन ईयर बुक, जिसमे उनके अनेक लेख प्रकाशित हुए, का प्रकाशन आरम्भ हुआ । इनकी रचनाओ मे 'A History of German Small Industry (1817) एव 'The Outlines of General Economic Theory (दो भाग– 1900 एव 1904)

उल्लेखनीय है । इन दोनो मे दूसरी रचना अधिक महत्त्वपूर्ण है जिसके आधार पर श्मोलर को ऐतिहासिक सम्प्रदाय का सर्वोपरि विचारक माना जाता है । उनके प्रशसको ने इसे ऐतिहासिक सम्प्रदाय के आर्थिक दर्शन की सर्वश्रेष्ठ रचना माना जो उनकी विद्वता एव उनके सम्प्रदाय के सम्मुख उपस्थित अति कठिन चुनौती के लिए एक प्रमाण है । प्रो बेल ने इसे 'जर्मन ऐतिहासिक विद्वता का निचोड़' (an epitome of German historical school) कहा है ।

प्रमुख आर्थिक विचार (Major economic ideas)- श्मोलर के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) आर्थिक घटनाओ की ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे आँकडो की सहायता से व्याख्या कर आर्थिक सिद्धान्तो का निरूपण किया जाना चाहिए ।

(ii) आगमन एव निगमन प्रणालियो मे परस्पर कोई विरोधाभाष नही है और ये दोनो एक दूसरी की पूरक एव सहायोगी है । अत "जिस प्रकार चलने के दाये एव बाये दोनो पैरो की *आवश्यकता है ठीक उसी प्रकार* विज्ञान के लिए आगमन एव निगमन दानो प्रणालियो की आवश्यकता है।"[7]

(iii) अर्थशास्त्र समाजविज्ञानो का एक अभिन्न अग है और इसके नियम सापेक्ष है जो देश एव काल की परिस्थितियो मे परिवर्तन के आधार पर बदल जाते है।

(iv) मनुष्य एक आर्थिक प्राणी नही बल्कि अनुभवो एव ऐतिहासिक साक्ष्यो के आधार पर प्रमाणित एक वास्तविक एव सामाजिक प्राणी है, जिसके आर्थिक व्यवहार पर आर्थिक घटको के अलावा मनोविज्ञान, परिवेश एव आचार–शास्त्र का भी गहरा प्रभाव पड़ता है ।

(v) *अर्थशास्त्र* को राष्ट्रीय नीतियो के लिए और अधिक *उपयोगी बनाया* जाना चाहिये ।

निष्कर्ष- यद्यपि, श्मोलर की यह कह कर आलोचना की जाती है कि उनके चिंतन मे गहराई की कमी रही और वे किसी भी विषय की पूर्ण एव व्यापक व्याख्या नही कर पाये तथापि उनका कार्यक्षेत्र व्यापक था, उनकी लेखनी ने सभी महत्त्वपूर्ण आर्थिक प्रसगो को छुआ और उनकी निम्नाकित रूपो मे *व्याख्या* की–

(i) उन्होने प्रत्येक विषय के सदर्भ मे आर्थिक सस्थाओ के ऐतिहासिक विकास पर बहस की ।

(ii) आँकड़ो की सहायता से समस्याओ एव सस्थाओ का वर्तमान स्वरूप

---

7 "Induction and deduction are both necessary for the science just as the right and left foot are needed for walking" Schmoller G V

प्रस्तुत किया ।

(iii) विचाराधीन समस्याओ का सैद्धान्तिक विश्लेषण किया और अन्त मे,

(iv) समस्याओ के समाधान के उपाय प्रस्तुत किये ।

इसीलिए उन्हे अपने सम्प्रदाय का अग्रणी विचारक होने का गौरव दिया जाता है और वे इसके पात्र थे । उनमे कूट–कूटकर राष्ट्र–प्रेम भरा था । वे जर्मन राजतत्र को सुरक्षित रखना चाहते थे । समाजवाद से उनका कोई लगाव नही था । वे एक महान समन्वयकारी थे ।

(2) अडोल्फ वैगनर (Adocf Wagner 1835 1917)

जर्मनी के चान्सलर बिस्मार्क के मित्र वैगनर एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री, समाज सुधारक एव लोकवित्त विशेषज्ञ थे । अपने जीवनकाल के अतिम 46 वर्ष तक वे बर्लिन विश्वविद्यालय मे अर्थशास्त्र के प्राध्यापक रहे । वे एक उच्च कोटि के लेखक थे और उनकी दो रचनाए 'Foundations of Political Economy' (1876) एव Science of Finance' (4 खण्ड, 1877–1906) विशेषत उल्लेखनीय है ।

प्रमुख आर्थिक विचार (Major economic ideas)- वैगनर के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) लोकवित्त समाज मे धन के पुनर्वितरण एव सामाजिक न्याय का एक उपयोगी एव शक्तिशाली उपकरण है ।

(ii) शहरी भूमि के मूल्य मे वृद्धि से इसके मालिको की अनर्जित आय बहुत बढ़ गयी है । इस भूमि का सरकार को अधिग्रहण कर लेना चाहिये ।

(iii) सम्पत्ति पर निजी स्वामित्व के स्थान पर सरकारी स्वामित्व होना चाहिये।

अपने इन्ही विचारो के कारण इन्हे 'राज्य समाजवाद का अग्रणी वैज्ञानिक प्रणेता' (the foremost scientific exponent of State Socialism) कहा जाता है ।

(3) लुडविग लूजो ब्रेन्टानो (Ludwing Lujo Brentano 1844-1931)

सन् 1927 मे शाति के लिए नोबल पुरस्कार विजेता एव अपने समय के महान् शिक्षक ब्रेन्टानो म्यूनिख, वियना और बेन्सलो विश्वविद्यालयो मे प्रध्यापक रहे । इनकी प्रमुख रचनाओ मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) History and Development of Guilds and the Origin of Trade Union (1870)

(ii) Labour Guidlds of the Present (1871)

(iii) Development of Value Theory (1908)

(iv) Origin of Modern Capitalism 1916)

(v) Economic Man in History (1923)
(vi) Economic Development of England (3 खण्ड 1927–1929)

प्रमुख आर्थिक विचार (Major Economic ideas)- ब्रेन्टानो के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) आर्थिक जगत गतिशील है और आर्थिक इकाइयो मे निरन्तर सघर्ष चलता है। फलत समय के साथ आर्थिक इकाइया अपना महत्त्व एव अस्तित्व खो देती है।
(ii) 'स्वहित' की भावना का सृजन आर्थिक सस्थाओ के पतन का एक प्रमुख कारण है अत सामाजिक हित अधिक महत्त्वपूर्ण है।
(iii) राज्य सर्वशक्तिमान एव व्यक्ति से श्रेष्ठ नही है।
(iv) स्वतत्र व्यापार ही अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सर्वश्रेष्ठ रूप है।
(v) श्रम–सघ बिना राज्य की सहायता के अपने हितो की रक्षा कर सकते है।
(vi) अर्थशास्त्र की अध्ययन पद्धतियो के बीच सघर्ष निरर्थक है और राष्ट्रीय आर्थिक नीति का विकास ललित कला मे विकास की भाति होता है।

प्रो ब्रेन्टानो ने उपर्युक्त विचार मौलिक थे और उनके इतिहास के अध्ययन पर आधारित थे। इसीलिए प्रो सेलिगमैन ने उन्हे 'निसदेह ऐतिहासिक आदोलन के सुन्दर उत्पादो मे से एक (One of the finer products of the historical movement) माना।

(4) जी. एफ. नैप (G. F. Knapp : 1842-1926)

मुद्रा विषयक विचारो के लिए आर्थिक साहित्य मे विख्यात नैप, एक साख्यिकी–विद के रूप मे अपना जीवन आरम्भ कर, 25 वर्ष की आयु मे लीपजिग साख्यिकी ब्यूरो के इन्चार्ज बन गये। उन्होने जर्मन कृषि का अध्ययन कर उस पर दो पुस्तके लिखी जिनसे इनकी ख्याति काफी बढ़ गयी। सन् 1895 मे इनका रुझान मौद्रिक अर्थशास्त्र की ओर हो गया जिसके फलस्वरूप उन्होने 'State Theroy of Money' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक मे उन्होने बताया कि मुद्रा एक वैधानिक उत्पाद है और मुद्रा वही है जिसे राज्य मुद्रा घोषित कर देता है। इसीलिए उन्होने धातु मुद्राओ के स्थान पर पत्र मुद्राओ के निर्गमन का समर्थन किया ताकि बहुमूल्य धातुओ का अन्य वाणिज्यिक प्रयोजनो मे प्रयोग हो सके। अपने इस योगदान के अलावा नैप मृत्यु दर मे माप की विधियो के प्रतिपादन की दृष्टि से भी आर्थिक साहित्य एव साख्यिकी मे विख्यात है।

(5) कार्ल बुचर (Karl Bucher : 1847-1930)

अपनी पुस्तक 'The Rise of National Economy', जिसका प्रकाशन सन्

1893 मे हुआ, के लिए आर्थिक विचारो के इतिहास मे विख्यात बुचर ने ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति अपनायी और अपने अनुसधानो के आधार पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के तीन प्रमुख चरण–घरेलू अर्थव्यवस्था (Household economy), शहरी अर्थव्यवस्था (Town economy) और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (National economy) बताये । उनके अनुसार तीसरा चरण आधुनिक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का चरण है । इस दृष्टि से, उन्होने पूँजीवाद के विकास का इतिहास बताया ।

(6) रिचर्ड इहेरेनबर्ग (Richard Eherenberg 1857-1921)

ऐतिहासिक प्रणाली के एक प्रमुख प्रणेता इहेरेन्बर्ग अपने जीवन के प्रारम्भिक चरण मे एक व्यापारी थे किन्तु अर्थशास्त्र के अध्ययन मे गहन रुचि के कारण आगे चल कर स्वय एक ख्याति प्राप्त अर्थशास्त्री बन गये । Capitalism and Finance in the Age of Renaissance' (पुनर्जागरण के युग मे पूँजी एव वित्त) इनकी सबसे प्रमुख कृति है । इनका कहना था कि अर्थशास्त्र को एक सही विज्ञान तभी बनाया जा सकता है जब उसके अध्ययन के लिए वही-प्रणाली अपनायी जाये जिसका प्रयोग व्यापारिक अध्ययन के लिए किया जाता है । इसके अलावा उन्होने बताया कि अर्थशास्त्र मे भी नैतिकता के लिए स्थान है तथा श्रम एव पूँजी के आपसी हितो मे एकता महत्त्वपूर्ण है ।

3. नवीनतम जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय (Youngest German Historical School)-

इस सम्प्रदाय के सदस्यो ने अपने पूर्ववर्ती विचारको एव लेखको द्वारा बताये गये सिद्धान्तो को व्यवहार मे लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया और उनकी तुलना मे अधिक दृढ़ता से ऐतिहासिक प्रणाली का प्रयोग किया । प्रो जे शुम्पीटर ने इस सम्प्रदाय मे मुख्यत तीन विचारक सम्मिलित किये है–

(1) आर्थर स्पीतोफ (Arthur Speithoff)-

प्रारम्भ मे श्मोलर के सहयोगी एव उनकी पत्रिका के सम्पादन स्पीथोफ अपनी कुशाग्र बुद्धि एव आर्थिक विषयो मे रुचि के कारण आगे चलकर एक प्राध्यापक बन गये और ख्यातिप्राप्त अर्थशास्त्री एव बहुमुखी प्रतिभा के धनी प्रो शुम्पीटर के सानिध्य मे आये । स्पीतोफ को व्यापार चक्रो के अध्ययन मे विशेषज्ञता हासिल थी और उन्होने निष्कर्ष दिया कि ये आवश्यक रूप से अति उत्पादन के परिणाम है ।

(2) वेर्नेर सोमबर्ट (Werner Somebart : 1863-1941)

ऐतिहासिक सम्प्रदाय मे सोमबर्ट की गणना उन प्रमुख विचारको मे की जाती है जिन्होने ऐतिहासिक पद्धति का खुलकर समर्थन एव प्रयोग किया । बर्लिन विश्वविद्यालय से पी एच डी की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् आप

ब्रेस्लाउ विश्वविद्यालय मे और वैगनर द्वारा 1917 मे बर्लिन विश्वविद्यालय छोड़ देने के पश्चात् आप उसी पद पर बर्लिन विश्वविद्यालय मे प्राध्यापक बन गये। आप शुरू से ही समाजवादी विचारधारा से प्रभावित थे, अत 20 वर्ष तक वैज्ञानिक समाजवाद एव उसके प्रणेताओ के बारे मे सोचते और लिखते रहे। किन्तु, आपके विचार स्थिर नही थे। अत उनकी विचारधारा मे कई बदलाव आये। वे शुरू मे राज्य समाजवाद तत्पश्चात क्रमश मार्क्सवाद एव राज्य समाजवाद और अत मे पुन मार्क्सवाद के समर्थक बन गये। इस प्रकार कुल मिलाकर उनके विचारो पर मार्क्स एव उनकी विचारधारा का ही अधिक प्रभाव रहा, यद्यपि वे उनकी सब बातो से कभी सहमत नही रहे।

डॉ सोमबर्ट एक उच्चकोटि के लेखक थे। उनकी रचनाओ मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(i)	Socilism and Social Movements	(1909)
(ii)	Life & Work of Karl Marx	(1909)
(iii)	The Jews and Modern Capitalism	(1911)
(iv)	The Quintessence of Capitalism	(1915)
(v)	German Economy in the 19th Century	(1921)

प्रमुख आर्थिक विचार (Major Economic ideas)- सोमबर्ट के आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय हैं–

(i) आर्थिक नियम सर्वव्यापी नही है।

(ii) आर्थिक सस्थाएँ देश एव काल की दशाओ मे परिवर्तन के अनुसार बदलती है।

(iii) अध्ययन पद्धति का स्वरूप आवश्यक रूप से अनुसधान की प्रकृति एव विषय–सामग्री पर निर्भर करता है।

(iv) अर्थशास्त्र के अध्ययन के तीन मुख्य दृष्टिकोण है–

(a) तत्त्वज्ञान विषयक (metaphysical) (b) प्राकृतिक वैज्ञानिक (Natural Scientific और (c) सास्कृतिक वैज्ञानिक (Cultural Scientific)

(v) पूँजीवाद मानव विकास की एक गत्यात्मक सस्था एव अवस्था है। यही सस्था आधुनिक समाजवाद की निर्माता है। उनके अनुसार इस सस्था की स्थापना एव विकास यहूदियो ने किया क्योकि उन्हे ही मध्ययुगीन व्यापार एव वाणिज्य का कौशल प्राप्त था और मुख्यत उनमे ही वे गुण मिलते है जो आधुनिक पूँजीवाद के विकास के लिए अत्यावश्यक है।

(vi) सोमबर्ट ने उत्पत्ति के साधन एव पूँजीवाद के एक बड़े एजेन्ट के रूप मे साहसी की भूमिका का उल्लेख एव प्रशसा की।

(vii) सोमबर्ट ने बताया कि पूजीवाद के विकास की मुख्यत तीन अवस्थाये

रही है– (a) प्रारम्भिक पूजीवाद (सन् 1400–1760 तक) (b) उच्च पूजीवाद (सन् 1760 से प्रथम महायुद्ध तक) (c) आधुनिक पूँजीवाद (सन् 1918 से आज तक)।

(viii) उनके मतानुसार पूँजीवाद का पतन अवश्यम्भावी नही है अत यह चलेगा किन्तु, इसका स्वरूप बदलता जायेगा।

निष्कर्ष – वे एक महान विचारक थे। उनकी भविष्यवाणिया मार्क्स की तुलना मे अधिक सही निकली। उन्होने इधर–उधर बिखरे विचारो को एकत्रित कर उन्हे क्रमबद्ध तरीके से व्यवस्थित किया। उन्होने एक सुव्यवस्थित सिद्धान्त के प्रतिपादन का प्रयास किया जो सामाजिक घटनाओ की सही ढग से विवेचना कर सके। उनमे पूर्वानुमान लगाने की शक्ति थी। सभावित राज्य नियत्रणो का पूर्वानुमान लगाकर उन्होने सहकारिताओ के विकास का समर्थन किया। विभिन्न स्रोतो से प्राप्त विचारो मे समाकलन करने का चातुर्य उनके पास था। वे जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय की अतिम कडी थे।

(3) मैक्स वेबर (Max Weber . 1864-1920)

एक धनी राजनीतिज्ञ के पुत्र वेबर विधि स्नातक एव शुरू मे पेशे से वकील थे जो कुछ समय पश्चात् न्यायाधीश के पद पर नियुक्त हो गये। इस पद पर रहते हुए आपने कृषि श्रमिको की दशा पर एक पुस्तक लिखी जिससे आपकी ख्याति मे भारी वृद्धि हो गयी और परिणामस्वरूप फ्रीबर्ग विश्वविद्यालय मे आपकी नियुक्ति एक प्राध्यापक के रूप मे हो गयी। इसके पश्चात् आप हिडेलबर्ग एव म्यूनिक विश्वविद्यालयो मे लम्बे समय तक प्राध्यापक रहे। अर्थशास्त्री के अलावा आप एक समाज सुधारक, राष्ट्रवादी एव समाजशास्त्री थे और आर्थिक समाजशास्त्र मे आपकी गहन रुचि थी। आप पर मार्क्स की विचारधारा का गहरा प्रभाव रहा। आपकी प्रमुख रचनाओ मे 'Roman Agrarian History' (1891) एव 'Protestant Ethic and the Spirit of Capitalism' (1904) उल्लेखनीय है। 'General Economic History' (1923) एव 'The Methedology of the Social Sciences' उनकी अन्य दो प्रमुख कृतियाँ है, जो बाद मे छपी।

प्रमुख आर्थिक विचार (Major economic ideas)- वेबर के आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(i) आधुनिक पूँजीवाद के आर्थिक विकास मे धर्म की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। उन्होने बताया कि यदि कैथोलिक चर्च का प्रभुत्व रहता तो पूँजीवाद का वर्तमान विकास कदापि सम्भव नही होता।

(ii) पूँजीवाद एक ऐसी व्यवस्था है जिसके विकास की प्रक्रिया, एक बार आरम्भ हो जाने के पश्चात् जारी रहती है और लाभ उद्देश्य इसके विकास मे सबसे बड़ी प्रेरक शक्ति है।

(iii) पूजीवाद की विस्तृत व्याख्या करते हुए उन्होने इसके अनेक स्वरूपो की विशद् व्याख्या की जिनमे राजनीतिक पूजीवाद, घटिया पूजीवाद (Panah Capitalism), साम्राज्यवादी पूँजीवाद, राजकोषीय पूँजीवाद और औद्योगिक पूँजीवाद उल्लेखनीय है।

(iv) उन्होने नौकरशाही को आधुनिक पूँजीवाद की आत्मा बताया और कहा कि इसकी नीव अनुशासन पर टिकी हुई है और अनुशासन ही वह शक्ति है जिसके द्वारा मनुष्य अर्थव्यवस्था रूपी मशीन के लिए उपयुक्त बनता है।

(v) वेबर के अनुसार पूँजीवाद एक सगठित व्यवसाय है जिसका उद्देश्य लाभ कमाना एव बाजार दशाओ का शोषण करना है। ये विचार वेबर ने काल्विनवाद से लिये (काल्विन 16वी सदी के एक धार्मिक विचारक थे) जिसके अनुसार ईश्वर ने हमे जो कुछ दिया है हम उसके प्रशासक है।

(vi) मार्क्स के वर्ग–सघर्ष से भिन्न वेबर की रुचि स्वतंत्र श्रम एव उनके विवेकपूर्ण सगठन की समस्याओ मे अधिक रही है। इसीलिए जैसा कि न्यूमैन ने बताया, "वे राष्ट्रीय बूर्जुआ पूँजीवाद की केन्द्रीय समस्याओ के अध्ययन मे ही जुटे रहे।"

(vii) वेबर ने अपने सम्प्रदाय के शेष सदस्यो द्वारा अपनायी गयी अर्थशास्त्र की अध्ययन पद्धतियो को अनुचित बताया और कहा कि एक आदर्श तरीके की (an ideal type) अध्ययन पद्धति ही प्रयोग मे ली जानी चाहिये जो वास्तविक हो और जो ऐतिहासिक समको का तुलनात्मक एव सापेक्षता के आधार पर प्रयोग करे।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के आर्थिक विचारों का आलोचनात्मक मूल्यांकन

(Critical Appraisal of the Economic Ideas of German Historical School)

ज्ञातव्य है कि, इस सम्प्रदाय के आर्थिक विचारो के निम्नांकित दो प्रमुख रूप है—

1. आलोचनात्मक विचार (Critical Ideas)

आलोचनात्मक विचार मुख्यत वे नकारात्मक (negetive) एव खण्डनीय (destructive) विचार है जिनका प्रतिपादन इस सम्प्रदाय के प्रारम्भिक विचारको (रोशर, हिल्डेब्रैण्ड एव नीज) ने किया और जिनके आधार पर उन्होने प्रतिष्ठित आर्थिक विचारो, नियमो एव सिद्धान्तो को गलत सिद्ध किया। इनमे निम्नांकित उल्लेखनीय है—

(1) आर्थिक नियमों की सर्वव्यापकता (Universality of Economic Laws)- प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने बताया कि उनके द्वारा प्रतिपादित आर्थिक नियमो में सर्वव्यापकता का गुण है जिसके कारण ये सभी देशो एव सभी

समयावधियो मे बिना किसी भेदभाव के समान तीव्रता के साथ निरपेक्ष रूप मे क्रियाशील होते है ।

जर्मन अर्थशास्त्रियो ने आर्थिक नियमो की ऐसी सर्वव्यापकता अस्वीकार करदी और कहा कि आर्थिक नियमो के सार्वभौमिकवाद (जैसा कि हिल्डेब्रैण्ड ने बताया) और निरपेक्षतावाद (जैसा कि कार्ल नीज ने बताया) का औचित्य न तो आसानी से सिद्ध किया जा सकता और न उसे स्वीकार ही *किया जा सकता । उन्होने यह प्रमाणित करने का प्रयास किया कि सैद्धान्तिक* एव व्यावहारिक दोनो ही दृष्टियो से आर्थिक नियमो मे परिवर्तन हो जाता है अत उनमे आवश्यक रूप से सर्वव्यापकता के गुण का अभाव पाया जाता है। उनके मतानुसार ये स्थायी एव अवश्यम्भावी नही होते बल्कि अस्थायी एव परिस्थितिजन्य होते है । अत सार्वभौमिक एव सर्वव्यापक होने की बजाय आर्थिक नियम काल्पनिक, सापेक्ष एव आर्थिक प्रवृत्तियो के कथनमात्र होते है तथा आर्थिक परिवेश मे परिवर्तन के साथ ही बदल जाते है या उनकी क्रियाशीलता का क्रम बदल जाता है । उनके अनुसार सैद्धान्तिक दृष्टि से आर्थिक नियम केवल तभी क्रियाशील हो सकते है जब सभी मान्यताये (ज्ञातव्य है कि सभी आर्थिक नियमो के प्रतिपादन मे उन्होने 'अन्य बाते यथावत रहने पर' वाक्याश का प्रयोग किया) पूर्ववत रहे जिनके आधार पर प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने उनका प्रतिपादन किया । किन्तु, कल्पित मान्यताये वास्तविक दैनिक जीवन मे खरी नही उतरती । अत जैसे ही इन मान्यताओ मे परिवर्तन हो जाता है, आर्थिक नियमो की सर्व–व्यापकता समाप्त हो जाती है । इसी आधार पर कार्ल नीज ने बताया था कि आर्थिक नियमो एव सिद्धान्तो का स्वरूप एव प्रकृति (जो एक परिणाम है) आर्थिक जगत की वास्तविक दशाओ (जो एक कारण है) पर निर्भर करती है । ये दशाये हमारे जीवन के ऐतिहासिक विकास द्वारा निर्धारित होती है । अत जैसे ही इस 'कारण' मे परिवर्तन होगा 'कार्य' मे अपने आप परिवर्तन हो जायेगा, क्योकि 'कारण' से ही 'कार्य' की उत्पत्ति होती है । अत किसी भी आर्थिक नियम को स्थायी, सुनिश्चित एव अतिम नही माना जा सकता । वस्तुत आर्थिक विकास के प्रत्येक चरण मे आर्थिक सामान्यीकरणो अर्थात् नियमो मे होने वाला प्रत्येक परिवर्तन हमारे जीवन का एक सत्य है । अत किसी भी नियम अथवा सामान्यीकरण का अतिम होने का दावा नही किया जा सकता । एशले के शब्दो मे, 'आधुनिक सिद्धान्त सार्वभौमिक सत्य नही है, वे भूतकाल मे सत्य नही थे क्योकि उस समय वर्तमान दशाये नही थी और ये भविष्य मे भी सत्य नही रहेगे क्योकि तब भी ये आर्थिक दशाये नही रहेगी ।' इस प्रकार, क्योकि आज का 'सत्य' केवल आज के परिप्रेक्ष्य मे सत्य है अत आज जो सत्य है वह न बीते हुए कल का सत्य था और न भावी कल का सत्य रहेगा ।

केवल सैद्धान्तिक आधार पर ही नही बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से भी आर्थिक नियमो एव सिद्धान्तो मे सार्वभौमिकता के गुण का अभाव पाया जाता है। उदाहरणार्थ, 19वी सदी मे मुक्त व्यापार की नीति का सिद्धान्त इग्लैण्ड जैसे विकसित–उद्योग प्रधान–पूँजीवाद देश के लिए हितकर था, किन्तु जर्मनी जैसे दुर्बल एव आर्थिक दृष्टि से पिछडे देश के लिए घातक सिद्ध हुआ। फलत फ्रेड्रिक लिस्ट को आर्थिक सरक्षणवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन एव समर्थन करने के लिए विवश होना पडा। दूसरे शब्दो मे, विकसित देशो के लिए जहा मुक्त व्यापार हितकर हो सकता है वहा अर्द्धविकसित देशो का कल्याण सदैव सरक्षण की नीति मे देखा गया है।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के उपर्युक्त विचारो का बाद के लगभग सभी अर्थशास्त्रियो ने बिना किसी विशेष मत–विभाजन के स्वीकार किया है। किन्तु, उनके निष्कर्षो की इस आधार पर आलोचना की गयी है कि उन्होने आर्थिक नियमो को जहा काल्पनिक एव सापेक्ष माना यथार्थ विज्ञानो (भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र आदि) के प्राकृतिक नियमो को ठोस निश्चित निरपेक्ष एव सार्वभौमिक बताया। अत उनके आलोचको का कहना है कि जब कल्पना का बोझ उठाकर यथार्थ विज्ञानो के नियम ठोस एव सार्वभौमिक होने का दम भर सकते है तब आर्थिक नियम क्यो नही? (ज्ञातव्य है कि भौतिकशास्त्र का गुरुत्वाकर्षण का नियम भी किन्ही दी हुई मान्यताओ के पूरा होने पर ही सत्य होता है अन्यथा पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से बाहर निकल कर सुदूर अतरिक्ष मे जाना सम्भव नही होता) उनका मानना है कि क्योकि अर्थशास्त्र भी एक विज्ञान है अत इसके नियम भी वैज्ञानिक नियमो की भाति 'कारण' एव 'परिणाम' के बीच पाये जाने वाले आपसी सम्बन्ध की एक निश्चित अध्ययन पद्धति के आधार पर नियमबद्ध एव क्रमबद्ध तरीके से व्याख्या करते है। अत भले ही हम उन्हे सार्वभौमिक न माने किन्तु, अन्य विज्ञानो के नियमो से घटिया नही मान सकते और यदि कही वे घटिया है तो उसके लिए जिम्मेदार स्वय अर्थशास्त्र नही बल्कि उसकी विषय–सामग्री है। फिर भी, आज सभी अर्थशास्त्री इस निष्कर्ष से सहमत है कि आर्थिक नियम सार्वभौमिक एव निरपेक्ष नही है और वे 'आर्थिक प्रवृत्तियो के कथनमात्र' होते है।

(2) स्वार्थवाद पर आधारित संकीर्ण मनोविज्ञान (Narrow Psychology Based on Egoism)

प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन कतिपय मनोवैज्ञानिक मान्यताओ पर आधारित था, जिनमे एक मान्यता स्वहित (self interest) की धारणा की विद्यमानता थी। प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विचरको ने बताया कि प्रत्येक व्यक्ति एक आर्थिक मानव (economic man) है और वह अपना प्रत्येक कार्य 'स्वहित'

की भावना से अभिप्रेरित होकर करता है। उनके अनुसार मनुष्य के आर्थिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले घटको मे इससे अधिक महत्त्वपूर्ण घटक कोई और नही है क्योकि 'स्वहित' की रक्षा ही एक ऐसी सामान्य प्रवृत्ति है जो अधिकाश लोगो मे पायी जाती है और परिणामस्वरूप इस सामान्यीकरण का प्रतिपादन किया जा सकता है।

यद्यपि, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के एक विचारक वैगनर ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की उपर्युक्त मान्यता का समर्थन किया किन्तु श्मोलर, हिल्डेब्रैण्ड और कार्लनीज ने उनकी इस मान्यता को उपरिपक्व बताकर उसकी कटु आलोचना की। श्मोलर ने बताया कि 'स्वहित' की भावना ही मानवीय आर्थिक क्रियाओ की एकमात्र प्रेरक शक्ति नही हो सकती। उनके मतानुसार मनुष्य के इस व्यवहार पर इस भावना के अलावा अन्य अनेक सामाजार्थिक, राजनैतिक एव सास्कृतिक अर्थात् आर्थिक एव गैर–आर्थिक घटको यथा—स्वाभिमान, सामाजिक प्रतिष्ठा, रीति–रिवाज, राष्ट्रप्रेम, चारित्रिक गुणो आदि का भी गहरा प्रभाव पडता है। अत मनुष्य केवल 'आर्थिक मानव' नही बल्कि एक 'वास्तविक मानव' है। कार्लनीज ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की 'स्वहित' की मान्यता को 'स्वार्थवाद' का नाम दिया और हिल्डेब्रैण्ड ने बताया कि यदि मनुष्य को 'आर्थिक मानव' ही माना गया तो अर्थशास्त्र 'स्वार्थवाद का मात्र प्राकृतिक इतिहास' (*a mere natural history of egoism*) बनकर रह जायेगा और अपनी उपयोगिता, खो देगा।

'स्वहित' की मान्यता प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन की एक महत्त्वपूर्ण कमजोरी थी जिसे स्वय उसके समर्थको (जिनमे जे. एस. मिल उल्लेखनीय है) ने जर्मन अर्थशास्त्रियो की आलोचना से पूर्व ही स्वीकार कर लिया था, तथापि ऐतिहासिक सम्प्रदाय की इस आलोचना का बाद के अर्थशास्त्रियो पर अनुकूल प्रभाव पड़ा और उन्होने इस काल्पनिक एव मनोवैज्ञानिक मान्यता का परित्याग कर दिया। इसे आलोचना का ही परिणाम माना जाना चाहिये कि सन् 1890 मे प्रो. अल्फ्रेड मार्शल ने अर्थशास्त्र की विषय सामग्री मे 'आर्थिक मानव' के स्थान पर 'सामाजिक', 'सामान्य' एव 'वास्तविक' मानव के आर्थिक व्यवहार को सम्मिलित किया। उन्होने इसे और ज्यादा स्पष्ट करते हुए बताया कि 'यदि लाभार्जन की इच्छा को विशेष महत्त्व दिया भी जाता है तब भी इसका अर्थ यह नही है कि मनुष्य एक आर्थिक प्राणी है बल्कि यह है कि सम्पूर्ण आर्थिक जगत मे मुद्रा ही एक ऐसी वस्तु है जिससे मानवीय क्रियाओ के उद्देश्यो का माप सम्भव है।'

आर्थिक विचारो के इतिहासकारो ने भी जर्मन अर्थशास्त्रियो की उपर्युक्त आलोचना का समर्थन किया है। उदाहरणार्थ प्रो. जीड एव रिस्ट का मानना है कि यदि हम 'स्वहित' को 'स्वार्थवाद' न कहे तो भी जर्मन

अर्थशास्त्रियो द्वारा प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो पर लगाया गया आरोप सही है।

(3) निगमन प्रणाली का प्रयोग (Use of Deductive Method)-

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के सदस्यो ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो एव उनके आर्थिक दर्शन की इस आधार पर भी कटु आलोचना की कि उन्होने अर्थशास्त्र के अध्ययन की निगमन पद्धति का ही मुख्यत प्रयोग एव समर्थन किया। इस प्रणाली मे किसी 'सार्वभौमिक एव सार्वकालिक सत्य' को आधार मानकर 'तर्क' के आधार पर 'सामान्य' से 'विशिष्ट (from general' to 'particular') निष्कर्ष निकाले जाते है। जर्मन अर्थशास्त्रियो ने इस पद्धति को अवास्तविक, काल्पनिक और पक्षपातपूर्ण बताया तथा कहा कि अर्थशास्त्र के अध्ययन मे ऐतिहासिक आगमन प्रणाली (Historical Inductive method), जो तथ्यो एव आँकड़ो पर आधारित होती है, का प्रयोग किया जाना चाहिये। इस प्रणाली मे आर्थिक अनुसधान का कार्य 'विशिष्ट' से 'सामन्य' की ओर (from 'particular' to 'general' जाता है। अत इसके निष्कर्ष ठोस, वास्तविक, निष्पक्ष एव प्रामाणिक होते है। यद्यपि, प्रारम्भिक जर्मन अर्थशास्त्रियो जिनमे–रोशर, हिल्डीब्रैण्ड और कार्ल नीज प्रमुख है, ने केवल आगमन प्रणाली के ही प्रयोग का समर्थन किया किन्तु बाद के विचारको जिनमे श्मोलर अग्रणी है, ने दोनो अध्ययन पद्धतियो के समाकलन (integration) का समर्थन किया और बताया कि जिस प्रकार चलने के लिए दाया एव बाया पैर दोनो आवश्यक है, ठीक उसी प्रकार अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए निगमन एव आगमन प्रणालियो की आवश्यकता है। दूसरे शब्दो मे, उन्होने इन दोनो प्रणालियो को एक दूसरी की प्रतिस्पर्धी न मानकर पूरक एव सहयोगी माना और सुझाव दिया कि तर्क पर आधारित निगमन प्रणाली के निष्कर्षों की जाँच सांख्यिकीय सामग्री की सहायता से अर्थात् आगमन प्रणाली से और तथ्यो एव आँकड़ो पर आधारित आगमन प्रणाली के निष्कर्षों की जाँच तर्क–वितर्क की सहायता से अर्थात् निगमग प्रणाली से कर लेनी चाहिये। उनके मतानुसार ऐसा करके ही आर्थिक निष्कर्षों एव सामान्यीकरणो को अधिक सार्थक एव उपयोगी बनाया जा सकता है।

श्मोलर के उर्युक्त विचारो को बाद के सभी अर्थशास्त्रियो ने पूर्ण समर्थन दिया। अत. यह विवाद समाप्त हो गया कि दोनो मे से किस प्रणाली का प्रयोग किया जाये ? अब महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह रह गया कि दोनो प्रणालियो मे समाकलन किस प्रकार किया जाये ? इस प्रश्न का हल बाद के अर्थशास्त्रियो को अर्थशास्त्र के अध्ययन की 'वैज्ञानिक विधि' (Scientific Method) मे मिला जिसमे तर्क (reasoning), अवलोकन (Observation) एव परख अथवा जाँच (Verification) तीनो की महत्ता रहती है।

2. सृजनात्मक अथवा सकारात्मक विचार (Creative or Positive Ideas)-

प्रतिष्ठित आर्थिक चिंतन की आलेचना करने के अलावा जर्मन

ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने कतिपय सृजनात्मक विचार भी प्रस्तुत किये। प्रो जीड एव रिस्ट के मतानुसार, 'उनके ये विचार आलोचनात्मक विचारो से अधिक महत्त्वपूर्ण थे क्योकि इनके प्रतिपादन मे उन्होने एक नया एव भिन्न दृष्टिकोण अपनाया जिसकी सहायता से हम अपने सिद्धान्तो के अध्ययन मे निरन्तरता के सम्पर्क मे आते है। उनके इन विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(1) क्रमिक अथवा चेतनायुक्त दृष्टिकोण पर बल (Emphasis on Organic Outlook)

ज्ञातव्य है कि आर्थिक घटनाओ के अध्ययन के दो दृष्टिकोण–

(i) भौतिकीय दृष्टिकोण (Mechanical Outlook) और

(ii) चेतनायुक्त दृष्टिकोण है। इन दोनो मे भौतिकीय दृष्टिकोण अध्ययन का एक सकीर्ण दृष्टिकोण है जिसमे आर्थिक घटनाओ का अध्ययन कुछ सामान्य नियमो (जिनमे आर्थिक जगत की जटिलताओ का सरलीकरण कर उन्हे कुछ सामान्य स्वीकृत वाक्यो मे बाँध दिया जाता है) के आधार पर किया जाता है। इससे अनेक ऐसी रोचक एव महत्त्वपूर्ण आर्थिक घटनाएँ अध्ययन की परिधि से बाहर छूट जाती है जिनके बारे मे किसी प्रकार के सामान्य नियम का प्रतिपादन करना सम्भव नही होता। उदाहरणार्थ, भारतीय बैको मे हाल ही मे हुए प्रतिभूति घोटाले के बारे मे पहले से ही किसी सामान्य आर्थिक नियम का प्रतिपादन सम्भव नही था। अत भौतिकीय दृष्टिकोण से इस सम्पूर्ण घटना की जाँच सम्भव नही है। दूसरे शब्दो मे, इस दृष्टिकोण का सबसे गम्भीर दोष यह है कि वह आर्थिक घटनाओ का अध्ययन चारो ओर व्याप्त परिवेश (environment) के सदर्भ मे नही करता और उसे अति सकीर्ण सीमाओ मे बाँधे रखता है। प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने आर्थिक घटनाओ के अध्ययन का यही दृष्टिकोण अपनाया अर्थात् अपने सामान्यीकरणो (generalizations) मे उन्होने 'स्वहित' एव 'आर्थिक नियमो की सार्वभौमिकता एव निरपेक्षता' के आधार पर आर्थिक समस्याओ की जटिलता का सरलीकरण कर अनेक अवास्तविक निष्कर्षों का प्रतिपादन किया।

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो से भिन्न जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने आर्थिक घटनाओ के अध्ययन का क्रमिक अथवा चेतनायुक्त दृष्टिकोण अपनाया। यह अध्ययन का एक व्यापक दृष्टिकोण है। इसमे किसी भी आर्थिक घटना की सम्पूर्णता (totality) को ध्यान मे रखकर ऐतिहासिकता के परिप्रेक्ष्य मे उसका गहन अध्ययन किया जाता है। इसीलिए हिल्डेब्रैण्ड ने कहा कि, "एक सामाजिक प्राणी के रूप मे मनुष्य सभ्यता का शिशु और इतिहास का उत्पाद है। उसकी आवश्यकताये, उसका बौद्धिक दृष्टिकोण, भौतिक वस्तुओ से उसका सम्बन्ध और अन्य व्यक्तियो से उसके सबधन सदैव एक समान नही रहे है। भूगोल उन्हे प्रभावित करता है, इतिहास उनमे

संशोधन करता है जबकि शिक्षा मे प्रगति उनका पूर्णतः रूपान्तरण कर सकती है।'' इस कथन से स्पष्ट है कि चेतनायुक्त दृष्टिकोण आर्थिक जगत मे लगातार हो रहे परिवर्तनो को ध्यान मे रखकर आर्थिक घटनाओ की यथार्थपरक व्याख्या करता है। ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने आर्थिक जगत की वास्तविक समस्याओ के अध्ययन का समर्थन किया और अर्थशास्त्र को प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन की अवास्तविक मान्यताओ के कटघरे से बाहर निकाला। दूसरे शब्दो मे, उन्होने वास्तविक आदमी एव वास्तविक जगत की आर्थिक घटनाओ का अध्ययन किया।

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो के उपर्युक्त विचार की अनेक विरोधियो ने आलोचना की। उनके अनुसार अर्थशास्त्र का उद्देश्य केवल समाज का वास्तविक चित्र प्रस्तुत करना नही है और इतिहास कभी अर्थशास्त्र का स्थान नही ले सकता है। इनके अनुसार एक अर्थशास्त्री एव अर्थशास्त्र का कार्य केवल 'अनुसधान' एव 'व्याख्या' से ही सम्बद्ध नही है बल्कि उन्हे आर्थिक घटनाओ का औचित्य भी दर्शाना होता है। इस दृष्टि से उन्हे 'प्रशसा' एव 'निन्दा' का कार्य भी करना पड़ता है, जिसके लिए चेतनायुक्त दृष्टिकोण मे कोई स्थान नही है। इसीलिए वर्तमान अर्थशास्त्री आर्थिक घटनाओ के अध्ययन मे चेतनायुक्त दृष्टिकोण के स्थान पर 'सकारात्मक वैज्ञानिक दृष्टिकोण' अपनाते है।

(2) राष्ट्र के आर्थिक जीवन के विकास का विस्तृत ऐतिहासिक अध्ययन (A Detailed Historical Study of Development of Economic Life of the Nation)-

इतिहासवादियो का दूसरा सकारात्मक विचार यह था कि उन्होने राष्ट्र के आर्थिक जीवन के विकास का विस्तृत एव ऐतिहासिक अध्ययन किया। उनकी मान्यता थी कि वर्तमान को जानने के लिए भूत का अध्ययन आवश्यक है। इसी से सामाजार्थिक रूपान्तरण (socio-economic transformation) की सही जानकारी मिलती है। इसी आधार पर श्मोलर ने कहा कि 'जिस व्यक्ति को विगत तीन हजार वर्षों के इतिहास का ज्ञान नही उसे अल्पदृश्यता (obsunty) से ही सतुष्ट होना पड़ेगा।'' हिल्डेब्रैण्ड का कथन, जिसका उल्लेख इससे पूर्व बिन्दु मे किया जा चुका है, भी इसी आशय की पुष्टि करता है।

(3) आर्थिक क्रियाओं पर परिवेश का प्रभाव (Impact of Environment On Economic Acti.Ities)-

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने आर्थिक क्रियाओ एव व्यवहार को पर्यावरण की देन अथवा उपज बताया। उनके विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए प्रो. जीड एव रिस्ट ने लिखा है कि, ''किसी देश की भौगोलिक स्थिति, वहा के नागरिकों के वैज्ञानिक एवं कलात्मक प्रशिक्षण का

स्तर, उनका नैतिक एव बौद्धिक चरित्र और सरकार की प्रणाली वहा ही आर्थिक संस्थाओ की प्रगति एव निवासियो की खुशहाली का निर्धारण करती है ।'' इसी आधार पर जर्मन इतिहासकारो ने अर्थशास्त्र को एक सामाजिक विज्ञान एव समाज विज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण अग बताया ।

(4) मानवीय व्यवहार के विभिन्न पक्षों की पारस्परिक निर्भरता (Inter-relationship of Various Aspects of Human Behaviour)-

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने बताया कि मनुष्य का आर्थिक व्यवहार वैयक्तिक आधार पर बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण नही है । दूसरे शब्दो मे, उसका आर्थिक व्यवहार उसके अन्य व्यवहारो से पृथक् एव स्वतत्र नही बल्कि उनके साथ घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ है । इसीलिए रोशर ने लिखा कि, ''राष्ट्रीय जीवन एक सम्पूर्ण स्वरूप है । इसके विभिन्न अगो मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है । इसके किसी एक अग के अध्ययन के लिए सम्पूर्ण स्वरूप का अध्ययन आवश्यक है । भाषा, धर्म, कला, विज्ञान, विधि, राजनीति और *अर्थशास्त्र सभी का एक साथ अध्ययन आवश्यक है ।''*

(5) ऐतिहासिक प्रणाली (Historical Inductive Method)-

ज्ञातव्य है कि, ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने ऐतिहासिक तथ्यो के *अध्ययन एव प्रयोग पर बल दिया । दूसरे शब्दो मे,* उन्होने आर्थिक अनुसधान की ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का न केवल समर्थन अपितु व्यापक प्रयोग किया । इसे भी उनकी एक महत्त्वपूर्ण देन एव सकारात्मक विचार समझा जाता है ।

आलोचना (Criticism)

उपर्युक्त सकारात्मक विचार न केवल आकर्षक अपितु उपयोगी एव वास्तविक है । तथापि इनकी आलोचनाएँ की गयी है जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) इन विचारो मे **'वैज्ञानिकता का अभाव** है । जर्मन इतिहासवादियो ने अपने विचारो मे केवल ऐतिहासिकता पर बल दिया । मार्शल के अनुसार, 'इतिहास केवल सयोगो एव परिणामो का लेख है जबकि व्याख्यायें केवल तर्क के आधार पर की जाती है ।' अर्थात् व्याख्या के लिए सामान्य अनुमान एव अनुभव आवश्यक है । इस दृष्टि से ऐतिहासिक *सम्प्रदायवादियो के विचारो की तुलना मे तर्क–वितर्क पर आधारित* प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के विचार अच्छे थे । आलोचको के अनुसार इतिहास अधूरा, अस्पष्ट एव अन्धकार पूर्ण है; वह गलत आधार पर लिखा गया है । अतः जैसा कि कार्ल मार्क्स ने कहा उसकी भौतिकवादी व्याख्या कर उसे दुबारा लिखना आवश्यक है ।

(ii) इसी सम्प्रदाय के विचारको के मतानुसार इतिहास एव अर्थशास्त्र मे परस्पर बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है । आलोचको के अनुसार उन्होने अर्थशास्त्र एव इतिहास दोनो को मिला दिया है किन्तु, **इतिहास कभी अर्थशास्त्र नहीं बन सकता ।**

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का आर्थिक विचारों के इतिहास में स्थान
(Place of German Historical School in the History of Economic Thought)

जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का जर्मनी मे आर्थिक सिद्धान्तो के विकास पर बुरा प्रभाव पड़ा । इसीलिए आर्थिक सिद्धान्तो मे जर्मनी के अर्थशास्त्रियो का कोई उल्लेखनीय एव मौलिक योगदान नही है । किन्तु, इसके बावजूद इस सम्प्रदाय एव उसके आर्थिक चिंतन का आर्थिक विचारो के इतिहास मे अपना विशिष्ट स्थान है क्योकि,

(i) इस सम्प्रदाय ने अर्थशास्त्र की ***अध्ययन पद्धतियों का विवाद समाप्त*** कर वैज्ञानिक विधि के उद्भव एव विकास का मार्ग प्रशस्त किया ।

(ii) इसने **आर्थिक नियमों के भावी विकास का क्रम निर्धारित** किया और उनके प्रतिपादन मे समय एव स्थान की महत्ता स्वीकार की जाने लगी अर्थात् उन्हे ***सार्वभौमिकतावाद एवं निरपेक्षतावाद*** (जो दोनो ही बनावटी थे) **से छुटकारा** दिला दिया ।

(iii) इस सम्प्रदाय ने **नव-परम्परावादी सम्प्रदाय** (Neo-classical School) **के विकास को प्रोत्साहन दिया । इस सम्प्रदाय के अग्रणी अर्थशास्त्री प्रो. अल्फ्रेड मार्शल हैं जिनके विचारों पर जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियों के चिंतन का गहरा प्रभाव पड़ा । वास्तविकता यह है कि इनके द्वारा की गयी आलोचनाओं के कारण ही मार्शल आदि ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र दुबारा लिखा ।**

(iv) जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के चिंतन का **भावी आर्थिक विचारधारा पर भी गहरा प्रभाव** पड़ा । इसी से प्रभावित होकर कनिंघम एव बूथ ने क्रमश 'इगलैण्ड मे उद्योग एव वाणिज्य का विकास' और 'लोगो का जीवन एव श्रम' आदि पुस्तके लिखी । इनके अलावा काम्टे, जोन्स, कीन्स आदि अर्थशास्त्रियो के आर्थिक विचारो पर भी जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो के विचारो का गहरा प्रभाव था ।

(v) व्यावहारिक **समस्याओं के समाधान का मार्ग प्रशस्त** करने की दृष्टि से भी ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो के विचारो की व्यापक महत्ता है । औद्योगिक क्रांति के उत्तर प्रभावो से उत्पन्न नयी एव जटिल समस्याओ के समाधान के नुसखे प्रतिष्ठित आर्थिक दर्शन मे नही थे । अत. इसमे परिवर्तन एव सशोधन जरूरी था जिसकी राह इस सम्प्रदाय ने दिखायी।

अन्त मे, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय ने जो विरासत छोड़ी उसके लिए आर्थिक विचारो के इतिहास मे उसका नाम सदैव बना रहेगा। प्रो. एरिक रोल के शब्दो मे, "ऐतिहासिक सम्प्रदाय ने समय के माध्यम से अपनी सभी वैयक्तिक अभिव्यक्तियो मे, विरासत मे, ठोस वास्तविकता के ज्ञान की प्रबल इच्छा छोडी।"[8]

II ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय

(British Historical School)

परिचय (Introduction)

ऐतिहासिक सम्प्रदाय की दूसरी शाखा ब्रिटीश ऐतिहासिक सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदाय मे इगलैण्ड के वे अर्थशास्त्री सम्मिलित किये जाते है जिन्होने आर्थिक अध्ययन की ऐतिहासिक आगमन प्रणाली अपनायी। यह उल्लेखनीय है कि जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के समकालीन होने के बावजूद इस सम्प्रदाय के अर्थशास्त्री उससे प्रेरित एव प्रभावित नही थे। ब्रिटिश सम्प्रदायवादी जर्मन सम्प्रदायवादियो की भाति वाद–विवाद एव आलोचनाओ के घेरे मे भी नही आये। जैसा कि सेलिगमेन ने उल्लेख किया है, "सम्भवत. यही कारण (वाद–विवाद के घेरे मे न आना) रहा कि जर्मन विचारको के समकक्ष होने के बावजूद वे उनकी तरह लोकप्रिय नही हो सके।" अत. जब हम 'ऐतिहासिक सम्प्रदाय' शब्द समूह का प्रयोग करते है तो हमारा आशय मुख्यत. जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय से ही होता है। इसीलिए कहा जाता है कि जिस प्रकार प्रतिष्ठित सम्प्रदाय का घर मुख्यतः इग्लैण्ड रहा उसी प्रकार ऐतिहासिक सम्प्रदाय का घर मुख्यत. जर्मनी ही था।

प्रमुख विशेषतायें (Main Characteristics)

ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय की प्रमुख विशेषताये निम्नाकित हैं–

(1) इसके विचारको व लेखको और उनके अनुयायियो की सख्या कम थी और ये जर्मनी वालो की भाति कभी एक सम्प्रदाय के रूप मे सगठित एव उपस्थित नहीं हुए।

(2) इसका कार्य लगभग 100 वर्ष की एक लम्बी अवधि मे सन् 1825 से 20वी सदी के प्रथम चतुर्थांश तक बिखरा हुआ एव छुट–पुट था।

(3) यह सम्प्रदाय न तो आर्थिक सिद्धान्तो का रचयिता था और न उसने कभी इनके प्रतिपादन मे अपनी रुचि ही दर्शायी।

---

8 "The Historical school left as legacy an enhanced desire for a knowledge of concrete reality in all its individual manifestations through time." Roll E.

(4) यह सम्प्रदाय प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो द्वारा निर्धारित की गयी अर्थशास्त्र की सीमाओ से सहमत नही था । अत यह इसके क्षेत्र को विस्तृत करना चाहता था । यह सम्प्रदाय अनुमानजनक बातो, जो प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो द्वारा निगमन प्रणाली के आधार पर कही गयी थी के स्थान पर तथ्यपरक बाते लाना चाहता था । वे यह नही चाहते थे कि रिकार्डो की भाति, आर्थिक अनुसधान का कार्य आरम्भ करने से पूर्व ही निष्कर्ष तय कर लिये जाये और फिर उन पर अडे रहे । दूसरे शब्दो मे, इस सम्प्रदाय ने आर्थिक विश्लेषण मे निगमन प्रणाली के स्थान पर ऐतिहासिक आगमन प्रणाली के प्रयोग का न केवल समर्थन किया बल्कि व्यवहार मे उसका प्रयोग कर अपने निष्कर्ष प्रतिपादित किये ।

(5) यह सम्प्रदाय प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो का उतना कटु आलोचक नही रहा जितना जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय । इसीलिए आर्थिक विश्लेषण मे ऐतिहासिक तथ्यो का प्रयोग न करने का दोष उनके माथे पर न लगाकर उन्होने केवल यही कहा कि क्योकि उन दिनो साख्यिकीय सामग्री की प्रचुरता नही थी अत उन्हे निष्कर्षो के प्रतिपादन मे तर्क का सहारा लेना पड़ा । दूसरे शब्दो मे, उन्होने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की गलतियो एव कमियो पर ध्यान देने के साथ–साथ अनकी सीमाओ पर भी ध्यान दिया ।

(6) जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के विचारको की भाति इस सम्प्रदाय के विचारक बौद्धिक विभूतिया (intellectual giants) नही थे । जहा सभी जर्मन सम्प्रदायवादी विश्वविद्यालयो मे लम्बे समय तक प्राध्यापक रहे वहा इसमे सभी तरह के विचारक एव लेखक थे ।

प्रमुख विचारक एवं उनका आर्थिक चिंतन
(Major Thinkers and Their Economic Ideas)

ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय के प्रमुख विचारक एव उनके आर्थिक विचार निम्नाकित हैं–

1. रिचर्ड जोन्स (Richard Jones : 1790-1855)

रिचर्ड जोन्स को 'तीस के दशक का इगलैण्ड मे ऐतिहासिक पद्धति का एकाकी प्रतिनिधि' (an isolated representative of the historical method in England in the thirties) कहा जाता है । इनके आर्थिक विचारो मे निम्नाकित मुख्य है–

(i) रिकार्डो का लगान सिद्धान्त काल्पनिक एव अपूर्ण है ।
(ii) आर्थिक नियमो की ऐतिहासिक पुष्टि नही हो रही है अत अनुभव एव परीक्षणो पर आधारित नियमो का प्रतिपादन किया जाना चाहिये और इसके लिए 'Look and See' पद्धति अपनायी जानी चाहिये ।
(iii) सत्य दो प्रकार के होते हैं–

(a) निरपेक्ष और (b) सापेक्ष । सापेक्ष सत्यो के आधार पर प्रतिपादित निष्कर्ष सार्वभौमिक नही हो सकते जबकि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने उन्हे ऐसा मानकर सबसे बडी भूल की ।

(iv) राष्ट्रीय आय मे वृद्धि सब वर्गों के लिए हितकर है ।
(v) मजदूरी कोष सिद्धान्त दोषपूर्ण है ।
(vi) अर्थशास्त्र एक 'अन्तर्विद्या विज्ञान' (Inter disciplinary science) है अत इसकी उपयोगिता अन्य सामाजिक विज्ञानो के सहयोग मे है ।

2. क्लिफे लेसली (Chefeleslie : 1825-1882)

क्लिफेलेसली प्रथम ऑग्ल अर्थशास्त्री थे जिन्होने पूरी तरह अध्ययन की ऐतिहासिक पद्धति अपनायी । इनके आर्थिक विचारो मे निम्नाकित मुख्य है–

(i) अर्थशास्त्र के अध्ययन की निगमन प्रणाली दोषपूर्ण है । इसीलिए रिकार्डो एव अनके अनुयायियो ने काल्पनिक बातो का सहारा लिया अत उसके स्थान पर ऐतिहासिक प्रणाली का प्रयोग होना चाहिये ।
(ii) रिकार्डो का लगान सिद्धान्त तथा प्रतिष्ठित मजदूरी–कोष सिद्धान्त काल्पनिक एव दोषपूर्ण है ।
(iii) 'पूर्ण प्रतिस्पर्धा', 'साधनो की गतिशीलता' आदि से सम्बन्धित प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की मान्यताये बिल्कुल अवास्तविक एव त्रूटिपूर्ण है ।
(iv) अर्थशास्त्र 'धन का विज्ञान' (science for wealth) के स्थान पर 'धन के लिए विज्ञान' (science for wealth) बन गया है । इसमे सुधार जरूरी है।
(v) आर्थिक शब्दावली का सुनिश्चित प्रयोग किया जाना चाहिये । प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने यह मर्यादा नही रखी ।
(vi) अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है और विभिन्न सामाजिक विज्ञानो मे एकता एव पारस्परिक निर्भरता जरूरी है ।
(vii) वे कर समाप्त कर देने चाहिये जिनसे आय विषमताये बढे ।

3. जे. के. इन्ग्राम J. K. Ingram : 1824-1907)

बहुमुखी प्रतिभा के धनी (Vesatile genius) एव ख्यातिप्राप्त विद्वान इन्ग्राम के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय हैं–

(i) अर्थशास्त्र एक पृथक् विज्ञान नही बल्कि समाजशास्त्र की शाखा है ।
(ii) निगमन प्रणाली दोषपूर्ण है और आगमन प्रणाली का प्रयोग श्रेयस्कर है ।
(iii) आर्थिक समस्याओ का अध्ययन भौतिकशास्त्र एव जीवविज्ञान पर आधारित किया जाये ।
(v) 'धन' के नियमो को धन सम्बन्धी तथ्यो पर आधारित होना चाहिये न कि 'मानव स्वार्थ' की बातो पर और धन पर अधिक बल देना गलत है।

4. बेजहॉट (Walter Bagehot : 1826-1877)

एक बैंकर, पत्रकार, लेखक एव सम–सामयिक विषयो मे गहन रुचि

रखने वाले बेजहॉट के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित मुख्य है–

(i) अपने दर्शन के कारण अर्थशास्त्र की लोकप्रियता गिर गयी है और प्रचलित अर्थशास्त्र केवल विकसित देशो का है अत उसमे परिवर्तन एव सुधार वाछनीय है।

(ii) अध्ययन की निगमन एव आगमन दोनो ही प्रणालियो का समन्वित प्रयोग किया जाना चाहिये। सिद्धान्त के बिना तथ्यो एव आँकड़ो का प्रयोग नही किया जा सकता। कोरे आँकड़े रद्दी के ढ़ेर समान होते है।

(iii) रिकार्डो का चितन गलत था। उनका विचार था कि वे वास्तविक दशाओ मे वास्तविक मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन कर रहे है किन्तु, वास्तव मे, वे कल्पित परिस्थितियो मे मनुष्य के काल्पनिक व्यवहार के अध्ययन मे लगे रहे।

(iv) आँग्ल विचारधारा के तीन प्रमुख दोष– भ्रातिपूर्ण, तथ्यो से पुष्टि सम्भव नही और सभी समाजो के धन की जानकारी न मिलना, है।

(v) अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है तथा इतिहास एव अर्थशास्त्र मे एकीकरण कर देना चाहिये।

(vi) साहसी की पूँजीवादी उत्पादन व्यवस्था मे महत्त्वपूर्ण भूमिका है और उसके खर्चे ही उत्पादन लागत है।

(vii) स्वतत्र व्यापार ठीक नही है और यह मानना दोषपूर्ण है कि सभी समाजो की विशेषताये एक समान है।

बेजहॉट ने सरकार के लिए अल्पावधि वित्त की व्यवस्था हेतु ट्रेजरी बिल्स का प्रयोग आरम्भ करवाया और केन्द्रीय बैंकिंग के सिद्धान्त प्रतिपादित किये। उनके विचारो मे 'व्यापार चक्र सिद्धान्त' एव 'गुणक सिद्धान्त' की प्रारम्भिक एव आधारभूत बाते मिलती है।

5. जेम्स ऐशले (James Ashley : 1860-1926)

विश्व इतिहास मे 'आर्थिक इतिहास' के प्रथम प्रोफेसर जेम्स ऐशले के आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(i) प्रत्येक आर्थिक सस्था का अपना सापेक्ष औचित्य होता है।

(ii) आर्थिक सिद्धान्तो एव संस्थाओ का अध्ययन एव जाँच तथ्यो के आधार पर ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे होनी चाहिये।

(iii) आर्थिक सिद्धान्तो का विकास समकालीन परिस्थितियो से प्रभावित होता है। अत आधुनिक आर्थिक सिद्धान्त सार्वभौमिक नहीं है और भविष्य मे भी यह निरपेक्ष एव सार्वभौमिक नही हो सकेगा।

(iv) आर्थिक चितन एव समाज का इतिहास साथ–साथ चलते है।

6. अर्नोल्ड टॉयनबी (Arnold Toynbee : 1852-1883)

'औद्योगिक क्रांति' (Industrial Revolution) शब्द के जन्मदाता टॉयनबी

के आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है--

(i) प्रतिष्ठित सिद्धान्त सापेक्ष थे , उन पर परिवेश का गहरा प्रभाव था, प्रत्येक विचारक एव लेखक परिवेश की उपज होता है।

(ii) रिकार्डो के लगान, मजदूरी एव लाभ विषयक सिद्धान्त गलत एव दोषपूर्ण थे । क्योकि, प्रतिस्पर्धा, स्वहित एव निजीहित की सस्थाओ की विद्यमानता के बावजूद श्रमिको की स्थिति मे सुधार करना सम्भव है तथा स्वतत्र व्यापार, फैक्ट्री अधिनियम, श्रमसघो एव सहकारी समितियो की सहायता से श्रमिको की स्थिति सुधारी जा सकती है । इसी प्रकार नैतिक उत्थान एव स्वालम्बन (Selfhelp) से इनकी स्थिति सुधारी जा सकती है ।

(iii) केवल निगमन प्रणाली का ही प्रयोग दोषपूर्ण है अत आगमन प्रणाली के साथ उसका समन्वित प्रयोग किया जना चाहिये ।

(iv) गरीबो के हितो की रक्षा की जानी चाहिये तथा वर्तमान ढाँचे मे ही सरकारी कल्याण क्रियाये बढ़ानी चाहिये ।

(v) 'स्वतत्रता' से प्रतिस्पर्धा के स्थान पर एकाधिकार बढ़े है और प्रतिस्पर्धा असमानो मे हो रही है, जो गलत है ।

7. थोरोल्ड रोजर्स (Thorold Rogers : 1823-1890)

(i) रिकार्डो का लगान सिद्धान्त गलत है और उसकी ऐतिहासिक पुष्टि नही होती ।

(ii) ऐतिहासिक एव सांख्यिकीय अनुसधान आवश्यक हैं और आगमन प्रणाली का प्रयोग किया जाना चाहिये ।

(iii) अर्थशास्त्र को मुख्यत दो बातो से घाटा है-- एक, ज्यादा परिभाषाये और दो, ऐतिहासिक तथ्यो की अनदेखी ।

(iv) प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने जिसे प्राकृतिक बताया , वह बनावटी है, जिन्हे उन्होने नियम बताये, वे अविचारित (hasty), अविवेकी (inconsiderate) और अनिश्चित आगमन थे । इसी प्रकार जिसे उन्होने 'प्रामाणिक अकाट्य' बताया वह 'प्रामाणिक झूठ' निकला ।

निष्कर्ष (Conclusion)

ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय के विभिन्न विचारको के विचारो से सामान्यतया निम्नांकित निष्कर्ष निकाले जा सकते है--

(1) इस सम्प्रदाय के सभी विचारको ने रिकार्डो के लगान, मजदूरी एव लाभ विषयक सिद्धान्तो, मजदूरी कोष सिद्धान्त और माल्थस के जन सख्या सिद्धान्त को त्रुटिपूर्ण बताकर उनकी आलोचना की ।

(2) सभी विचारको ने केवल निगमन प्रणाली के प्रयोग की एक स्वर मे भर्त्सना की एव ऐतिहासिक आगमन प्रणाली के प्रयोग की सिफ़ारिश की ।

(3) लगभग सभी विचारको ने आर्थिक निष्कर्षों को अधिक सार्थक एव उपयोगी बनाने के लिए उनकी तथ्यो द्वारा पुष्टि तथा निगमन एव आगमन प्रणालियों के एक साथ एवं समन्वित प्रयोग का समर्थन किया।

(4) इस सम्प्रदाय के विचारको का योगदान मुख्यत आलोचनात्मक नकारात्मक अथवा खण्डनीय रहा। उन्होने किसी ऐसे मौलिक विचार या सिद्धान्त का सामान्यतया प्रतिपादन नहीं किया जिसके लिए वे आर्थिक विचारो के इतिहास मे जाने जाते हो। हा, बेजहॉट एव टायनबी को इसका अपवाद माना जा सकता है।

उपर्युक्त समानताओ के बावजूद प्रत्येक विचारक की आलोचना का कोई न कोई विशेष सीमित क्षेत्र रहा। उदाहरणार्थ, जोन्स ने रिकार्डो के लगान सिद्धान्त, क्लिफेलेसली ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के अनुमानो पर आधारित निष्कर्षों, बेजहॉट ने उत्पादन लागत के घटको एव सिद्धान्त और टायनबी ने मजदूरी तथा लाभ मे उच्चावचनो सम्बन्धी विचारो की मुख्यत आलोचना की।

अन्त मे, चाहे जैसी भी स्थिति रही हो, प्रतिष्ठित आर्थिक विचारो की कमिया उजागर कर उनमे परिवर्तन एव संशोधन का मार्ग प्रशस्त करने की रचनात्मक भूमिका के कारण ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय का नाम आर्थिक विचारो के इतिहास मे बना रहेगा।

प्रश्न

1 **ऐतिहासिक सम्प्रदाय से आप क्या समझते हैं। इस सम्प्रदाय के प्रमुख विचारों का विवेचन कीजिये।**

संकेत : सर्वप्रथम ऐतिहासिक सम्प्रदाय का आशय समझाकर उल्लेख करे कि इसका विकास जर्मनी एव इग्लैण्ड मे हुआ तत्पश्चात् दोनो सम्प्रदायो के प्रमुख आर्थिक विचारो का क्रमश: विवेचन करे।

2 **ऐतिहासिक सम्प्रदाय का जन्म एवं विकास किन परिस्थितियों में हुआ ? क्या यह सम्प्रदाय अपने उद्देश्यों मे सफल रहा ?**

संकेत : सर्वप्रथम उन परिस्थितियो का उल्लेख करे जिनमे इस सम्प्रदाय का उदय (मुख्यत जर्मनी) हुआ। तत्पश्चात् इसके प्रमुख विचारो का उल्लेख करते हुए अन्त मे निष्कर्ष दे कि यह सम्प्रदाय अपने उद्देश्य मे सफल रहा।

3. **जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय के प्रमुख विचारकों के विचारों का संक्षिप्त विवेचन कीजिये।**

4. **संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये–**

   (i) ब्रिटिश ऐतिहासिक सम्प्रदाय,

   (ii) ऐतिहासिक आगमन प्रणाली और

   (iii) जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय का वर्गीकरण।

9

राष्ट्रवादी सम्प्रदाय : फ्रेड्रिक लिस्ट

(The Nationalist School Friedrich List)

> "यह अनुभूत सत्य है कि हवा एक स्थान से दूसरे स्थान तक बीज उड़ाकर लाती है और इस प्रकार बन्जर (बजर) भूमिया घने जगलों में बदल जाती हैं। किन्तु, इसी आधार पर क्या एक वनपाल के लिए यह बुद्धिमतापूर्ण होगा कि वह उस समय तक इन्तजार करे जब तक हवा चलने से यह रुपान्तरण पूर्ण हो।"[1] —फ्रेड्रिक लिस्ट।

परिचय जर्मन आर्थिक राष्ट्रवाद के मूर्तिमान
(Introduction The Personification of German Economic Nationalism)

प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो के आलोचक समुदायो मे एक महत्वपूर्ण सम्प्रदाय 'राष्ट्रवादी सम्प्रदाय' है। ऐतिहासिक सम्प्रदाय की भाति इस सम्प्रदाय का उद्भव एव विकास भी मुख्यत जर्मनी मे ही हुआ। इस सम्प्रदायवादियो का कहना था कि प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के ये निष्कर्ष गलत है कि 'व्यक्ति सर्वोपरि है' 'स्वतत्र व्यापार ही व्यापार का सर्वश्रेष्ठ रूप है' और 'देशवासियो के धन का योग ही राष्ट्रीय धन होता है। इसके विपरीत राष्ट्रवादियो का कहना था कि 'राज्य सर्वोपरि है' मनुष्य उसकी शक्ति एव कल्याण के अधीन हैं अत व्यक्ति को नहीं बल्कि राष्ट्र को शक्तिशाली बनाया जाना चाहिये और इसका एक महत्त्वपूर्ण उपकरण विदेशी व्यापार' है। उन्होने बताया कि राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय हितो मे सामजस्य नही बल्कि टकराव की स्थिति है। अत मुक्त व्यापार जिसका समर्थन प्रतिष्ठित सम्प्रदाय ने किया का तभी अनुसरण किया जा सकता है जब विश्व के समस्त देशो का एक ऐसा सघ हो जो चिरस्थायी शाति की गारटी दे सके। किन्तु वर्तमान की वास्तविकता इससे एकदम भिन्न है। विभिन्न देश परस्पर सघर्षरत है और इस सघर्ष का एक बड़ा कारण मुक्त व्यापार की नीति पर आधारित इगलैण्ड का

---

1 I is true that experience teaches that the wind bears the seed from one region to another and that the waste moorlands have been tran formed into dense forests but would t on that account be wise pol cy for the forester to wait untill the wind in the course of ages effects th s transformation. List F

आर्थिक साम्राज्यवाद है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि राष्ट्रवादी सम्प्रदाय ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के व्यक्तिवाद (individualism), अन्तर्राष्ट्रीयतावाद अथवा विश्ववाद (consmopolitanism) एव निर्बाधावाद (laissez faire) पर करारी चोट की और एक ऐसे आर्थिक राष्ट्रवाद की विचारधारा आरम्भ की जिसमे वैयक्तिक सम्पत्ति को महत्ता दिये बिना ही राष्ट्र की उत्पादन शक्तियो का निर्माण किया जा सके । इस राष्ट्रवाद के दो प्रमुख रूप थे–

(i) रोमान्टिक अथवा दार्शनिक राष्ट्रवाद और

(ii) सरक्षणतावादी राष्ट्रवाद ।

रोमान्टिक राष्ट्रवादी दार्शनिक एव आदर्शवादी विचारो से प्रभावित थे जबकि सरक्षणवादी राष्ट्रवादी राष्ट्र के विकास के लिए प्रशुल्क नीतियो, आयात करो आदि को महत्त्वपूर्ण मानते थे । फ्रेड्रिक लिस्ट दूसरे वर्ग सबसे प्रमुख राष्ट्रवादी थे । दूसरे शब्दो मे, वे सरक्षणवाद के प्रतिरूप थे । वे जर्मनी की आर्थिक फूट (disunity) को एकता मे बदलना चाहते थे । ज्ञातव्य है कि, उन दिनो जर्मनी के आतरिक व्यापार मे 38 अन्तर्राज्यीय प्रतिबन्ध लागू थे और अकेले प्रशा राज्य ने अपने यहा 67 प्रकार के प्रतिबन्ध लागू कर रखे थे । इसके अलावा जर्मनी मे औद्योगिक वस्तुओ के आयात पर कोई रोक नही थी फलत. इग्लैण्ड से होने वाले आयात शिशु जर्मन उद्योगो के भावी विकास का मार्ग रोक रहे थे । लिस्ट ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर लगे प्रतिबन्धो एव करो को हटाने एव विदेशी आयातो पर रोक लगाने की माग शुरु कर दी और इसके समर्थन मे जन–समर्थन जुटाना आरम्भ कर दिया । सन् 1819 मे उनके नेतृत्व मे जर्मन व्यापारियो एव निर्माणकर्त्ताओ ने अपना एक सगठन बना लिया । लिस्ट का कहना था कि जब इग्लैण्ड ने अपने खाद्यान्न कानूनो (com laws) के द्वारा जर्मन कृषको के लिए अपना बाजार बद कर दिया है तो जर्मनी को भी प्रत्युत्तर मे वहा से होने वाले आयातो पर प्रतिबन्ध लगाकर अपने शिशु उद्योगो को सरक्षण देना चाहिये और जैसे अमरीका एव फ्रास ने स्वय को इग्लैण्ड के चंगुल से निकालकर उसकी सर्वोच्चता एव निर्बाधावाद की नीति को चुनौती दे दी है, ठीक उसी राह पर जर्मनी को आगे बढ़ना चाहिये । लिस्ट ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के सार्वभौमिकतावाद (universalism) के स्थान पर आर्थिक राष्ट्रवाद का प्रतिस्थापन करना अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया और वे इसकी प्राप्ति मे जुट गये । उन्होने जर्मन राष्ट्रवाद का मानवीकरण कर दिया और वे इस आदोलन के मूर्तरूप बन गये । इसीलिए उन्हे जर्मन आर्थिक राष्ट्रवाद का मूर्तिमान कहा जाता है ।

संक्षिप्त जीवन परिचय

(Brief Life Sketch)

फ्रेड्रिक लिस्ट का जन्म जर्मनी के वूर्टेम्बर्ग (Wurtemberg) राज्य मे रियुटलिंजन

(Reutlingen) नामक स्थान पर सन् 1789 मे हुआ । सामान्य शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् 17 वर्ष की आयु मे वे सन् 1705 मे टुबिंजन मे राजकीय सेवा मे लिपिक बन गये किन्तु, उन्होने अपना उच्च अध्ययन जारी रखा । विलक्षण बुद्धि एव कार्यशैली के कारण आपको शीघ्र ही सरकार मे स्थानीय मामलो के मत्री के सचिव और सन् 1817 मे मुख्य लेखा परीक्षक के रूप मे पदोन्नतिया मिल गयीं । इसी समय स्थानीय सरकार पर आपके एक लेख से प्रभावित होकर टुबिंजन विश्वविद्यालय ने आपको 'प्रशासन एव राजनीत' के प्रध्यापक पद पर नियुक्ति दे दी । इस पद पर रहते हुए आपने अपने उदारवादी विचारो के कारण प्रशासन मे नौकरशाही की आलोचना की, सवैधानिक राजतत्र का समर्थन किया और सरकारी नीतियो की आलोचना मे स्वय द्वारा सम्पादित एक समाचार पत्र मे अनेक लेख प्रकाशित किये । इससे सरकार नाराज हो गयी और परिणामस्वरूप सन् 1819 मे उन्हे प्राध्यापक पद एव बूर्टेम्बर्ग ससद की सदस्यता छोडनी पडी । इतना नही उन्हे जेल की सजा हुयी । इसके पश्चात् सन् 1819 मे लिस्ट जर्मनी ने व्यापारिक औद्योगिक चेम्बर, फ्रैकफर्ट (General Association of German Manufacturers and Merchants) के सदस्य बन गये । सन् 1820 मे आप रियूटलिंजन से जर्मन ससद के लिए चुने गये । ससद मे आपने सरकारी नीतियो का कडा विरोध किया और उनमे सुधारो के लिए आवाज उठायी । अब उनका सरकार से सघर्ष आरम्भ हो गया । वे पेरिस भाग निकले । वहा से लिस्ट इग्लैण्ड एव स्विटजरलैण्ड होते हुए जब वापस जर्मनी आये तो उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया । उनकी ससद–सदस्यता समाप्त कर दी और जेल भेज दिया । 10 माह पश्चात जेल से छूटने पर सरकार ने उन्हे तीन दिन मे देश छोड देने का आदेश दिया । परिणामस्वरूप, सन् 1825 मे लिस्ट अमरीका चले गये । उन्होने सारे देश का भ्रमण किया और बाद मे पहले हैरिसबर्ग और तत्पश्चात् रीडिग नामक स्थान पर रहे । अमरीका मे लिस्ट अर्थशास्त्रियो एव राजनीतिज्ञो के सम्पर्क मे आये । उन दिनो वहाँ राष्ट्रवाद एव सरक्षणवाद की हवा गर्म थी । लिस्ट की इनमे रुचि बढ गयी और वे वहा सरक्षणवाद के प्रचार कार्यक्रमो मे सक्रिय भागीदारी निभाने लगे । अमरीकी राष्ट्रवादियो को उनके सरक्षणवादी विचार व भाषण बहुत पसद आये व उन्होने उनकी भूरि–भूरि प्रशसा की । सन् 1827 मे उनके लेख 'Outline of American Political Economy' मे छपे । इसी बीच उन्होने वहा कोयले की खान की खोज की और रेल मार्ग द्वारा इसके परिवहन का हल निकाला । इससे उनको धन–लाभ के अलावा काफी लोकप्रियता मिली । उनका अमरीका में प्रवास काफी सक्रिय रहा । वहा उन्होने 'Reading Eagle' का सम्पादन किया और नहरो एव रेल–मार्गों के निर्माण के लिए धन दिया । इससे लिस्ट जाने–माने लोगो के सम्पर्क मे आ गये फलत सन् 1832 मे उन्हे प्रथम अमरीकी सलाहकार के रूप मे हैम्बर्ग (जर्मनी) भेज दिया । इसके

पश्चात् लिस्ट लिपजिग एव स्टूटगर्ट मे अमरीकी सलाहकार तो रहे किन्तु वापस अमरीका नही गये।

सन् 1832 मे स्वदेश आने पर लिस्ट ने देखा कि सन् 1825 से पूर्व उन्होने जो आदोलन चलाया था वह अपनी चरण सीमा पर पहुच चुका है। उन्होने अमरीकी सलाहकार का पद छोड़कर आदोलन की बागडोर सम्भाल ली और पुरजोर शब्दो मे सरक्षण लागू करने की माग शुरु कर दी। सरकार ने फिर उन्हे देश से निकल जाने का आदेश दे दिया। सन् 1837 मे वे पैरिस चले गये और सन् 1840 तक वही रहे। इस तीन वर्ष की अवधि मे उन्होने अपनी ऐतिहासिक पुस्तक 'The National System of Political Economy' लिखी जिसका प्रथम खण्ड सन् 1841 मे प्रकाशित हुआ। जब देशवासियो ने उनकी आशानुसार इस पुस्तक को पसद नही किया तो लिस्ट को बड़ी निराशा हुई। उन्होने इसके शेष दो खण्डो का प्रकाशन रोक दिया। अब वे अस्वस्थ रहने लगे और उनका मानसिक सतुलन बिगड गया जिसकी चरण परिणति सन् 1846 मे टायरोल (Tyrol) नामक स्थान पर उनकी आत्महत्या मे हुयी। उनके उद्देश्यपूर्ण एव जुझारू जीवन का घोर निराशा मे नाटकीय अत हो गया। जर्मनवासियो ने उन्हे श्रद्धान्जलिया दी, प्रशसा नही।

लिस्ट को प्रभावित करने वाले घटक

(Factors Affecting List)

जर्मन आर्थिक राष्ट्रवाद एव सरक्षणवाद के मूर्तिमान के रूप मे लिस्ट का उत्थान मात्र एक सयोग नही था बल्कि अनेक घटको की देन था। सक्षेप मे, उन्हे प्रभावित करने वाले प्रमुख घटको मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) **जर्मनी की आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति (Economic and Political condition of Germany)**-

लिस्ट के सरक्षणवादी विचार तत्कालीन जर्मनी की आर्थिक एव राजनैतिक स्थिति की उपज थे। इस समय तक आते–आते एक ओर जहा इग्लैण्ड एव फ्रास, प्रतिष्ठित आर्थिक चितन का लाभ लेकर आर्थिक विकास के पथ पर बहुत आगे निकले चुके थे वहा जर्मनी अब भी आर्थिक, सामाजिक एव राजनैतिक दृष्टि से योरोपीय महाद्वीप का एक पिछड़ा देश था क्योकि,

(i) वहा के लोगो का आर्थिक एव सामाजिक जीवन सदियो पुरानी राजनीतिक प्रथाओ एव सस्थाओ के शिकजे मे जकड़ा हुआ एवं निस्तब्ध था।

(ii) वहाँ की राजनीतिक व्यवस्था विखण्डित एव दोषपूर्ण थी। उसकी बाह्य सीमाये असुरक्षित थी और वह 300 छोटे–छोटे राज्यो मे विभाजित हो चुका था।

(iii) केन्द्रीय सरकार कमजोर थी और उसका लगाव देश की आर्थिक प्रणाली

मे सुधार की अपेक्षा राजनीतिक व्यवस्था सुधारने मे अधिक था ।

(iv) वहा के आर्थिक जीवन मे सरकारी हस्तक्षेप बहुत बढ गया था । अत आर्थिक समस्याओ का निराकरण सरकारी तत्र द्वारा मनमौजी तरीको से होने लग गया था ।

(v) वहा की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी । कृषि पर सामतो का प्रभुत्व था । ये सामत अनुपस्थित भूमिपति थे । काश्तकारो का शोषण हो रहा था और कृषि पैदावार नीची थी ।

(vi) जर्मन उद्योग पिछडी या शिशु अवस्था मे थे । उनमे निर्यात आधिक्य के सृजन एव विदेशी उद्योगो से प्रतिस्पर्धा करने की सामर्थ्य का अभाव था।

(vii) अलग–अलग राज्यो मे अलग–अलग व्यापारिक नीतियो के कारण राष्ट्रीय व्यापार नीति का अभाव था तथा व्यापार पर कड़े अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबन्ध एव कर लागू थे । सन् 1819 मे जर्मन व्यापार एव वाणिज्य सघ मे दिये गये भाषण मे लिस्ट ने ऐसे 38 प्रतिबन्ध बताये । इसके अलावा प्रशा प्रात मे 67 विभिन्न शुल्क लगे हुए थे । इसीलिए लिस्ट ने कहा था कि, ''जहा अन्य देश कला एव विज्ञान के विकास पर ध्यान देकर अपने वाणिज्य एव व्यापार का प्रसार कर रहे है वहा जर्मन व्यापारी एव उद्योगपति अपना अधिकाश समय अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबन्धो का अध्ययन करने मे व्यतीत करते है ।''

(viii) विदेशी व्यापार का जर्मनी को लाभ नही मिल रहा था । आयात कर लागू न होने के कारण इगलैण्ड, जो उस समय तक एक औद्योगिक दैत्य (industrial giant) का स्वरूप ग्रहण कर चुका था, अधिकाश जर्मन बाजारो मे अपना औद्योगिक माल बेच रहा था ।

उपर्युक्त स्थिति के कारण जर्मन जनता, व्यापारी और उद्योगपति दु खी थे । वे व्यापार पर लगे आतरिक कर समाप्त करने और आयातो पर रोक लगाकर राष्ट्रीय व्यापार एव प्रशुल्क नीति लागू करने की माग कर रहे थे । इससे लिस्ट को मच एव अनुयायी दोनो ही मिल गये । प्रो एरिक रोल के शब्दो मे, ''जर्मनी की पिछडी स्थिति ने लिस्ट को आर्थिक राष्ट्रवाद का प्रचारक बना दिया ।''[2]

(2) **अमेरीका की आर्थिक स्थिति एवं संरक्षणवाद की नीति** (Economic condition of America and Policy of Protectionism)

अमेरीका की तत्कालीन आर्थिक स्थिति का लिस्ट के विचारो पर गहरा प्रभाव पड़ा । अपने अमरीका प्रवास के दौरान लिस्ट ने न केवल वहा की

2. "The backward condition of Germany made List the apostle of economic Nationalism." — Roll E.

स्थिति का गम्भीरतापूर्वक अवलोकन एव अध्ययन किया अपितु, वे वहा के आर्थिक चिंतन मे सक्रिय रहे । लिस्ट ने देखा कि अमरीका की सामाजार्थिक स्थिति भी जर्मनी जैसी ही थी । जर्मनी से निष्कासन के पश्चात् जब सन् 1825 मे लिस्ट अमरीका गये तब वहा इग्लैण्ड के आर्थिक साम्राज्यवाद से बचने के लिए सरक्षणवाद की नीति का अनुसरण किया जा रहा था । उन्होने स्थिति का गहन अध्ययन किया और पाया कि तत्कालीन परिस्थितियो मे अमरीका के लिए एकमात्र वही नीति उपयुक्त थी । अत लिस्ट ने उसी नीति को जर्मनी के लिए हितकर बताया । अमरीका की स्थिति एव वहा की नीति का उन पर कितना प्रभाव पड़ा का उल्लेख करते हुए उन्होने अपनी प्रसिद्ध रचना National System' को प्रस्तावना मे लिखा कि, ''जब बाद मे सयुक्त राज्य अमरीका गया तो मैने सभी किताबो को एक ओर रख दिया क्योकि वे सम्भवत मुझे गुमराह कर देती । अर्थशास्त्र की सर्वश्रेष्ठ रचना जो कोई व्यक्ति उस आधुनिक देश मे पढ़ सकता वह 'उसका वास्तविक जीवन' था । वास्तविक जीवन की उस पुस्तक को मैने परिश्रम एव पूर्णनिष्ठा से पढ़ा तथा उसकी तुलना अपने पूर्व अध्ययन, अनुभव एव विचारो से की । वहाँ मैने किसी देश की अर्थव्यवस्था के उत्तरोत्तर विकास का सुस्पष्ट विचार प्राप्त किया ।''

(3) पूर्ववर्ती एवं समकालीन विचारक (His Predecessors and contemporary Thinkers)

लिस्ट का अध्ययन गहन था । उन्होने एडम स्मिथ से लेकर अपने समय तक के विचारको की रचनाए एव उनकी आलोचनाए पढी । प्रतिष्ठित अर्थशास्त्र के अध्ययन से उसकी कमजोरिया ज्ञात हुईं और वे उन्हे दूर करने मे जुट गये । वे उनके निर्बाधावाद, मुक्त व्यापार, स्वहित, प्राकृतिक स्वतत्रता, निरपेक्षतावाद एव विश्ववाद से सहमत नही हुए । आगस्टिन कूर्नो एव ल्यूईस ने मुक्त व्यापार के सिद्धान्त की आलोचना की । जब लिस्ट ने उनके विचार पढ़े तो उनसे बहुत प्रभावित हुए । अमरीकी राष्ट्रवादी लेखक हैमिल्टन, मैथ्यू कैरे एव रेमण्ड के विचारो का भी लिस्ट की विचारधारा पर अमरीका प्रवास के दौरान गहरा प्रभाव पड़ा । फ्रासिसी अर्थशास्त्री ड्यूपिन से लिस्ट ने 'उत्पादक शक्तियो' एव चैप्टल से 'शिशु उद्योगो को सरक्षण' के विचार लिये । जर्मन दार्शनिक काम्टे के राष्ट्रवाद विरोधी चिंतन का भी लिस्ट पर गहरा प्रभाव पड़ा और अपने सरक्षण सम्बन्धी विचारो द्वारा काम्टे को निरुत्तर करने का प्रयास किया । वणिकवादियो मे लिस्ट कोलबर्ट के विचारो से बहुत प्रभावित हुए थे ।

(4) अन्य घटक (Other factors)-

लिस्ट को प्रभावित करने वाले अन्य घटको ने अमरीका की फिलाडेल्फिया समिति का प्रभाव सबसे उल्लेखनीय है । इस समिति ने अमरीका मे प्रशुल्क करो मे सशोधन की माग की । इसके उद्देश्यो से प्रभावित हो स्वय लिस्ट इसके

सदस्य बन गये । इसके अलावा जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदाय की विचारधारा एव रोमान्टिक राष्ट्रवादी विचारधारा ने भी लिस्ट की विचारधारा को निश्चित दिशा प्रदान करने मे सक्रिय भूमिका निभायी ।

प्रमुख कृतियाँ

(Major works)

फ्रेड्रिक लिस्ट की दो प्रमुख कृतियाँ है–

1 Outline of American Political Economy (1827)

(यह लिस्ट के अमरीकी सरक्षण पर लिखे गये पत्रो एव लेखो का सग्रह है) और

2 The National System of Political Economy (1841)

लिस्ट की पहली पुस्तक की तुलना मे यह अधिक महत्त्वपूर्ण है । पुस्तक की मूल योजना के अनुसार यह तीन खण्डो मे प्रकाशित होनी थी जिसका प्रथम खण्ड (जिसके चार भाग क्रमश History Theory, Systems एव Public Policy है) सन् 1841 मे प्रकाशित हुआ । इस खण्ड पर देशवासियो से अपेक्षित प्रशसा न मिलने पर लिस्ट ने शेष दो खण्डो का प्रकाशन नही करवाया । ये खण्ड क्रमश 'The Politics of the Future' एव 'The Influence of Political Institutions on National wealth and National Power' थे । इसके प्रथम खण्ड मे लिस्ट ने प्रस्तावना मे जर्मनी के लिए सरक्षणवाद की उपयोगिता एव अमरीकी सरक्षणवाद का उन पर प्रभाव का उल्लेख किया गया है । इस पुस्तक का उद्देश्य जर्मनी का आर्थिक एकीकरण एव आर्थिक राष्ट्रीयकरण करना था । आर्थिक एकीकरण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर लगे करो एव शुल्को को हटाना आवश्यक था तथा आर्थिक राष्ट्रीयकरण के लिए संरक्षण की नीति अपनाकर आयातो को रोकना एव देश के शिशु उद्योगो को बाह्य प्रतिस्पर्धा से बचाना आवश्यक था । लिस्ट की यह रचना भूतकालीन इतिहास एव अनुभव पर आधारित थी । इसमें लिस्ट ने प्रत्येक बात की तथ्यो एव आँकड़ो की सहायता से पुष्टि की और इसकी रचना तात्कालीन परिस्थितियो की एक देन एव महत्त्वपूर्ण आवश्यकता थी । इसने जर्मनी को इग्लैण्ड के आर्थिक साम्राज्यवाद के विरुद्ध 'सुरक्षा कवच' प्रदान करने की माग की ।

स्वय लिस्ट ने इस पुस्तक को अपने आधे जीवन काल का इतिहास बताया । जर्मनी मे इस पुस्तक को बहुत पसद किया गया, किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् । सन् 1885 मे इस पुस्तक का एस एस लायड द्वारा अंग्रेजी मे अनुवाद किया गया । प्रो अलेक्जेण्डर ग्रे ने इस पुस्तक के बारे मे लिखा है कि, "लिस्ट की इस रचना मे काफी हद तक एक दोष यह है कि यह मुख्यत उस समय के ज[illegible]नी को प्रोत्साहित करने के लिए लिखी गयी एक सामाजिक रचना है । उनकी शैली बहुत कठोर एव आक्षेपात्मक है । उनकी व्याख्या मे

पर्याप्त तर्कों का अभाव है और एक ही बात को बार-बार दोहराया गया है। पुस्तक मे क्रमहीनता का दोष है और इसमे परस्पर विरोधी बाते है।" फिर भी यह पुस्तक सरक्षणवादियो के लिए एक धार्मिक पुस्तक की तरह मान्य है।

फ्रेड्रिक लिस्ट के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Friedrich List)

फ्रेड्रिक लिस्ट ने अपनी प्रमुख रचना "The National System of Political Economy" की प्रस्तावना मे सर्वप्रथम अन्य अर्थशास्त्रियो के मध्य अपनी स्थिति स्पष्ट की। तत्पश्चात् प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो के प्रति अपना आलोचनात्मक रुख प्रकट करते हुए उन्होने उन पर कुछ आक्षेप लगाये और अन्त मे, पुस्तक के मूल पाठ मे, अपने प्रमुख विचार, जो मुख्यत प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो की आलोचनाओ एव कमजोरियो से प्रस्फुटित हुए, प्रकट किये। ज्ञातव्य है कि, लिस्ट ने प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के काल्पनिक विश्ववाद (Chimerical Cosmopolitanism) भौतिकवाद (Materialism), पृथक्तावाद एव असगठित वैयक्तिकवाद (Separatism and Disorganised Individualism) और कृषि, उद्योग एव व्यापार पर अनुचित बल की आलोचना करते हुए जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये उनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 राष्ट्रीयता का सिद्धान्त,
2 आर्थिक विकास का सिद्धान्त,
3 उत्पादन शक्ति का सिद्धान्त और
4 सरक्षणवाद का सिद्धान्त।

अब हम इन सिद्धान्तो की क्रमश विस्तृत व्याख्या करेगे।

1. राष्ट्रीयता का सिद्धान्त (The Theory of Nationality)

राष्ट्रीयता के सिद्धान्त से आशय आर्थिक राष्ट्रवाद एव राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से है। लिस्ट ने अपनी प्रमुख रचना के द्वितीय अध्याय मे इसका विवेचन किया है। जैसा कि प्रो जीड एव रिस्ट ने बताया, उनका राष्ट्रीयता का सिद्धान्त प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विश्ववाद से एकदम विपरीत है। प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो का मानना था कि 'स्वहित' महत्त्वपूर्ण है और 'वैयक्तिक स्वतत्रता' मे किसी प्रकार का हस्तक्षेप अनुचित एव अवाछनीय है। उन्होने बताया कि इन दोनो के बल पर भविष्य मे विश्व एक ऐसा सगठन बन जायेगा जिसमे युद्ध आदि की सम्भावनाए बिल्कुल समाप्त हो जायेगी और सारा विश्व एक परिवार के रूप मे सगठित हो जायेगा। यही उनका विश्ववाद अथवा सार्वभौमिकतावाद था। इसी आधार पर एडम स्मिथ एव उनके साथियो ने अर्थशास्त्र को विश्वजनीन (universal) बनाया था।

प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के उपर्युक्त विचारो से भिन्न लिस्ट ने कहा कि व्यक्ति स्वयं लक्ष्य नही होते। सब व्यक्ति एक राष्ट्र के न होकर अलग-अलग

राष्ट्रो के है, जिनके अलग–अलग आर्थिक एव राजनीतिक विचार होते है । अत व्यक्ति एव मानवता और विश्ववाद के मध्य राष्ट्र नामक सस्था है । उन्ही के शब्दो मे, "प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी राष्ट्र का अग है और उसकी समृद्धि मुख्यत राष्ट्र की राजनीतिक शक्ति पर निर्भर रहती है।"[3] उन्होने इग्लैण्ड, फ्रास, हॉलैण्ड, सयुक्त राज्य अमेरीका आदि का उदाहरण देकर बताया कि वहाँ के नागरिको की उत्पादन–शक्ति एव धन वहा की सामाजिक एव राजनीतिक सस्थाओ के स्तर मे सुधार के साथ बढ़ता जा रहा है । अत वर्तमान जीवन का आधार राष्ट्रीय जीवन ही है । उन्होने बताया कि विकास एव आर्थिक समृद्धि की दृष्टि से विश्व के समस्त देशो का स्तर एक समान नही है । अत बडे एव समृद्ध देश तब तक छोटे एव कमजोर राष्ट्रो का आर्थिक शोषण करते रहेगे, जब तक वे आर्थिक दृष्टि से सबल एव स्वावलम्बी नही बन जाते । दूसरे शब्दो मे, लिस्ट ने बताया कि स्वतत्र व्यापार उसी समय न्यायोचित हो सकता है जब सब देश आर्थिक दृष्टि से सबल हो एव उनमे परस्पर घनिष्ट सम्पर्क एव पारस्परिक निर्भरता हो । क्योकि यह सब तत्काल एव स्वत सम्भव नही, अत विश्ववाद कोरी कल्पना है और उसके स्थान पर आर्थिक राष्ट्रवाद अधिक महत्त्वपूर्ण एव व्यावहारिक चितन है ।

उपर्युक्त विवेचन से कदापि यह आशय नही है कि लिस्ट विश्ववाद अथवा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के विरुद्ध थे । वस्तुत वे विश्वबधुत्व को परम पावन मानते थे और उसमे वृद्धि के प्रबल समर्थक थे । इसीलिए उन्होने अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की शीघ्रातिशीघ्र स्थापना का अनुमोदन किया । किन्तु, जैसा कि उल्लेख किया जा चुका, लिस्ट के मतानुसार विभिन्न राष्टो के हितो एव उनकी आर्थिक समृद्धि के स्तर मे भिन्नता इसके मार्ग मे एक महत्त्वपूर्ण बाधा थी । ऐसी स्थिति, मे यदि कोई सगठन बनाया तो भी स्थिति मे कोई अन्तर नही आयेगा क्योकि इस सघ मे कुछ बड़े एव समृद्ध देशो का प्रभुत्व रहेगा जिसके बल पर वे छोटे एव कमजोर राष्ट्रो का शोषण करते रहेगे । अत लिस्ट ने समस्त राष्टो की आर्थिक समानता पर बल दिया और कहा कि उसकी प्राप्ति विश्ववाद के थोथे एव आदर्श नारो से नही बल्कि आर्थिक राष्ट्रवाद की स्थापना से होगी । उन्होने बताया कि 'स्वतत्रता' तथा 'शक्ति' किसी राष्ट्र की दो आधारभूत शक्तियाँ है और विकास के शीर्ष स्तर पर अपनी जनसख्या के भरण–पोषण, कला एव विज्ञान के विकास और अपनी अखण्डता, स्वतत्रता एव शक्ति को बनाये रखने की दृष्टि से राष्ट्र एव राष्ट्रीयता की भूमिका महत्त्वपूर्ण बन जाती है ।

उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर ही लिस्ट ने एक व्यक्ति एव सम्पूर्ण

---

1. "Everyman forms a part of some nation, and his prosperity depends upon the political power of that nation." List F

मानवजाति के मध्य राष्ट्र की महत्ता पर बल दिया । प्रो. फ्रैंक नेफ ने लिस्ट के विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए कहा है कि, "व्यक्ति, जो राष्ट्र की गोद मे, राष्ट्र की सहायता से ही बौद्धिक–सभ्यता, उत्पादक–शक्ति, सुरक्षा और कल्याण प्राप्त करता है, का पोषण करना राष्ट्र का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। राष्ट्र की सभ्यता एव विकास के द्वारा ही मानव सभ्यता के अस्तित्व के बारे मे सोचा जा सकता है ।"

राष्ट्रीयता सम्बन्धी उपर्युक्त विचारो के आधार पर कहा जाता है कि *लिस्ट ने अर्थशास्त्र के ऐतिहासिक एव वास्तविक अध्ययन पर बल दिया ।* वस्तुत. उन्होने अर्थशास्त्र (राजनीतिक अर्थव्यवस्था) एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को समानार्थी माना और कहा कि व्यक्ति के अर्थशास्त्र को राष्ट्र की राजनीति से अलग करना एक भारी भूल है । अत: व्यक्ति की स्वतत्रता एव निर्बाधावाद के विचार भ्रम मात्र है । उन्ही के शब्दो मे, 'निर्बाधावाद का सिद्धान्त डाकुओ, धोखेबाजो और चोरो को भी उतना ही प्रिय होता है जितना व्यापारियो को । राजनयिको का कर्तव्य यह नही है कि वे कुछ नही करे ।"[4]

लिस्ट के अनुसार राजनीतिक अर्थव्यवस्था एक सापेक्ष शब्द है न कि निरपेक्ष (जैसा कि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने मान लिया था) । यह एक ऐसा विज्ञान है जो किसी राष्ट्र के वास्तविक हितो एवं दशाओ के परिप्रेक्ष्य मे आर्थिक पूर्णता, जो सभ्य राष्ट्रो के संगठन एवं स्वतत्र विनिमय व्यवस्था के अन्तर्गत सम्भव एव उपयोगी हो, प्राप्त करने का मार्ग दर्शाता है । उन्ही के शब्दो, "राजनीतिक अर्थात् राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एक विज्ञान है जिसका उद्भव राष्ट्र के विचार एवं प्रकृति से होता है और जो शिक्षा देता है कि कोई राष्ट्र विश्व की वर्तमान मे दी हुई स्थिति मे और अपने राष्ट्रीय सम्बन्धो की विशेष दशा मे किस प्रकार अपनी आर्थिक स्थिति बनाये रख सकता है एवं सुधार कर सकता है ।" दूसरे शब्दो मे, लिस्ट ने बताया कि राजनीतिक अर्थव्यवस्था का जीवन–लक्ष्य राष्ट्र की आर्थिक शिक्षा जुटाना, और भावी विश्व बिरादरी मे उसका उपयुक्त स्थान तैयार करना एवं प्राप्त करना है ।

प्रो. जीड एवं रिस्ट के मतानुसार विश्व–नागरिकता के सिद्धान्त से एकदम विपरीत लिस्ट का राष्ट्रीयता का सिद्धान्त उनका एक मौलिक विचार था ।

2. आर्थिक विकास का सिद्धान्त (The Theory of Economic Evolution)-

फ्रेड्रिक लिस्ट ने अपने क्रमिक आर्थिक विकास के सिद्धान्त मे आर्थिक विकास की अधाकित 5 अवस्थाये बतायी–

---

4 "Laissez faire is a m[illegible]mum which sounds no less agreeable to robbers, che[illegible] and thieves than to the merchants It is not the function of the statesman to do nothing "

(1) **जंगली अवस्था (The savage stage)**- लिस्ट के अनुसार यह विकास की प्रारम्भिक अवस्था थी । लगभग सभी योरोपीय देश इसे पार कर चुके थे ।

(2) **चरागाह अवस्था (The pastoral stage)**- उनके अनुसार स्पेन एव पुर्तगाल की अर्थव्यवस्थाए उस समय विकास की इस अवस्था मे थी ।

(3) **कृषि अवस्था (The Agricultural Stage)**- उसके अनुसार जर्मनी और सयुक्त राज्य अमरीका की अर्थव्यवस्था उस समय इस अवस्था मे थी ।

(4) **कृषि-निर्माण अवस्था (The Agriculture- manufacturing stage)** लिस्ट के अनुसार फ्रास उस समय इस अवस्था को पार करने की तैयारी मे था।

(5) **कृषि-निर्माण-वाणिज्य अवस्था** - लिस्ट के अनुसार क्रमिक आर्थिक विकास की इस सर्वोच्च अवस्था मे इगलैण्ड था ।

लिस्ट ने बताया कि प्रत्येक राष्ट्र का अतिम लक्ष्य शीघ्रातिशीघ्र पाचवी एव अतिम अवस्था मे पहुचना है । अत प्रत्येक राष्ट्र को इस लक्ष्य की प्राप्ति मे अपनी सारी शक्तियाँ लगा देनी चाहिये । अत पाचो अवस्थाओ मे केवल यही अवस्था एक 'सामान्य (normal) अवस्था' कही जा सकती है । इस अवस्था की विशेषताओ का उल्लेख करते हुए उन्होने बताया कि इस अवस्था मे कोई राष्ट्र (i) विशाल जनसख्या का भार उठा सकता है, (ii) अपनी स्वतत्रता की रक्षा कर सकता है, (iii) शक्तिशाली जहाजी बेड़ा रख सकता है, (iv) अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ा सकता है, (v) विदेशी व्यापार मे वृद्धि के लिए अपने उपनिवेश बढ़ा सकता है और (vi) अपनी कलाओ एव विज्ञान का विकास कर सकता है ।

क्रमिक विकास के उल्लेख के क्रम मे लिस्ट ने बताया कि किसी भी राष्ट्र के आर्थिक जीवन मे विकास की प्रथम तीन अवस्थाओ मे कृषि की प्रधानता रहती है । इन अवस्थाओ मे निर्माण उद्योगो की स्थापना की सामर्थ्य, सामाजिक सहयोग की भावना और वैज्ञानिक एव तकनीकी परिवर्तन तथा अनुसधानो का अभाव पाया जाता है । उन्होने बताया कि 'मुक्त अतराष्ट्रीय व्यापार' की सस्था की मौजूदगी एव निर्बाधावाद की नीति के प्रचलन के कारण तीसरी अवस्था मे चल रही अर्थव्यवस्थाओ का चौथी एव पाचवी अवस्था मे गतिमान राष्ट्रो द्वारा आर्थिक शोषण किया जाने लगता है । अथवा वे उनके आर्थिक एव राजनैतिक साम्राज्यवाद के शिकजे मे जकड़ लिये जाते हैं । वे कहते हैं कि इस अवस्था मे किसी राष्ट्र के नागरिको की शक्तियो एव क्षमताओ का पूर्ण उपयोग एव प्राकृतिक ससाधनो तथा विकास सम्भावनाओ का समुचित विदोहन नही हो सकता । अत लिस्ट के अनुसार इस स्थिति मे सरक्षण एव उत्पादक आर्थिक क्रियाओ मे राज्य की सहभागिता की नीतिया उपयोगी सिद्ध होती हैं, जिन्हे अपनाकर कोई राष्ट्र अपने यहाँ नये-नये उद्योगो की स्थापना करने एव स्वदेशी शिशु उद्योगो को विदेशी प्रतिस्पर्धा से

बचाने मे सफल हो जाता है । इससे राष्ट्र के आर्थिक विकास को गति मिलती है । यही नही, जैसा कि उन्होने बताया, सरक्षण की नीति के अनुसरण से राष्ट्र मे नयी साहिसिक प्रतिभा का सृजन होने लगता है । फलत उसे शीघ्र ही आर्थिक साम्राज्यवाद से मुक्ति मिल जाती है और वह आर्थिक विकास की चतुर्थ अवस्था मे प्रवेश कर जाता है ।

लिस्ट के अनुसार क्रमिक आर्थिक विकास की अतिम अवस्था मे कृषि, उद्योग एव वाणिज्य मे घनिष्ट तामलेल एव सामजस्य स्थापित हो जाता है । जब कोई राष्ट्र विकास की चतुर्थ अवस्था प्राप्त कर लेता है तो वह समानता के आधार पर विदेशो से प्रतिस्पर्धा करने मे सक्षम हो जाता है । अत केवल इसी अवस्था मे विदेशी व्यापार को नियत्रण मुक्त किया जा सकता है । इस प्रकार लिस्ट ने बताया कि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो का वह निष्कर्ष दोषपूर्ण था जिसमे उन्होने मुक्त व्यापार को ही व्यापार का आदर्श रूप माना और उसे सब राष्ट्रो के लिए विकास की प्रत्येक अवस्था मे हितकर माना । लिस्ट के अनुसार उनकी गलती यह रही कि वे इग्लैण्ड की सीमाओ से बाहर नही झाक पाये और वहा की स्थिति को ही सार्वभौमिक मान बैठे ।

लिस्ट के अनुसार विश्व का प्रत्येक राष्ट्र विकास की पाचवी एव अतिम अवस्था मे नही पहुच सकता । उन्होने बताया कि इस अवस्था मे केवल वे ही राष्ट्र जा सकते है जिनको विशाल भू–भाग एव प्राकृतिक ससाधनो के अलावा शीतोष्ण जलवायु की अनुकूलता प्राप्त हो । इस आधार पर उनके मतानुसार भूमध्य रेखा पर पड़ने वाले अर्थात् उष्ण कटिबधीय एव शीतकटिबधीय राष्ट्र कभी विकास की पाचवी अवस्था मे नही पहुच पायेगे । यदि उन्होने निर्माण उद्योगो की अपने यहा स्थापना की कोशिश की तो वे घाटे मे जायेगे । वे अपने राष्ट्रीय धन एव सस्कृति मे अपने प्रायमिक उत्पादनो का शीतोष्ण कटिबधीय देशो के औद्योगिक माल से विनिमय करके ही वृद्धि कर सकते हैं । इससे यद्यपि वे पराश्रित रहेगे किन्तु इसका परित्याग उन्हे और अधिक नुकसानदायी होगा । अत लिस्ट ने सुझाव दिया कि ऐसे राष्ट्रो को केवल सगठित होकर अपने हितो की रक्षा मे जुटे रहना चाहिये । इसके अलावा उन्होने यह भी कहा कि शीतोष्ण कटिबन्धीय विकसित देश भी पारस्परिक प्रतिस्पर्धा के कारण छोटे एव कमजोर उष्णकटिबन्धीय राष्ट्रो का आर्थिक शोषण करने मे सफल नहीं हो पायेगे ।

अपने राष्ट्र जर्मनी के संदर्भ मे उन्होने बताया कि उसे विशाल भू–भाग सम्बन्धी अनुकूलता प्राप्त नही है अत उन्होने सुझाव दिया कि जर्मनी, हॉलैण्ड और डेन्मार्क का एकीकरण कर यह अनुकूलता हासिल कर लेनी चाहिये । इस हेतु उन्होने हॉलैण्ड एवं डेन्मार्क को सुझाव दिया कि उन्हे जर्मनी के साथ अपना विलय कर लेना चाहिये । एक अन्य प्रसंग मे लिस्ट ने जर्मनी, हॉलैण्ड बेल्जियम एव स्विटजरलैण्ड को सुझाव दिया कि उन्हे एक आर्थिक एवं

राजनैतिक इकाई बन जाना चाहिये। इसके अलावा उन्होने यह भी सुझाव दिया कि तृतीय अवस्था मे बहिर्गमन के लिए उसे मुक्त व्यापार के स्थान पर संरक्षणवाद का तत्काल अनुसरण एव प्रभावशाली क्रियान्वयन करना चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लिस्ट की अभिरुचि मुख्यत विकास की अतिम तीन अवस्थाओ मे रही। उन्होने बताया कि क्योकि इग्लैण्ड विकास की अतिम अवस्था मे पहुच चुका है अत जर्मनी सहित अन्य योरोपीय राष्ट्रो को भी शीघ्राशीघ्र इस अवस्था मे पहुचने का प्रयास करना चाहिये। इस हेतु लिस्ट ने युद्ध तक का समर्थन कर दिया और कह दिया कि यदि युद्ध के बाद देश कृषि अवस्था से निर्माण उद्योगो की अवस्था मे प्रवेश कर जाते है तो उन्हे युद्ध लड़ लेने चाहिये।

3 उत्पादन शक्ति का सिद्धान्त (The Theory of Productive Power)

प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के विनिमय मूल्य के सिद्धान्त की आलोचना कर लिस्ट ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। प्रो जीड एव रिस्ट के अनुसार यह सिद्धान्त उनके दो सिद्धान्तो मे से एक है जो प्रचलित सिद्धान्त से एकदम नये हैं।

ज्ञातव्य है कि, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने उपभोग वस्तुओ के विनिमय मूल्यो को ही राष्ट्र की वास्तविक सम्पत्ति मान कर उनमे वृद्धि का समर्थन किया था। किन्तु, फ्रेड्रिक लिस्ट ने उनके इस विचार को एक दुकानदार का सिद्धान्त बताया और कहा कि राष्ट्र की वास्तविक सम्पत्ति उसकी उत्पादक शक्तियाँ है अत उसे अपनी वर्तमान उत्पादन क्षमता से ही सतुष्ट न होकर अपनी उत्पादन शक्तियो के सृजन पर अधिकतम ध्यान देना चाहिये। उन्होने बताया कि वर्तमान मे किसी देश मे जो धन विद्यमान है वह तो निरतर उपभोग से खत्म हो जायेगा। अत यदि उसमे क्रमश वृद्धि के उपाय नही सोचे गये तो जिस प्रकार एक व्यक्ति निर्धन बन जाता है उसी प्रकार एक राष्ट्र दिवालिया हो जायेगा और विशेषरूप से, उन देशो, जो केवल अपनी आय पर आश्रित नही है, की स्थिति बदत्तर हो जायेगी।[5]

लिस्ट ने बताया कि धन (विनिमय मूल्यो का सृजन) की तुलना मे धन का कारण (उत्पादन शक्तियो का सृजन) अधिक महत्त्वपूर्ण है। उन्ही के शब्दो मे "धन उत्पन्न करने की शक्ति अनन्त धन की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। इससे न केवल जो कुछ प्राप्त कर रखा है, वह स्थायी एवं सुरक्षित रहता है और बढता है बल्कि जो कुछ कम हुआ है उसका प्रतिस्थापन भी होगा।" उन्होने बताया कि क्योकि धन का उपभोग कार्यों मे प्रयोग होता

5 "If thus be so with mere individuals, how much more is it true with nations which can not live upon their own income." List F

रहता है अत जब तक उसके उपभोग की तुलना मे उसमे वृद्धि की दर ऊंची नही होती, तब तक कोई राष्ट्र समृद्ध नही हो सकता। उन्होने दो पिताओ के उदाहरण द्वारा अपने सिद्धान्त की पुष्टि मे कहा कि, "दो पिताओ के 5–5 पुत्र है और दोनो ही एक–एक हजार डालर बचाते है। एक पिता अपनी बचत ब्याज पर उधार दे देता है और अपने बच्चो को कठिन परिश्रम द्वारा मेहनत–मजदूरी कर अपना पेट भरने की छूट दे देता है जबकि दूसरा पिता अपनी बचत अपने बच्चो की शिक्षा–प्रशिक्षा पर खर्च करता है, जिससे उसके दो बच्चे बुद्धिमान भू–स्वामी एव शेष तीन कोई अन्य उपयोगी व्यवसाय सीखने में सफल हो जाते है। मृत्यु के समय धन अथवा विनिमय मूल्य के सचय की दृष्टि से प्रथम पिता एव उत्पादन शक्तियो के सृजन की दृष्टि से दूसरा पिता श्रेष्ठ समझा जायेगा।" लिस्ट के अनुसार वास्तव मे दूसरा पिता ही श्रेष्ठ है। इसी आधार पर उन्होने सुझाव दिया कि प्रत्येक राष्ट्र को न केवल अपनी उत्पादन शक्तियो की रक्षा अपितु उनमे वृद्धि के प्रयास करने चाहिये। लिस्ट ने इस बात पर मुख्यत इसलिए बल दिया कि जो नीति भविष्य के लिए निर्धारित की जाती है वह उस नीति से भिन्न होती है जो केवल वर्तमान के लिए निर्धारित की जाती है। इसीलिए उन्होन बताया कि, "प्रत्येक राष्ट्र का अपनी सस्कृति, कार्यदक्षता एव सगठित उत्पादन शक्तियाँ प्राप्त करने के लिए अपनी भौतिक समृद्धि का कुछ न कुछ त्याग करना चाहिये, भावी लाभ प्राप्त करने के लिए वर्तमान लाभो का कुछ न कुछ त्याग अवश्य ही करना चाहिये।" उन्होने बताया कि शायद ही कोई कानून ऐसा हो जो उत्पादन शक्तियो को प्रभावित न करता हो और किसी राष्ट्र विशेष की ये शक्तियाँ बहुत कुछ सीमा तक उसकी सामाजिक एव राजनीतिक शक्तियो द्वारा निर्धारित होती है। उन्होने यह भी कहा कि भावी आर्थिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रो को अपने वर्तमान लाभो मे अस्थायी–तौर पर कुछ कटौती करनी चाहिये।

लिस्ट ने उल्लेख किया कि निम्नाकित दो प्रकार की शक्तिया देश की भावी उत्पादन शक्ति को प्रभावित एवं निर्धारित करती है–

(1) नैतिक एवं सामाजिक संस्थाओं का रक्षण (Preservation of moral and social institutions)- ये सस्थाये राष्ट्र की श्रमशक्ति का नैतिक स्तर ऊँचा करती है। लिस्ट ने इन संस्थाओ में अभिव्यक्ति, विवेक एवं प्रेस की स्वतन्त्रता, न्याय का प्रचार, जूरी द्वारा मुकदमे निपटाना, जनतत्रीय सरकार, प्रशासनिक नियंत्रण, ईसाई मत, मुद्रा का आविष्कार, डाक व्यवस्था, माप–तोल की विधियाँ, दासता उन्मूलन, निजी सम्पत्ति के सिद्धान्त का प्रयोग एव विकास, परिवहन संसाधन और उत्तराधिकार मे राज्याधिकार आदि सम्मिलित किये। उन्होने बताया कि किसी भी राष्ट्र की वर्तमान अवस्था उसकी भूतकालीन

पीढ़ियो के सचित श्रम एव उनके द्वारा किये गये आविष्कारो, अनुसधानो, पूर्णताओ तथा जो पीढ़िया बीत चुकी हैं उनके परिश्रम का परिणाम है । उन्होने इन सबको वर्तमान पीढ़ी की 'मानसिक पूँजी' बताया और कहा कि प्रत्येक राष्ट्र उसी अनुपात मे विकसित एव उत्पादक होता है जिसे अनुपात मे वह इस 'मानसिक पूँजी' का प्रयोग कर उसमे अपने तरीको से वृद्धि करने मे सफल हो जाता है ।

(2) कृषि की तुलना में निर्माण उद्योगों को प्राथमिकता (Preference for manufacturers to agriculture) - लिस्ट ने स्पष्टत उल्लेख किया कि एक कृषि प्रधान राष्ट्र के आर्थिक विकास मे अनेक बाधाये आती हैं क्योकि वहा मद बुद्धि, अकुशल श्रम, स्वतन्त्रता, समृद्धि एव सस्कृति का अभाव और रूढ़िवादी विचारो एव उत्पादन विधियो की प्रचुरता रहती है । इसके विपरीत विकसित निर्माण उद्योगो वाले राष्ट्र मे उसके सभी ससाधनो का अनुकूलतम विदोहन होना आरम्भ हो जाता है जिससे उसका आन्तरिक एव विदेशी व्यापार बढ़ जाता है और उत्पादन शक्तियो मे निरतर वृद्धि एव रक्षण की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लिस्ट ने उत्पादन शक्तियो के सिद्धान्त को आर्थिक विकास की विभिन्न अवस्थाओ एव आर्थिक प्रणाली के विभिन्न क्षेत्रो के परिप्रेक्ष्य मे देखा और बताया कि कृषि पर आश्रित राष्ट्र उस राष्ट्र से हीन है जिसमे कृषि एव उद्योग दोनो उन्नत हैं । उन्ही के शब्दो मे, ''जिस राष्ट्र के पास केवल कृषि है वह एक पूर्ण राष्ट्र (जिसमे कृषि के साथ-साथ उद्योग भी उन्नत अवस्था मे हो) के दसवे भाग के बराबर भी भौतिक सम्पत्ति प्राप्त नहीं कर सकता ।'' इसके विपरीत निर्माण उद्योगो मे किसी राष्ट्र की उत्पादक शक्तियो का सर्वोच्च विकास एव उत्पादन क्षमता अधिकतम होती है। उनके अनुसार ये उद्योग पूँजी एव श्रम का निर्माण करने वाली सामाजिक शक्ति हैं । उन्हीं के शब्दो में, "जिस अनुपात मे निर्माण उद्योगो की शक्ति बढ़ती है, राष्ट्र की भौतिक शक्तियाँ, आय, सुरक्षा के भौतिक एव मानसिक साधन और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की सुरक्षा भी उसी अनुपात मे बढ़ जाते हैं ।'' कला, विज्ञान एव सभ्यता के विकास के लिए भी उन्होने निर्माण उद्योगो को महत्त्वपूर्ण बताया ।

एक अन्य सदर्भ में लिस्ट ने बताया कि जो राष्ट्र केवल कृषि पर निर्भर है वह एक ऐसे व्यक्ति के समान है जिसके केवल एक हाथ है । ऐसे राष्ट्र की स्थिति बड़ी दु खद होगी क्योकि वहा मस्तिष्क की कुठा, शरीर की अपरूपता और प्राचीन रुढ़ियो एव उत्पादन पद्धतियों से चिपके रहने के दुराग्रह के साथ-साथ संस्कृति, समृद्धि एव स्वाधीनता का अभाव रहेगा । अत जिस राष्ट्र में उचित समय पर निर्माण उद्योग आरम्भ हो जाते हैं वहा कृषि एव

उद्योग दोनो की उत्पादक शक्तियो की परस्पर अनुकूल प्रतिक्रिया होगी और फलत वे एक दूसरे के ओर ज्यादा विकास मे सहायक बनेगे।

उत्पादन शक्तियो के विकास मे राज्य की भूमिका स्वीकार करते हुए लिस्ट ने बताया कि निर्बाधावाद की नीति दोषपूर्ण एव मिथ्या है और निर्माण उद्योगो के विकास के लिए राजकीय हस्तक्षेप आवश्यक है। उन्ही के शब्दो मे, "जिस राष्ट्र की अर्थव्यवस्था जितनी उन्नत होती है वहा हर क्षेत्र मे कानून बनाने वाली सत्ता और प्रशासन अर्थात् सरकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता भी उतनी ही अधिक होती है।" इस प्रकार उत्पादन शक्तियो के सिद्धान्त के जरिये उन्होने निर्माण उद्योगो की स्थापना की आवश्यकता तथा निर्बाधावाद के स्थान पर सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता पर बल दिया। इस सदर्भ मे राजनयिको की भूमिका का उल्लेख करते हुए उन्होने बताया कि, "राजनयिको का कर्त्तव्य यह नही है कि वे कुछ भी न करे। वे यह जानेगे और उनको यह जानकारी होनी चाहिये कि सम्पूर्ण राष्ट्र की उत्पादक शक्तियो को किस प्रकार बढ़ाया जाये और उनका सरक्षण किस प्रकार किया जाये।"

4. संरक्षण का सिद्धान्त (The Theory of Protection)-

आर्थिक चितन के इतिहास मे फ्रेड्रिक लिस्ट अपने जिस सिद्धान्त के लिए सुविख्यात है, वह उनका सरक्षण का सिद्धान्त अथवा सरक्षणवाद है। उनके मतानुसार विकास की निम्न अवस्था से उच्चतम अवस्था तक पहुचने का सबसे महत्त्वपूर्ण एव व्यावहारिक उपकरण सरक्षण की नीति ही है। उन्होने मुख्यत निर्माण उद्योगो मे निम्नाकित दो आधारो पर इस नीति का समर्थन किया–

(i) बिना सरक्षण के भी निर्माण उद्योगो का विकास तो होगा, किन्तु उसमे बहुत अधिक समय लग जायेगा और जर्मनी को विकास के लिए कम से कम एक शताब्दी का इन्तजार करना पड़ेगा। इतना लम्बा इन्तजार कोई बुद्धिमानी नहीं। अत नियोजित आधार पर निर्माण उद्योगो के विकास के लिए उन्होने सरक्षण की नीति का अनुमोदन किया।

(ii) जिस प्रकार एक बच्चा शक्तिशाली मनुष्य का प्रतिस्पर्धा मे स्थिरता से मुकाबला नही कर सकता और विजय की आशा नहीं रख सकता, ठीक उसी प्रकार अल्पविकसित एव छोटे देश विकसित–उद्योग प्रधान–पूँजीवाद देशो से प्रतिस्पर्धा नही कर सकते। अत. उन्हे कृत्रिम तरीको अर्थात् 'संरक्षण' की आवश्यकता होती है।

सरक्षण की नीति को परिभाषित करते हुए लिस्ट ने बताया कि, "वह मुख्य साधन जिसके द्वारा एक राष्ट्र निम्नतर अवस्था से उच्चतर अवस्था तक पहुँच सकता है, किसी न किसी रूप मे, सरक्षण है।" उनके अनुसार केवल कृत्रिम तरीके ही सरक्षण की नीति के अन्तर्गत आते हैं क्योकि केवल उनके

द्वारा ही पिछड़े राष्ट्र उन्नतिशील राष्ट्रो के साथ समानता के स्तर पर आ सकते है।

ज्ञातव्य है कि लिस्ट ने आर्थिक विकास की अतिम तीन अवस्थाओ को ही महत्त्वपूर्ण माना और बताया कि सरक्षण से अर्थव्यवस्था का 'कृषि अवस्था' से 'कृषि एव निर्माण अवस्था' और 'कृषि एव निर्माण अवस्था' से कृषि–निर्माण–वाणिज्य अवस्था मे रुपान्तरण होता है।

सरक्षण की नीति की विशेषतायें (Characteristics of the Policy of Protection)
लिस्ट के सरक्षणवाद की प्रमुख विशेषताये निम्नाकित है–

(i) साध्य नहीं बल्कि एक साधन (Means not an end) लिस्ट का सरक्षणवाद 'साध्य' नही बल्कि एक 'साधन' है। वे कहते है कि कृषि अवस्था के प्रारम्भ मे विकास के लिए विकसित राष्ट्रो के साथ मुक्त विदेशी व्यापार की नीति अपनायी जाती हैं। जब इस दिशा मे अपेक्षित सफलता मिल जाती है तो फिर सरक्षण की नीति अपना–कर स्वदेशी निर्माणी उद्योगो का विकास किया जाता है। इससे एक अर्थव्यवस्था का 'कृषि प्रधानता' से उद्योग प्रधान अर्थव्यवस्था मे रुपान्तरण हो जाता है। इस अवस्था मे कृषि एव उद्योग दोनो ही उन्नत होते है। जब सम्पत्ति एव उत्पादन शक्तियो की उच्चतम सीमा प्राप्त करली जाती है तो अर्थव्यवस्था का विकास की अतिम अवस्था मे रुपान्तरण हो जाता, जिसमे कृषि एव निर्माणी उद्योगो के साथ–साथ व्यापार एव वाणिज्य भी उन्नति के शिखर बिन्दु पर पहुच जाते है। लिस्ट के अनुसार अब सरक्षण की नीति की कोई आवश्यकता नही रहती अत वापस मुक्त व्यापार की नीति का अनुसरण किया जा सकता है। इस प्रकार उनके अनुसार आर्थिक प्रणाली का अतिम उद्देश्य तो मुक्त व्यापार की अवस्था मे पहुचना है, जिसे शीघ्र प्राप्त करने का पात्र बनने के लिए सरक्षण की नीति एक साधन के रूप मे आवश्यक है।

(ii) एक अस्थायी उपाय (A stop gap arrangement)- लिस्ट के अनुसार सरक्षण की नीति एक अस्थायी उपाय हैं अत जैसे ही इसकी आवश्यकता न रहे (जैसा कि अवश्यम्भावी है) इसे त्याग देना चाहियें। उन्होने बताया कि सरक्षणरूपी अफीम का प्रयोग लगातार एव लम्बे समय तक किया जाता रहा तो किसानो, उद्योगपतियो व व्यापारियो को आलस्य एव निष्क्रियता से बचाना कठिन हो जायेगा। अत अन्तत मुक्त व्यापार अपनाना अत्यावश्यक है। किन्तु, जैसा कि स्पष्ट हो चुका है, वे मुक्त व्यापार का समर्थन केवल समान आर्थिक शक्ति एव समृद्धि वाले देशो के बीच ही करते हैं। इनके बीच, होने वाले मुक्त व्यापार को लिस्ट ने 'प्राकृतिक व्यापार' कहा जिसकी अवस्था मे पहुचने के लिए सरक्षण सदृश्य कृत्रिम उपायो का प्रयोग आवश्यक है।

(iii) एक उत्पादक व्यय (A productive expenditure)- लिस्ट के अनुसार

सरक्षण की नीति राष्ट्रवासियो का उत्पादक व्यय है क्योकि, "यह वर्तमान लाभो का इस उद्देश्य से बलिदान है कि भविष्य मे लाभ हो सके। भविष्य मे वर्तमान के बलिदानो से कई गुणा लाभ मिलते है। इसलिए उन्हे सारे राष्ट्र की ओर से किया गया उत्पादक व्यय समझना चाहिये।"

(iv) निरपेक्ष नहीं, सापेक्ष (Relative, not absolute)- लिस्ट का सरक्षणवाद सापेक्ष है। देश एव काल की परिस्थितियो मे परिवर्तन के आधार पर इसमे परिवर्तन करने आवश्यक हैं। इस रूप मे सरक्षण की नीति कोई रामबाण औषधि नही है और न इसका कोई एक सर्वमान्य एव सर्व स्वीकृत रूप।[1]

(v) कोई सार्वभौमिक हल नहीं (Not a universal solution)- लिस्ट का सरक्षणवाद आर्थिक समस्याओ के समाधान का कोई ऐसा सार्वभौमिक हल नही है जिसे चाहे जो राष्ट्र चाहे जब लागू कर दे। उनका सरक्षणवाद तो एक ऐसी विधि है जिसे कोई राष्ट्र केवल विशेष परिस्थितियो मे ही लागू कर सकता है और वे परिस्थितिया है, उस देश का विकास की तृतीय अर्थात् कृषि प्रधान अवस्था मे होना।

(vi) संक्रमणकालीन व्यवस्था (a transitional policy)- लिस्ट का सरक्षणवाद एक सक्रमणकालीन एव अस्थायी व्यवस्था है जिसका प्रमुख उद्देश्य आयातो पर रोक लगाकर राष्ट्र के निर्माण उद्योगो को विदेशी से प्रसिर्धा करने मे सक्षम बनाना है। अत जैसे ही ये उद्योग सक्षम हो जाते हैं सरक्षणवाद अनुपयोगी बन जाता है।

(vii) चयनित न कि सामान्य (Selective not general)- लिस्ट सामान्य सरक्षण के समर्थक नही थे। उन्होने कहा कि एक तो उसी देश को सरक्षणवाद का अनुसरण करना चाहिये जो विकास की अतिम अवस्था मे जाने की इच्छा एव सामर्थ्य रखता हो तथा दूसरे, केवल उन्ही उद्योगो के सदर्भ में इसे लागू करना चाहिये जिन्हे विदेशी प्रतिस्पर्धा की आधी से बचाना है।

(viii) औद्योगिक शिक्षा का एक उपकरण (A tool of industrial education)- लिस्ट ने बताया कि सरक्षणवाद तभी न्यायोचित होता है जब उसका उद्देश्य राष्ट्र को औद्योगिक शिक्षा प्रदान करना हो। यह वह शिक्षा है, जिससे किसी देश का औद्योगिक विकास होता है। अत. इगलैण्ड सदृश्य देश जो पहले से ही औद्योगिक दृष्टि से उन्नत है, के लिए सरक्षणवाद महत्त्वहीन है। इसी प्रकार जहा औद्योगिक विकास (निर्माण उद्योग) की सम्भावनाए एवं अनुकूलताये नहीं है, वहा भी इस शिक्षा की आवश्यकता नहीं है।

(ix) एक सुरक्षा कवच(A protection armour)- लिस्ट के अनुसार सरक्षणवाद बड़े देशो की प्रतिस्पर्धा से बचने का एक सुरक्षा कवच है जिसे विकासमान अथवा अर्द्धविकससित देश धारण करते है।

संरक्षण की नीति की सीमायें (Limitations of the policy of protection)-लिस्ट ने अपने सरक्षणवाद की निम्नाकित सीमाये बतायी हैं—

(i) केवल तैयार माल के आयात पर ही सरक्षण की नीति लागू की जा सकती है, कच्चे माल के आयात पर नही।

(ii) छोटे राष्ट्र सरक्षण की नीति लागू नही कर सकते। लिस्ट ने बताया कि छोटे राष्ट्रो मे इस नीति के अनुसरण से आर्थिक एकाधिकारो का जन्म होने लगता है।[6] अत केवल बड़े एव औद्योगिक राष्ट्रो मे ही सरक्षण की नीति के लिए अनुकूल दशाये मिलती है।

(iii) इस नीति का अनुसरण केवल वे ही राष्ट्र कर सकते है जो आर्थिक विकास की अतिम अवस्था मे जाने से सक्षम हो।

(iv) जब विदेशी प्रतिस्पर्धा का कोई भय नही रहता अथवा उसका देश की उत्पादन व्यवस्था पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नही पड़ता तो सरक्षण की नीति अनुपयोगी हो जाती है। अपने इस रूप मे यह नीति स्वय दीर्घजीवी नही होती बल्कि इसके प्रभाव दीर्घजीवी होते है।

सुझाव (Suggestions) सरक्षणवाद के सफल एव प्रभावी क्रियान्वयन के लिए लिस्ट ने निम्नाकित सुझाव दिये है–

(i) यह नीति तभी लागू करनी चाहिये जब यह सिद्ध हो जाये कि विदेशी प्रतिस्पर्धा राष्ट्र की प्रगति एव औद्योगिक विकास मे बाधक बन रही है।

(ii) जिन राष्ट्रो मे निर्माण उद्योगो की स्थापना के लिए सम्भावनाये तो मौजूद है किन्तु विदेशी प्रतिस्पर्धा के कारण उन सम्भावनाओ (मानसिक एव भौतिक ससाधन) के विदोहन मे बाधाये आ रही हो तो उन्हे सरक्षण की नीति का अनुसरण करना चाहिये।

(iii) सरक्षण का उपाय केवल औद्योगिक विकास के लिए ही काम मे लाना चाहिये और इसे केवल तब तक ही न्यायोचित कहा जा सकता है जब तक उसे लागू करने वाले राष्ट्र की निर्माण शक्ति इतनी प्रबल न हो जाये कि उसे विदेशी प्रतिस्पर्धा का कोई भय न रहे।

(iv) किसी भी राष्ट्र को सरक्षण की कोई सामान्य नीति लागू नहीं करनी चाहिये बल्कि कुछ महत्त्वपूर्ण उद्योगो को ही सरक्षण दिया जाना चाहिये।

(v) सरक्षण से विदेशी प्रतिस्पर्धा एकदम समाप्त नहीं होनी चाहिये क्योकि ऐसा होने पर उसे लागू करने वाला देश शेष विश्व से अलग–थलग पड़ जायेगा।

(vi) जहा निर्माण–शक्ति के लिए आधारभूत दशाओं का अभाव हो वहा सरक्षण लागू नही करना चाहिये। उन्होने बताया कि जब कोई उद्योग प्रारम्भ

---

6. "A small state can never bring to complete perfection within its territory the various branches of production. In it all protection becomes private monopoly" List, F

मे 40–60 % के सरक्षण से भी स्थापित न हो पाये और उसके पश्चात 20–30 % सरक्षण द्वारा जीवित न रह सके तो समझना चाहिये कि वहा निर्माण–शक्ति के लिए आधारभूत दशाओ का अभाव है।

(vii) कृषि को कभी सरक्षण नही देना चाहिये क्योकि एक तो इसका विकास औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है तथा दूसरे , कृषि को सरक्षण देने से जब कृषिजन्य औद्योगिक माल की कीमते बढ़ जायेगी तो औद्योगिक विकास का मार्ग अवरुद्ध हो जायेगा। तीसरे, इससे खाद्यान्न की कीमते बढ़ जायेगी और देशवासियो के रहन–सहन की लागत ऊँची हो जायेगी इससे मजदूरियाँ बढ़ेगी जो औद्योगिक विकास के लिए घातक रहेगी। चौथे, निर्माण उद्योगो पर लगाये गये सरक्षण से ही कृषि का हित पूर्ण हो जायेगा और उसके उत्पादो की ऊँची माँग बनी रहेगी। पाँचवे, यदि कृषि पर सरक्षण लागू किया गया तो इससे प्रादेशिक श्रम–विभाजन का रूप बिगड जायेगा।

निष्कर्ष (Conclusion) उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि लिस्ट एक कट्टर सरक्षणवादी नही थे। प्रो एलेक्जेण्डर ग्रे के मतानुसार "वे न तो सरक्षणवादी है और न मुक्त व्यापार के समर्थक। ये दोनो नीतिया ही उनके अतिम लक्ष्य नही हैं बल्कि उनके लिये प्रत्येक नीति एक साधनमात्र है और परिस्थिति के अनुसार समुचित नीति का अनुसरण किया जाना चाहिये।" उनका सरक्षणवाद उदार, रचनात्मक एव सापेक्ष है। जैसा कि उन्होने स्वय लिखा है, "यदि मै एक अँग्रेज होता तो स्वतत्र व्यापार का समर्थक होता।"[7] इसी आधार पर उन्होने कहा कि 'जिस प्रकार एक वनपाल हवा के साथ उड़कर आये बीजो के उगने से पनपे घने जगल का इन्तजार नही करता और वृक्षारोपण द्वारा जगल बनाता है उसी प्रकार जर्मनी को स्वैच्छिक रूपान्तरण का इन्तजार न कर सरक्षण की नीति अपनानी चाहिए।'

फ्रेड्रिक लिस्ट का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Friedrich List)

फ्रेड्रिक लिस्ट, आर्थिक विचारो के इतिहास मे सरक्षण की जिस नीति के लिए विख्यात है, उसके तीन प्रमुख प्रवर्त्तक है– (i) प्राचीन वणिकवादी विचारक, (ii) फ्रेड्रिक लिस्ट और (iii) आधुनिक सरक्षणवादी विचारक। प्रो. जीड एव रिस्ट के अनुसार, लिस्ट को न तो वणिकवादियो का वशज और न आधुनिक सरक्षणवादियों का प्रेरक अथवा अग्रदूत ही कहा जा सकता है। अर्थात् उनका सरक्षणवाद शेष दो सम्प्रदायो के सरक्षणवाद से भिन्न है। यद्यपि, सैद्धान्तिक दृष्टि से, लिस्ट को काफी सफलता मिली किन्तु, व्यावहारिक दृष्टि से, उनके सरक्षणवाद पर न तो कभी जर्मनी और न योरोप

7 "If I had been an englishman I should have been a free trader" List F

का कोई अन्य देश ही चला । जब उनके सरक्षणवादी सिद्धान्त की आशानुकूल प्रशसा नही की गयी ओ उन्हे बड़ी मानसिक वेदना हुयी और निराश होकर उन्होने अपनी जीवन–लीला समाप्त करली । उनकी मृत्यु के पश्चात् जर्मनी एव अन्य योरोपीय देशो ने जो सरक्षणवाद अपनाया वह एक ओर बड़ा अस्पष्ट एव दूसरी ओर उनके विचारो से बहुत भिन्न था । अत वास्तव मे उसे लिस्ट के विचारो का प्रत्यक्ष प्रभाव नही कहा जा सकता । इसीलिए यह प्रश्न विचारणीय हो जाता है कि वास्तव मे, वे एक सरक्षणवादी थे अथवा नही ? निम्नाकित पक्तियो मे, अब हम, इसी प्रश्न पर विचार करेगे–

बाह्यरूप मे ऐसा लगता है कि फ्रेड्रिक लिस्ट एक कट्टर सरक्षणवादी थे। किन्तु, वास्तव मे ऐसा नही है । वे सरक्षण के अटल समर्थन नही थे । वास्तव मे, वे एक मध्यममार्गी थे अर्थात् 'वे न तो पूर्ण सरक्षणवादी थे और न मुक्त व्यापार के कट्टर समर्थक ।'[8] वे इन दोनो के ही प्रबल समर्थक थे किन्तु, उन्होने दोनो का देश एव काल की परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे समर्थन किया और कहा कि जो नीति जिस देश की तत्कालीन आवश्यकताओ के लिए अनुकूल हो, उसे वही नीति अपनानी चाहिये । इसीलिए उन्होने कहा कि, यदि मैं अग्रेज '(अर्थात् ब्रिटिश नागरिक) होता तो मुक्त व्यापार का समर्थक होता । क्योकि तत्कालीन दशाओ मे जहा जर्मनी के लिए सरक्षण की नीति लाभदायक थी वहा इगलैण्ड के लिए मुक्त व्यापार श्रेष्ठ था । उन्ही के शब्दो मे, ''इतिहास हमे बताता है कि किस प्रकार राष्ट्र अपने उद्देश्यो को पराजित किये बिना अपनी प्रगति के अनुसार अपनी प्रणालियो को बदल सकते है ।''

लिस्ट ने सरक्षण को सदैव एक अस्थायी, कृतिम, सक्रमणकालीन एव परिस्थितिजन्य आर्थिक आवश्यकता एव उपाय बताया। इसीलिए बहुत अधिक वैज्ञानिक न होने के बावजूद उनका सरक्षणवाद व्यावहारिक दृष्टि से काफी सराहनीय था । वे इसके दोषो से भी भलीभाति परिचित थे । इसीलिए उन्होने सुझाव दिया कि इस अफीम के नशे से जितना जल्दी छुटकारा मिल जाये, ले लेना चाहिये । उन्होने स्पस्ट शब्दो मे उल्लेख किया कि यह सामान्य आर्थिक नीति का एक भाग नही है अत इसे केवल वे ही देश अपनाये जिनके पास विकास की पाचवी एव अतिम अवस्था मे जाने की सम्भावनाए मौजूद हो। इस प्रकार उन्होने प्रत्येक राष्ट्र को संरक्षणवाद के सम्मोहनी जादू से प्रभावित करने का प्रयास नही किया बल्कि उल्टे सावधान कर दिया कि जो राष्ट्र इसकी जोखिम नही झेल पाये उन्हे अपनी मुक्त व्यापार की नीति मे कोई परिवर्तन नही करना चाहिये ।

उन्होने उस समय भी सरक्षण का समर्थन नही किया जब किसी देश के

8. "He was neither a uncompromising protectionist nor a dogmatic free trader"

शेष विश्व से अलग–अलग पड़ जाने की अशका हो । उन्होने सामान्य सरक्षण की अपेक्षा मूलत आवश्यकताओ पर आधारित एव चयनित (need based and selective) सरक्षण का ही समर्थन किया । वे सरक्षण की नीति का एक प्रति क्रियात्मक नीति के रूप मे नही बल्कि एक सकारात्मक आर्थिक नीति के रूप मे प्रयोग के पक्षपाती थे । वे एक आशावादी विचारक थे । वे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की भाति अवास्तविक मान्यताओ एव पूर्वाग्रहो से ग्रसित नही थे। इस प्रकार लिस्ट एक कट्टर सरक्षणवादी नही बल्कि एक उदार सरक्षणवादी थे । इस निष्कर्ष की पुष्टि, उनकी वणिकवादियो एव आधुनिक सरक्षणवादियो से तुलना कर, की जा सकती है ।

फ्रेड्रिक लिस्ट एव वणिकवादी (Friedrich List and the Mercantilists)

सरक्षण की नीति पर इन दोनो के विचारो के अन्तर को निम्नाकित तालिका की सहायता से समझाया जा सकता है–

लिस्ट का सरक्षणवाद	वणिकवादियो का सरक्षणवाद
(1) आर्थिक विकास की अतिम अवस्था मे पहुचने के लिए सरक्षणवाद अपनाना चाहिये ।	बहुमूल्य धातुए, यथा–स्वर्ण एव रजत कमाने के लिए सरक्षणवाद अपनाना चाहिये ।
(2) सरक्षणवाद तभी अपनाना चाहिये जब स्वदेशी शिशु उद्योगो पर विदेशी प्रतिस्पर्धा का बुरा प्रभाव पड़े।	सरक्षणवाद की नीति प्रत्येक स्थिति मे ठीक है यदि उससे व्यापार–शेष की अनुकूलता बढ़े ।
(3) यह एक अस्थायी एव सक्रमणकालीन नीति ही हो सकती है।	यह एक स्थायी आर्थिक नीति हो सकता है ।
(4) जैसे ही संरक्षणवाद की नीति के अनुसरण की आवश्यकता समाप्त हो जाये इसका परित्याग कर देना चाहिये ।	इसकी आवश्यकता कभी समाप्त नही हो सकती अत जब तक सम्भव हो सके, इसे जारी रखना चाहिये ।
(5) सरक्षण की नीति कुछ निश्चित शर्तो के पूरा होने पर ही लागू की जा सकती । उदाहरणार्थ–विशाल क्षेत्रफल, शीतोष्ण जलवायु आदि ।	वणिकवादियो के सरक्षणवाद मे ऐसी पूर्व शर्त नही थी ।

लिस्ट का सरक्षणवाद	वणिकवादियो का सरक्षणवाद
(6) कृषि को पृथक् छोड़कर केवल निर्माणी उद्योगो को ही सरक्षण दिया जाना चाहिये।	सरक्षण अर्थव्यवस्था की सभी उत्पादक क्रियाओ को दिया जाना चाहिये।

फ्रेड्रिक लिस्ट एव आधुनिक सरक्षणवादी (Friederich List and Modern Protectionists)

इन दोनो के बीच अन्तर को निम्नाकित तालिका की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है—

लिस्ट का सरक्षणवाद	आधुनिक सरक्षणवाद
(1) केवल राष्ट्र के प्रमुख निर्माणी उद्योगो को ही सरक्षणवाद के अधीन लाना चाहिये।	उद्योगो के साथ–साथ कृषि को भी सरक्षणवाद के अधीन लाना चाहिये।
(2) केवल विदेशी प्रतिस्पर्धा से स्वदेशी उद्योगो की रक्षा के लिए ही सरक्षणवाद का सहारा लेना चाहिये।	अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने की दृष्टि से सरक्षणवाद अपरिहार्य है।
(3) यह एक अस्थायी एव सक्रमणकालीन व्यवस्था है।	इसे स्थायी रूप से अपना लिया जाना चाहिये।
(4) केवल विकास की अतिम अवस्था मे जाने के लिए ही इसे अपनाना चाहिये।	इसे आर्थिक विकास की किसी भी अवस्था मे अपनाया जा सकता है।
(5) जैसे ही अर्थव्यवस्था अतिम अवस्था मे पहुच जाये, इसका परित्याग कर देना चाहिये।	इसके किसी भी अवस्था मे परित्याग की आवश्यकता नही है।
(6) केवल मुक्त व्यापार की नीति अपनाने मे सक्षमता हासिल करने के लिए ही सरक्षणवाद की नीति अपनानी चाहिये।	आर्थिक स्वायतता, आर्थिक आत्मनिर्भरता, उत्पादन एव रोजगार वृद्धि आदि के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए सरक्षणवाद की नीति अपनायी जानी चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि फ्रेड्रिक लिस्ट आधुनिक सरक्षणवाद के जनक नही है तथापि इसकी पृष्ठभूमि मे लिस्ट एव उनके विचारो की रचनात्मक भूमिका है। अत उनके प्रभाव की अनदेखी नही की जा सकती। वस्तुत वे पहले विचारक थे जिन्होने राजनैतिक एकता के साथ-साथ किसी राष्ट्र की आर्थिक एकता पर भी बल दिया और कहा कि आर्थिक एकता के बिना राजनैतिक एकता अधूरी है। इसी आधार पर उनकी राष्ट्र की व्याख्या भी मौलिक है। उन्होने बताया कि राष्ट्र केवल इतिहास द्वारा निर्मित नैतिक एव राजनीतिक समूह मात्र नही है बल्कि एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक समूह है और आर्थिक एकता से ही कोई राष्ट्र समृद्ध बन सकता है। इसीलिए उन्होने सरकारो एव राजनयिको को यह कार्य सौपा कि उन्हे राष्ट्र की राजनीतिक एव आर्थिक एकता की रक्षा कर उत्पादन शक्तियो के सृजन मे सहयोग करना चाहिये।

आर्थिक क्रियाओ मे राजकीय हस्तक्षेप की भूमिका जिसे मुख्यत तीसा की मदी के पश्चात् अत्यावश्यक माना जाने लगा, का उद्घोष लिस्ट ने बहुत पहले कर दिया था। वे कोई काल्पनिक स्वपनदर्शी नही थे। समकालीन समस्याओ मे उनकी गहरी रुचि रही। वे अतिम समय तक जोलवेरिन (Zollverein), जो प्रशा की एक कस्टम यूनियन थी और जो अन्तर्राज्यीय व्यापार पर लगे प्रतिबन्धो को समाप्त कर जर्मनी को एक आर्थिक इकाई का रूप देने और आयातो पर रोक लगाने का समर्थन कर रही थी, की गतिविधियो मे व्यस्त रहे। व्यस्तता एव सक्रियता की दृष्टि से तो वे मार्क्स से भी आगे थे। अमरीका एव जर्मनी मे उन्होने जो कुछ देखा, उन्होने वही लिखा। अत उनका चितन अनुभूत था और उनके विचार मौलिक थे।

लिस्ट ने अर्थशास्त्र की एव व्यावहारिक एव नवीन व्याख्या की और बताया कि अर्थशास्त्र का उद्देश्य राष्ट्र के आर्थिक विकास को पूर्ण करना है। वे स्वय एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री थे जिन्होने ऐतिहासिक तुलनाओ का प्रयोग किया। उन्होने प्रत्येक आर्थिक नीति को एक 'साधन' माना न कि 'साध्य'। वे प्रतिभा के धनी थे। उनकी विद्वता एव प्रतिभा के कारण ही जर्मन राष्ट्रवादी आदोलन का मानवीकरण हो सका। इसीलिए उन्हे जर्मनी के राष्ट्रीय आर्थिक विकास का सर्वोच्च प्रतिनिधि एवं जर्मन राष्ट्रवाद का एक प्रतिरूप कहा जाता है।

उत्पादन शक्तियो के सृजन पर बल देने वाले वे प्रथम अर्थशास्त्री थे। राष्ट्र के एक सदस्य के रूप मे व्यक्ति के आर्थिक व्यवहार की चर्चा कर लिस्ट ने समष्टि अर्थशास्त्र की पृष्ठभूमि तैयार करदी जिस पर सन् 1936 के पश्चात् जे एम कीन्स एव अन्य अर्थशास्त्रियो ने समष्टि आर्थिक विश्लेषण का एक अति विशाल प्रासाद खड़ा कर दिया। उन्होंने सम्पूर्ण राष्ट्र को एक आर्थिक

संस्था माना । उनका यह विचार राष्ट्रीय आय के माप की सामाजिक लेखाकन विधि मे बहुत उपयोगी है । कई मायनो मे उनके विचार एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो से अच्छे थे । उदाहरणार्थ, एडम स्मिथ ने श्रम को उत्पादक माना और कहा कि इसमे वृद्धि से राष्ट्र का धन बढ़ता है जबकि लिस्ट ने बताया कि ऐसे उदाहरणो की कमी नही है जब श्रम की प्रचुरता के बावजूद राष्ट्र निर्बल, निर्धन एव अविकसित रहा है । ऐसे राष्ट्र मे उत्पादन शक्तियो का अभाव पाया जाता है ।

किन्तु इतना सब कुछ होने के बावजूद उनकी गणना असफल विचारको एव लेखको मे की जाती रही है । उनकी प्रमुख विफलताये निम्नाकित है–

(1) प्रो जीड एव रिस्ट के मतानुसार लिस्ट प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के *अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के निरपेक्ष एव सार्वभौमिक सिद्धान्तो को न तो* समाप्त कर पाये और न उसके किसी सही विकल्प का सुझाव ही दे पाये।

(2) उनका **आर्थिक विकास का सिद्धान्त मौलिक नहीं** है । उन तीन अतिम अवस्थाओ, जिन्हे उन्होने अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बताया है का विवेचन उनसे बहुत वर्ष पूर्व ही एडम स्मिथ कर चुके थे ।

(3) लिस्ट का यह **निष्कर्ष सही नहीं है कि प्रत्येक उद्योग-प्रधान राष्ट्र आर्थिक विकास की क्रमश चार अवस्थाए पार कर पाचवीं एव अंतिम अवस्था में पहुचता है ।**आलोचको के अनुसार आधुनिक जापान तीसरी अवस्था के पश्चात् सीधा ही पॉंचवी अवस्था मे चला गया । •

(4) लिस्ट ने **उष्णकटिबन्धीय (Tropical Zone) देशों के हितों की अनेदेखी की ।** आलोचको के अनुसार उनका यह निष्कर्ष दोषपूर्ण है कि आर्थिक विकास की अतिम अवस्था मे केवल बड़े, उद्योग प्रधान एव प्रचुर ससाधनो वाले शीतोष्ण कटिबन्धीय (Temperate Zone) राष्ट्र *ही* पहुँच सकते है अथवा छोटे एव कृषि प्रधान देश अपने विकास की अतिम अवस्था मे नही पहुँच पाते । वैज्ञानिक खोजो एव तकनीकी आविष्कारो ने आर्थिक विकास मे बाधक घटको पर विजय प्राप्त करली है । अत अब सभी देश आर्थिक विकास की अतिम अवस्था जिसमे कृषि, उद्योग एव *वाणिज्य तीनो सम्मुन्नत होते है,* मे पहुच सकते है ।

(5) लिस्ट **साम्राज्यवाद एव उपनिवेशवाद के पुजारी थे ।** उन्होने आर्थिक विकास की अतिम अवस्था मे पहुँचने वाले राष्ट्र द्वारा आर्थिक साम्राज्य की सीमाये बढ़ाने का खुला समर्थन किया । वस्तुत आधुनिक विश्व मे इस नीति का सब एक स्वर से विरोध करते है और इसे उतना ही घातक एव अपमानजनक मानते है जितना राजनैतिक साम्राज्यवाद ।

(6) आलोचको के अनुसार, लिस्ट ने **प्रतिष्ठित सिद्धान्तवादियों को समझने में भूल** की । वास्तव मे, एडम स्मिथ भी नैतिक मूल्यो के समर्थक एव उनकी रक्षा के पुजारी थे । आर्थिक प्रगति के लिए उन्होने भी जनतात्रिक शासन व्यवस्था, न्याय एव बाह्य आक्रमण से रक्षा को आवश्यक माना था ।

(7) लिस्ट के **विचारों में पारस्परिक विरोधाभास** है । यदि एक ओर वे विकास की अतिम अवस्था मे पहुचने के लिए युद्ध का भी समर्थन कर देते है तो दूसरी ओर वे विश्व–शाति के अग्रदूत नजर आते है । एक स्थान पर उन्होने लिखा है कि ''जर्मनी को जर्मनी और रूस को रूस की चिन्ता छोड देनी चाहिये । आशा और प्रतीक्षा करते रहने अथवा स्वतत्र व्यापार का कोई मसीहा पैदा होगा की आशा लगाये रखने की अपेक्षा विश्व बधुत्व की भावना को आग मे झोक देना चाहिये ।''

(8) लिस्ट का **विनिमय मूल्यों एवं उत्पादन शक्तियों का अतर वैज्ञानिक नहीं है ।** आलोचको के अनुसार इन दोनो मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है क्योकि उत्पादन शक्तियो के अभाव मे विनिमय मूल्यो की कोई म०त्ता नही है ।

(9) लिस्ट का यह **मानना भी गलत एवं भ्रामक है कि छोटे राष्ट्रों के लिए सरक्षण की नीति हानिकारक** है क्योकि वहा एकाधिकारो की स्थापना का भय उत्पन्न हो जाता है । लिस्ट के इस खतरे की अनदेखी कर वर्तमान विश्व के बहुत से छोटे देशो ने सरक्षण के सहारे अपना आर्थिक विकास कर लिया है ।

(10) लिस्ट अपने **उद्देश्य में सफल नहीं** हुए । वे स्वय अपनी आँखो जर्मनी मे सरक्षणवाद की क्रियाशीलता नही देख पाये । वे इससे बहुत निराश हुए और उन्होने स्वय को विफल स्वीकार कर लिया ।

(11) आलोचको के मतानुसार लिस्ट के **विचारों की ऐतिहासिक पुष्टि नहीं** हुई है। उनका यह निष्कर्ष गलत निकला कि विकसित देशो की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा ही उन्हे छोटे, कमजोर एव कृषि प्रधान राष्ट्रो के आर्थिक शोषण से रोक देगी । इसके अलावा लिस्ट के अनुसार तो आज विकसित–उद्योग प्रधान–पूजीवाद देशो को सरक्षण की नीति का परित्याग कर मुक्त व्यापार की नीति का अनुसरण कर लेना चाहिये था, जबकि अमरीका जैसे देश आज भी सरक्षण रूपी बैसाखियो के सहारे अपने विकास को मजबूती प्रदान करने के प्रयास मे जुटे हुए है । और तो और, स्वय उनके देश मे जहां उन्होने जर्मन सरक्षणवाद का मानवीकरण किया वहा भी उनके कहे अनुसार सरक्षण की नीति का अनुसरण नही किया गया ।

(12) आलोचको के अनुसार लिस्ट की **सरक्षण की व्याख्या अधूरी एवं अस्पष्ट है ।** उन्होने केवल आयात प्रशुल्को को ही सरक्षण की नीति मान लिया

जबकि आधुनिक सरक्षणवाद का आशय इससे व ही व्यापक है ।

(13) अन्त मे, **एक विचारक एवं लेखक के रूप में लिस्ट विफल रहे** । उनकी भाषा–शैली एक मौलिक विचारक एव अर्थशास्त्री जैसी नही बल्कि एक उग्र पत्रकार जैसी है । उनकी व्याख्या मे तर्कों एव समन्वय का अभाव है।

आर्थिक विचारों के इतिहास में फ्रेड्रिक लिस्ट का स्थान

(Place of Fre. List in the History of Economic Thought)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे फ्रेड्रिक लिस्ट सदैव एक जर्मन अर्थशास्त्री, एक कट्टर राष्ट्रवादी, एक राष्ट्रीय अर्थशास्त्री, एक ऐसा अर्थशास्त्री जो कही पर भी अवास्तविक एव काल्पनिक नही, अपने निष्कर्षों की पुष्टि मे ऐतिहासिक समको का एक प्रभावी प्रयोगकर्त्ता, जर्मनी के राष्ट्रीय आर्थिक विकास का सर्वोच्च प्रतिनिधि एव जर्मनी राष्ट्रवाद एव सरक्षणवाद के मूर्तिमान के रूप मे जाने जाते रहेंगे । आर्थिक साहित्य मे, स्वावलम्बन एव आर्थिक आत्मनिर्भरता और गत्यात्मक (dynamism) की अवधारणाओ का स्रोत लिस्ट के विचार है । जीड एव रिस्ट के अनुसार, कम से कम उनके दो विचार– राष्ट्रवाद एव उत्पादक शक्तियो का सिद्धान्त–मौलिक थे, जिनके कारण उनका नाम अमर रहेगा । उन्होने अर्थशास्त्र एव राजनयिको की भूमिका की परम्परा से हटकर अलग व्याख्या की जिसके लिए वे सम्मान के पात्र बने । उत्पादन शक्तियो के सृजन पर बल देने वाले वे प्रथम अर्थशास्त्री थे। राष्ट्र के एक सदस्य के रूप मे व्यक्ति के आर्थिक व्यवहार के अध्ययन की चर्चा कर उन्होने समष्टि अर्थशास्त्र की पृष्ठभूमि तैयार कर दी । उन्होने अपने बाद के सभी अर्थशास्त्रियो एव सम्प्रदायो के विचारो को प्रभावित किया है । जब भी और जिस किसी भी रूप मे सरक्षणवाद का नाम आयेगा, लिस्ट को याद किया जायेगा । ''उनके भेष मे हमेशा एक जनोत्तेजक, उदार, सामाजिक एव राजनैतिक सुधारक और 18वी सदी का व्यापारवादी एव प्रचारक था ।[9] वास्तव मे उन्होने केवल महत्त्वपूर्ण सत्यो पर ही प्रकाश नही डाला बल्कि सार्वजनिक जीवन मे रुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित किया । उनकी प्रशसा करते हुए श्मोलर ने कहा कि ''उनके बाद राजनीतिक अर्थव्यवस्था मे जो भी प्रगति हुई है, वह वास्तव मे इसी कारण हुई है कि लिस्ट ने उसे समाजशास्त्रीय तथा सामाजार्थिक–राजनीतिक आधार प्रदान कर दिया था ।'' सबसे पहले उन्होने ही राष्ट्र को एक आर्थिक इकाई बताया और उसकी रचना मे जुट गये । प्रो जीड और रिस्ट के मतानुसार, 'वे उन सबके

9 There was always an admixture of demagogue, liberal, social and political reformer, and eighteenth-century mercantilist and propagandist in his make up" Bell J

अग्रगामी है जिन्होने विभिन्न देशो एव कालो मे भविष्य को निश्चित एव समृद्ध करने का प्रयास किया, जो एक ऐसा कार्य है जिसे केवल विज्ञान पूर्ण नही कर सकता और राजनीति उसकी अनदेखी नही कर सकती।'' आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान निर्धारित करने की दृष्टि से प्रो एरिक रोल का यह कथन भी उल्लेखनीय है कि, ''लिस्ट का सामाजिक एव राजनीतिक महत्त्व एडम स्मिथ एव रिकार्डो के समान ही था। उनकी भाति लिस्ट भी अनिवार्यत औद्योगिक पूँजीवाद के नेता थे।'' यद्यपि, आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनकी गणना सदैव एक निराश एवं हताश (desperate & despondent) अर्थशास्त्री के रूप मे की जायेगी तथापि, जैसा कि शुम्पीटर ने कहा, 'वे ऐतिहासिक सम्प्रदाय के अग्रगामी थे।' इसके अलावा जे. एफ बेल ने उन्हे 'अमरीकी सरक्षणवाद का पिता' और ऐरिक रोल ने 'राष्ट्रवाद का देवदूत' बताया है। अत. लिस्ट का नाम सदैव श्रद्धा के साथ लिया जाता रहेगा।

प्रश्न

1. फ्रेड्रिक लिस्ट के आर्थिक विचारों एवं सिद्धान्तों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।
2. 'जर्मन राष्ट्रवाद के एक मूर्तिमान' के रूप में फ्रेड्रिक लिस्ट का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।
3. लिस्ट के संरक्षणवाद पर एक आलोचनात्मक निबन्ध लिखिये।
4. राष्ट्रवादी आलोचक कौन थे ? उनमें फ्रेड्रिक लिस्ट का स्थान निर्धारित कीजिये।
5. आर्थिक चिंतन को लिस्ट के योगदान की चर्चा कर आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान निर्धारित कीजिये।

10

आष्ट्रियन सम्प्रदाय : मेंजर, वीजर और बाम बावर्क

(The Austrian School : Menjer, Wieser & Bohm Bawerk)

"वस्तुओं का मूल्य वस्तुओं में निहित नहीं है बल्कि यह हमारी जरूरतों के साथ उनके सम्बन्ध से उत्पन्न होता है। इस सम्बन्ध में परिवर्तन से इसका उदय या लोप होता है।"[1]

-मेंजर।

परिचय : विषयगतवाद एवं सीमांतवाद
(Introduction : Subjectivism and Marginalism)

प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आर्थिक चिंतन की आलोचना मे जिन सम्प्रदायो का उद्भव एव विकास हुआ उनमे एक अति महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय विषयगतवाद सम्प्रदाय (subjective school) है। इसे विषयगतवादी, सीमातवादी अथवा आत्मवादी सम्प्रदाय भी कहते है। अन्य आलोचक सम्प्रदायो से भिन्न इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण एव भिन्नकारी विशेषता यह है कि जहा अन्य सभी सम्प्रदायो ने बाह्य अर्थात् वस्तुगत (objective) घटको के आधार पर प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के विचारो की आलोचना की वहा इस सम्प्रदाय ने आतरिक अर्थात् विषयगत, व्यक्तिपरक अथवा ज्ञानसापेक्ष घटको के आधार पर उनकी आलोचना की।

ज्ञातव्य है कि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने मूल्य का 'श्रम–लागत' अथवा उत्पादन–लागत सिद्धान्त प्रतिपादित कर वस्तुओ की कीमतो के निर्धारण मे केवल बाह्य एव भौतिक घटको की महत्ता स्वीकार की और आतरिक अर्थात् विषयगत घटको की पूर्णतः अनदेखी की। इससे उनका मूल्य सिद्धान्त अधूरा एव एकपक्षीय रह गया जिसकी प्रतिक्रिया एव आलोचना स्वाभाविक थी। जिस सम्प्रदाय ने यह कार्य किया उसे आर्थिक विचारो के इतिहास मे

---

1 "The value of goods arises from their relationship to our needs, and is not inherent in the goods themselves. With changes in this relationship value arises and disappears." Menger K.

विषयगत सम्प्रदाय एव उनकी विचारधारा को विषयगतवाद के नाम से जाना जाता है । इस साम्प्रदायवादियो ने कीमत–निर्धारण मे आतरिक, मनोवैज्ञानिक एव व्यक्तिपरक घटको की महत्ता स्वीकार की और वस्तुओ की उत्पादन लागत के स्थान पर उनसे प्राप्त होने वाली सीमात उपयोगिता को मूल्य–निर्धारण का आधार बताया । इसीलिए उनकी विचारधारा को 'सीमातवाद' के नाम से भी जाना जाता है । प्रो हैने के शब्दो मे, "विषयगत सम्प्रदाय मे मनुष्य को महत्ता दी गयी है इसमे इस बात पर भी बल दिया गया है कि आर्थिक मूल्यो का निर्धारण मानवीय आवश्यकताएं करती हैं ।"

विषयगतवाद की प्रकृति
(Nature of Subjectivism)

विषयगतवाद की प्रकृति समझने के लिए वस्तुवाद (objectivism) से इसका अन्तर जानना आवश्यक है । वस्तुवाद आर्थिक विश्लेषण मे मुख्यत सामाजिक एव परिवेश सम्बन्धी वस्तुगत घटकों को मान्यता देता है । ये घटक 'व्यक्ति की वैयक्तिकता' (individuality of man) से परे है । इसके विपरीत विषयगतवाद मनुष्य एव उसके मनोविज्ञान से सम्बद्ध रहने के कारण व्यक्ति की वैयक्तिकता पर आधारित है, जिसमे उसकी आवश्यकताए, पसदगिया, व्यक्तित्व एव इच्छाशक्ति आदि उल्लेखनीय है । इसके अनुसार मानवीय आवश्यकताए ही मानव जीवन की आधारभूत नैमित्तिक शक्ति (casual force) है । विषयगतवादियो के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति सुख प्राप्ति के लिए कार्यरत है । अत विनिमय की क्रिया से उपभोक्ताओ को मिलने वाली उपयोगिता को मापना अर्थशास्त्रियो का प्राथमिक कार्य है । उन्होने यह भी बताया कि इस क्रिया मे असतुष्टि, असतोष अथवा कष्ट की अनुभूति भी होती है । अत वे इन सबका माप भी करते है । इसी आधार पर कुछ सुखवादी (hedonist c) विचारक अर्थशास्त्र को कष्ट एव आनन्द का कलन (Calculus of pain and pleasure) भी कहते है ।

विषयगतवाद की प्रमुख विशेषताएं
(Main characteristics of Subjectivism)

विषयगवाद की प्रमुख विशेषताएं निम्नाकित है–

(i) मूल्य निर्धारण मे वस्तु के आतरिक गुणो (उत्पादन मे लगे साधनो की लागत) की अपेक्षा मानवीय भावनाए अधिक महत्त्वपूर्ण है । दूसरे शब्दो मे, आर्थिक मूल्यो के निर्धारण मे उपभोक्ताओ से सम्बन्धित घटक, जिनमे सीमात उपयोगिता अग्रणी है, अधिक महत्त्वपूर्ण है । अर्थात् यद्यपि किसी वस्तु के उत्पादन मे लागत लगती है तथापि उसकी उपयोगिता ही उसके मूल्य की निर्धारक है और किसी वस्तु का अधिकतम मूल्य उसकी सीमात उपयोगिता के बराबर हो सकता है।

(ii) आर्थिक प्रगति एव जीवन पर मानवीय आवश्यकताओ का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है ।
(iii) मानवीय आवश्यकताओ एव उनकी पूर्ति की वस्तुओ के मध्य अन्तत सम्बन्ध का निर्धारण मुख्यत उपयोगिता की अवधारणा से ही होता है ।
(iv) किसी वस्तु की कीमत उस वस्तु के प्रति उपभोक्ता अथवा क्रेता की मानसिक भावनाए प्रतिबिम्बित करती है ।
(v) व्यावहारिक दृष्टि से विषयगत सम्प्रदायवादी आनन्दजीवी अथवा सुखवादी है । उनके अनुसार मानवीय आर्थिक व्यवहार का उद्देश्य सतुष्टि अधिकतमीकरण (satisfaction maximization) है । अत इन्होने वस्तुओ से प्राप्त सतुष्टि एव उपयोगिता को मापने का प्रयास किया ।
(vi) ये सम्प्रदायवादी वस्तुओ की उत्पादन लागत को दु ख अथवा असतुष्टि की समस्या और उपयोगिता को सुख अथवा सतुष्टि मानते है ।
(vii) विषयगतवाद व्यक्तिवाद का समर्थक है । इसके अनुसार व्यक्ति ही आर्थिक विश्लेषण का केन्द्र बिन्दु है । अत इसने वैयक्तिक उपभोक्ता के व्यवहार सम्बन्धी जिन प्रमुख सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया उनका केन्द्र बिन्दु मनुष्य है । इस दृष्टि से इसका विवेचन अत्यावश्यक रूप से सूक्ष्म अर्थशास्त्रीय विवेचन है ।

विषयगतवाद के उद्भव एवं विकास में सहायक घटक
(Factors Affecting Origin and Growth of subjectivism)

विषयगतवाद का उद्भव एव विकास वस्तुवादी प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विरुद्ध एक तीव्र प्रतिक्रिया थी । सक्षेप मे, इसके उद्भव एव विकास मे भागीदार घटको मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) प्रतिष्ठित आर्थिक विचारधारा का पतन (Downfall of Classical Thought)- समाजवादी, ऐतिहासिक एव राष्ट्रवादी सम्प्रदायो द्वारा की गयी एव की जा रही आलोचनाओ के कारण प्रतिष्ठित आर्थिक विचारधारा धराशायी होती जा रही थी और उसके विश्ववाद, निरपेक्षवाद, प्रकृतिवाद और वस्तुवाद के विकल्प ढूढे जा रहे थे । ऐसी स्थिति मे, अर्थशास्त्रियो के एक वर्ग ने वस्तुगत तत्त्वो के स्थान पर विषयगत अथवा मनोवैज्ञानिक घटको के आधार पर उपभोक्ता के आर्थिक व्यवहार का अध्ययन करना आरम्भ कर दिया जिसके फलस्वरूप विषयगत सम्प्रदाय का उद्भव एव विकास हुआ । इस सम्प्रदाय ने मुख्यत- उनके उत्पादन लागत सिद्धान्त, माग और पूर्ति सिद्धान्त और वितरण सिद्धान्त को दोषपूर्ण बताया ।

(2) समाजवादी, ऐतिहासिक एवं राष्ट्रवादी विचारधाराओं का प्रभाव (Impact of Socialist, Historical and Nationalist schools of Thought)- समाजवादियो, इतिहासवादियो एव राष्ट्रवादियो ने प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो

पर अतिवादी दृष्टिकोण अपनाकर करारी चोट की, जिसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक थी, जो विषयगतवाद के विकास के रुप मे प्रकट हुयी। उदाहरण के लिए, कार्ल मार्क्स ने प्रतिष्ठित मूल्य सिद्धान्त की जो आलोचना की उससे कीमत–निर्धारण के क्षेत्र में गहन चिंतन आरम्भ हो गया। इससे कीमत–निर्धारण के माग पक्ष की ओर सीमात उपयोगिता की अवधारणा का जन्म एव विकास हो गया जो विषयगतवाद का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विश्लेषणात्मक उपकरण है। इसी प्रकार ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो ने निगमन प्रणाली पर प्रहार कर ऐतिहासिक आगमन प्रणाली के प्रयोग पर बल दिया किन्तु, इसकी भी प्रतिक्रिया हुई और विषयगतवादियो ने अर्थशास्त्र के यथार्थ विज्ञानरूपी स्वरूप को ही स्वीकार कर पुन निगमन प्रणाली का समर्थन कर दिया। अन्त मे, राष्ट्रवादियो ने व्यक्ति के स्थान पर राष्ट्र को महत्ता दे दी किन्तु, आलोचको ने इसे वैयक्तिक स्वतन्त्रता मे हस्तक्षेप मानकर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की और कहा कि आर्थिक विश्लेषण का केन्द्र बिन्दु व्यक्ति ही है।

(3) पूर्ववर्ती एवं समकालीन विचारक (Predecessors and contemporary thinkers) अनेक पूर्ववर्ती एव समकालीन विचारको एव लेखको द्वारा जैसे–जैसे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण निखरता गया विषयगतवाद का विकास होता गया। कोण्डिलैक ने 17वी सदी मे बताया कि किसी वस्तु का मूल्य उसकी दुर्लभता के साथ बढ़ता है। व्हीटले ने सर्वप्रथम मूल्य निर्धारण मे विषयगत तत्त्वो की महत्ता स्वीकार की और कहा कि 'मोती इसलिए महगे नही हैं कि इन्हे पाने के लिए लोग गहरी डुबकी लगाते है किन्तु, व्यक्ति उनके लिए गहरी डुबकी इसलिए लगाते है, क्योकि वे महगे है।' वालरास ने अल्पता (rarity) को मूल्य का कारण माना और लायड ने कहा कि 'जब खाद्यान्न की पूर्ति सीमित है तो व्यक्ति उस पर अधिक एव विलोमश कम खर्च करेगा।' इससे विषयगतवाद की पृष्ठभूमि तैयार होती गयी।

(4) मनोभौतिकी का विकास (Development of Psycho- Physics)- 19वी सदी के मध्य मे ख्यातिप्राप्त मनोवैज्ञानिक ई एच वेबर ने 'मनोवैज्ञानिक विश्लेषण– मानसिक अनुभूति की तीव्रता एव अवधि' को उद्घाटित किया। सन् 1860 मे मानसिक भावनाओ के सम्बन्ध मे वेबर द्वारा प्रस्तुत तथ्यो के आधार पर फेक्नर ने इनकी विस्तृत व्याख्या की, जिसे वेबर अथवा फेक्नर के मनोविज्ञान सम्बन्धी नियम कहा जाता है। इन नियमो के अनुसार यदि समान मात्रा मे उत्तरोत्तर प्रोत्साहन दिया जाये तो अनुभूति की तीव्रता का ह्रास होता है। इन विचारो से सीमात उपयोगिता ह्रास नियम को एक मजबूत आधार एव विषयगतवाद के विकास को एक उपयोगी दिशा–निर्देश मिल गया।

विषयगतवाद की प्रमुख शाखाएं
(Main Branches of Subjectivism)

गोसेन तथा जेवन्स विषयगतवाद अथवा सीमांतवाद के जनक थे। इनकी विचारधारा को आधार मानकर विषयगतवाद की जिन प्रमुख शाखाओ का विकास हुआ उनमे निम्नांकित तीन अग्रणी है–

1. **गणितीय सम्प्रदाय (The Mathematical School)**- इस सम्प्रदाय मे वालरास, इरविंग फिशर, कूर्नो, गस्टव कैसेल, पैरेटो आदि उल्लेखनीय है। इन्होने आर्थिक घटकों को संख्यात्मक रूप देकर गणित की सहायता से अपने विचार प्रस्तुत किये, इसीलिए इन्हे सामूहिक रूप से गणितीय सम्प्रदाय का नाम दिया गया है।
2. **लाउसाने सम्प्रदाय (The Lousanne School)**- इस सम्प्रदाय मे वालरास और पैरेटो उल्लेखनीय है। ये दोनो ही लाउसाने विश्वविद्यालय मे क्रमश प्राध्यापक रहे। वालरास 'सामान्य साम्य विश्लेषण' और पेरेटो उदासीनता वक्रो की सहायता से मानवीय आर्थिक व्यवहार की व्याख्या के लिए सुविख्यात है।
3. **आष्ट्रियन सम्प्रदाय (The Austrian School)**- इसे अगणितीय, सीमांतवादी अथवा मनोवैज्ञानिक सम्प्रदाय भी कहा जाता है। इस सम्प्रदाय के तीनो ही प्रमुख विचारक–मेजर, वीजर और बाम बावर्क आष्ट्रियाई और तीनो ही परस्पर निकट रिश्तेदार एव क्रमश वियना विश्वविद्यालय मे प्राध्यापक रहे। इसीलिए इन तीनो को सयुक्त रूप से आष्ट्रियाई सम्प्रदाय कहा जाता है। वैयक्तिक वैचारिक मतभेदो के बावजूद इन तीनो ने ऐसे सुपरिभाषित ढाँचे मे कार्य किया कि उन्हे एक सुगठित समूह (wellknit group) कहा जाता है। इनका प्रमुख उद्देश्य मूल्य का मूलभूत एव एकीकृत सिद्धान्त प्रतिपादित करना था। इस हेतु उन्होंने सुखवादी अथवा 'कष्ट एवं आनन्द दृष्टिकोण' अपनाया। इन्होने मुख्यत मनोवैज्ञानिक अथवा विषयगत तत्त्वो का सहारा लिया और कहा कि व्यक्ति का आर्थिक व्यवहार मुख्यत उसकी मनोवृत्तियो एव मनोदशाओ से प्रभावित रहता है। इसके साथ–साथ इन्होने उपभोक्ता के आर्थिक व्यवहार एव वस्तुओ के मूल्य–निर्धारण मे उनको वस्तुओ से प्राप्त होने वाली सीमांत उपयोगिताओ को आधार बनाया। अब हम इस सम्प्रदाय के तीनो प्रमुख कर्णधारो एव उनके आर्थिक विचारो का विस्तृत विवेचन करेगे–

1. कार्ल मेंजर (Karl Menger)

संक्षिप्त जीवन परिचय
(Brief Life Sketch)

आस्ट्रियन सम्प्रदाय के जनक कार्ल मेजर का जन्म सन् 1840 मे गैलिसिया मे न्यूसेण्डेज नामक स्थान पर हुआ । प्राग एव वियना विश्वविद्यालयो मे अध्ययन करने के पश्चात् आपने क्रेको विश्वविद्यालय से पीएच डी की उपाधि प्राप्त की । अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् आप आस्ट्रिया की सिविल सेवा मे भर्ती हो गए किन्तु, आपका रुझान लेखक एव अध्ययन की ओर बना रहा । फलत आपने बाजार दशाओ का सर्वेक्षण किया और निष्कर्षों को 'Foundations of Economic Theory' शीर्षक मे लिपिबद्ध किया । आपका यह कार्य, गुणात्मक दृष्टि से, इतना उत्कृष्ट था कि सन् 1873 मे वियना विश्वविद्यालय ने आपको अर्थशास्त्र का प्राध्यापक मनोनीत कर दिया । आपकी देखरेख मे वियना विश्वविद्यालय का यह विभाग उच्च अध्ययन एव शोध का एक प्रसिद्ध केन्द्र बन गया । सन् 1876–78 तक आप आस्ट्रिया के राजकुमार रुडोल्फ के राजनीतिक अर्थव्यवस्था एव सांख्यिकी के निजी शिक्षक रहे । सन् 1903 मे आपने वियना विश्वविद्यालय छोड दिया । इसी वर्ष अपको आस्ट्रिया के उच्चतर सदन (House of Peers) का आजीवन सदस्य मनोनीत कर दिया गया किन्तु, आपकी सक्रिय राजनीति मे कभी रुचि नही रही । आप आर्थिक चिंतन एव लेखन–कार्य मे ही व्यस्त रहे और 81 वर्ष की आयु मे सन् 1921 अपनी मृत्यु तक शोध कार्य मे जुटे रहे ।

आस्ट्रियाई सम्प्रदाय की तिकड़ी के इस प्रथम विचारक को सीमातवाद की औपचारिक स्थापना का श्रेय दिया जाता है । इन्होने सीमातवाद के सिद्धान्तो का स्वतत्र रूप से प्रतिपादन किया । 'Grenznutzen' अर्थात् 'सीमात उपयोगिता' (Marginal utility) शब्द मेजर ने ही दिया ।

प्रमुख कृतियाँ
(Major Works)

कार्ल मेजर की प्रमुख कृतियो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(1) Foundations of Economic Theory (1871)
(2) Inquiries into the Method of Social Sciences, particularly Social Economy (1883)
(3) The Errors of Historismus in German Political Economy (1884)
(4) On the Theory of Capital (1888)
(5) The Theory of Requirements (1923)

प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas)

मेजर के आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(1) वस्तुओं का सामान्य सिद्धान्त *(General Theory of Goods)*- अपनी प्रसिद्ध रचना *'Foundations of Economic Theory'* मे मेजर ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । चीजो (things) एव वस्तुओ (goods) का अन्तर स्पष्ट करते हुए उन्होने बताया कि किसी चीज के वस्तु बनने के लिए निम्नांकित चार बाते आवश्यक है–

(i) उस चीज के लिए कोई मानवीय आवश्यकता हो,
(ii) उस चीज मे ऐसे गुण हो जिनसे वह किसी मानवीय आवश्यकता को पूर्ण कर सके,
(iii) इस गुण की समुचित जानकारी उपभोक्ताओ को हो और
(iv) मनुष्य का उस चीज पर ऐसा नियत्रण होना चाहिये कि वह उसे काम मे ले सके ।

उपर्युक्त आधार पर उन्होने उन उपयोगी मानवीय सेवाओ एव भौतिक चीजो को वस्तुए कहा जिनमे मानवीय आवश्यकताए पूर्ण करने की क्षमता होती है ।

चीजो एव वस्तुओ का अन्तर स्पष्ट कर उन्होने 'कारण' एव 'परिणाम' के आधार पर 'वस्तु' तथा 'सतुष्टि' मे पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया जिसका उनकी व्याख्या मे भारी महत्त्व है । उन्होने आवश्यकता को 'कारण' और उपभोग से प्राप्त सतुष्टि को एक 'परिणाम' बताया ।

वस्तुओं के वर्गीकरण (Classifications of Goods)- मेजर ने वस्तुओ के कई वर्गीकरण किये जिनमे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(i) **आर्थिक एवं अनार्थिक** (Economic and Uneconomic)- वस्तुओ की आवश्यकता एव उनकी उपलब्ध पूर्ति के आधार पर मेजर ने उन्हे आर्थिक एव अनार्थिक मे विभाजित किया और बताया कि जिन वस्तुओ की आवश्यकता उनकी उपलब्ध पूर्ति से अधिक होती है उन्हे आर्थिक[2] एव जिनकी पूर्ति उनकी आवश्यकता से कम होती है उन्हे अनार्थिक वस्तुएँ कहा जाता है । उनके मतानुसार अनार्थिक वस्तुए भी उपयोगी हो सकती है किन्तु उनका मूल्य नही होता । जनसख्या, आवश्यकता तथा वस्तु का कल्याण के लिए उपयोगी होने के ज्ञान मे परिवर्तन से वस्तुओ का स्वरूप बदल जाता है अर्थात् वे आर्थिक से अनार्थिक अथवा विलोमश हो जाती है ।

---

2   "Economic goods are those the needs for which are greater in quantity than the available supply" Hutchis T W

(ii) विभिन्न कोटियों की वस्तुएँ एवं पूरक वस्तुएँ (Goods of different Orders and complementary Goods)- वर्गीकरण के इस आधार पर मेजर ने वस्तुओ की कोटियाँ अर्थात् क्रम अथवा श्रेणियाँ निर्धारित की और कहा कि (a) वे वस्तुए जो तत्काल एव प्रत्यक्ष रूप से किसी मानवीय आवश्यकता की पूर्ति करती है उन्हे प्रथम कोटि की वस्तुएँ (Goods of the first order) कहा जाता है, जैसे– रोटी । (b) जो वस्तुएँ प्रथम कोटि की वस्तुओ के उत्पादन मे सहायक होती है, वे द्वितीय कोटि की वस्तुएँ कहलाती है, जैसे– आटा । (c) वे वस्तुएँ जो द्वितीय कोटि की वस्तुओ के उत्पादन मे सहायक होती है, तृतीय कोटि की वस्तुएँ कहलाती है, जैसे– गेहूँ । मेजर के अनुसार श्रेणियो का यह क्रम आगे भी जारी रह सकता है क्योकि तृतीय कोटि की वस्तु गेहूँ के उत्पादन मे खेत, बीज, खाद, औजार आदि की आवश्यकता पडती है । मेजर के अनुसार प्रथम कोटि की वस्तु न्यूनतर क्रम (lower order) की और बाद की कोटियो की वस्तुएँ क्रमश उच्चतर क्रमो (higher orders) की वस्तुएँ होती है । इस प्रकार उनके मतानुसार (i) उच्चतर क्रम की किसी वस्तु से न्यूनतर क्रम की वस्तु का उत्पादन होता है, (ii) वस्तु का किसी मानवीय आवश्यकता की पूर्ति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होना आवश्यक नही, (iii) उपभोक्ता वस्तुएँ अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योकि इनसे ही उत्पादक अपनी वस्तुओ का मूल्य प्राप्त करते है।

मेजर के अनुसार वस्तुओ का कोटियों अथवा श्रेणियो मे वर्गीकरण निरपेक्ष नही बल्कि सापेक्ष है अर्थात् विभिन्न वस्तुओ को स्थायी रूप से किन्हीं निश्चित कोटियो मे विभाजित नहीं किया जा सकता । अत वस्तुओं की कोटियाँ परिवर्तनशील है । आवश्यक होने पर उच्चतर कोटि की वस्तु का न्यूनतर कोटि और न्यूनतर कोटि की वस्तु का उच्चतर कोटि की वस्तु मे रूपान्तरण हो सकता है । उदाहरणार्थ, रजाई मे भरने के लिए रूई न्यूनतर कोटि की वस्तु है किन्तु सूत कातने के लिए वही उच्चतर कोटि की वस्तु बन जाती है । उन्होने बताया कि किसी वस्तु के उत्पादन एव उपभोग मे जितना ज्यादा समय लगता है, उस वस्तु की कोटि उतनी ही उच्चतर होती है ।

पूरक वस्तुओ के उल्लेख मे मेजर ने बताया कि ये वस्तुएँ अकेली काम मे नहीं आती अर्थात् जो वस्तुएँ किसी दूसरी वस्तु के साथ मिलकर किसी आवश्यकता की पूर्ति करती हैं वे पूरक वस्तुएँ कहलाती है । अतः ये वस्तुएँ मुख्यत उच्चतर कोटि की होती है। इनमे मुख्यत उपयोग की टिकाऊ वस्तुएँ एव पूँजीगत वस्तुएँ सम्मिलित की जाती हैं ।

(iii) अन्य वर्गीकरण (Other classifications)- उपर्युक्त वर्गीकरण के अलावा मेजर ने वस्तुओ का वास्तविक एव अवास्तविक, भौतिक एव अभौतिक, स्थायी एव अस्थायी, उपभोक्ता एव पूँजीगत, टिकाऊ एव नाशवान आदि मे भी विभाजन किया ।

(2) मूल्य सिद्धान्त (The Theory of Value) मूल्य के लागत सिद्धान्त (जिसका प्रतिपादन प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने किया था) को अस्वीकार कर मेजर ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । उनके मतानुसार जो गुण किसी वस्तु को आर्थिक बनाते है, मुख्यत वे ही गुण उसमे मूल्य का सृजन करते है । अत वस्तुओ की आवश्यकता एव उनकी उपलब्ध पूर्ति की मात्रा के पारस्परिक सम्बन्ध से मूल्य की उत्पत्ति होती है तथा जिस वस्तु की आवश्यकता उसकी उपलब्ध मात्रा से जितनी अधिक होती है उसका मूल्य उतना ही ऊँचा एव विलोमश नीचा होता है । दूसरे शब्दो मे, मेजर के अनुसार किसी वस्तु की उपलब्ध पूर्ति ही उसका मूल्य निर्धारित करती है । अपने इस मत के समर्थन मे उन्होने निम्नाकित दो उदाहरण दिये है—

(i) एक जगलवासी के अधिकार मे लाखो पेड़ है । अपनी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए उसे प्रतिवर्ष 20 पेड़ो की आवश्यकता पड़ती है । यदि किसी दिन जगल मे आग से उसके हजार पेड़ नष्ट हो जाये तब भी जगलवासी को कोई हानि नही होगी । अर्थात् एक पेड़ का उसके लिए कोई महत्त्व नही है । इसके विपरीत जगल मे मात्र दस पेड़ फल देने वाले हैं जिनसे वह अपना भोजन प्राप्त करता है और इसकी पूर्ति के लिए वह मुख्यत उन्ही पर आश्रित रहता है । यदि आग लगने के कारण इनमे से एक पेड़ जलकर नष्ट हो जाये तो जगलीवासी को मूल्य की भारी क्षति होगी ।

(ii) एक गाव के निवासियो को प्रतिदिन 1000 बाल्टी पानी चाहिये जबकि नदी का प्रवाह एक लाख बाल्टी पानी प्रतिदिन है । अब यदि हजारो बाल्टी पानी रोक दिया जाये तब भी ग्रामवासियो के जीवन एव पानी के मूल्य पर कोई प्रभाव नही पड़ेगा । किन्तु, यदि सूखे के कारण उस छोटी नदी का जल प्रवाह घटकर 500 बाल्टी प्रतिदिन रह जाये अथवा नदी का मार्ग बदलकर जल प्रवाह घटाकर 500 बाल्टी प्रतिदिन कर दिया जाये तो ग्रामवासियो का जीवन सकट मे पड़ जायेगा ।

इन्ही आधारो पर मेजर ने बताया कि जैसे–जैसे किसी वस्तु की पूर्ति घटती है उसकी प्रत्येक शेष इकाई की आवश्यकता सतुष्टि की क्षमता बढ़ती जाती है जबकि विलोमश यह गिरती है ।

मेजर ने कहा कि मूल्य कुल उपयोगिता पर आश्रित नही है बल्कि वस्तु की न्यूनतम उपयोगिता पर आधारित है । यह एक वैयक्तिक घटक है और राज्य एव समाज के कानूनों से अलग एव स्वतत्र है । इसीलिए वे कहते हैं कि 'मूल्य केवल मस्तिष्क का एक निर्णय है । यह किसी वस्तु का कोई स्वतत्र गुण अथवा स्वयं कोई स्वतत्र वस्तु नही है ।'

मूल्य विषयक उपर्युक्त विचारो से स्पष्ट है कि मेजर के अनुसार मूल्य वस्तुओ की उपयोगिता एवं उनकी तुलनात्मक दुर्लभता पर निर्भर करता है,

इन्ही घटको द्वारा निर्धारित होता है और इन्ही मे परिवर्तन से वह बदलता है। क्योकि, पृथक्–पृथक् व्यक्तियो के लिए उनकी एक ही आवश्यकता की तीव्रता अलग–अलग होती है अत. वे एक ही वस्तु का अलग–अलग मूल्य देना चाहते है। इसीलिए मेजर ने बार–बार दोहराया कि मूल्य और उसका माप विषयगत है और इसका वस्तुगत घटको (उत्पादन लागत) से कोई प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध नही है। उन्होने यह भी बताया कि वस्तुओ के वैकल्पिक प्रयोग होते है अत. किसी वस्तु का मूल्य उसके सबसे कम महत्त्वपूर्ण प्रयोग से प्राप्त सतुष्टि के बराबर होता है। दूसरे शब्दो मे, मूल्य का निर्धारण वस्तु की सीमात उपयोगिता (यद्यपि मेजर ने इस प्रसग मे यह शब्द काम मे नही लिया और 'सबसे कम महत्त्वपूर्ण प्रयोग' शब्दो का प्रयोग किया) द्वारा किया जाता है। उनके विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए प्रो अलेक्जेण्डर ग्रे ने लिखा है कि, "जब पूर्ति स्थिर रहती है तो वस्तु के किसी भी भाग का मूल्य उस सबसे कम महत्त्वपूर्ण प्रयोग के द्वारा निर्धारित होता है जिसमे उस भाग का प्रयोग होता है।"

मूल्य निर्धारण मे विभिन्न वस्तुओ की पारस्परिक निर्भरता, पूरकता एव सम्बद्धता स्वीकार करते हुए उन्होने बताया कि न्यूनतर कोटि (अर्थात् प्रथम कोटि की वस्तु, जैसे– रोटी) की वस्तुओ के मूल्यो का उच्चतर कोटि (अर्थात् द्वितीय एव तृतीय कोटि की वस्तुएँ, यथा– आटा, गेहूँ आदि) की वस्तुओ के मूल्यो पर प्रभाव पड़ता है अर्थात् उच्चतर कोटि की वस्तुओ का मूल्य न्यूनतर कोटि की वस्तुओ के मूल्यो पर आधारित रहता है।

मेजर ने वस्तुओ के साथ–साथ उत्पत्ति के साधनो के मूल्यो का भी विवेचन किया और कहा कि यदि भूमि का प्रयोग खाद्यान्न उत्पादन के लिए किया जाता है तो उसका मूल्य भी प्रथम कोटि की वस्तुओ के मूल्यो की भाति होगा जबकि दूसरी वस्तुओ के उत्पादन मे प्रयुक्त होने पर उसका मूल्य उच्चतर कोटि की वस्तुओ की भाति न्यूनतर कोटि की वस्तु के मूल्य पर आधारित रहेगा। अर्थात् उच्चतर श्रेणियो की वस्तुओ का मूल्य उन वस्तुओ के मूल्यो से उत्पन्न होता है जिनका लोग प्रत्यक्षत. उपभोग करते है। उन्होने बताया कि भूमियो की उर्वरता एव स्थिति मे अन्तर से उनके मूल्य मे अन्तर आ जाता है।

इसी आधार पर मेजर ने बताया कि वास्तविक श्रम का मूल्य भी अन्य वस्तुओ की कीमतो की भाति ही निर्धारित होता है। यह उल्लेखनीय है कि साहसी की क्रियाओ को भी उन्होने श्रम मे ही सम्मिलित कर दिया।

पूरक वस्तुओ के मूल्यो के सदर्भ मे उन्होने नकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया और कहा कि वस्तु सयोग मे से किसी एक वस्तु की एक इकाई हटाने से कुल मूल्य मे जो कमी आती है, वही उस हटायी गयी पूरक वस्तु का

मूल्य होता है।

(3) अर्थशास्त्र की अध्ययन पद्धतियाँ (Methods of Political Economy)- अर्थशास्त्र की अध्ययन पद्धतियो को लेकर जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादी श्मोलर एव मेजर के मध्य 20 वर्ष तक सघर्ष चला। जहा प्रथम ने ऐतिहासिक आगमन प्रणली के प्रयोग का समर्थन किया वहा मेजर ने उसका विरोध करते हुए तर्क पर आधारित निगमन प्रणाली का प्रचार किया। यह विवाद इतना बढ गया कि श्मोलर ने यहा तक कह डाला कि, "निगमन प्रणाली के समर्थक आस्ट्रियाई प्राध्यापक जर्मन विश्वविद्यालयो मे प्राध्यापक पद पर बने रहने योग्य नही है। यह विवाद तब समाप्त हुआ जब श्मोलर ने इन दोनो अध्ययन पद्धतियो की महत्ता स्वीकार करली। मेजर ने अपनी रचना 'Inquiries into Methods' मे अध्ययन पद्धतियो का विशद् विवेचन कर मुख्यत निगमन प्रणाली के प्रयोग का समर्थन किया, किन्तु वे आगमन प्रणाली को भी पूर्णत अस्वीकार नही कर पाये। उन्होने विवाद के क्षेत्र को बदलते हुए बताया कि, "वास्तव मे जो विवाद का विषय है और जिसे पूर्णत हल नही किया गया, वह अधिक महत्त्वपूर्ण है, इसका सम्बन्ध उनके अध्ययन के उद्देश्य और उस कार्यप्रणाली से है, जिसे इस विज्ञान को हल करना है।" अर्थात् उद्देश्य के आधार पर दोनो मे से किसी एक अथवा दोनो का समन्वित प्रयोग करने का समर्थन मेजर ने किया।

(4) आवश्यकताएँ (Wants)- मेजर ने 'Foundation of Economic Theory' मे जिन विचारो एव सिद्धान्तो का विवेचन किया है उनमे एक अति महत्त्वपूर्ण विचार 'आवश्यकताएँ' है। उनके अनुसार जिन मौलिक घटको के कारण अर्थशास्त्र का अध्ययन आवश्यक है उनमे एक 'आवश्यकताएँ' है। ये अर्थशास्त्र का आधार और इनकी सतुष्टि आर्थिक प्रणाली का अतिम लक्ष्य है। जीवन की सुरक्षा एव कल्याण मे वृद्धि की दृष्टि से आवश्यकताएँ महत्त्वपूर्ण है और जीवन को आनददायक बनाने के लिए विभिन्न आवश्यकताओ मे आपसी सामंजस्य आवश्यक है। मेजर के अनुसार ये मनुष्य के सजग एव सकारात्मक प्रयासो का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनके अनुसार व्यक्तियो की भाति सस्थाओ (राज्य, सरकार, ग्राम आदि) की भी आवश्यकताएँ होती है जिनकी व्याख्या करना सामाजिक अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री का एक भाग है। उन्होने सामूहिक आवश्यकताओ (सडक, रेल मार्ग आदि) का भी उल्लेख किया है जिनकी सतुष्टि अर्थात् पूर्ति सामाजिक सस्थाएँ करती हैं।

(5) पूँजी का सिद्धान्त (The Theory of Capital)- मेजर ने धन के उस सम्पूर्ण भाग को पूँजी माना जिससे किसी–न किसी रूप मे स्थायी आय होती है। उनके अनुसार पूँजी मे वे आर्थिक वस्तुएँ सम्मिलित की जाती है जो भविष्य मे प्रयोग करने हेतु उपलब्ध रहती हैं। इस दृष्टि से, पूँजी एव धन मे

आधारभूत अतर यह है कि जहा धन मे विशुद्ध टिकाऊ वस्तुएँ सम्मिलित की जाती है वहा पूँजी मे प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से उच्चतर कोटियो की वस्तुएँ सम्मिलित की जाती है । उन्होने यह भी बताया कि उत्पादन के काम आने वाली सीमित प्रकृतिदत्त वस्तुएँ भी पूँजी मानी जा सकती है ।

(6) विनिमय (Exchange)- ज्ञातव्य है कि प्रतिष्ठित-सम्प्रदायवादियों ने विनिमय को एक ऐसी क्रिया बताया जिसमे एक पक्ष (क्रेता) दूसरे पक्ष (विक्रेता) की वस्तु की तुलना मे अपनी वस्तु का नीचा मूल्याकन करता है और परिणास्वरूप कम मूल्य वाली वस्तु के बदले अधिक मूल्य की वस्तु का विनिमय कर अपनी सतुष्टि अधिकतम करता है । दूसरे शब्दो मे, उनके अनुसार दोनो पक्ष वस्तु–विनिमय अथवा मौद्रिक–विनिमय के जरिये लाभ कमाने के उद्देश्य से ही बाजार मे प्रवेश करते है ।

प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के उपर्युक्त विचारो से भिन्न मेजर ने विनिमय को एक ऐसी क्रिया बताया जिसमे विभिन्न मनुष्य अपनी आवश्यकताएँ सतुष्ट करने के लिए सम्मिलित होते है (व्यापार द्वारा लाभ कमाना उद्देश्य नही) और इसकी शर्तें मुख्यत क्रेताओ, विक्रेताओ एव वस्तुओ की सख्या तथा वस्तु बाजार मे प्रतिस्पर्धा के अश पर निर्भर करती है ।

मेजर के अनुसार विनिमय तभी सम्भव होता है जब विनिमय की जाने वाली वस्तुओ का मूल्य दोनो पक्षो के लिए अलग–अलग हो । उनके मतानुसार विनिमय के लिए आवश्यक दशाएँ निम्नाकित है–

(i) एक पक्ष के पास जो वस्तु है उसका मूल्य उस वस्तु से कम हो जो दूसरे पक्ष के पास है ।
(ii) दोनो पक्ष अपनी–अपनी वस्तुओ का मूल्य परस्पर विपरीत दिशा मे व्यक्त करे ।
(iii) दोनो पक्षो को बाजार दशाओ का पूरा ज्ञान हो ।
(iv) दोनो पक्षो को दोनो वस्तुओ के विनिमय का वैध अधिकार हो ।
(v) दोनो ही पक्षो को लाभ हो और प्रत्येक पक्ष का लाभ दूसरे पक्ष के त्याग से अधिक हो ।

उन्होने यह भी बताया कि जिस प्रकार विनिमय द्वारा दो व्यक्ति लाभार्जन करते है उसी प्रकार दो राष्ट्र अपनी–अपनी वस्तुओ की अदला–बदली कर अपनी आवश्यकताओ को अधिक अच्छे तरीके से पूरा करने मे सफल हो जाते है ।

(7) क्रियात्मक वितरण (Functional Distribution)- मेजर ने सामूहिक उत्पादन का उसमे भागीदार उत्पादन के सभी साधनो के बीच, उनकी उत्पादक सेवाओ के आधार पर बांटने का सिद्धान्त प्रतिपादित किया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने वितरण के सीमांत उत्पादकता सिद्धान्त का ही समर्थन

किया ।

(8) धन (Wealth)- मेजर के अनुसार मितव्ययी व्यक्तियो के पास जो आर्थिक वस्तुएँ हैं, उनका योग धन है । इन वस्तुओ का मात्राएँ इनकी जरूरतो से कम है । अत मेजर ने कहा कि वस्तुओ मे लगातार वृद्धि आवश्यक रूप से धन मे कमी करेगी । उन्होने धन का निजी एव सार्वजनिक मे विभाजन किया और कहा कि जिस प्रकार एक व्यक्ति अपनी जरुरते पूरी करने के लिए धन रखता है उसी तरह राज्य सदृश्य सस्थाएँ भी अपनी–अपनी जरूरते पूरी करने के लिए आर्थिक वस्तुएँ रखती है । मेजर ने ट्रस्टों के फण्डस्, जो आर्थिक वस्तुओ से ही बनते हैं, को धन मे सम्मिलित नही किया और वैयक्तिक एव सामाजिक धन के योग को राष्ट्रीय धन कहा ।

(9) मुद्रा (Money)- मेजर ने मुद्रा की विस्तृत व्याख्या की । इसके उद्भव एव विकारा के बारे मे उन्होने बताया कि मनुष्य के आर्थिक हितो ने ही मुद्रा को जन्म दिया है तथा मानव समाज ने विभिन्न देशो, समयावधियो एव विकास के चरणो मे भिन्न–भिन्न पदार्थो को मुद्रा के रूप मे काम मे लिया है । उनके मतानुसार सामान्यतया जिन वस्तुओ मे तुरत बिक्री का गुण था उन्ही को विनिमय–माध्यम के रूप मे अर्थात् मुद्रा माना गया । उनके विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए हकिसन ने बताया कि, ''मुद्रा उन सहज एव अनियोजित सामाजिक आविष्कारो मे से एक है जो राज्य की खोज अथवा किसी विधान की उपज नही है ।''

मुद्रा की माँग क्यो की जाती है ? के बारे मे उन्होने बताया कि इसकी माँग मुख्यत लेन–देन एव सुरक्षा उद्देश्यो की पूर्ति के लिए की जाती है । मुद्रा के मूल्य के बारे मे उन्होने बताया कि यह मुद्रा के राज्य सिद्धान्त एव मुद्रा की विधिग्रह्यता द्वारा शासित नही होता बल्कि इस पर मुद्रा की माँग का प्रभाव पड़ता है । उनके अनुसार मूल्य मापक के रूप मे मुद्रा के दो मूल्य–बाह्य तथा आतरिक है । बाह्य मूल्य से आशय मुद्रा की क्रय–शक्ति से एव आतरिक मूल्य से आशय इसकी विनिमय–शक्ति से है । उनके मतानुसार मुद्रा के दोनो मूल्य समान रहने चाहिये । किन्तु, वास्तव मे ऐसा नही होता है ।

मेजर मुद्रा–मूल्य मे परिवर्तन विशेषत , मुद्रा–प्रसार एव मुद्रा–सकुचन से परिचित थे । वे इन दोनो के गुण–दोषो को भी भली–भाति जानते थे । इन दोनों मे उन्होने मुद्रा सकुचन को अधिक बुरा माना और सुझाव दिया कि मुद्रा सकुचन, जिसमे साहूकारो को लाभ मिलता है, की तुलना मे मुद्रा प्रसार ठीक है जिसमे ऋणी व्यक्तियो को लाभ मिलता है ।

(10) उत्पत्ति के साधन (Factors of Production)- मेजर ने उत्पत्ति के मुख्यत तीन साधन– भूमि, श्रम और पूँजी बताये और कहा कि भूमि एव श्रम को पूँजी की तुलना मे उत्पत्ति का मौलिक साधन मानना दोषपूर्ण है ।

(11) मूल्यारोपण का सिद्धान्त (The Theory of Imputation)-मूल्यारोपण

का सिद्धान्त मेजर की एक महत्त्वपूर्ण देन है । इसकी सहायता से ही उन्होने उच्चतर कोटियो अर्थात् श्रेणियो की वस्तुओ के मूल्यो एव वितरण सिद्धान्त की व्याख्या की । इसके अनुसार उच्चतर कोटि की वस्तु (आटा) का मूल्य न्यूनतर कोटि की उस वस्तु (रोटी) के मूल्य से व्युत्पन्न होता है जिसके उत्पादन मे उच्चतर कोटि की उस वस्तु ने योगदान किया है । इसी प्रकार उत्पत्ति के साधनो का मूल्य उनके द्वारा उत्पादित मूल्य मे योगदान कर निर्भर करता है । इस आधार पर भूमि का मूल्य (लगान) वह राशि है जो कृषि वस्तुओ के उत्पादन मे भूमि के योगदान पर आरोपित है । इसी प्रकार ब्याज और मजदूरी पूँजी एव श्रम द्वारा सामूहिक उत्पादन मे किये गये योगदान से व्युत्पन्न आरोपित मूल्य है ।

किन्तु, मेजर के सामने पूरक वस्तुओ एव उत्पत्ति के साधनो के सदर्भ मे मूल्यारोपण के सिद्धान्त के प्रयोग की दुविधा रही क्योकि न्यूनतर कोटि की वस्तु के मूल्य मे इन सबका अलग–अलग योगदान ज्ञात करना अत्यन्त कठिन रहता है ।

मूल्यांकन
(Evaluation)

कार्ल मेजर अपने सम्प्रदाय के अग्रणी विचारक एव लेखक थे । यद्यपि, इनके विचार मुख्यत जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो के विचारो पर आधारित एव उनमे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन एव सुधार थे और इस दृष्टि से उन्होने किसी मौलिक विचार एव सिद्धान्त का प्रतिपादन नही किया तथापि उनके विचार बहुत पूर्ण एव स्पष्ट थे । दूसरे शब्दों मे, उनका प्रस्तुतीकरण मौलिक एव वैज्ञानिक था । हकिरान ने उनके मूल्याकन मे कहा कि, ''उनके विचारो की आशिक रूप से स्पष्ट मौलिकता को ध्यान मे रखते हुए उन्हे सैद्धान्तिक अर्थशास्त्रियो की श्रेष्ठ उपलब्धियो के समकक्ष, रखा जाना चाहिये।''

ज्ञातव्य है कि उस समय वैचारिक क्षितिज पर ऐतिहासिक सम्प्रदायवादी श्मोलर छाये हुए थे । उन्होने ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का धुआधार प्रचार किया । लोग निगमन प्रणाली पर आधारित मेजर की बाते सुनने को तैयार तक नही थे । तथापि यह बात महत्त्वपूर्ण रही कि उन्होने अपनी जगह बनायी । वे उच्च कोटि की विद्वता के ऐसे सिद्धान्त निर्माता थे जिन्होने अपने सिद्धान्तो के प्रतिपादन के लिए अपना नया दृष्टिकोण अपनाया और सीमातवाद की अवधारणा का विकास किया । उन्होने आर्थिक साहित्य को 'सीमात उपयोगिता' की अवधारणा, सम–सीमात उपयोगिता नियम, मूल्यारोपण का सिद्धान्त आदि नये विचार एव सिद्धान्त दिये । उन्होने कीमत सिद्धान्त के स्थान पर मूल्य सिद्धान्त की चर्चा की, जिसके लिए उनकी

आलोचना की जाती है । उन्होने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के व्यक्तिवाद को स्वीकार कर लिया था, जिसे उनके शिष्य एव दामाद वीजर ने उनकी एक गलती बताया ।

फिर भी, मेजर की व्याख्या सरल एव अगणितीय थी । अत उन्होने वैचारिक दुनिया मे अपना स्थान बना लिया । उनकी रचनाएँ काफी पढ़ी गयी है और उन्हे पाठको ने पसद किया है ।

2. फ्रेड्रिक वान वीजर (Friedrich Van Wrieser)

संक्षिप्त जीवन परिचय
(Brief Life Sketch)

आस्ट्रियन सम्प्रदाय की त्रयी के दूसरे सदस्य वीजर का जन्म सन् 1851 मे वियना मे हुआ । सन् 1874 मे वियना विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि लेने के पश्चात् आपने दो वर्ष तक बर्लिन विश्वविद्यालय मे जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो (रोशर, कार्लनीज एव हिल्डेब्रैण्ड) के आर्थिक चितन का अध्ययन किया । सन् 1884 मे आप प्राग विश्वविद्यालय चले गये और 1889 मे वही राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्राध्यापक बन गये । सन् 1903 मे जब मेजर, जो आपके वैचारिक गुरु एव रिश्त मे श्वसुर थे, ने वियना विश्वविद्यालय छोड़ दिया तो आप उनके स्थान पर वहा चले गये और सन् 1922 तक वही प्राध्यापक के रूप मे अपनी सेवाएँ देते रहे । प्रथम महायुद्ध के दौरान आप आस्ट्रो–हगेरियन साम्राज्य के अतिम दो मत्री–परिषदो मे वाणिज्य मत्री रहे । सन् 1917 मे आप सासद मनोनीत हुए । सन् 1926 मे आपका सक्रिय जीवन समाप्त हो गया ।

प्रमुख कृतियां
(Major Works)

वीजर की प्रमुख रचनाओ मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) The Origin and Principal Laws of Economic Value (1884)
(2) Natural Value (1889)
(3) Theory of Social Economics (1914)

इनमे तीसरी एव अतिम कृति को आस्ट्रियन त्रयी की सर्वश्रेष्ठ रचना कहा जाता है ।

प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas)

वीजर के प्रमुख आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय हैं–

(1) मूल्य सिद्धान्त (The Theory of Value)- विनिमय एव वितरण के क्षेत्रो मे वीजर का योगदान विशेषरूप से उल्लेखनीय है । अपनी रचना

'Natural Value' मे उन्होने मूल्य सिद्धान्त की विस्तृत व्याख्या की। गोसेन के ह्रासमान सतुष्टि के नियम को आधार मानकर उन्होने सीमातवाद की परम्परा का निर्वाह करते हुए मूल्य की सीमातवाद के उपकरण से ही व्याख्या की और कहा कि किसी वस्तु के मूल्य का स्रोत उसकी सीमात उपयोगिता है। यह उपयोगिता निरपेक्ष एव स्थिर नही बल्कि सापेक्ष है। यह आवश्यकता की तीव्रता एव वस्तुओ की आवश्यकता सतुष्ट करने की सामर्थ्य पर निर्भर करती है। उन्होने ह्रासमान सीमात उपयोगिता नियम की सुस्पष्ट व्याख्या की और बताया कि वस्तु के उपभोग का क्रम जारी रहने पर सीमात उपयोगिता केवल गिरती ही नही बल्कि गिर कर शून्य एव ऋणात्मक भी हो जाती है। इसी आधार पर उन्होने बताया कि किसी वस्तु मे मूल्य तभी होगा जब उसकी पूर्ति सीमित एव परिणामस्वरूप सीमात उपयोगिता धनात्मक होगी। यह वीजर की सामान्य मूल्य विषयक व्याख्या है।

वस्तुओ के बाजार मूल्य को उन्होने कीमत कहा। इसे परिभाषित करते हुए उन्होने बताया कि कीमत विनिमय प्रक्रिया द्वारा बाजार मे व्यक्त मूल्य के बराबर मुद्रा है। अर्थात् मुद्रा मे व्यक्त मूल्य ही कीमत है और यह अन्तत सीमात क्रेता की सीमात उपयोगिता के बराबर होती है। अत कीमत अथवा विनिमय मूल्य विषयगत प्रयोग–मूल्य अर्थात् उपयोगिता एव विषयगत विनिमय मूल्य का ही प्रतिबिम्ब है।

वीजर ने बताया कि उपभोग एव विनिमय की क्रियाओ मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है और विनिमय आवश्यक रूप से उपभोग पर निर्भर रहता है। उन्होने बताया कि यदि कोई वस्तु उपभोग एव विनिमय दोनो ही क्रियाओ मे प्रयुक्त हो सकती है तो ऐसी वस्तु की कीमत (विनिमय–मूल्य) इसके धारक को प्राप्त होने वाली उपयोगिता पर निर्भर करती है। दूसरे शब्दो मे, सामान्य स्थिति मे वस्तुओ का विनिमय उनकी सीमात उपयोगिताओ के आधार पर ही होता है।

मूल्यारोपण अथवा आरोपण सिद्धान्त (Theory of Imputation) के आधार पर उन्होने Theory of ZURECHNUNG का प्रतिपादन किया और कहा कि उत्पादक वस्तुओ (उच्चतर क्रमो अथवा द्वितीय कोटि की वस्तुएँ) का मूल्य अनिवार्यत उपभोक्ता वस्तुओं (अर्थात् न्यूनतर क्रम अथवा प्रथम कोटि की वस्तु) के मूल्य पर निर्भर करता है। इस प्रकार उच्चतर अथवा द्वितीय कोटि की वस्तुओ मे तब तक कोई मूल्य नही होता जब तक न्यूनतर अथवा प्रथम कोटि की वस्तुएँ उनमे मूल्य का अरोपण नही कर देती। इसी क्रम मे उन्होंने आगे बताया कि उत्पादक वस्तुओ की पूर्ति बढ़ने से उनका आरोपित मूल्य घटता है और विलोमश बढ़ता है। इनके मूल्य पर इनकी माँग मे परिवर्तन का भी प्रभाव पड़ता है। इनकी माँग मुख्यत. इस बात पर निर्भर करती है कि वस्तु के कितने एव कैसे उत्पादक प्रयोग हो रहे हैं।

इस प्रकार वीजर का मूल्य सिद्धान्त मूल्य आरोपण का सिद्धान्त है अर्थात् उच्चतर कोटियो का मूल्य क्रमश न्यूनतर कोटियो के मूल्यो से निर्धारित होता है। वीजर के अनुसार इसमे दो बाते विशेषत उल्लेखनीय है–

(i) जब किसी वस्तु के वैकल्पिक प्रयोग होते है तो सबसे कम महत्त्वपूर्ण प्रयोग (जिसमें सीमात उपयोगिता न्यूनतम होती है) द्वारा मूल्य निर्धारित होता है।

(ii) पूरक वस्तुओ के मूल्य के सदर्भ मे उन्होने मेजर के नकारात्मक आरोपण के स्थान पर सकारात्मक आरोपण की विधि अपनायी और कहा कि जब किसी वस्तु–सयोग मे कोई एक वस्तु बढायी जाती है तो उससे वस्तुओ के मूल्य में जो वृद्धि होती है वह उस पूरक वस्तु का मूल्य होता है।

किन्तु, उपर्युक्त विवेचन से कदापि यह आशय नही है कि उन्होने वस्तुओ के मूल्य के उत्पादन लागत सिद्धान्त की पूर्णत अनदेखी कर दी। इसके बारे मे उन्होने बताया कि यह सिद्धान्त उतना गलत नही है जितना अपूर्ण है। इसीलिए उन्होने कहा कि, ''मूल्य सृजन की प्रक्रिया एक वृत्ताकार मार्ग है। मूल्य का मार्ग उपयोग वस्तुओ से उत्पादक वस्तुओ तक पहुचता है और जब वहा यह निर्धारित हो जाता है तो वह उत्पादक वस्तुओ से फिर नीचे उतर कर उपभोग वस्तुओ तक आता है।'' उन्होने स्वीकार किया कि पूर्ति के माध्यम से लागते वस्तुओ के मूल्यो को प्रभावित करती है। तथापि यह सत्य है कि उन्होने मूल्य के श्रम लागत अथवा उत्पादन लागत सिद्धान्त के स्थान पर मूल्य का सीमात उपयोगिता सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

साधन–कीमत निर्धारण (Factor Pricing)- वीजर ने वस्तु मूल्य निर्धारण के मूल्यारोपण सिद्धान्त को ही साधन–कीमत–निर्धारण पर लागू कर अपने लगान, मजदूरी एव ब्याज सम्बन्धी विचारो का प्रतिपादन किया और बताया कि जब तक साधनो की पूर्ति माँग से कम होती है तब तक सामूहिक उत्पादन का मूल्य उसके उत्पादन मे लगने वाले सभी साधनो मे आरोपित रहता है। उन्ही के शब्दो मे, ''सामूहिक उत्पादन का कुछ मूल्य उसमे भागीदार किसी भी साधन मे तब तक आरोपित होता है जब उसकी पूर्ति माँग की तुलना मे सीमित हो।'' उनके विचारो को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए W A Scott ने बताया कि ''सामूहिक उत्पादन मे सहयोग देने वाले साधनो मे से किसी एक साधन का हिस्सा उसी समय आरोपित होता है जब उसकी पूर्ति उसकी माँग की तुलना मे सीमित होती है।''

वीजर ने बताया कि लगान एक भेदमूलक मूल्यारोपण (differential imputation) है और जिस प्रकार भूमि पर एकाधिकार एवं सीमित पूर्ति के कारण लगान का उदय होता है उसी प्रकार मजदूरी एवं लाभ उत्पन्न होते हैं।

इनके बारे मे उन्होने बताया कि इनका निर्धारण भी आरोपण सिद्धान्त के आधार पर होने के अलावा विभिन्न वर्गों के श्रमिको मे भिन्नता के आधार पर मजदूरी एव विभिन्न व्यवसायो की जोखिम के आधार पर लाभो मे अंतर उत्पन्न होता है। ब्याज के बारे मे वीजर के विचार मज्दूरी एव लाभ से कुछ भिन्न थे। उन्होने बताया कि मूल्यारोपण सिद्धान्त की सहायता से यह तो बताया जा सकता है कि ब्याज का भुगतान क्यो होना चाहिये, किन्तु, यह नही बता सकते कि ब्याज की आरोपित राशि स्वय पूँजीगत वस्तु के मूल्य से अधिक क्यो हो जाती है ? इसका समाधान खोजने मे असफल रहने के कारण ही स्कॉट ने उनके ब्याज विषयक विचारो को असतोषजनक बताया।

किन्तु, अस्पष्ट होने के बावजूद वीजर भी उपर्युक्त व्याख्या किसी साधन विशेष के पुरस्कार निर्धारण की दृष्टि से बहुत उपयोगी है और इसकी सहायता से उन्होने समाज मे धन के वितरण की समस्या का विश्लेषण किया।

(2) उत्पत्ति के साधन (Production Instruments)- वीजर ने उत्पत्ति के साधनो को निम्नांकित दो भागो मे बाटा–

(i) **उत्पादन के लागत उपकरण (Cost Instruments of Production)**- अर्थात् विशिष्ट (nonspecific) साधन और

(ii) **उत्पादन के विशिष्ट उपकरण (Specific Instruments of Production)** अर्थात् विशिष्ट साधन

उन्होने बताया कि प्रथम प्रकार के साधन पुनरुत्पादनीय होते हैं अथवा उनके वैकल्पिक प्रयोग सम्भव होते हैं जबकि दूसरे प्रकार के साधन निरुत्पादनीय होते है और उनका केवल एक एवं विशिष्ट प्रयोग ही सम्भव होता है।

लागत उपकरणो की व्याख्या मे (अर्थात् अविशिष्ट साधनो के संदर्भ मे) उन्होने लगत की अवधारणा स्वीकार की और कहा कि जब उत्पादन का कोई साध, कसी एक प्रयोग मे काम आ रहा होता है तो वह वहां मूल्य का सृजन करता है किन्तु, उसी समय वह उस मूल्य की क्षति भी कर रहा है अथवा उससे वचित हो रहा है जिसका सृजन वह किसी वैकल्पिक प्रयोग मे करता। इसलिए वीजर ने बताया कि इस साधन का वर्तमान प्रयोग का मूल्य उसके दूसरे सर्वश्रेष्ठ वैकल्पिक प्रयोग में मूल्य के बराबर होगा। इसी आधार पर उन्होने बताया कि जिस साधन का कोई वैकल्पिक प्रयोग नहीं होता (अर्थात् पूर्णत. विशिष्ट साधन) उसके मालिक को किया गया भुगतान उस साधन की विशिष्टता का पुरस्कार 'लगान' है।

उन्होने बताया कि साधनो की पूर्ति मे एकाधिकारी तत्त्व होने पर ऐसी लागत सृजित हो सकती है और उन्हे लगान मिल सकता है। विशिष्ट साधनों के मूल्य–निर्धारण के परिप्रेक्ष्य मे उन्होंने मूल्यारोपण के सिद्धान्त का परित्याग

कर बताया कि ऐसे साधन अवशिष्ट दावेदार (residual Clamant) होते है और उन्हे सामूहिक उत्पादन मे से उनकी सीमात उत्पादकता के बराबर भुगतान नही मिलता।

इस प्रकार वीजर उत्पादन लागत की वस्तुगत व्याख्या नही करते बल्कि अवसर लागत के रूप मे उसकी विषयगत व्याख्या करते है, जिसका आविर्भाव उत्पादन की सीमात उपयोगिता से होता है।

(3) मूल्य सिद्धान्त एवं सामाजिक अर्थव्यवस्था (Theory of Value and Social Economy)- वीजर ने आष्ट्रियन सम्प्रदाय, जिसके वे स्वय एक स्तम्भ थे, के मूल्य सिद्धान्त को सर्वोच्च बताया और कहा कि इसमे अर्थव्यवस्था की समस्त समस्याए हल करने की क्षमता है। अत इसे क्रमश सामाजिक अर्थव्यवस्था पर लागू किया जा सकता है।

ज्ञातव्य है कि सन् 1913 मे प्रकाशित उनकी रचना 'Social Economy' एक उत्कृष्ट कृति है जिसमे उन्होने विभिन्न प्रकार की अर्थव्यवस्थाओ के सदर्भ मे आर्थिक क्रियाओ अर्थात् सामाजिक अर्थशास्त्र का विश्लेषण किया है। अध्ययन की सुविधा के लिए इसे निम्नाकित तीन भागो मे बॉटा जा सकता है–

(a) विनिमय अर्थव्यवस्था (Exchange Economy)- इसके अधीन उन्होने सर्वप्रथम वैयक्तिक आर्थिक व्यवहार की व्याख्या की। तत्पश्चात् उन्होने क्रमश. सामाजिक अर्थव्यवस्था, राज्य अर्थव्यवस्था और अन्त मे विश्व अर्थव्यवस्था की कार्य–प्रणाली समझायी। वैयक्तिक एव राज्य अर्थव्यवस्था का अन्तर स्पष्ट करते हुए उन्होने बताया कि राज्य का मूल्याकन वैयक्तिक मूल्यांकन से भिन्न होता है क्योकि,

(i) राज्य जहाँ केवल वस्तुओ का नियमन एव नियत्रण करता है वहा व्यक्ति स्वयं उनका उत्पादनकर्ता होता है।

(ii) राज्य जन कल्याण की नि:शुल्क सेवाये प्रदान करता है जबकि वैयक्तिक व्यवहार सदैव लाभ एवं सतुष्टि अधिकतमीकरण के उद्देश्यो से प्रेरित रहता है।

(iii) सीमा सम्बन्धी विश्लेषण जहाँ वैयक्तिक व्यवहार की व्याख्या मे विनिमय मूल्यो के सम्बन्ध मे लागू होता है, वहां राज्य अर्थव्यवस्था के सदर्भ में उपभोग मूल्यो के सम्बन्ध मे लागू होता है अर्थात् वैयक्तिक अर्थव्यवस्था मूल्य अधिकतम करना चाहती है जबकि राज्य अर्थव्यवस्था सामाजिक उपयोगिता अधिकतम करने के लिए प्रयत्नशील रहती है। वीजर के अनुसार इसी आधार पर व्यक्ति एवं राज्य के उद्देश्यो के बीच संघर्ष रहता है। उन्होने बताया कि अर्थव्यवस्था का आर्थिक ढाँचा कैसा ही क्यो न हो उसमे सामाजिक उपयोगिता अधिकतम करने का उद्देश्य ही प्रधान रहता है। किन्तु, राज्य जिन

सामाजिक उपयोगिताओ को अधिकतम करना चाहता है, वे अस्पष्ट रहती है अत उनका सही–सही माप सम्भव नही और सामाजिक नीतियो के निर्धारण मे विनिमय मूल्य, जिनकी गणना सम्भव है, को प्रामाणिक आधार नहीं माना जा सकता। इसीलिए उन्होने विनिमय प्रधान अर्थव्यवस्थाओ मे स्वतंत्र बाजार प्रक्रिया पर बल दिया।

वीजर ने बताया कि विनिमय प्रधान अर्थव्यवस्था मे कीमतो से सापेक्ष सीमात उपयोगिताओ की सही जानकारी नही मिलती क्योकि आय एव धन *की असमनताए वस्तुओ की सीमात उपयोगिताओ मे अन्तर उत्पन्न कर देती है* तथा उत्पादन 'आवश्यकता प्रेरित' (need oriented) न होकर 'बाजार प्रेरित' हो जाता है। अत आय असमानताए दूर करने की आवश्यकता अनुभव की जाती है।

वीजर ने बताया कि सीमातवाद विभिन्न अर्थव्यवस्थाओ एव आर्थिक प्रणालियो के बीच इसमे (आय असमानताए दूर करना) तटस्थ है और इसका साधनो के न्यायोचित वितरण मे प्रयोग किया जा सकता है। उन्होने आर्थिक जीवन मे सरकारी हस्तक्षेप का समर्थन किया और इसके निम्नाकित चार कारण बताये–

(i) सुरक्षा, न्याय, शांति–व्यवस्था आदि की सेवाए वैयक्तिक आधार पर नही मिल सकती। इसे उन्होने सस्थाओ की जरूरते कहा है।
(ii) सामाजिक पूँजी (social overheads) यथा,– बिजली, पानी, सड़क, सचार, गैस आदि की सुविधाओ मे लाभ बहुत कम एव अनिश्चित रहते है अत इन क्षेत्रो मे निजी साहसी पहल नही करते।
(iii) पूँजीपतियो एव उद्यमकर्त्ताओं की कमी पूरी करने के लिए आर्थिक क्रियाओ मे सरकारी सहभागिता एवं हस्तक्षेप वांछनीय है और
(iv) निजी हाथो मे सत्ता के केन्द्रीकरण, यथा– ट्रस्ट, कार्टेल एवं एकाधिकारो की स्थापना आदि को रोकने के लिए सरकारी हस्तक्षेप जरूरी है।

सामाजिक अर्थव्यवस्था मे मूल्य सिद्धान्त की व्याख्या के लिए वीजर ने समाजशास्त्रीय सिद्धान्तो की सहायता लेने का समर्थन किया। उन्होने बताया कि समाज मे तीन तरह के लोग–अमीर, गरीब एवं मध्यवर्गीय है। इसी आधार पर उन्होने वस्तुओ के निम्नांकित तीन रूपो का उल्लेख किया–

(i) **श्रमिक वर्ग द्वारा काम में ली जाने वाली वस्तुएँ**– ये मुख्यत अनिवार्यताएँ होती है। इनका मूल्य उपभोक्ताओ के सीमांत मूल्यांकन से निर्धारित होता है।
(ii) **सम्पन्न वर्ग द्वारा काम में ली जाने वाली वस्तुएँ**– ये मुख्यत विलासिताएँ होती है। इनका मूल्य अमीरों के लिए इन वस्तुओ की सीमांत उपयोगिता

द्वारा निर्धारित होता हैं ।

(iii) **अंशतः निर्धन एवं अंशतः मध्यवर्ग द्वारा काम में ली जाने वाली वस्तुएँ**- इनका मूल्याकन मध्यम वर्ग के मूल्याकन द्वारा होता है ।

इसी आधार पर वीजर ने बताया कि क्योकि कीमतो का निर्धारण वस्तुओ की माँग द्वारा होता है, अत आधुनिक जटिल सामाजिक व्यवस्था मे मूल्य निर्धारण की समस्या का अध्ययन करना एक जटिल कार्य है और इसका निर्धारण एव विवेचन उत्पादन लागत सिद्धान्त की सहायता से नही किया जा सकता ।

उपर्युक्त बातो के अलावा वीजर राष्ट्र की उत्पादक शक्तियो को विकसित करने के हिमायती थे । वे एकाधिकारो पर रोक लगाने के भी समर्थक थे । किन्तु, प्रतिष्ठित सम्प्रदाय ने अकारण एकाधिकार का जो विरोध किया, उसे उन्होने पसद नही किया ।

(b) **पूँजीवाद का विश्लेषण (Analysis of capitalism)**- वीजर ने प्रतिस्पर्धा, जो पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की जीवन-शक्ति है, को हानिकारक माना और कहा कि इसी के कारण पूँजीवादी अर्थव्यवस्था मे आर्थिक सकटो का उदय एव उनकी पुनरावृत्ति होती है अत इस पर नियत्रण लागू करना चाहिये । इस दृष्टि से उनके विचार ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो से अधिक मेल खाते है । उन्ही के शब्दो मे, "प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो का अहस्तक्षेप का सिद्धान्त अस्वीकृत हो चुका है । राज्य द्वारा सरक्षण का आधुनिक सिद्धान्त आर्थिक नीति का सबसे महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक परिणाम है जिसे स्वीकार कर लिया गया है । इस विचार की स्थापना करने एव प्रतिष्ठित विचारधारा के दृढ सिद्धान्त का खण्डन करने का श्रेय जर्मन अर्थशास्त्रियो को है ।"

वीजर ने बताया कि एक पूँजीवादी अर्थव्यवस्था आर्थिक की तुलना मे सामाजिक दृष्टि से अधिक बुरी होती है क्योकि,

(i) आय एव सम्पत्ति के वितरण मे असमानताए उत्पन्न हो जाती हैं और आर्थिक शोषण बढ़ जाता है ।

(ii) ऊँची मजदूरियो के प्रलोभन मे जनसख्या का शहरीकरण हो जाता है जिससे अनेक सामाजिक दोष उत्पन्न हो जाते है ।

(iii) मालिक-मजदूर सम्बन्ध बिगड़ने से श्रम-पूँजी विवाद बढ जाते हैं और औद्योगिक अशाति उत्पन्न हो जाती है ।

उपर्युक्त दोषो के निराकरण मे वीजर ने श्रम-सघो की महत्ता स्वीकार की और बताया कि वे ही उद्यमियो को इस बात के लिए विवश कर सकते हैं कि श्रम को प्रतियोगी मूल्य दिया जाये ।

(c) **मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed economy)**- वीजर विकेंद्रित मिश्रित आर्थिक प्रणाली के समर्थक थे । इसकी स्थापना के लिए उन्होने प्रतियोगिता

को सबसे ज्यादा प्रेरक शक्ति बताया और कहा कि किसी अर्थव्यवस्था के लिए केवल प्रतियोगी एव विकेन्द्रित आर्थिक प्रणाली ही सर्वोतम है । उन्होने बताया कि पूजीवादी आर्थिक प्रणाली मे जहा आर्थिक शक्तियो का दुरुपयोग होता है, वहा समाजवादी व्यवस्था मे स्वच्छेचारिता (Depotism) पनपेगी । अत मिश्रित अर्थव्यवस्था ही श्रेष्ठ है, जो इन दोनो के दोषो के मुक्त रहती है । इसी के द्वारा आर्थिक स्वतन्त्रता, निर्बाधावाद एव राज्य नियत्रण मे आवश्यक सामजस्य स्थापित किया जा सकता है । यह पूर्ण सामाजीकरण (समाजवाद) एव विशुद्ध निर्बाधावाद (पूँजीवाद) के बीच का मार्ग है ।

मूल्यांकन

(Evaluation)

वीजर अपने विचारो की मौलिकता एव अभिव्यक्ति की उत्कृष्टता के लिए आर्थिक विचारो के इतिहास मे सुविख्यात है और उनका योगदान प्रशसनीय है । वे हरबर्ट स्पेन्सर एव टॉलस्टाय से प्रभावित थे । ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो का गहन अध्ययन करने के बावजूद उन्होने उनकी परम्परा को स्वीकार नही किया । उन्होने आधार रूप मे मेजर की विषयगत विचारधारा स्वीकार की किन्तु, उसका कही पर भी अधानुकरण नही किया । वे विशुद्ध सिद्धान्तो के निर्माता नही थे बल्कि एक मध्य मार्गी विचारक थे जिन्होने अपने सिद्धान्तो की व्यावहारिकता पर बराबर नजर रखी । सम–सीमात उपयोगिता नियम, उत्पत्ति के साधनो का वर्गीकरण, सामाजिक आर्थिक प्रणाली आदि उनके उल्लेखनीय एवं मौलिक योगदान हैं ।.

3. यूजिन वॉन बाम बावर्क (Eugen Von Bohm Bawerk)

सॅक्षिप्त जीवन परिचय

(Brief Life Sketch)

आस्ट्रियन त्रयी के सबसे विख्यात एव अतिम विचारक बाम बावर्क का जन्म सन् 1851 मे मोराविया मे ब्रुन नामक स्थान पर हुआ । आपने वियना विश्वविद्यालय मे कानून और हिडेलबर्ग, लिपजिग एव जेना विश्वविद्यालयो मे अर्थशास्त्र पढ़ा । अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् आपने प्रारम्भ मे आस्ट्रिया सरकार की प्रशासनिक सेवा मे नौकरी की । सन् 1881–89 के बीच आप इन्सब्रक विश्वविद्यालय मे प्राध्यापक रहे । यह उनके जीवन काल का प्रथम चरण था ।

अपने जीवन के दूसरे चरण मे आप सन् 1895, 1897 और 1900 मे आस्ट्रियन सरकार मे वित्तमत्री रहे और तीसरे एव अतिम चरण मे सन् 1904 मे आप वियना विश्वविद्यालय आ गये । अब आपने अपनी रचनाओ को दोहराया और क्लार्क, फिशर एव शुम्पीटर आदि बुद्धिजीवियो के निकट सम्पर्क मे आये । आप वीजर के साले थे । सन् 1914 मे आपकी मृत्यु हो गयी ।

प्रमुख कृतियाँ

(Major Works)

बावर्क की रचनाओ में निम्नांकित उल्लेखनीय है—

(1) Capital and Interest Theories (प्रथम खण्ड) (1884)
(History and criticism of interest theories)
(2) Marx and the close of his System (1886)
(3) Outline of the Theory of Commodity Values (1886)
(4) The Positive Theory of Capital (1889)

प्रमुख आर्थिक विचार

(Major Economic Ideas)-

बाम बावर्क के आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है—

(1) ब्याज का सिद्धान्त (The Theory of Interest) ब्याज का सिद्धान्त बावर्क का सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान है। उनके सिद्धान्त को ब्याज का आस्ट्रियन सिद्धान्त अथवा बट्टा (Agio) सिद्धान्त कहा जाता है। उस समय तक प्रतिपादित एव प्रचलित ब्याज के सभी सिद्धान्तो की आलोचना कर उन्होने अपना यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उन्होने ब्याज दर निर्धारण को बचत, विनियोग, पूँजी की उत्पादकता आदि वास्तविक घटको का परिणाम गाना अत उनके इस सिद्धान्त की गणना ब्याज के वास्तविक सिद्धान्तो मे की जाती है और साथ मे विषयगत घटको का उल्लेख करने के कारण यह एक विशुद्ध मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है।

बावर्क ने माना कि जब कभी पूँजी का उत्पादक उपयोग होता है तो पूँजीपति को कुछ आधिक्य आय मिलती है और यह पूँजी की राशि के अनुपात मे होती है। अत यह प्रश्न विचारणीय है कि पूँजी के स्वामी को यह आय क्यो और कैसे मिलती है ? बावर्क ने इन प्रश्नो का हल अपने ब्याज सिद्धान्त मे खोजा और पाया कि पूजी के सहयोग से उत्पादित वस्तुओ का मूल्य उनके उत्पादन मे लगे साधनो के मूल्य से अधिक होता है अर्थात् पूँजी मे अपने मूल्य से अधिक की वस्तुएँ उत्पन्न करने की शक्ति होती है और इससे जो आधिक्य मिलता है वह ब्याज कहलाता है।

ब्याज की समस्या का उल्लेख करते हुए उन्होने बताया कि "ब्याज की समस्या उन कारणो का अध्ययन एव स्पष्टीकरण करना है जिससे वस्तुओ के राष्ट्रीय उत्पादन का एक भाग पूँजीपतियो को हस्तातरित होता है।' इस प्रकार उन्होने ब्याज की समस्या को वितरण की एक समस्या माना और कहा कि 'राष्ट्रीय आय के प्रवाह के कारण पूँजीपति ब्याज के नाम से उसका एक भाग प्राप्त करते है।' उन्होने बताया कि ब्याज की समस्या एक ही प्रकार

तथा एक ही परिमाण की वर्तमान तथा भावी वस्तुओं के सापेक्षिक मूल्य की समस्या है । बावर्क अनुसार ब्याज की साम्यदर मे तीन घटको की भूमिका रहती है–

(i) **जीवन-निर्वाह कोष का आकार**– यह कोष जितना बड़ा होता है, ब्याज दर उतनी ही नीची एव विलोमशः ऊँची होती है क्योकि जब यह कोष बड़ा होता है तो राष्ट्रीय आय अथवा सामूहिक उत्पादन का अपेक्षाकृत बड़ा भाग इस कोष मे चला जाता है ।
(ii) **उपलब्ध श्रम की मात्रा**– यह मात्रा जितनी ज्यादा होती है ब्याज दर उतनी ही ऊंची होती है ।
(iii) **प्राप्त उत्पादकता का अंश अथवा तकनीकी दशाएं**– इनका भी ब्याज दर के साथ धनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है ।

बावर्क ने बताया कि ब्याज दर का कार्य उत्पादन की सामाजिक अवधि कम करना होता है । ब्याज की प्रकृति (वर्तमान मे वस्तुओं का विषयगत मूल्य भविष्य मे उसी प्रकार की एवं उतनी ही वस्तुओ की अपेक्षा अधिक होता है) का उल्लेख करते हुए उन्होने बताया कि ब्याज की प्रकृति उत्पत्ति के अन्य साधनो की आयो से भिन्न होती है । यह भिन्नता दर्शाते हुए उन्होने बताया कि 'यही आय ऐसी है जिसके सृजन मे उसके साधक अर्थात् पूँजीपति को अपना हाथ तो क्या अंगुली भी नही हिलानी पड़ती ।'

बावर्क ने ब्याज की समस्या के तीन रूप माने, यथा–

(i) सैद्धान्तिक रूप अर्थात् ब्याज क्या है और इसका सृजन क्यो होता है ?;
(ii) सामाजिक रूप और
(iii) राजनैतिक रूप । अंतिम दो रूपो की विषय सामग्री यह है कि ब्याज दिया जाये अथवा नही और यदि दिया जाये तो फिर उसका आधार क्या हो ? बावर्क का सम्बन्ध मुख्यतः समस्या के सैद्धान्तिक पक्ष से ही रहा ।

बावर्क ने बताया कि हम भविष्य का मूल्य वर्तमान की तुलना में नीचा आंकते है । दूसरे शब्दो मे, वर्तमान अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योकि,

(i) भविष्य अनिश्चित है; अतः वर्तमान मे एक दी हुई राशि से जितनी सीमांत उपयोगिता मिलती है, वह भविष्य में उतनी ही राशि से मिलने वाली सीमांत उपयोगिता से अधिक होती है ।
(ii) भविष्य अनिश्चित है; अतः वर्तमान मे एक दी हुई राशि की जितनी सीमांत उपयोगिता मिलती है, वह भविष्य मे उतनी ही राशि से मिलने वाली सीमांत उपयोगिता से अधिक होती है ।
(iii) वर्तमान वस्तुओ से भावी वस्तुओ की अपेक्षा अधिक संतुष्टि एवं सीमांत उपयोगिता मिलती है क्योकि, भविष्य मे उत्पादन वृद्धि से वस्तुओ की सीमांत उपयोगिता गिर जाती है ।

उपर्युक्त कारणो से बावर्क ने बताया कि, प्रत्येक व्यक्ति भविष्य की तुलना मे वर्तमान के प्रति अपनी पसदगी व्यक्त करता है और भविष्य की तुलना मे वर्तमान आवश्यकताओ पर अपनी आय खर्च कर एक प्रकार का प्रीमियम प्राप्त करता है। जब वह व्यक्ति अपनी आय को व्यय न कर बचा लेता है और किसी दूसरे को उधार दे देता है तो वह इस प्रीमियम से वचित हो जाता है। अत ब्याज के रूप मे वह इस वचन की क्षति–पूर्ति चाहता है।

बावर्क ने बताया कि उत्पादन की घुमावदार विधिया (Round about methods) अपेक्षाकृत अधिक उत्पादक होती है। इन विधियो के प्रयोग के लिए एक तो उपभोक्ता वस्तुओ को पूँजीगत वस्तुओ मे बदलने के लिए अधिक लम्बे समय की आवश्यकता पड़ती है और दूसरे, अधिक बचत, पूँजी सचय एव पूँजी निर्माण की आवश्यकता होती है। दूसरे शब्दो मे, पूँजी–निर्माण के लिए वर्तमान उपभोग का स्थगन कर बचत करना आवश्यक है।

इस प्रकार बावर्क के मतानुसार बचत को प्रोत्साहित करने के लिए ब्याज का भुगतान आवश्यक है। ब्याज का भुगतान कैसे किया जाये ? का वे स्पष्ट हल तो नही दे पाये तथापि यह दर्शाया कि पूँजी के स्थगित उत्पादन मे से ब्याज का भुगतान सम्भव है और भविष्य को बट्टे पर आकने के कारण ब्याज की उत्पत्ति होती है। दूसरे शब्दो मे, बचतकर्ता अपनी बचत की राशि को एक निश्चित समय तक त्यागने के लिए कुछ प्रीमियम चाहता है और यही प्रीमियम ब्याज है।

बावर्क का ब्याज का सिद्धान्त विशुद्ध रूप से उनका अपना एव मौलिक सिद्धान्त था। नि सदेह यह आर्थिक सिद्धान्तो की एक अति सुन्दर उपलब्धि था। किन्तु, समय बीतने के साथ–साथ ब्याज के अन्य सिद्धान्तो के विकास से इस सिद्धान्त ने अपनी चमक खो दी तथापि यह निम्नाकित दृष्टियो से अच्छा था–

(i) बचतकर्त्ता स्वय अपनी बचतो का प्रयोग करने पर भी ब्याज चाहेगा।
(ii) न केवल उत्पादक अपितु पूँजी के अनुत्पादक प्रयोग पर भी ब्याज की देनदारी उत्पन्न होगी।
(iii) यह ब्याज दर निर्धारण का इस समय तक का सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त था।

उपर्युक्त श्रेष्ठताओ के बावजूद बाद के अर्थशास्त्रियो ने इसे एकपक्षीय (केवल पूँजी की पूर्ति पर ही बल देता है) बताकर अस्वीकार कर दिया। प्रो. वाकर एव मार्शल ने बावर्क की यह कहकर आलोचना की कि उन्होने बहुत से पूर्वप्रतिपादित सिद्धान्तो एव अर्थशास्त्रियो को समझने मे भूल की और उनकी गलत व्याख्या की। कार्वर ने उनके सिद्धान्त को विलियम नासौ सीनियर के त्याग सिद्धान्त के बिल्कुल समकक्ष बताया और कहा कि यह केवल उसी की

पुनर्व्याख्या था ।

(2) पूँजी (Capital)

बावर्क ने, एडम स्मिथ की भांति, पूँजी को वस्तुओ का समूह बताते हुए कहा कि यह एक ऐसा समूह है जो और ज्यादा उत्पादन करने मे सहायक होता है । सामग्रियो की सहायता से श्रमिक इस समूह को गति प्रदान कर उसमे शक्ति का सचार करते है और उसके कार्य–सचालन की देखभाल करते है । इससे उत्पादन होता है । उन्होने बताया कि जैसे–जैसे मनुष्य प्राकृतिक शक्तियो एव सामग्रियो से अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने का प्रयास करता है वैसे–वैसे उत्पादन की क्रिया घुमावदार होती जाती है । इससे दो प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त होती है– (i) उपभोक्ता वस्तुएँ और (ii) उत्पादक वस्तुएँ । बावर्क ने उत्पादक वस्तुओ को पूँजी बताया और कहा कि श्रम एव प्राकृतिक शक्तियो का प्रयोग जब भावी उपभोग के लिए किया जाता है तब ऐसी उत्पादक वस्तुओ का उत्पादन होता है । उनके अनुसार पूँजी का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत बचत है और पूँजी–निर्माण पर देशवासियो की बचत का प्रत्यक्ष एव धनात्मक प्रभाव पड़ता है । अत जब बचत शून्य होगी तो बावर्क के अनुसार पूँजी भी शून्य होगी ।

बावर्क पूँजी को धन एव उत्पादन का मूल और स्वतत्र साधन नही मानते । वे इसे श्रम एव प्रकृति का मध्यवर्ती उत्पाद मानते है । अत. उन्होने बताया कि घुमावदार उत्पादन प्रक्रिया मे पूँजी से पूँजी–निर्माण का क्रम चलता है । उन्होने पूँजी को राष्ट्रीय एव वैयक्तिक पूँजी मे विभाजित किया और कहा कि इन दोनो मे राष्ट्रीय पूँजी की अवधारणा अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

(3) मूल्य सिद्धान्त (The Theory of Value)

बावर्क के मूल्य सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताए निम्नाकित है–

(a) मूल्य का सीमांत युग्मों का सिद्धान्त (Marginal Pair's theory of Value)· मेजर द्वारा प्रतिपादित मूल्य के विषयगत सिद्धान्त के आधार पर बावर्क ने मूल्य के सीमात युग्मो के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । वे अपनी व्याख्या एकाकी विनिमय (isolated) exchange) से प्रारम्भ करते हैं जिसमे एक क्रेता वस्तु का ज्यादा से ज्यादा मूल्य उसकी सीमात उपयोगिता के बराबर दे सकता है किन्तु, वह कम से कम मूल्य देना चाहता है । ठीक इससे विपरीत एक विक्रेता वस्तु का कम से कम मूल्य उसकी उत्पादन लागत के बराबर वसूल कर सकता है, किन्तु वह उसका अधिक से अधिक मूल्य लेना चाहता है। इस प्रकार क्रेता द्वारा मूल्य की उच्चतम एव विक्रेता द्वारा न्यूनतम सीमा निर्धारित की जाती है और वस्तु का मूल्य इन दोनो सीमाओं के बीच उन दोनो की सापेक्षिक सौदेबाजी की शक्ति पर निर्भर करता है । उन्ही के शब्दो मे, "एकाकी विनिमय मे मूल्य का निर्धारण उन दो सीमाओ के बीच किसी बिन्दु

पर होगा जिस पर उस वस्तु के विषय मे क्रेता का विषयगत मूल्याकन ऊपरी सीमा होगा और विक्रेता का विषयगत मूल्याकन निचली सीमा होगा।''

एकाकी विनिमय के पश्चात् बावर्क ऐसे विनिमय की व्याख्या करते है जिसमे बहुत से क्रेता वस्तु खरीदने मे प्रतिस्पर्धा करते है (विक्रेता एकाकी विनिमिय की भाति एक है) और उनमे सबसे ऊँचा मूल्य चुकाने वाला क्रेता वस्तु पाने मे समर्थ हो जाता है। इस क्रेता द्वारा चुकाया गया मूल्य असफल क्रेताओ मे सबसे ऊँची बोली लगाने वाले क्रेता से ऊँचा होगा।

अन्त मे, बावर्क ऐसे विनिमय की व्याख्या करते है जिसमे बहुत से क्रेता और विक्रेता परस्पर खुली प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसके आधार पर उन्होने *मूल्य–निर्धारण का सीमात युग्मो का सिद्धान्त प्रतिपादित किया*। उन्होने बताया कि विनिमय की इस स्थिति मे प्रत्येक क्रेता एव विक्रेता वस्तु का अलग–अलग मूल्याकन करता है। अब कीमत का निर्धारण क्रेताओ एव विक्रेताओ के युग्मो द्वारा निर्धारित निश्चित सीमाओ के बीच होता है। एक युग्म उस क्रेता एव विक्रेता का होता है जो विनिमय करने मे सफल हो जाता है और दूसरा युग्म उस क्रेता एव विक्रेता का होता है जो इसमे सफल नही हो पाता। बावर्क ने बताया कि मूल्य का निर्धारण उन सीमाओ के बीच होगा जो सीमात युग्मो के विषयगत मूल्याकन द्वारा निर्धारित होती है। उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर बावर्क ने निम्नाकित दो निष्कर्ष दिये–

(i) प्रत्येक बाजार मूल्य अपने आप मे सीमात मूल्य होता है और
(ii) बाह्य रूप में वस्तुगत दिखायी देने वाला मूल्य मूलत विषयगत मूल्याकनो का परिणाम है।

(b) पूरक वस्तुओं का मूल्य (Value of complementary Goods)- बावर्क के अनुसार इसके मूल्य निर्धारण की तीन स्थितियाँ है–

(i) जिसमे विभिन्न पूरक वस्तुओ का प्रयोग एक साथ किया जाता है। इस स्थिति मे उनका परस्पर स्थानापन्न नही हो सकता और प्रत्येक वस्तु की सयुक्त उपयोगिता होती है, जैसे–जूतो के जोड़े मे दोनो जूतो की।
(ii) जिसमे वस्तुएँ सयुक्त उपभोग से बाहर वैयक्तिक आधार पर भी काम आ सकती हैं, यद्यपि दूसरे प्रयोगो मे उनकी उपयोगिता कम होती है।
(iii) जिसमें एक समूह की वैयक्तिक वस्तुएँ न केवल अन्य उद्देश्यो के लिए प्रयोग मे लायी जा सकती है अपितु उसी प्रकार की अन्य वस्तुओ से भी प्रतिस्थापित की जा सकती है।

पूरक वस्तुओ के मूल्याकन के आधार पर बावर्क ने समाज मे धन के वितरण के क्रम की व्याख्या की।

मूल्यांकन
(Evaluation)

बावर्क का अपने ब्याज सिद्धान्त के कारण अर्थिक विचारो के इतिहास मे नाम सदैव अमर रहेगा। उनकी महत्ता तो इसी तथ्य से सिद्ध हो जाती है कि उनकी तुलना कार्ल मार्क्स से की जाती है। प्रो शुम्पीटर ने उन्हे 'बुर्जुआ मार्क्स' (Bourgeois Marx) बताया और कहा कि "अपने फलदायी मौलिक विचारो, गहन सृजनात्मक शक्ति, प्रस्तुतीकरण की तेजस्वी शैली, नेतृत्व का अद्‌भुत पुरस्कार, आक्रामक एव सुरक्षात्मक खण्डन–मण्डन की सदैव तैयारी और अन्य सभी चारित्रिक एव बौद्धिक गुण जो एक अच्छे शिक्षक की पहचान माने जा सकते है, के कारण वे अमर है।' वे एकमात्र आष्ट्रियन अर्थशास्त्री थे जिन्होने उत्पत्ति के तीनो साधनो–भूमि, श्रम एव पूँजी को समान रूप से महत्त्वपूर्ण माना। उनका ब्याज का सिद्धान्त प्रथम वैज्ञानिक सिद्धान्त था। उन्होने ही सर्वप्रथम यह तथ्य उद्घाटित किया कि अर्थव्यवस्था का सामान्य रुप से स्वीकृत सिद्धान्त न्यूनतम त्याग पर अधिकतम सतुष्टि प्राप्त करना है। उनकी भविष्यवाणिया सही निकली। उन्होने कहा था कि मार्क्सवाद खत्म हो सकता है, किन्तु इसके बावजूद समाजवाद न केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से अपितु व्यावहारिक दृष्टि से भी अपनी महत्ता बनाये रखेगा। एक कट्टर व्यक्तिवादी होने के बावजूद वे समाजवाद के समर्थक बने रहे। उनकी प्रशसा मे एजवर्थ ने कहा कि, "बाम बावर्क की रचनाओ के अनुवाद ने इस आष्ट्रियन नेता को इग्लैण्ड एव अमरीका मे अपने सम्प्रदाय का सर्वश्रेष्ठ एव विख्यात प्रतिनिधि बना दिया।"

आष्ट्रियन सम्प्रदाय का आलोचनात्मक मूल्यांकन
(Critical Appraisal of Austrian School)

जेम्स बोनर, जे बी क्लार्क, वाकर, डिकिन्सन, डेवेनपोर्ट, नाइट, एण्डरसन, जैकब वाइनर एव अन्य अनेक लेखको ने आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो के आर्थिक चितन एव सिद्धान्तों की कटु आलोचना की, जिसके निम्नांकित बिन्दु विशेषत उल्लेखनीय है–

(1) आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो ने यद्यपि प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के आर्थिक चिंतन की आलोचना कर अपने विचार एव सिद्धान्त प्रस्तुत किये, किन्तु आलोचको के मतानुसार स्वभाव, विषय–सामग्री, उद्देश्यो एव अध्ययन पद्धतियों की दृष्टि से इन दोनो सम्प्रदायो में कोई मौलिक एव आधारभूत अन्तर नही है। आष्ट्रियन सम्प्रदायवादी भौतिकवाद, व्यक्तिवाद और सुखवाद के आधार पर एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो के समकक्ष ही है। दोनो ही सम्प्रदायो ने मुख्यत आर्थिक अध्ययन की निगमन प्रणाली का प्रयोग किया। दोनो ने ही पूर्ण प्रतिस्पर्धा की अवास्तविक मान्यता का सहारा

लेकर आर्थिक मानव के व्यवहार का अध्ययन किया । आलोचको के अनुसार विषयगत सम्प्रदायवादियो के 'सुख' अथवा 'आनन्द' और प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के 'स्वहित' के विचार मे कोई मौलिक अन्तर नही है । इस दृष्टि से आष्ट्रियन सम्प्रदाय आर्थिक विचारो के इतिहास मे कोई आधारभूत एव दिशासूचक मोड नही दे सका ।

(2) आलोचको के अनुसार यदि आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो ने प्रतिष्ठित मूल्य सिद्धान्त को एकपक्षीय एव अधूरा बताकर आलोचना की तो उनका विषयगत सिद्धान्त भी इन्ही दोषो से ग्रसित है । मूल्य निर्धारण मे इन्होने वस्तु की उत्पादन लागत की पूर्णत उपेक्षा करदी जबकि दीर्घकालीन मूल्य आवश्यक रूप से न केवल उत्पादन लागत द्वारा निर्धारित होता है बल्कि ठीक उसके बराबर होता है ।

(3) आलोचको के मतानुसार आष्ट्रियन सिद्धान्त अति व्यक्तिपरक एव एक दृष्टि से परमाण्विकी (atomistic) है। इसका केन्द्र बिन्दु व्यक्ति एव उसकी सतुष्टि अधिकतमीकरण है । वास्तव मे, अर्थशास्त्र को इतना ही मान लेना उचित नही । व्यक्तिवाद पर यह सम्प्रदाय सस्थाओ एव मानवीय जीवन के उद्देश्यो से भी अधिक बल देता है, जो उचित नही । आलोचको के अनुसार सकीर्ण वैयक्तिक प्रवृत्ति के कारण इनके विश्लेषण मे अन्य अनेक कमिया रह गयी है ।

(4) आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो का सबसे प्रमुख विश्लेषणात्मक उपकरण सीमात उपयोगिता है । आलोचको के अनुसार वे सीमात उपयोगिता की व्याख्या करने मे विफल रहे । यह मुख्य रूप से एक वैयक्तिक घटना है इसलिए सामाजिक आधार पर हम इसका प्रमाप निर्धारित नही कर सकते । इस पर अन्तर्वैयक्तिक मूल्याकन यथा–रीति–रिवाज, आय वितरण आदि का भी गहरा प्रभाव पडता है जिसका माप तो दूर उन्होने कल्पना तक नही की । आलोचको के अनुसार मनोभावनाओ अथवा मनोवैज्ञानिक घटको (सीमात उपयोगिता एक ऐसा ही घटक है) को मूल्य निर्धारण मे महत्त्वपूर्ण तो माना जा सकता है किन्तु, इन्हे एकमात्र कारण मान लेना भूल है और आष्ट्रियन अर्थशास्त्रियो ने यही भूल की ।

(5) आलोचको के अनुसार आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो का चिन्तन द्वैतवादी है । एक ओर जहा वे विशुद्ध आदर्शवादी नजर आते है वहा दूसरी ओर वे कही–कही भौतिकवाद के बहुत निकट आ जाते है । वीजर ने इस द्वैतवाद को स्पष्ट शब्दो मे स्वीकार किया । उन्ही के शब्दो मे, ''हमने श्रम एव उपयोगिता के द्वैतवाद को समाप्त करने का प्रयास किया है । यह ऐसे कारणो का मिश्रण है जिसमे एकता नही हो सकती और यह केवल इतना ही सिद्ध करता है कि अभी तक सही कारण स्वीकार नही किया गया है ।'' इस प्रकार जैसा कि प्रो हैने ने बताया, ''यह स्पष्ट है कि उन्होने लागत–वस्तुओ और

एकाधिकार वस्तुओ, लागत–साधनो और विशिष्ट साधनो आदि के जो अन्तर किया है, उससे वे एक प्रकार से द्वैतवाद की ओर लौट आये है जिसमे आपस मे कोई सामजस्य नही है ।" दूसरे शब्दो मे, उनका द्वैतवाद सगतिहीन बना रहा ।

(6) आलोचको के मतानुसार आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो के आर्थिक दर्शन मे पारस्परिक विरोधाभास है । उदाहरण के लिए, बावर्क एक ओर सामाजिक अर्थव्यवस्था की चर्चा करते है किन्तु, दूसरी ओर वे अध्ययन की *निगमन प्रणाली का प्रयोग करते हैं जबकि सामाजिक अर्थव्यवस्था का* विश्लेषण, बिना आगमन प्रणाली के सहयोग के, अकेली निगमन प्रणाली नही कर सकती । इससे उनका आर्थिक चितन दोषपूर्ण हो गया ।

(7) यद्यपि, आष्ट्रियन विचारको ने तर्क–वितर्क पर आधारित निगमन प्रणाली का ही मुख्यत प्रयोग किया किन्तु, उनके विश्लेषण मे अनेक तार्किक दोष है । उदाहरणार्थ, उन्होने इच्छाओ की विद्यमानता स्वीकार करली जबकि वास्तव मे इच्छाओ का आधार मनोविज्ञान नही बल्कि जैविक एव सामाजिक कारण है और उपभोक्ता का आचरण ही उसकी इच्छाओ का आधार है ! उन्होने भावनाओ और उपयोगिताओ को एक मान लिया जबकि तार्किक आधार पर इन दोनो को आसानी से अलग–अलग किया जा सकता है । इसीलिए वे सीमात उपयोगिता एव मूल्य के बीच परिमाणात्मक सम्बन्धो का वैज्ञानिक ढग से प्रस्तुतीकरण नही कर पाये ! इसी प्रकार यदि एक ओर उन्होने पूर्ण तथा निहित मूल्य अवधारणाओ की आलोचना की तो दूसरी ओर सीमात उपयोगिता एव सीमात उत्पादकता जैसे अवास्तविक विचारो की आलोचना का खुला निमत्रण अपने आलोचको को दे बैठे ।

(8) आलोचको के अनुसार उन्होने अपने विषयगतवाद को एक अवास्तविक विषय के चारो ओर विकसित किया । दूसरे शब्दो मे, उसे एक गलत मनोविज्ञान पर आधारित किया । वे केवल विषयगत तत्त्व को साथ लेकर चले । वे सुखवाद से चले और निगमन प्रणाली के सहारे तर्क–वितर्क के जाल मे फस कर रह गये । उन्होने असत्य को सत्य और वैयक्तिक को सार्वभौमिक मान लिया ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर सहज ही मे यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि आष्ट्रियन सम्प्रदायवादी अर्थशास्त्र के पुनर्निर्माण के लिए उचित आधार के निर्माण मे असफल रहे । इस मत की पुष्टि प्रो नाइट के इस कथन से भी हो जाती है कि, 'वे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो की तुलना मे सत्य के अधिक निकट नही थे ।"[3]

---

3 "The utility theorists were no nearer the thruth than the classical economists" Knight F H

किन्तु, उपर्युक्त विवेचन उनके मूल्याकन का केवल एक एव अधूरा पक्ष है । अत वास्तविकता इससे भिन्न है । जब हम निष्पक्ष होकर उनके विचारो एव सिद्धान्तो पर दृष्टिपात करते है तो पाते है कि *आर्थिक अनुसधान* के तीनो ही क्षेत्रो– *आर्थिक सिद्धान्त, विश्लेषण विधि और विश्लेषणात्मक उपकरण*– मे उनका योगदान सराहनीय एव मौलिक है । इसके अलावा जहा वे मौलिक नही है वहाँ उनकी अभिव्यक्ति एव प्रस्तुतीकरण इतना सटीक है कि उनका मौलिक सश्लेषण का दावा सत्य हो जाता है । उनका चिन्तन व्यापक था । उन्होने विषयगलवाद पर आधारित मूल्य निर्धारण की समस्या को एकीकृत रूप मे प्रस्तुत कर उसका सही समाधान खोजने का प्रयास किया । दूसरे शब्दो मे, उन्होने उपयोग–मूल्य एव विनिमय–मूल्य का *पृथक्–पृथक् अस्तित्व अस्वीकार कर उन दोनो को विषयगत मूल्य मे सम्मिलित कर लिया* और यह बताया कि इन दोनो का निर्धारण एक ही नियम से हो सकता है ।

वस्तुत आष्ट्रियन सम्प्रदाय ने मूल्य के विषयगत सिद्धान्त का प्रतिपादन कर उसके विकास का दूसरा चरण आरम्भ किया ।

वे अर्थशास्त्र को अवास्तविक निरपेक्षतावाद के सकीर्ण दायरे से बाहर निकालकर वास्तविक सापेक्षतावाद के क्षेत्र मे लाना चाहते थे, जिसमे वे सफल रहे ।

आष्ट्रियन सम्प्रदायवादियो ने न केवल वस्तुगत एव विषयगत मूल्यो के विभिन्न चरणो एवं उनकी पारस्परिक निर्भरता की व्याख्या की अपितु उन्होने वितरण को भी मूल्य का ही एक रूप मान कर मूल्य एव वितरण के एक एकीकृत एव व्यापक सिद्धान्त के प्रतिपादन का सराहनीय प्रयास किया । उनके द्वारा बताये गये इस मार्ग पर चलकर अर्थशास्त्र ने भविष्य मे प्रगति के पथ पर आगे बढने के लिए लम्बे कदम भरे है ।

उनकी सफलता इसी मे रही की उन्होने प्रचलित अवधारणाओ एव विचारो को परिष्कृत किया, उनका सश्लेषण किया, उन्हे प्रयोग मे लिया और आर्थिक विश्लेषण की एक पूर्ण प्रणाली के रूप मे उन्हे विकसित किया । इस क्रम मे उन्होने कई नये विचारो एव सिद्धान्तों को विकसित किया । वस्तुत मूल्य सिद्धान्त का विस्तार उनकी एक बहुत बड़ी सफलता थी । इसे प्रो हैने ने इन शब्दो मे व्यक्त किया कि, *"आष्ट्रियन आर्थिक चितन का सार यह है कि* उन्होने विषयगतवाद पर आधारित मूल्य की क्रियात्मक व्याख्या एकीकृत एव पूर्णरूपेण की । और यह भी स्पष्ट है कि मूल्याकन मनोवैज्ञानिक का गहन विश्लेषण एव सिद्धान्तो का सयुक्तीकरण उनकी बड़ी उपलब्धिया है ।"

आर्थिक विचारों के इतिहास में आष्ट्रियन सम्प्रदाय का स्थान

(*Place of Austrian School in the History of Economic Thought*)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे *आष्ट्रियन सम्प्रदाय का अपना विशिष्ट* स्थान है । यह सम्प्रदाय मात्र एक आलोचक सम्प्रदाय ही नहीं बल्कि निष्पक्ष

समालोचक एव आर्थिक सिद्धान्तो का रचयिता सम्प्रदाय है । प्रो हैने के मतानुसार इसे 'तीन गुणो का सम्प्रदाय' कहा जा सकता हैं क्योकि (i) इसके तीनो ही प्रमुख कर्णधारो के बीच काफी घनिष्टता रही और तीनो का कार्य क्षेत्र एक रहा । यह विचित्र सयोग है कि तीनो निकट पारिवारिक रिश्तो मे बधे थे और तीनो वियना विश्वविद्यालय मे क्रमश प्राध्यापक रहे । (ii) मूल्य ही तीनो का प्रमुख शोध–विषय रहा और (iii) तीनो ने ही सुखवाद एव निगमन प्रणाली के आधार पर निष्कर्ष प्रतिपादित किये । आर्थिक साहित्य मे सीमात की अवधारणा के प्रतिपादन एव विकास का श्रेय इसी सम्प्रदाय को दिया जाता है । प्रो हैने के मतानुसार इस सम्प्रदाय के विचारो एव सिद्धान्तो का आर्थिक विज्ञान की पुनर्संरचना मे उल्लेखनीय योगदान रहा । इस सम्प्रदाय ने निगमन प्रणाली की पुनर्स्थापना की और नव-प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के विकास की पृष्ठभूमि तैयार की ।

इस सम्प्रदाय के तीनो ही कर्णधार उच्चकोटि के विचारक एव लेखक थे। मेजर की रचना 'Foundations of Economic Theory' वैज्ञानिक अर्थशास्त्र की एक अनूठी कृति है । उन्होने अपने उत्पादन सिन्द्धान्त मे आनुपातिकता के नियम की अवधारणा का समावेश किया जिस पर आगे चल कर उत्पादन फलनो की विस्तृत व्याख्या रची गयी । उनके योगदान वैज्ञानिक एव विश्लेषणात्मक थे । वीजर एक मौलिक विचारक थे । उनकी महान कृति 'The Theory of Social Economy' ने विशुद्ध अर्थशास्त्र एव समाज के सिद्धान्त के समाकलन का साहसिक कार्य किया और इसकी गणना आर्थिक विचारो के इतिहास मे उच्चकोटि के ग्रथो मे की जाती है । बाम बावर्क इस सम्प्रदाय के सबसे प्रतिष्ठित विचारक एव लेखक और आर्थिक विचारो के इतिहास मे एक ख्यातिप्राप्त रचनाकार है ।

इस सम्प्रदाय के प्रयासो से ही अर्थशास्त्र अध्ययन पद्धतियो के मतभेद भूलकर साधन आवटन की समस्या की ओर मुड़ा । इस सम्प्रदाय ने आर्थिक साहित्य को सीमात उपयोगिता, अवसर लागत, अनुपातिकता, मिश्रित अर्थ व्यवस्था आरोपण सिद्धान्त आदि विश्लेषणात्मक उपकरण दिये जिनकी बाद के आर्थिक साहित्य मे महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है । इस सम्प्रदाय ने अपनी लम्बी विरासत छोडी । शुम्पीटर, हेबरलर, मकलप, हेयक, क्लार्क, एजवर्थ, विकस्टीड, कोसा आदि को इस सम्प्रदाय का प्रमुख अनुयायी माना जा सकता है। मूल्य सिद्धान्त, मूल्यारोपण का सिद्धान्त, उत्पादन के साधनो का विशिष्ट एव अविशिष्ट मे विभाजन, सामाजिक आर्थिक प्रणाली की अवधारणा एव ब्याज का एजियो सिद्धान्त आदि ऐसे प्रमुख आर्थिक विचार हैं जिनकी महत्ता आर्थिक विचारो के इतिहास मे सदा अमर रहेगी । इसी सम्प्रदाय ने सीमात विश्लेषण को पूर्णता प्रदान की, समय तत्त्व की महत्ता बतायी और अवसर

लागत के सिद्धान्त के क्षेत्र मे अग्रणी कार्य किया ।

प्रश्न

1. **विषयगत सम्प्रदाय से आप क्या समझते हैं ? इसकी प्रमुख विशेषताओं एवं विकास के कारणों का उल्लेख कीजिये ।**
2. **आस्ट्रियन सम्प्रदाय के प्रमुख आर्थिक विचारों का संक्षिप्त विवेचन कीजिये ।**
   संकेत : आस्ट्रियन सम्प्रदाय का आशय स्पष्ट कर मेजर, वीजर एव बाम बावर्क तीनो के ही प्रमुख सिद्धानो का सक्षेप मे विवेचन करे ।
3. **मेंजर के आर्थिक विचारों का विवेचन कीजिये । क्या उन्हें आस्ट्रियन सम्प्रदाय का संस्थापक माना जा सकता है ?**
   संकेत : मेजर के प्रमुख आर्थिक विचारो एव सिद्धान्तो का विवेचन करने के पश्चात् तर्क देकर पुष्टि करे कि उन्हे इस सम्प्रदाय का जनक कहा जा सकता है ।
4. **आर्थिक विचारों के इतिहास में वीजर की उपलब्धियों का परीक्षण कीजिये ।**
5. **आस्ट्रियन सम्प्रदाय के विकास में बाम बावर्क के योगदान का मूल्यांकन कीजिये।**
6. **'आस्ट्रियन सम्प्रदाय का प्रतिष्ठित सम्प्रदाय से कोई आधार भूत मतभेद नहीं है।' परीक्षण कीजिये ।**
   संकेत : पहले दोनो सम्प्रदायो की समानताये एव असमानताए बताये और अन्त मे आस्ट्रियन सम्प्रदाय के प्रमुख सिद्धान्तो का विवेचन करते हुए निष्कर्ष दे कि आस्ट्रियन सम्प्रदाय की अपनी विशिष्ट भूमिका है ।
7. **आस्ट्रियन सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का आलोचनात्मक परीक्षण कर आर्थिक विचारों के इतिहास में इसका स्थान निर्धारित कीजिये ।**

11

नव-प्रतिष्ठित सम्प्रदाय : अल्फ्रेड मार्शल

(The Neo Classical School : Alfred Marshall)

"यह उल्लेखनीय है कि अर्थशास्त्र के विकास के बावजूद कोई दूसरा अकेला उनका स्थान नहीं ले पाया और उनके सैद्धान्तिक उपकरणों को विभिन्न दिशाओं से सहयोग मिलता रहा। उनके सिद्धान्तों की अधिरचना आज भी इतनी अच्छी एवं वास्तविक है कि उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।"[1] — न्यूमैन।

परिचय . नव-प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के प्रवर्तक
(Introduction . The Founder of Neo-Classicism)

प्रतिष्ठित आर्थिक सम्प्रदाय ने आर्थिक विश्लेषण की एक पूर्ण प्रणाली विकसित की। किन्तु, समय एव आर्थिक परिवेश मे परिवर्तन के साथ-साथ उसके आर्थिक विचार एव सिद्धान्त अनुपयोगी हो गये और उनकी कमिया सामने आने लगी। इससे उनकी प्रतिष्ठा एव लोकप्रियता गिरने लगी। इसी समय कार्लाइल एव रस्किन जैसे दार्शनिको ने उन पर करारी चोट की और अर्थशास्त्र को एक 'घृणित' एव 'निकृष्ट विज्ञान' बता दिया। प्रो जे एस मिल (1806-1873) एव उनके सहयोगियो ने, यद्यपि, प्रतिष्ठित सिद्धान्तो एव विचारो की पुनर्रचना एव पुनर्स्थापना का प्रयास किया किन्तु, समाजवादियो, राष्ट्रवादियो, ऐतिहासिक सम्प्रदायवादियो और विषयगत वादियो के कटु प्रहारो के कारण उन्हे अपेक्षित सफलता नही मिली। फलत धीरे-धीरे प्रतिष्ठित आर्थिक चिंतन की चमक धूमिल और महक कमजोर पड़ती गयी। अब यह स्पष्ट दिखायी देने लग गया कि न केवल दुनिया के अन्य देश अपितु स्वय इग्लैण्ड (जिसने प्रतिष्ठित आर्थिक चितन के समर्थन से सम्पूर्ण विश्व का आर्थिक नेतृत्व ग्रहण कर लिया और जिसने अपने आर्थिक

---

1 "It must be emphasized that he had not been replaced by any one man but rather that the science has grown and his theoretical apparatus has been supplemented from many different sides The superstructure of his theory is still too good too realistic to discard." Newman P C

एव राजनीतिक साम्राज्यवाद की सीमाए विश्वव्यापी बनाली) भी वर्तमान समस्याओ को उस आर्थिक दर्शन की सहायता से हल नही कर सकता। इसके अलावा 19वी सदी के उत्तरार्द्ध तक आते–आते यह भी स्पष्ट हो चुका था कि सम–सामयिक समस्याओ को हल करने की सामर्थ्य विभिन्न आलोचक सम्प्रदायो, जिनका नामोल्लेख इसी प्रसग मे किया जा चुका है, मे से भी किसी मे नही है, क्योकि, ये सभी सम्प्रदाय मुख्यत अपना अलग–अलग राग अलापकर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के प्रयास मे जुटे हुए थे। इस स्थिति मे एक ऐसी प्रतिभा की आवश्यकता थी जो न केवल सभी आलोचक सम्प्रदायो को निरुत्तर कर सके अपितु आर्थिक विचारो एव सिद्धान्तो मे आवश्यक तालमेल एव समन्वय स्थापित कर आर्थिक विश्लेषण की एक ऐसी नयी एव पूर्ण प्रणाली विकसित कर सके जो तत्कालीन आर्थिक समस्याओ के समाधान की कारगर रीति–नीति बना सके। प्रो मार्शल एक ऐसी ही प्रतिभा के रूप मे अवतरित हुए।

ज्ञातव्य है कि प्रो मार्शल ने आर्थिक विश्लेषण की कोई एकदम नयी प्रणाली विकसित नही की, उन्होने मुख्यत प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो का नवीनीकरण किया। किन्तु यह नवीनीकरण अपने आप मे इतना पूर्ण था कि यह प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद से बहुत भिन्न दिखायी देने लगा। अत उनके आर्थिक चिंतन को नव–परम्परावाद अथवा नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद और स्वय उन्हे इसका प्रवर्तक माना गया। प्रो मार्शल के विचारो एव सिद्धान्तो को व्यापक जन समर्थन एव लोकप्रियता मिली। अत उनके समकालीन एव बाद के बहुत से लेखक उनके अनुयायी बन गये। इन सबके समूह को आर्थिक विचारो के इतिहास मे नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदाय (Neo-Classical School) के नाम से जाना जाता है। स्वय मार्शल और उनके प्रमुख अनुयायी कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे अर्थशास्त्र के प्राध्यापक एव प्रोफेसर रहे, अत उनके सम्प्रदाय को कैम्ब्रिज सम्प्रदाय (Cambridge School of Economic Thought) के नाम से भी जाना जाता है।

नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद के प्रवर्तक के रूप मे प्रो मार्शल के दावे के समर्थन मे प्रो हैने का कहना है कि, ''अल्फ्रेड मार्शल ने गहन एव सुदृढ आधारशिला के निर्माण तथा पुरानी सरचना के पुनर्निर्माण एव विकास मे विषयगत सम्प्रदाय द्वारा व्यक्त किये गये विचारो का प्रयोग किया। उन्होने पुराने हिस्सो को तोड़कर, खिड़कियो को काटकर व नवीन कमरो को जोड़ते हुए प्रतिष्ठित आर्थिक प्रणाली को इतने प्रभावशाली ढग से पुनर्गठित किया कि सन् 1890 मे उनकी पुस्तक 'अर्थशास्त्र के सिद्धात' के प्रकाशन के बाद अग्रेजी भाषा–भाषी विश्व उनके नव–परम्परावाद का सबसे सुरक्षित, सुविधाजनक एव सुसगठित रहने का स्थान समझा जाने लगा।''

संक्षिप्त जीवन परिचय
(Brief Life Sketch)

अल्फ्रेड मार्शल का जन्म 26 जुलाई सन् 1842 को क्लैफाम (clapham), लदन मे हुआ। आपके पिता विलियम मार्शल बैंक ऑफ इगलैण्ड मे खजान्ची थे। वे अपने पुत्र को पादरी बनाना चाहते थे। अत. 9 वर्ष की आयु मे उन्होने अल्फ्रेड मार्शल को धार्मिक शिक्षा दिलवाने के लिए मर्चेण्ट टेलर स्कूल मे भर्ती करवा दिया। किन्तु, मार्शल की गणित मे गहन रुचि थी। अत स्कूली शिक्षा समाप्त करने के बाद सन् 1861 मे आपने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की सेंट जॉन्स कॉलेज मे प्रवेश ले लिया। यहा से आपने गणित मे विशष योग्यता के साथ स्नातक की उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् आप 9 साल तक कैम्ब्रिज मे गणित पढ़ाते रहे। सन् 1867 मे मार्शल ने अर्थशास्त्र का गहन अध्ययन आरम्भ किया। वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे प्रसिद्ध दार्शनिको–ग्रीन, सिजविक और मोरिस के सम्पर्क मे आये और उन्होने कॉट एव हीगेल के दार्शनिक विचार पढ़े। इससे आपका रूझान दर्शनशास्त्र की ओर हो गया और आप सन् 1868 एव 1870 मे कॉट को पढ़ने जर्मनी गये। सन् 1870 मे आपने अपनी भूतपूर्व शिष्या मैरी पाले, जो उस समय न्यूहाल कॉलेज मे अर्थशास्त्र की व्याख्याता थी, से शादी करली। सन् 1875 म आप सरक्षणवाद का अध्ययन करने हेतु चार माह के लिए अमरीका गये। वहा आप हार्वर्ड एव येले विश्वविद्यालयो मे ख्याति प्राप्त बुद्धिजीवियो के सम्पर्क मे आये। सन् 1877 मे आप विश्वविद्यालय कॉलेज, ब्रिस्टल मे प्रधानाचार्य एव अर्थशास्त्र के प्रोफेसर नियुक्त हुए। सन् 1881 मे आप विश्राम हेतु एक वर्ष के लिए इटली चले गये। वहां से वापस आने पर आपने प्रधानाचार्य का पद छोड़ दिया और व्याख्याता पद पर कार्य करते रहे। सन् 1883–85 तक आप बलियल कॉलेज ऑक्सफोर्ड के फेलो रहे। सन् 1885 मे आप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे राजनितिक अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए और 1908 मे सेवामुक्त होने तक यही अध्ययन–अध्यापन मे जुटे रहे। आपकी अध्ययन–अध्यापन मे अब भी रुचि बनी हुई थी। अत. सन् 1908 से लेकर 13 जुलाई सन् 1924 को अपनी मृत्यु तक आप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के राजनीतिक अर्थशास्त्र विभाग मे अनुसधान कार्य के लिए सम्मानित प्रोफेसर के रूप मे कार्य करते रहे।

अपने सक्रिय जीवन मे मार्शल ने 'कैंब्रिज स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स' 'ब्रिटिश इकॉनॉमिक सोसाइटी (जो बाद मे 'रॉयल इकॉनॉमिक सोसाइटी' मे बदल गयी) और 'इकॉनॉमिक जर्नल' की स्थापना की। आप करारोपण, स्थानीय करो एव श्रम समस्याओ के समाधान हेतु गठित रॉयल आयोगो के भी सदस्य रहे।

प्रो. अल्फ्रेड मार्शल को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Influencing Prof. Alfred Marshall)

प्रो. उल्फ्रेड मार्शल के विचार मात्र सयोग नही थे । अन्य सभी विचारको एव लेखको की भाति उनके विचारो पर भी अनेक घटको का प्रभाव पड़ा, जिनमे निम्नाकित उल्लेखनीय है –

(1) समकालीन परिस्थितियाँ (Contemporary Conditions)- समकालीन परिस्थितियो ने मार्शल के आर्थिक चिंतन को सबसे अधिक प्रभावित किया । यद्यपि, उनके समय इग्लैण्ड का आर्थिक विकास अपनी चरम सीमा पर पहुच चुका था, किन्तु इसमे अनेक दोष उत्पन्न हो गये थे जिनके निराकरण की माँग लगातार जोर पकड़ती जा रही थी । उत्पादन के क्षेत्र मे उत्पत्ति के बड़े पैमाने व मशीनीकरण के कारण अनेक प्रकार की औद्योगिक, आर्थिक एव सामाजिक समस्याएँ गम्भीर हो गयी थी और मजदूरो का शोषण बढ़ने के कारण उनकी स्थिति उत्तरोत्तर बदतर होती जा रही थी । थोड़े–थोड़े समयान्तराल से आने वाले आर्थिक सकटो के कारण आर्थिक अस्थिरता का वातावरण बन गया था और उत्पादन एव उपभोग का ढाँचा अस्तव्यस्त होता नजर आ रहा था । निर्बाधावाद एव मुक्त व्यापार की नीतियो के खुले समर्थन ने पूँजीपतियो एव अमीरो को श्रमिको एव गरीबो के शोषण की खुली छूट दे दी, जिसका उन्होने निसकोच उपभोग किया । प्रो मार्शल इन सब परिस्थितियो से अछूते व अनभिज्ञ नही थे । अत वे इनके प्रति स्वय को उदासीन नही रख सके । उन्होने स्वय स्वीकार किया है कि अर्थशास्त्री एक मूकदर्शक बनकर नही रह सकता । परिस्थितियो का स्वय पर प्रभाव का उल्लेख करते हुए उन्होने लिखा कि, ''आर्थिक दशाए लगातार बदल रही है और प्रत्येक पीढ़ी अपनी समस्याओ पर अपने तरीके से सोचती है ।''[2]

(2) अन्य सम्प्रदायों के आर्थिक विचार (Economic Ideas of other Schools of Thought)- प्रो. मार्शल ने प्रतिष्ठित सम्प्रदाय के आलोचक सम्प्रदायो; जिनमे समाजवादी, राष्ट्रवादी, ऐतिहासिक सम्प्रदायवादी एव विषयगतवादी आदि अग्रणी है, के विचारको का गहन अध्ययन किया । इस हेतु वे अमरीका और जर्मनी गये । इससे उन्हे न केवल प्रतिष्ठित सम्प्रदाय की कमियो की समुचित जानकारी हो गयी बल्कि इन आलोचक सम्प्रदायो की सकारात्मक एव उपयोगी बातो की भी पूरी जानकारी मिल गयी । इससे मार्शल को आर्थिक अनुसधान को पूर्ण करने के लिए प्रचुर मात्रा मे उपयोगी सामग्री मिल गयी ।

2. "Economic conditions are constantly chaging and each generation looks at its own problems in its own way" Marshall A.

(3) प्रतिष्ठित विचारधारा (Classical Ideology)- मार्क्स की भाँति मार्शल ने भी प्रतिष्ठित विचारधारा का गहन अध्ययन किया। वे एडम स्मिथ एव उनके अनुयायियो तथा जे एस मिल की रचनाओ एव विचारधारा से बहुत प्रभावित हुए। अत उन्होने उस विचारधारा मे क्रातिकारी अथवा आमूलचूल परिवर्तनो की अपेक्षा परिवर्द्धन एव सशोधन ही पर्याप्त समझा और इसीलिए नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद का प्रचार–प्रसार किया।

(4) अन्य पूर्ववर्ती एवं समकालीन विचारक एवं लेखक (Other Predecessors and Contemporary thinkers and writers)- इन विचारको एव लेखको ने भी प्रो मार्शल के चितन को एक नयी एव निश्चित दिशा देने मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। उदाहरण के लिए जब मार्शल ने डार्विन को पढ़ा तो उनका विश्वास बन गया कि, 'आर्थिक चितन कोई क्राति नही बल्कि एक क्रमिक विकास है, अत किसी भी सस्था को समाप्त करने की सोचने से पहले उसमे सुधार की बात सोचनी श्रेयस्कर होती है।' इसीलिए उन्होने अपने साथियो एव पाठको को डार्विन का विकासवाद पढ़ने का सुझाव दिया। इसी प्रकार प्रो मार्शल के विचारो पर प्रसिद्ध इतिहासकार टॉयनबी और दार्शनिक विचारको–ग्रीन, सिजविक, मौरिस आदि का गहरा प्रभाव पडा। उन्होने स्पेन्सर, कान्ट एव हीगल के दार्शनिक विचार पढ़े और उनसे इतने प्रभावित हुए कि उनकी मूल रचनाएँ पढ़ने और समझने के लिए जर्मनी गये। कान्ट के बारे मे तो उन्होने यहा तक कहा कि "वे ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति है जिनकी मैंने पूजा की है।"[3]

(5) अर्थशास्त्र की आलोचना (Criticism of Economics)- उस समय तक वही अर्थशास्त्र था जो एडम स्मिथ ने बताया था। उन्होने इसे 'धन का एक विज्ञान' बताया और कहा कि इसमे आर्थिक मनुष्य की धनोपार्जन की क्रियाओ का अध्ययन किया जाता है तथा मानव जीवन का परम लक्ष्य धनोपार्जन है। कार्लाइल एव रस्किन जैसे दार्शनिक विचारको को ऐसा अर्थशास्त्र पसद नही आया और उन्होने कहा कि यदि अर्थशास्त्र वैसा ही है जैसा एडम स्मिथ ने बताया है, तो 'यह धन का एक विज्ञान नही बल्कि बुराइयो का एक विज्ञान है।'[4] अत इसे पढ़ने एव पढ़ाने की अवश्यकता नही है। उन्होने इसे 'घृणित विज्ञान', 'निकृष्ट विज्ञान', 'रोटी–रोजी का विज्ञान, 'सूअरो का दर्शन' और 'कुबेर की विद्या' बताकर गालिया दी। प्रो मार्शल इन आलोचनाओ से बहुत व्यथित हुए और वे अर्थशास्त्र को अन्य सामाजिक विज्ञानो के बीच प्रतिष्ठा दिलाने एव उसे सामाजिक भलाई का एक इजिन (an

---

3 "The onlyman I ever worshipped" Marshall A
4 "It is not a science of wealth but a science of illth.

engine of the social betterment) बनाने मे जुट गये ।

(6) यात्राएँ (Travellings)- प्रो मार्शल ज्ञानपिपासु थे । गणित एव वस्तुपरक ऐतिहासिक अध्ययनो मे उनकी रुचि थी । वे सयुक्त राज्य अमरीका, जर्मनी और इटली गये । इनसे एक ओर, जहा उन देशो के बुद्धिजीवियो से वैचारिक आदान–प्रदान का अवसर मिला वहा दूसरी ओर उन्हे सम–सामयिक घटनाओ एव आर्थिक दशाओ की भी पूरी जानकारी हो गयी ।

(7) पारिवारिक पृष्ठभूमि (Family Background)- प्रो मार्शल के पिता उन्हे एक पादरी बनाना चाहते थे । इससे मार्शल को बाल्यकाल मे धार्मिक पुस्तको के गहन अध्ययन का सुअवसर मिल गया । इससे उनके विचार बड़े उदार बन गये और कल्याण की विचारधारा मे उनका गहरा विश्वास जम गया जिसकी स्पष्ट छाप उनके आर्थिक चितन एव साहित्य मे देखी जा सकती है ।

(8) अन्य घटक (Other Factors)- प्रो मार्शल की गणित के साथ--साथ भौतिकशास्त्र, नीतिशास्त्र, एव आध्यात्मवाद मे अभिरुचि थी । इससे एक ओर उनका दृष्टिकोण उदार एव विस्तृत बना तो दूसरी ओर उनके चितन एव विचारो मे परिपक्वता आयी ।

प्रमुख कृतियाँ
(Major Works)

प्रो मार्शल की प्रमुख कृतियो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) The Economics of Industry (1878)
(2) Principles of Economics (1890)
(3) Industry and Trade (1919)
(4) Money, Credit and Commerce (1923)

'अर्थशास्त्र के सिद्धान्त' पर एक टिप्पणी
(A Note on 'Principles of Economics')

'Principles of Economics' जिसे सक्षेप मे 'Principles' ही कहा जाता है, केवल मार्शल की रचनाओ मे ही सर्वोत्कृष्ट नही बल्कि सम्पूर्ण आर्थिक साहित्य मे एक उच्च कोटि का ग्रथ है जिसकी तुलना एडम स्मिथ के 'वेल्थ ऑफ नेशन्स', कार्ल मार्क्स के 'दास कैपिटल' और प्रो कीन्स के 'जनरल थ्योरी' से की जा सकती है ।

प्रो मार्शल की परिपक्व बुद्धि की प्रतीक यह रचना उनके विचारो की व्यापकता एव गहनता की चरम पराकाष्ठा की परिचायक है । सन् 1890 मे इसके प्रकाशन के साथ ही आधुनिक अर्थशास्त्र के उस युग का अन्त हो गया जिसमे एडम स्मिथ एव उनके **'आर्थिक मानव'** का बोलबाला रहा । इस रचना के प्रकाशन के साथ ही अर्थशास्त्र 'धन' के सकीर्ण दायरे से बाहर निकलकर कल्याण के विशाल क्षेत्र मे आ गया । विश्व के सभी देशो मे इस

व्यापक लोकप्रियता मिली क्योकि इसने आर्थिक विचारो के इतिहास मे क्रातिकारी आलोचक युग' समाप्त कर 'विकासवादी युग' आरम्भ कर दिया।

प्रो मार्शल के जीवन काल मे ही इसका आठवा सस्करण सन् 1920 मे निकला । इसके अलावा इसका न केवल योरोपीय अपितु विश्व की अनेक प्रमुख भाषाओ मे अनुवाद हो गया । प्रो मार्शल ने इसके पहले से दूसरे और दूसरे से तीसरे सस्करण मे कुछ परिवर्तन एव सशोधन किये । अत सन् 1895 मे प्रकाशित तृतीय सस्करण को ही इसका सही एव प्रतिनिधि रूप माना जा सकता है । किन्तु इसका यह आशय नही है कि इसके बाद के सस्करणो मे कोई परिवर्तन नही हुआ । हा परिवर्तन किये गये किन्तु अब जो परिवर्तन हुए उनसे इसके सगठनात्मक ढाँचे एव विषय–सामग्री मे कोई परिवर्तन नही हुआ क्योकि ये मुख्यत भाषा सुधार एव उन परिच्छेदो को हटाने से सम्बन्धित थे जिनसे किसी न किसी लेखक अथवा विचारक की भावनाए आहत हो रही थी ।

प्रो मार्शल ने इस रचना के जरिये एक लोकोपयोगी एव वास्तविक आर्थिक प्रणाली एव सिद्धान्त की सरचना का प्रयास किया । उन्होने इसकी रचना सब वर्गों के पाठको के लिए की । इसीलिए इसे एकदम सरल भाषा मे लिखा गया । गणित के एक होनहार छात्र होने के बावजूद उन्होने इसकी व्याख्या को गणितीय नही बनाया और जहा कही विषय–सामग्री की स्पष्टता के लिए गणित का प्रयोग आवश्यक समझा गया वहा इसे परिशिष्टो एव पादटिप्पणियो अर्थात् फुटनोटस् मे दिया गया है । इसकी विषय–सामग्री निम्नाकित 6 भागो मे विभाजित है–

(i) प्राम्भिक सर्वेक्षण
(ii) आधारभूत परिभाषाये
(iii) आवश्यकताएँ एव उनकी सतुष्टि अर्थात् माँग विश्लेषण,
(iv) उत्पत्ति के साधन अर्थात् पूर्ति सम्बन्धी समस्याएँ
(v) मूल्य सिद्धान्त अर्थात् माँग पूर्ति एव मूल्य और
(vi) राष्ट्रीय आय का वितरण ।

प्रो मार्शल के प्रमुख आर्थिक विचार
(Major Economic Ideas of Prof Marshall)

प्रो मार्शल के प्रमुख आर्थिक विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

1 अर्थशास्त्र की परिभाषा एव क्षेत्र
2 आर्थिक नियम एव अध्ययन पद्धतियाँ,
3 उपभोग सिद्धान्त
4 उत्पादन सिद्धान्त

5 विनिमय सिद्धान्त,
6 वितरण सिद्धान्त,
7. मौद्रिक सिद्धान्त,
8 आर्थिक विकास का सिद्धान्त और
9. अन्य महत्त्वपूर्ण विचार ।

अब हम इनकी विस्तृत व्याख्या करेंगे ।

1. अर्थशास्त्र की परिभाषा एवं क्षेत्र (Definition and scope of Economics)

प्रो. मार्शल ने *अर्थशास्त्र* को परिभाषित करते हुए *बताया* कि, ''राजनीतिक अर्थव्यवस्था अथवा अर्थशास्त्र मानव–जाति की साधारण व्यापारिक क्रियाओ का अध्ययन है । यह वैयक्तिक एव सामाजिक प्रयासो के उस भाग की जाँच करता है जिसका सुख के भौतिक साधनो की प्राप्ति एव उपयोग से घनिष्ट सम्बन्ध है । इस प्रकार एक ओर यह धन का और दूसरी ओर उससे भी *अधिक महत्त्वपूर्ण मनुष्य के अध्ययन का एक भाग है ।*[5] इस प्रकार प्रो. मार्शल ने अर्थशास्त्र की कल्याण प्रधान (welfare Oriented) परिभाषा दी और बताया कि ज्ञान की इस शाखा मे सामाजिक, सामान्य एव वास्तविक व्यक्तियो की रोटी–रोजी कमाने सम्बन्धी साधारण व्यापारिक क्रियाओ का अध्ययन किया जाता है और इन क्रियाओ मे केवल उन्ही क्रियाओ को सम्मिलित किया जाता है जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रा मे व्यक्त *की जाती है । दूसरे शब्दो मे, उन्होने इन क्रियाओ को आर्थिक एव अनार्थिक मे विभाजित कर केवल आर्थिक क्रियाओ को ही अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री* मे सम्मिलित किया । प्रो मार्शल के अनुसार ये क्रियाये उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण एवं राजस्व से सम्बन्धित हो सकती है । अत. उन्होने अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री को इन्ही 5 भागो मे बाँटा और कहा कि क्योकि मानव जीवन का प्रमुख लक्ष्य आर्थिक कल्याण मे वृद्धि करना है, अत *अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री मे मनुष्य जाति के कल्याण को प्रधान एव धन को गौण स्थान प्राप्त है । दूसरे शब्दो मे, प्रो एडम स्मिथ से भिन्न उन्होने यह कहा कि मनुष्य धन कमाने वाली एक मशीन नही बल्कि धन मनुष्य के* कल्याण मे वृद्धि का एक उपकरण है । अत. मानव सुख एक 'साध्य' एव 'धन' उस साध्य की प्राप्ति का मात्र एक 'साधन' है ।

उपर्युक्त परिभाषा एव व्याख्या से प्रो. मार्शल के अर्थशास्त्र की प्रकृति के

---

5 "Political Economy or Economics is a study of mankind in the ordinary business of life. It examines that part of individual and social action which is most closely connected with the attainment and with the use of the material requisites of wellbeing. Thus, it is on the one side a study of weath and on the other and more important side a part of the study of man." Marshall A.

बारे मे विचार भी स्पष्ट हो जाते है । उनके अनुसार अर्थशास्त्र एक आदर्श विज्ञान (normative science) है जिसकी विषय–सामग्री केवल 'क्या है' न होकर क्या होना चाहिए' है । वे इसे आदर्श विज्ञान के साथ–साथ एक कला भी स्वीकार करते है और कहते है कि अर्थशास्त्र केवल प्रकाशदायी ही नही बल्कि फलदायी (not only light bearing but fruit bearing also) भी है उन्होने बताया कि, यद्यपि, अर्थशास्त्र आर्थिक समस्याओ के समाधान के बने–बनाये रामबाण नुसखे तो प्रदान नही करता, फिर भी इसका एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य सम–सामयिक एव आर्थिक समस्याओ का हल खोजना है । अत मूलत यह सामाजिक भलाई का एक उपकरण है ।

प्रो मार्शल ने बताया कि मानवीय क्रियाओ मे आर्थिक क्रियाये सबसे महत्त्वपूर्ण है, अत अन्य सभी सामाजिक विज्ञानो मे अर्थशास्त्र सबसे महत्त्वपूर्ण है और प्राकृतिक विज्ञानो (यथा–भौतिकशास्त्र, रसायन शास्त्र आदि) की तुलना मे इसका सामाजिक विज्ञानो (यथा–राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र, आचारशास्त्र, विधिशास्त्र आदि) से प्रत्यक्ष एव निकट सम्बन्ध है।

अर्थशास्त्र की परिभाषा एव क्षेत्र सम्बन्धी उपर्युक्त विचारो के आधार पर प्रो मार्शल ने अर्थशास्त्र को राजनीति विज्ञान से पृथक् कर ज्ञान की एक स्वतत्र शाखा के रूप मे विकसित होने योग्य बना दिया । वास्तविकता तो यह है कि सन् 1776 मे जिस अर्थशास्त्र का एडम स्मिथ के हाथो जन्म हुआ उस अर्थशास्त्र का सन् 1890 मे प्रो मार्शल के हाथो नामकरण सस्कार पूर्ण हो गया ।

2 आर्थिक नियम एवं अध्ययन पद्धतियाँ (Economic Laws and Methods of Study)-

प्रो मार्शल ने ज्ञान की किसी शाखा के विकास मे उसके नियमो को बहुत महत्त्वपूर्ण बताया ।[6] अत उन्होने आर्थिक नियमो की परिभाषा एव विश्लेषण पर भी समुचित ध्यान दिया और कहा कि "आर्थिक नियम अथवा आर्थिक प्रवृत्तियो के कथन का आशय आचरण की उन शाखाओ से सम्बन्धित सामाजिक नियमो से है, जिनकी मनोवृत्तियो की शक्ति को मुद्रा द्वारा मापा जा सकता है ।"[7] इस प्रकार प्रो मार्शल के अनुसार,

(i) *आर्थिक नियम सामाजिक नियम है,*

---

6 "A Science progresses with the number and exactness of its laws." Marshall A

7 "Economic Laws or statements of economic tendencies are those social laws which relate to the branches of conduct in which the strength of motives chiefly concerned can be measured by a money price." Marshall A

(ii) ये मनुष्य की आर्थिक प्रवृत्तियो के कथनमात्र हैं और
(iii) इनका सम्बन्ध मुख्यत मनुष्य की उन क्रियाओ से है, जिन्हे मुद्रा–रूपी मापदण्ड द्वारा मापा जा सकता है ।

उपर्युक्त विशेषताओ के आधार पर ही मार्शल ने आर्थिक नियमो को अन्य प्राकृतिक विज्ञानो के वैज्ञानिक नियमो से घटिया माना और कहा कि "आर्थिक नियमो की तुलना मे गुरुत्वाकर्षण के सरल एव निश्चित नियम से न कर ज्वार भाटा के नियमो से की जानी चाहिये ।"[8]

उपर्युक्त कथन का आशय है कि क्योकि गुरुत्वाकर्षण का नियम एक निरपेक्ष, ठोस, निश्चित, शुद्ध, सार्वभौमिक एव सार्वकालिक नियम है अत आर्थिक नियमो, जो सापेक्ष, परिवर्तनीय, अनिश्चित, काल्पनिक और आर्थिक प्रवृत्तियो के कथन मात्र होते हैं, की उसके साथ तुलना नही की जा सकती, अत इनकी तुलना ज्वारभाटा के नियमो से करनी चाहिये । दूसरे शब्दो में, ज्वार भाटा के नियम भी कम निश्चित एव कम ठोस तथा सापेक्ष होते है अत ये आर्थिक नियमो के समकक्ष हैं । मार्शल ने बताया आर्थिक नियमो के प्रतिपादन मे 'अन्य बाते समान रहने पर' (other things being equal) वाक्याश का प्रयोग किया जाता है अत इनमे किसी प्रकार की गणितीय अथवा परिमाणात्मक शुद्धता नही रहती और ये शर्तें पूर्ण होने पर ही आर्थिक नियम क्रियाशील होते हैं । ठीक इसी प्रकार ज्वारभाटा के नियमो की व्याख्या मे 'सम्भवत' शब्द जुड़ा रहता है और किन्हीं दी हुई शर्तों (यथा–समुद्री हवाओ, वायुमण्डल एव मौसम आदि मे कोई परिवर्तन न होना) के पूर्ण होने पर ही इनकी पूर्वानुमानित क्रियाशीलता देखी जा सकती है । अत इस आधार पर आर्थिक एवं ज्वारभाटा के नियम समकक्ष हैं ।

प्रो मार्शल ने न केवल आर्थिक नियमों की तुलना ज्वारभाटा के नियमो से की बल्कि अन्य सामाजिक विज्ञानो के नियमो से भी की और कहा कि "मुद्रा रूपी मापदण्ड ने भले ही वह कम निश्चित एव अपूर्ण हो, इसके नियमो को अन्य सभी सामाजिक विज्ञानो के नियमो से ठीक उसी प्रकार अधिक निश्चित एवं पूर्ण बना दिया है जिस प्रकार रसायन शास्त्री की सूक्ष्म तराजू ने रसायन शास्त्र को अन्य सभी प्राकृतिक विज्ञानो से अधिक सही बना दिया है।"[9]

जिस विधि द्वारा 'कारण' एव 'परिणाम' के मध्य पाये जाने वाले

---

8. "The Lows of Economics are to be compared with the laws of the tides rather than with simple and exact law of gravitation." Marshall A.
9 "Just as the chemists fine balance has made chemistry more exact than most of the other physical sciences, so this economists" balance (money) rough and imperfect as it is has made economics more exact than any other branch of social sciences." Marshall A.

सम्बन्ध की व्याख्या कर आर्थिक नियमो का प्रतिपादन किया जाता है, उसे अर्थशास्त्र की अध्ययन पद्धति कहते है। प्रो मार्शल के समय तक मुख्यत दो अध्ययन पद्धतियाँ – निगमन एव आगमन लोकप्रिय रही। ऐतिहासिक साम्प्रदायवादी विचारक श्मोलर और आस्ट्रियन सम्प्रदायवादी विचारक मेजर के बीच 20 वर्ष तक चले अध्ययन पद्धतियो के युद्ध के पश्चात् इन दोनो ही पद्धतियो की महत्ता स्वीकार करली गयी, अत प्रो मार्शल ने भी प्रो श्मोलर के इस कथन को सहर्ष स्वीकार कर लिया कि 'जिस प्रकार चलने के लिए दाया एव बाया दोनो पैर आवश्यक है उसी प्रकार वैज्ञानिक चितन के लिए निगमन एव आगमन दोनो प्रणालियाँ आवश्यक है।' इनकी पारस्परिक निर्भरता एव समाकलन की महत्ता को अपने शब्दो मे व्यक्त करते हुए प्रो मार्शल ने कहा कि ये दोनो प्रणालियाँ एक दूसरी की पूरक एव सहयोगी है और इनमे परस्पर कोई विरोध नही है। उन्ही के शब्दो मे, ''अन्वेषण की कोई भी ऐसी पद्धति नही है जिसे अर्थशास्त्र के अध्ययन की उचित पद्धति कहा जा सके बल्कि प्रत्येक का यथास्थान या तो अकेले या सयुक्त रूप मे प्रयोग किया जाना चाहिये।'[10] इन दोनो विधियो के प्रयोगो के क्षेत्र का सुझाव देते हुए प्रो मार्शल ने बताया कि आर्थिक अनुसधान के जिस क्षेत्र मे मानवीय मनोविज्ञान की प्रधानता और साख्यिकीय सामग्री एव तथ्यो का अभाव हो वहा निगमन प्रणाली का प्रयोग किया जाना चाहिये। इसके विपरीत जहा आर्थिक घटनाओ की जाँच मे प्रकृति की भूमिका प्रधान रहती है और प्रचुर मात्रा मे विश्वसनीय आँकड़े उपलब्ध रहते है, वहा आगमन प्रणाली का प्रयोग ही श्रेयस्कर रहता है। उन्होने यह भी सुझाव दिया कि, एक पद्धति से प्राप्त निष्कर्षों की प्रतिजाँच, यदि सम्भव हो तो, दूसरी पद्धति से कर लेनी चाहिये।

3 उपभोग सिद्धान्त (The Theory of Consumption)-

उपभोग सिद्धान्त को 'उपभोक्ता के व्यवहार का सिद्धान्त' भी कहते है। मार्शल से पहले तक यह सिद्धान्त पूर्णत उपेक्षित रहा। यद्यपि आस्ट्रियन सम्प्रदायवादियो ने सीमात उपयोगिता एव उपभोग विषयक अन्य बातो का विवेचन किया किन्तु, वे इसे एक व्यापक एव ठोस सिद्धान्त का रूप नहीं दे पाये। दूसरे शब्दो मे, प्रो मार्शल से पहले तक अर्थशास्त्रियो का ध्यान मुख्यत उत्पादन एव वितरण की समस्याओ तक ही केन्द्रित रहा। किन्तु, मार्शल ने उपभोग को आर्थिक क्रियाओ का 'आदि' और 'अत' बताया। इसीलिए अपनी रचना Principles of Economics' मे उन्होने इसकी सबसे पहले विवेचना की और कहा कि 'कुछ समय पूर्व तक यह विषय बहुत उपेक्षित रहा

10. "There is not any one method of investigation which can properly be called the method of Economics but every method must be made serviceable at its proper place either singly or in combination with others" Marshall A.

किन्तु वर्तमान मे इसे महत्ता देने वाले कुछ घटक आपस मे मिल गये है।' उन्होने 'नकारात्मक उत्पादन' (negetive production) को उपभोग बताया और 'उपभोक्ता की सम्प्रभुता' (consumer's sovereignty) को महत्त्वपूर्ण बताया।

उपभोग का अर्थ एव महत्ता समझाने के पश्चात् प्रो मार्शल ने मानवीय आवश्यकताओ की व्याख्या की। उन्होने 'प्रभावपूर्ण इच्छा' *(effective desire)* को आवश्यकता बताया और उन्हे अनिवार्यताओ (necessities), सुविधाओ (comforts) एव विलासिताओ (luxuries) मे विभाजित किया तथा कहा कि आवश्यकताओ का यह वर्गीकरण निरपेक्ष नहीं बल्कि सापेक्ष है, जिस पर समय, स्थान, उपभोक्ता आदि सम्बन्धी घटको का प्रभाव पड़ता है। उन्होने मानवीय आवश्यकताओ के लक्षणो की भी विस्तृत व्याख्या की।

आवश्यकताओ के विश्लेषण के पश्चात् प्रो मार्शल ने उपभोक्ता के व्यवहार सम्बन्धी विभिन्न सिद्धान्तो का विवेचन किया, जिसे आधुनिक आर्थिक साहित्य मे मुख्यत उपभोक्ता के व्यवहार का उपयोगितावादी सिद्धान्त (Utility Theory of consumer's Behaviour) कहा जाता है। मार्शल ने इनके विवेचन मे 'अन्य बाते समान रहने पर' वाक्याश का प्रयोग किया अर्थात् सक्षेप मे, उन्होने अपने उपभोग सिद्धान्त के प्रतिपादन मे निम्नाकित मान्यताओ (assumptions) का सहारा लिया–

(i) किसी वस्तु से प्राप्त होने वाली उपयोगिता मापनीय है और उसे मुद्रा रूपी मापदण्ड से मापा जा सकता है।
(ii) वस्तु विशेष की समस्त इकाइया समरूप एव एक जैसी (homogeneous and identical) होती है।
(iii) उपभोक्ता सुखमय अवस्था (pleasure economy) में रहता है।
(iv) उपभोग के क्रम मे वस्तु की क्रमिक इकाइयो से प्राप्त सीमात उपयोगिता तो गिरती है, किन्तु, मुद्रा की सीमात उपयोगिता स्थिर रहती है।
(v) वस्तु विशेष की सीमात उपयोगिता अन्य वस्तुओ की उपयोगिता से स्वतत्र रहती है अर्थात् वस्तुएँ परस्पर सम्बद्ध न होकर स्वतत्र है।
(vi) वस्तुएँ विभाज्य है और उनकी बाजार मे पूर्ति पर्याप्त रहती है।
(vii) उपभोक्ता विवेकशील है और उनका उद्देश्य 'सतुष्टि अधिकतमीकरण' है।
(viii) उपभोक्ता की आय सीमित है और विश्लेषण अवधि मे अथवा प्रति इकाई समय मे आय, आदत, रुचि, पसदगी एव मानसिक स्थिति यथावत रहती है।
(ix) उपभोक्ताओ के उपर्युक्त (viii) मे वर्णित घटको सम्बन्धी अन्तर

एक-दूसरे को तटस्थ कर देते हैं ।

(x) प्रति इकाई समय मे वस्तु, उसकी स्थानापन्नो एव पूरक वस्तुओ की कीमते यथावत रहती है ।

(xi) उपभोक्ता अपनी आय को थोड़ी-थोड़ी मात्रा मे और विभिन्न आवश्यकताओ पर व्यय करता है ।

(xii) वस्तु की बाजार कीमतो मे परिवर्तन से तत्काल उसकी माँग एव पूर्ति की मात्रा पर प्रभाव पड़ता है ।

अब हम, सक्षेप मे, मार्शल द्वारा प्रतिपादित विभिन्न सिद्धान्तो का विवेचन करेगे ।

(1) सीमान्त उपयोगिता ह्रास नियम (Law of Diminishing Marginal Utility) यह नियम मानवीय आवश्यकताओ की इस विशेषता पर आधारित है कि 'आवश्यकता विशेष की पूर्ण सतुष्टि सम्भव है' । सर्वप्रथम इस नियम की व्याख्या गोसेन ने की । किन्तु, इसकी विधिवत, वैज्ञानिक एव पूर्ण व्याख्या प्रो मार्शल ने की, अत इसके प्रतिपादन का वास्तविक श्रेय उन्हे ही दिया जाता है । इस नियम के अनुसार जैसे-जैसे किसी आवश्यकता विशेष की पूर्ति मे किसी वस्तु की मात्रा मे उत्तरोत्तर वृद्धि की जाती है, उसकी प्रत्येक अतिरिक्त इकाई से प्राप्त होने वाली सीमात उपयोगिता क्रमश गिरती जाती है । उन्ही के शब्दों मे, ''एक मनुष्य के पास किसी वस्तु की मात्रा मे वृद्धि होने से जो अतिरिक्त लाभ उसे मिलता है, 'अन्य बाते समान रहने पर', वस्तु की मात्रा में प्रत्येक वृद्धि के साथ घटता जाता है ।''[11] इस नियम की सहायता से ही उन्होने कुल उपयोगिता एव सीमात उपयोगिता के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्ध का विवेचन किया कि उपभोग के क्रम मे जब तक सीमात उपयोगिता धनात्मक रहती है, कुल उपयोगिता बढ़ती है, किन्तु उसमे वृद्धि की दर गिरती जाती है, जब सीमात उपयोगिता गिरकर शून्य हो जाती है तो कुल उपयोगिता बढ़कर अधिकतम हो जाती है और जब इससे आगे भी उपभोग का क्रम जारी रहता है तो उत्तरोत्तर इकाइयो की सीमात उपयोगिता ऋणात्मक हो जाने के कारण कुल उपयोगिता मे भी गिरावट का क्रम आरम्भ हो जाता है । इस नियम की व्याख्या मे मार्शल ने वस्तु की बाजार कीमत पर ध्यान नहीं दिया और उसकी भौतिक इकाइयों के सदर्भ मे ही इसका विवेचन किया ।

(2) सम-सीमांत उपयोगिता नियम (Law of Equi Marginal Utility) यह नियम मानवीय आवश्यकताओ की इस विशेषता पर आधारित है कि विभिन्न

---

11 "The additional which a person derives from a given increase of a stock of a thing diminishes other things being equal, with every increase in the stock that he already has." Marshall A.

आवश्यकताएँ प्रतिस्पर्धी है और वे पूरी होने के लिए उपभोक्ता पर दबाव डालती है। इस नियम की भी प्राथमिक रूपरेखा गोसेन ने प्रस्तुत की। किन्तु, विधिवत, वैज्ञानिक एव पूर्ण व्याख्या मार्शल द्वारा की जाने के कारण इस के प्रतिपादन के साथ भी उन्ही का नाम जुडा हुआ है। इसे परिभाषित करते हुए उन्होने बताया कि "यदि एक आदमी के पास कोई ऐसी वस्तु है जिसे वह विभिन्न प्रयोगो मे ला सकता है तो वह इस वस्तु को इन प्रयोगो के बीच इस प्रकार विभाजित करेगा कि उसे प्रत्येक प्रयोग मे मिलने वाली उपयोगिता एक समान हो।"[12] उन्होने बताया कि इस आधार पर अपनी आय को व्यय करके ही एक उपभोक्ता अपनी सतुष्टि अधिकतम कर सकता है और यही उपभोक्ता के साम्य की स्थिति होती है। सूत्र रूप मे, उपभोक्ता तब साम्य मे होता है जब

$MUx = MUy = MUz \quad MUn..$ (i) हो।

उपर्युक्त (i) वस्तुओ की कीमत सम्मिलित कर लेने पर साम्य का समीकरण बदलकर,

$MUx / Px = MUy / Py = MUz / Pz = \quad MUn / Pn$ (ii) हो जाता है। अर्थात् उपभोक्ता की सतुष्टि उस समय अधिकतम होती है जब प्रत्येक वस्तु की सीमात उपयोगिता एव कीमत का अनुपात शेष सभी वस्तुओ की सीमात उपयोगिताओ एव कीमतो के अनुपात के बराबर हो। मार्शल ने बताया कि यदि किसी समय $MUx/Px > MUy/Py$ है तो उपभोक्ता तब तक Y वस्तु पर से व्यय घटाकर x वस्तु पर व्यय बढ़ाता रहेगा जब तक $MUx/Py = MUy/Py$ नही हो जाता। प्रो मार्शल ने बताया कि सतुष्टि अधिकतमीकरण मे आय की सीमितता सबसे प्रमुख अवरोध है, फलत किसी उपभोक्ता को उतनी ही सतुष्टि मिलेगी जितनी आय उसके पास व्यय करने के लिए है। समीकरण (ii) मे आय सम्मिलित करने पर साम्य की स्थिति बदलकर, $Qx \; Px + Qy \; Py + Qz \; Pz + \quad Qn \; Pn \; .... = I$ (iii) हो जाती है। प्रो मार्शल के अनुसार इस स्थिति मे ही एक व्यक्ति अपनी सीमित आय का अनुकूलतम एव कुशलतम प्रयोग कर सकता है।

सीमात उपयोगिता ह्रास नियम पर आधारित इस नियम को प्रो मार्शल ने प्रतिस्थापन्न का सिद्धान्त (Principle of Substitution) भी बताया और इसके क्षेत्र का उल्लेख करते हुए कहा कि, "प्रतिस्थापन्न के सिद्धान्त की क्रियाशीलता आर्थिक खोज के सभी क्षेत्रो मे देखी जा सकती है।"[13]

---

12. "If a person has a thing to which he can put to several uses he will distribute it among these uses in such a way that it has the same marginal utility in all." Marshall A.
13. "The application of the principle of substitution extends over almost every field of economic inquiry." Marshall A.

(3) उपभोक्ता की बचत (Consumer's Surplus)- उपभोक्ता की बचत की व्याख्या सर्वप्रथम फ्रास के इञ्जिनियर अर्थशास्त्री ड्यूपिट ने की । किन्तु, इसके प्रतिपादन के साथ भी मुख्यत प्रो मार्शल का ही नाम जुड़ा हुआ है । सरल शब्दो मे, किसी वस्तु के लिए एक उपभोक्ता जो कीमत चुकाने को तैयार होता है और जो कीमत वह वास्तव मे चुकाता है, का अन्तर 'उपभोक्ता की बचत' कहलाती है । सामान्यतया, अपनी आवश्यकता की तीव्रता के कारण उपभोक्ता किसी वस्तु की ऊँची कीमत चुकाने को तैयार हो जाता है जबकि, वास्तव मे, वह उसे प्रचलित बाजार कीमत पर ही उपलब्ध हो जाती है । अत त्यागी गयी उपयोगिता (कीमत) पर प्राप्त होने वाली उपयोगिता का आधिक्य ही उपभोक्ता की बचत होती है । स्वय उन्ही के शब्दो मे, ''किसी वस्तु के प्रयोग से वचित रहने की अपेक्षा एक उपभोक्ता जो कीमत देने को तत्पर होता है तथा जो कीमत वह वास्तव मे देता है, का अन्तर ही आर्थिक सतुष्टि का माप है । इसे उपभोक्ता की बचत कहा जाता है।''[14]

प्रो मार्शल ने आर्थिक वातावरण या अवसरो से प्राप्त होने वाले आर्थिक लाभो को मापने के लिए मुख्यत इस सिद्धान्त का प्रयोग किया और कहा कि जो समाज जितना सम्पन्न होता है, वहा के निवासियो को प्राप्त उपभोक्ता की बचत उतनी ही अधिक होती है । उन्होने बताया कि सम्पन्न समाजो मे उपभोक्ता आम उपभोग की सामान्य कीमत वाली वस्तुओ (माचिस, अखबार, पोस्टकार्ड आदि) की भी ऊँची कीमत चुकाने को तैयार हो जाते है जबकि ये वस्तुएँ उन्हे प्रचलित बाजार कीमत पर ही उपलब्ध हो जाती है । इसी आधार पर जब निकलसन ने यह कहा कि, ''यह कहने से क्या लाभ है कि लदन मे 100 पौण्ड आय मध्य अफ्रीका मे 1000 पौण्ड की आय के बराबर है'' तो प्रो मार्शल ने जवाब दिया कि 'यदि एक लदनवासी 100 पौण्ड की वार्षिक आय से ही उतनी सुख–सुविधाएँ प्राप्त कर सकता है जितनी मध्य अफ्रीका का उपभोक्ता 1000 पौण्ड की वार्षिक आय से भी प्राप्त नही कर सकता तो हम सहज ही मे इस निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं कि अफ्रीका मे 1000 पौण्ड की उपयोगिता से लदन मे 100 पौण्ड की उपयोगिता अधिक है ।

प्रो मार्शल ने एक पुल के उदाहरण से भी इसके लाभो का स्पष्टीकरण किया और बताया कि 'यदि बहुत कम राशि खर्च करके कोई व्यक्ति प्रतिदिन पुल की सहायता से नदी के उस पार जाता है तो वह इसकी महत्ता को

---

14 "The excess of the Price which he would be willing to pay rather than go without the thing, over that which he actually does pay is the economic measure of this surplus satisfaction It may be called consumer's surplus." Marshall A.

रोजाना की सामान्य घटना मानकर अनदेखी कर देता है । किन्तु, जिस दिन पुल टूट जाता है उस दिन उसे पता चल जाता है कि वास्तव मे उसे रोजाना उस पुल से कितना लाभ मिल रहा था ।' यद्यपि अनिवार्यताओ एव विलासिताओ के सदर्भ मे उपभोक्ता की बचत की व्याख्या बनावटी एव हास्यास्पद हो जाती है किन्तु, जैसा कि स्वय मार्शल ने बताया दो स्थानो, समयावधियो एव विदेशी व्यापार के आर्थिक लाभो को मापने मे यह एक अच्छा विश्लेषणात्मक उपकरण है ।

(4) माँग एवं माँग का नियम (Demand and the Law of Demand)-

प्रो मार्शल ने माँग की विस्तृत व्याख्या की । उन्होने किसी वस्तु की माँग को उसकी कीमत का फलन बताया और उसे सीमात उपयोगिता के साथ जोड़ा । उन्होने माँग वक्र का निरूपण किया और बताया कि सीमांत उपयोगिता वक्र ही माँग वक्र है क्योकि माँग वक्र के प्रत्येक बिन्दु पर सीमात उपयोगिता एव कीमत दोनो बराबर होती है । उन्होने वैयक्तिक माँग वक्रो के पार्श्व योग से किसी वस्तु विशेष के बाजार माँग वक्र का निरूपण भी किया ।

प्रो मार्शल ने माँग को प्रभावित करने वाले विभिन्न घटको का विवेचन किया और *'माँग प्रसार'* एव *'माँग मे वृद्धि'* तथा *'माँग सकुचन'* एव *'माँग मे कमी'* का अन्तर स्पष्ट किया । उन्होने बताया कि केवल कीमत मे परिवर्तन से किसी वस्तु की माँगी जाने वाली मात्रा मे जो परिवर्तन (विपरीत दिशा मे) होते है, उन्हे *माँग प्रसार* अथवा *माँग सकुचन* कहते है । उन्होने माँग प्रसार को कीमत मे गिरावट एव माँग सकुचन को कीमत मे वृद्धि का परिणाम बताया । इससे भिन्न उन्होने कीमत मे गिरावट के अलावा अन्य किसी भी कारण से किसी वस्तु की माँगी जाने वाली मात्रा मे होने वाली वृद्धि *'माँग मे वृद्धि'* एव कीमत मे वृद्धि के अलावा अन्य किसी घटक से माँगी जाने वाली मात्रा मे होने वाली गिरावट को *'माँग मे कमी'* बताया ।

वस्तु की कीमत एव उसकी माँगी जाने वाली मात्रा के बीच पाये जाने वाले ऋणात्मक सम्बन्ध के आधार पर प्रो मार्शल ने 'माँग के नियम' का प्रतिपादन किया और कहा कि, "किसी वस्तु की जितनी अधिक मात्रा बेचनी हो, उसकी उतनी ही नीची कीमत रखनी चाहिये । दूसरे शब्दो मे, कीमत मे गिरावट के साथ माँगी जाने वाली मात्रा मे वृद्धि एव विलोमश कमी होती है।"[15] उन्होने इसकी क्रियाशीलता के कारणो एव अपवादो की भी व्याख्या की और बताया कि माँग का नियम एक गुणात्मक कथन होता है ।

---

15 "The greater the amount to be sold, the smaller must be the price at which it is offered that it may find purchasers or in other words the amount demanded increases with a fall in price and diminishes with a rise in price." Marshall A.

माँग की लोच (Elasticity of Demand) माँग की लोच' की अवधारणा प्रो मार्शल की महत्त्वपूर्ण देनो मे एक है। ज्ञातव्य है कि किसी वस्तु की कीमत मे परिवर्तन से उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे विपरीत दिशा मे होने वाले परिवर्तन का गणितीय माप 'माँग की लोच' कहलाता है। इसे परिभाषित करते हुए स्वय मार्शल ने बताया कि बाजार मे किसी वस्तु की माँग की लोच अधिक या कम तब कही जायेगी जब कीमत मे एक दी हुई कमी होने पर उसकी माँग मे अधिक या कम वृद्धि होती है तथा कीमत मे दी हुई वृद्धि होने पर माँग मे अधिक या कम कमी होती है। [16]

प्रो मार्शल ने माँग की लोच के प्रकारो एव श्रेणियो की विस्तृत व्याख्या की और बताया कि माँग की लोच के निम्नांकित तीन प्रकार है–

(i) **कीमत लोच (Price elasticity)**- इसे उन्होने कीमत मे परिवर्तन से माँगी जाने वाली मात्रा मे प्रतिक्रियात्मकता का माप बताया और कहा कि इसका गुणाक ऋणात्मक होता है अथात् कीमत और माँगी जाने वाली मात्रा परस्पर विपरीत दिशा मे बदलती है।

(ii) **आय लोच (Income elasticity)** इसे प्रो मार्शल ने उपभोक्ता की आय मे परिवर्तन से किसी वस्तु की माँगी जाने वाली मात्रा मे प्रतिक्रियात्मकता का माप बताया और कहा कि श्रेष्ठ वस्तुओ के सदर्भ मे आय लोच का गुणाक धनात्मक एव घटिया वस्तुओ के सदर्भ मे ऋणात्मक होता है। अर्थात् आय मे वृद्धि से श्रेष्ठ वस्तुओ की माँगी जाने वाली मात्रा मे वृद्धि एव विलोमश कमी होती है जबकि घटिया वस्तुओ की माँगी जाने वाली मात्रा मे इससे भिन्न क्रमश कमी एव वृद्धि होती है।

(iii) **आड़ी लोच (Cross Elasticity) of demand)** एक वस्तु की कीमत मे परिवर्तन से दूसरी वस्तु की माँगी जाने वाली मात्रा मे प्रतिक्रियात्मक के माप को उन्होने माँग की आड़ी लोच बताया और कहा कि स्थानापन्न वस्तुओ की इस लोच का गुणाक धनात्मक एव पूरक वस्तुआ का ऋणात्मक होता है।

प्रो मार्शल ने माँग की लोच की निम्नांकित 5 श्रेणिया बतायीं–

(i) **पूर्णत लोचदार माँग (Perfectly elastic demand)** जब किसी वस्तु की कीमत मे अति सूक्ष्म परिवर्तन से ही उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे अनंत परिवर्तन हो जाता है तो उसकी माँग पूर्णत लोचदार होती है। यह एक आदर्श एव चरम स्थिति है। इसे मार्शल ने (ep = ∞) से व्यक्त किया। इस स्थिति मे माँग वक्र OX आधार के समानान्तर होता है।

(ii) **अत्यधिक लोचदार माँग (Highly elastic demand)** जब किसी वस्तु की कीमत मे एक निश्चित प्रतिशत परिवर्तन से उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे अपेक्षाकृत अधिक परिवर्तन होता है तो उसकी माँग अत्यधिक

लोचदार होती है । इसमे माँग वक्र का ढाल ऋणात्मक किन्तु कम होता है । इसे मार्शल ने (ep >1) से व्यक्त किया । विलासिताओ की वस्तुओ की माँग अत्यधिक लोचदार होती है । अत उनकी माँग की लोच एक इकाई से अधिक होती है ।

(iii) **लोचदार माँग (Elastic demand)**- जब किसी वस्तु की कीमत एव उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे समान प्रतिशत परिवर्तन होता है तो उसकी माँग लोचदार होती है । इसमे माँग वक्र का ढाल ऋणात्मक किन्तु न बहुत कम और न बहुत अधिक होता है । इसे मार्शल ने (ep = 1) से व्यक्त किया । *सुविधाओ की वस्तुओ की माँग लोचदार होती है । अत उनकी माँग की लोच* एक इकाई के बराबर होती है ।

(iv) **बेलोचदार अथवा कम लोचदार माँग (Inelastic or less elastic demand)**- जब वस्तु की कीमत मे एक निश्चित परिवर्तन से उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे अपेक्षाकृत कम परिवर्तन होता है तो उसकी माँग बेलोचदार कहलाती है । इस स्थिति मे माँग वक्र का ढाल ऋणात्मक किन्तु अपेक्षाकृत बहुत कम होता है । इसे प्रो मार्शल ने (ep<1) से व्यक्त किया । *अनिवार्यताओ की वस्तुओ की माँग बेलोचदार होती है । अत उनकी माँग की* लोच एक इकाई से कम होती है ।

(v) **पूर्णतया बेलोचदार माँग (Perfectly inelastic demand)**- जब वस्तु की कीमत मे परिवर्तन से उसकी माँगी जाने वाली मात्रा मे कोई परिवर्तन नहीं होता है तो उसकी माँग पूर्णतया बेलोचार होती है । प्रो मार्शल ने इसे (ep = 0) से व्यक्त किया। यह दूसरी चरम एव आदर्श स्थिति है। इसमे माँग वक्र OY आधार के समानान्तर एक खड़ी सरल रेखा होता है ।

माँग की लोच का माप (Measurement of elasticity of demand)- प्रो मार्शल ने माँग की लोच के माप की दो विधियाँ बतायी–

(a) कुल व्यय विधि एव (b) रेखागणितीय विधि ।

(a) **कुल व्यय विधि (Total outlay Method)**- इस विधि मे प्रो मार्शल ने वस्तु की कीमत मे परिवर्तन से उस पर होने वाले कुल व्यय में परिवर्तन के आधार पर माँग की लोच का माप किया और कहा कि,

(i) जब कीमत एव कुल व्यय विपरीत दिशा मे बदलते है तो माँग की लोच 'इकाई से अधिक' (ep>1) होती है । ये विलासितायें होती है ।
(ii) जब कीमत एव कुल व्यय एक ही दिशा मे बदलते है तो माँग की लोच 'इकाई से कम (ep > 1) होती है । ये अनिवार्यतायें होती है ।
(iii) *जब कीमत मे परिवर्तन से कुल व्यय मे कोई परिवर्तन नही होता है तो* माँग की लोच 'इकाई के बराबर' (ep = 1) होती है । ये सुविधाए होती है ।

(b) *रेखागणितीय विधि (Geometrical Method)*- इस विधि की

सहायता से प्रो मार्शल ने 'बिन्दु लोच' (point elasticity) का माप किया और बताया कि माँग रेखा के जिस बिन्दु पर माँग की लोच ज्ञात करनी होती है उस बिन्दु से माँग रेखा के नीचे के हिस्से की तुलना उपर के हिस्से के साथ कर माँग की लोच ज्ञात की जाती है। तथा,
(i) यदि, उपरी हिस्सा (upper segment अथवा US) और निचला हिस्सा (Lower segment अथवा LS) दोनो बराबर अर्थात् US = LS होता है, तो माँग की लोच 'इकाई के बराबर', (ii) यदि US>LS तो माँग की लोच 'इकाई से कम' और (iii) यदि US<LS तो माँग की लोच 'इकाई से अधिक' होती है।

4. उत्पादन सिद्धान्त (The Theory of Production)-

प्रो मार्शल के 'उत्पादन' सम्बन्धी विचारो मे निम्नांकित बाते उल्लेखनीय है–

(1) उत्पादन एवं उत्पत्ति के साधन (Meaning and Factors of Production)- प्रो मार्शल ने 'उपयोगिता के सृजन' को उत्पादन कहा। उन्ही के शब्दो मे, ''मनुष्य भौतिक वस्तुओ का सृजन नही कर सकता। वह मानसिक एव नैतिक क्षेत्र मे नये–नये विचारो को जन्म भले ही दे दे, परन्तु जब भौतिक वस्तुओ के निर्माण की बात आती है तो वह केवल उपयोगिता का ही सृजन या निर्माण कर सकता है।''[17] उन्होने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए बताया कि 'इस भौतिक जगत मे मनुष्य जो कुछ कर सकता है वह यह है कि या तो वह स्वय पदार्थ की इस प्रकार पुनर्व्यवस्था कर दे जिससे वह पहले की तुलना मे अधिक उपयोगी हो जाये या इस सम्बन्ध मे कुछ ऐसे आवश्यक कार्य करदे जिससे प्रकृति उसे उपयोगी बना दे, जैसे– भूमि मे बीज डालने पर प्राकृतिक शक्तियाँ उन्हे नया जीवन प्रदान करती है।'

प्रो मार्शल ने उत्पत्ति के चार प्रमुख साधन–भूमि, श्रम, पूजी और सगठन बताये। इनमे से भूमि एव श्रम को उन्होने उत्पत्ति का प्राथमिक और पूजी को गौण अथवा सहायक साधन माना। सगठन को उन्होने एक विशेष प्रकार का श्रम ही माना और इसमे प्रबन्ध एव साहस दोनो को सम्मिलित कर लिया। इस प्रकार प्रच्छन्न रूप मे उन्होने उत्पादन के कुल पाँच साधन माने और सभी अर्थशास्त्री उनके इस विचार से सहमत है। अब हम, सक्षेप मे, इनके बारे मे उनके विचारो का विवेचन करेगे –

(i) भूमि (Land)- प्रो. मार्शल ने भूमि को प्रकृति का एक नि:शुल्क उपहार माना और कहा कि, ''भूमि से आशय उन सब भौतिक पदार्थों एवं शक्तियो से है जिन्हे प्रकृति ने भूमि एवं पानी, हवा एव प्रकाश और उष्मा

---

17 "Man Cannot create material things. In the mental and moral world, indeed, he may produce new ideas, but when he is said to produce material things, he really produces utility" Marshall A

के रूप मे मनुष्य को निशुल्क प्रदान की है।''[18] उन्होने कहा कि ''भूमि का क्षेत्र निश्चित है, मनुष्य का इस पर कोई नियत्रण नही है, यह पूर्णत. अप्रभावित है, इसकी कोई उत्पादन लागत नही है और इसकी कोई ऐसी पूर्ति कीमत नही है जिस पर इसका उत्पादन किया जा सके।''[19]

(ii) **श्रम (Labour)**- प्रो मार्शल के शब्दो मे, ''श्रम से आशय मनुष्य के आर्थिक कार्य से है, चाहे इसे हाथ से किया जावे अथवा मस्तिष्क से।''[20] उन्होने अपने विचारो को और अधिक स्पष्ट करते हुए बताया कि, ''मस्तिष्क अथवा शरीर का कोई परिश्रम जो अशत अथवा पूर्णत , कार्य से प्राप्त होने वाले आनन्द से पृथक्, लाभ के लिए किया जाता है, श्रम है।''[21]

(iii) **पूँजी (Capital)**- प्रो मार्शल ने 'धन के उपभोग को पूँजी बताया जो और अधिक धन के उत्पादन मे सहायक होता है।' इस प्रकार उनके मतानुसार पूजी आय उत्पादन मे सहायक होती है।

(iv) **संगठन Organisation)**- जैसा कि उल्लेख किया जा चुका, मार्शल ने सगठन को श्रम का ही एक विशिष्ट रूप माना और प्रबन्ध एव सहास दोनो को इसमे सम्मिलित किया।

(2) जनसंख्या (Population)- प्रो मार्शल ने जनसख्या की समस्या को सभ्यता से भी प्राचीन बताया और माल्थस के जनसख्या सिद्धान्त का सामान्यत समर्थन किया। उन्होने बताया कि किसी स्थान की जनसख्या मे वृद्धि के दो प्रमुख कारण– *प्राकृतिक वृद्धि एव देशान्तरण (migration)* हैं। उन्होने स्वस्थ एव प्रसन्नचित्त जनसख्या को किसी राष्ट्र का सबसे बड़ा धन बताया। उन्होने एक छोटे परिवार की तुलना मे बड़े परिवार की प्रशसा की और कहा कि एक बड़े परिवार के सदस्य परस्पर एक दूसरे को शिक्षित कर देते हैं और वे अपेक्षाकृत अधिक चतुर एव बलवान होते है।

प्रो मार्शल ने जनसख्या की समस्या का विवेचन श्रम की माँग एव पूर्ति के परिप्रेक्ष्य मे किया और बताया कि यद्यपि जनसख्या मे तेजी से वृद्धि हो रही है किन्तु, श्रम की माँग का निर्धारण खाद्यान्न की मात्रा द्वारा होता है जिसमे क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता के कारण अपेक्षित वृद्धि नही

---

18. "By land is meant.... whole of the materials and the forces which nature gives freely for man's aid, in land and water, in air and light and heat." Marshall A.
19. "The area of the earth is fixed, man has no control over it, it is wholly unaffected, it has no cost of production, there is no supply price at which it can be produced." Marshall A.
20. "By labour is meant the economic work of man, whether done with the hand or the head." Marshall A.
21. "Any exertion of mind or body undergone partly or wholly with a view to some good, other than the pleasure derived directly from the work, is called labour." Marshall A.

हो रही है। श्रम की पूर्ति के बारे मे उन्होने बताया कि, 'इतिहास साक्षी है कि प्रत्येक मनुष्य इतना उपजाऊ रहा है कि यदि जीवन–निर्वाह के साधनो, बीमारी युद्ध शिशुवध और सयम से इसे नही रोका गया होता तो जनसख्या तेजी से बढ़ती।'

(3) श्रम–विभाजन (Division of Labour)- प्रो मार्शल ने बताया कि वस्तुओ की माँग मे वृद्धि एव उनके बाजार मे विस्तार से श्रम–विभाजन का जन्म हुआ है। उन्होने बताया कि श्रम–विभाजन एव मशीनीकरण मे प्रत्यक्ष एव धनात्मक सम्बन्ध है। उन्होने श्रमिको की योग्यता एव दक्षता के अनुकूलतम प्रयोग के लिए श्रम–विभाजन को आवश्यक माना।

(4) उत्पादक का साम्य (Producer's Equilibrium)- प्रो मार्शल के अनुसार उत्पादन अधिकतमीकरण (Production maximisation) अथवा लाभ अधिकतमीकरण किसी उत्पादक का सबसे प्रमुख लक्ष्य होता है। उन्होने बताया कि इसकी प्राप्ति के लिए वह कम उत्पादक साधन के स्थान पर अधिक उत्पादक और महगे साधन के स्थान पर सस्ते साधन का तब तक प्रतिस्थापन करता जाता है जब तक प्रत्येक साधन की सीमात उत्पादकता एव उसकी कीमत का अनुपात शेष साधनो की सीमात उत्पादकताओ एव उनकी कीमतो के अनुपात के बराबर नही हो जाता। सक्षेप मे, उत्पादक तब साम्य मे होता है जब $MPx/Px = MPy/Py = MPz/Pz = \quad MPn/Pn$ हो जाता है।

प्रो मार्शल ने बताया कि उत्पादन के विभिन्न साधन एक–दूसरे के अपूर्ण स्थानापन्न है। अत एक साधन सयोग मे न्यूनाधिक मात्रा मे सभी साधनो की आवश्यकता पड़ती है और उत्पादक न्यूनतम–लागत–साधन सयोग से उत्पादन करने की चेष्टा करता रहता है। साधनो की स्थानापन्नता के साथ–साथ मार्शल ने उनकी पूरकता भी स्वीकार की और बताया कि राष्ट्रीय आय समस्त साधनो का सामूहिक प्रयास होती है।

(5) ह्रासमान प्रतिफल नियम् (Law of Diminishing Returns)- प्रो मार्शल ने बताया कि अल्पकाल मे जब एक उत्पादक साधन–सयोग मे एक साधन की मात्रा स्थिर रखकर शेष साधनो की मात्रा मे उत्तरोत्तर वृद्धि करता जाता है तो अन्तत कुल उत्पादन मे गिरती दर से वृद्धि होने लगती है। इसी प्रवृत्ति को उन्होने ह्रासमान प्रतिफल का नियम कहा। उन्ही के शब्दो मे, ''यदि कृषि कला मे कोई सुधार न हो, तो भूमि के टुकड़े पर श्रम एव पूँजी की उत्तरोत्तर इकाइयो के प्रयोग से एक सीमा के पश्चात् कुल उत्पादन मे अनुपात से कम वृद्धि होती है।''[22]

---

22. "An increase in the capital and labour applied in the cultivation of land causes in general, a less than proportionate increase in the amount of produce raised unless it happens to coincide with an improvement in the arts of agriculture." Marshall A.

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर मार्शल द्वारा बतायी गयी इस नियम की प्रमुख विशेषताओ को इस प्रकार गिनाया जा सकता है–

(i) यह नियम केवल कृषि मे क्रियाशील होता है ।

(ii) साधन सयोग परिवर्तनशील है और उसमे एक साधन भूमि स्थिर एव शेष दो साधन–पूँजी एव श्रम परिवर्तनशील है ।

(iii) यह नियम तभी क्रियाशील होता है जब कृषि तकनीको मे कोई परिवर्तन न हो । दूसरे शब्दो मे, प्रति इकाई समय मे अथवा विश्लेषण अवधि मे वैज्ञानिक प्रगति एव तकनीकी ज्ञान की स्थिति दी हुयी एव निश्चित रहती है।

(iv) यह नियम एक सीमा के पश्चात् ही क्रियाशील होता है अर्थात् इस सीमा से पहले क्रमश क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि नियम एव क्रमागत उत्पत्ति समता नियम क्रियाशील होते है ।

(v) परिवर्तनशील साधनो की सीमात उत्पादकता मे गिरावट के साथ ही यह नियम क्रियाशील होता है क्योकि तभी कुल उत्पादन मे अनुपात से कम वृद्धि का क्रम शुरु होता है ।

(vi) नियम की व्याख्या उत्पादन की भौतिक मात्रा के सम्बन्ध मे की जाती है न कि उपज की बाजार कीमत के रूप मे ।

कृषि के अलावा प्रो मार्शल ने मछली पकड़ने, मकान बनाने एव खनन क्रियाओ मे भी इस नियम की क्रियाशीलता स्वीकार की ।

(6) पूर्ति सारणी एव पूर्ति-कीमत (Supply Schedule and supply Price)- प्रो मार्शल ने इनका विवेचन उत्पत्ति के साधनो के परिप्रेक्ष्य मे एव प्रयोग साधन–कीमत–निर्धारण एव वस्तु–कीमत–निर्धारण मे किया । उन्होने पूर्ति कीमत को ही साधनो का पुरस्कार बताया और कहा कि इन साधनो की माँग व्युत्पन्न माँग होती है और इनकी पूर्ति पर विभिन्न घटको का प्रभाव पड़ता है ।

5. विनिमय सिद्धान्त (The Theory of Exchange)- प्रो मार्शल के विनिमय सम्बन्धी विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय हैं–

(1) लागत अवधारणाएं (Cost Concepts)- प्रो मार्शल ने लागत अवधारणाओ की विस्तृत व्याख्या की । अल्पकालीन एव दीर्घकालीन मौद्रिक लागतो के अलावा उन्होने 'वास्तविक लागत' की अवधारणा का भी स्पष्टीकरण किया । वास्तविक लागत (Real cost) से आशय सामाजिक लागत (social cost) से है । मार्शल ने बताया कि किसी वस्तु के उत्पादन व्यय से आशय उसकी वास्तविक लागत से है । उन्हीं के शब्दो में, ''किसी वस्तु के निर्माण में प्रत्यक्ष एव परोक्ष रूप से लगने वाले श्रम के अलावा उसके

उत्पादन मे प्रयुक्त पूँजी की बचत के लिए आवश्यक त्याग या प्रतीक्षा आदि सब मिलकर उस वस्तु के उत्पादन की वास्तविक लागत कहलाते है।'' इस परिभाषा के अनुसार यदि X वस्तु के उत्पादन मे समाज को Y वस्तु के उत्पादन से दुगुना त्याग करना पड़ता है तो X वस्तु की लागत भी Y की लागत से दुगुनी होगी।

मनोवैज्ञानिक घटको पर आधारित वास्तविक लागत का कोई निश्चित माप सम्भव नही होता। अत मार्शल की यह लागत अवधारणा अधिक लोकप्रिय नही हो पायी तथापि, कल्याणकारी अर्थशास्त्र मे सामाजिक लागत की अवधारणा एक महत्वपूर्ण विश्लेषणात्मक उपकरण है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह आशय नही कि उन्होने मौद्रिक लागतो का विवेचन नही किया। वस्तुत. उन्होने इन लागतो की भी विस्तृत व्याख्या की और उन्हे 'प्रमुख' तथा 'पूरक' लागतो मे विभाजित किया और कहा कि बाजार कीमत कम से कम इतनी अवश्य होनी चाहिये कि वस्तु की प्रमुख अर्थात् परिवर्तनशील लागत वसूल हो जाये। इस प्रकार वस्तुओ का पूर्ति के वस्तुगत पहलू का विवेचन करने के लिए प्रो. मार्शल ने मौद्रिक लागत और विषयगत पहलू का विवेचन करने के लिए वास्तविक लागत की अवधारणा का प्रयोग किया।

(2) कीमत का सामान्य सिद्धान्त (The General Theory of Price)- प्रो. मार्शल ने माँग, पूर्ति, समय एव मूल्य के आधार पर कीमत के सामान्य सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ज्ञातव्य है कि, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो ने कीमत के लागत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और बताया कि जिन वस्तुओ की उत्पादन लागत जितनी ज्यादा होती है उनका मूल्य भी शेष वस्तुओ से उतना ही अधिक होता। उनके इन विचारो को कीमत का उत्पादन लागत सिद्धान्त कहा गया। प्रो. जे एस. मिल ने भी उनके इन्ही विचारो का समर्थन कर इस सिद्धान्त को मजबूती प्रदान की। यह कीमत का वस्तुगत सिद्धान्त था। इसके ठीक विपरीत आस्ट्रियन सम्प्रदाय के अर्थशास्त्रियो (मेजर, वीजर एव बाम बावर्क) ने कीमत के विषयगत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया और कहा कि किसी वस्तु की कीमत उसकी उपयोगिता पर निर्भर करती है। अत. किसी वस्तु की उपयोगिता दूसरी वस्तुओ से जितनी ज्यादा होती है उसकी कीमत उतनी ही ऊँची एव विलोमश नीची होती है। इसी आधार पर प्रो. जेवन्स ने सीमात उपयोगिता अर्थात् माँग की शक्ति की भूमिका का समर्थन कर कीमत के विषयगत सिद्धान्त को मजबूती प्रदान की।

प्रो. मार्शल ने कीमत निर्धारण के उपर्युक्त दोनो ही सिद्धान्तो को अधूरा एव अपर्याप्त बताया और कहा कि न तो अकेली सीमात लागत अर्थात् पूर्ति की शक्ति किसी वस्तु की कीमत निर्धारित कर सकती और न अकेली सीमात

उपयोगिता अर्थात् माँग की शक्ति । उन्होने बताया कि 'जिस प्रकार कागज के एक टुकड़े को कैंची के दोनो फलके मिलकर काटते है उसी प्रकार कीमत का निर्धारण माँग और पूर्ति की दोनो शक्तियाँ मिलकर करती है ।[23] जिस प्रकार कागज काटने मे कैंची के किसी एक फलके अर्थात् धार की भूमिका कम अथवा ज्यादा हो सकती है, उसी प्रकार कीमत निर्धारण मे माँग और पूर्ति की शक्तियो की भूमिका कम अथवा ज्यादा हो सकती है ।' इसी आधार पर प्रो. मार्शल ने बताया कि यह विवाद निरर्थक है कि कीमत का निर्धारण दोनो शक्तियो मे से कौनसी शक्ति करती है । इसीलिए उन्होने बताया कि ''कीमत एक मेहराब के पत्थर की भाति होती है जिसके एक सिरे पर माँग और दूसरे सिरे पर पूर्ति का दबाव होता है ।'' अर्थात् माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा कीमत का निर्धारण होता है ।

(3) कीमत निर्धारण में समय तत्व की भूमिका (Role of time Element in the determination of price)- प्रो मार्शल ने माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा कीमत–निर्धारण की व्याख्या समय के सदर्भ मे की । उन्होने समय से आशय घड़ी या कलेण्डर के समय से नही लिया बल्कि वस्तुओ के क्रियात्मक समय से लगाया अर्थात् माँग परिवर्तनो के अनुसार किसी वस्तु की पूर्ति मे कब, कितना और कैसे परिवर्तन हो सकता है ? उन्होने इस परिप्रेक्ष्य मे पूर्ण प्रतिस्पर्धा की अवास्तविक एव कठोर मान्यता का सहारा नही लिया बल्कि प्रर्याप्त प्रतिस्पर्धी व्यावहारिक बाजार स्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे अपनी व्याख्या पूर्ण की । कीमत निर्धारण मे समय तत्व की महत्ता के आधार पर उन्होने इसे निम्नाकित चार रूपो मे व्यक्त किया–

(i) अति अल्पकाल (Very short period)- इसे दैनिक बाजार (day-to day market) भी कहते है । अति अल्पकाल मे किसी वस्तु की पूर्ति उसके उपलब्ध स्टॉक तक ही सीमित रहती है । अत. जब सारे स्टॉक को पूर्ति का रूप दिया जा चुका होता है तो माँग बढ़ने पर कीमत मे वृद्धि एव माँग गिरने पर कीमत मे कमी हो जाती है किन्तु, क्रय–विक्रय की मात्रा पूर्ववत ही रहती है । ज्ञातव्य है कि, नाशवान वस्तुओ का उपलब्ध स्टॉक प्रारम्भ से ही पूर्ति के रूप मे उपलब्ध रहता है अर्थात् इनकी पूर्ति एव स्टॉक मे कोई अन्तर नही रहता जबकि टिकाऊ वस्तुओ की माँग गिरने पर पूर्ति घटाकर स्टॉक बढ़ा दिया जाता है और विलोमशः स्टॉक घटाकर (किन्तु, केवल उपलब्ध स्टॉक तक) पूर्ति मे वृद्धि कर दी जाती है । दूसरे शब्दो मे, अति अल्पकाल मे कीमत निर्धारण मे माँग की शक्ति बहुत सक्रिय एव पूर्ति की शक्ति एकदम

---

23 "We might as reasonably dispute whether it is the upper or the under blade of a pair of scissors that cuts a piece of paper, as whether value is governed by utility or cost of production." Marshall A

निष्क्रिय भूमिका निभाती है किन्तु फिर भी इस भूमिका की पूर्णत अनदेखी नही कर सकते ।

(ii) **अल्पकाल (Short period)**- अति अल्पकाल से भिन्न अल्पकाल मे कीमत निर्धारण मे माँग की शक्ति के साथ–साथ पूर्ति की शक्ति भी पूर्णत तो नही बल्कि आशिक रूप से सक्रिय हो जाती है । अत माँग बढ़ने पर वस्तु की पूर्ति मे कुछ वृद्धि एव माँग गिरने पर उसकी पूर्ति मे कुछ कमी करना सम्भव हो जाता है । पूर्ति मे ये आशिक समायोजन उपलब्ध उत्पादन क्षमता का प्रयोग बढ़ाकर अथवा विलोमश घटाकर किया जाता है ।

(iii) **दीर्घकाल (Long period)**- दीर्घकाल मे समयावधि अल्पकाल से लम्बी होती है । इस अवधि मे माँग परिवर्तन के अनुसार उसकी पूर्ति मे पूर्ण समायोजन करना सम्भव हो जाता है । फलत कीमत निर्धारण मे माँग के साथ–साथ वस्तु की पूर्ति की शक्ति की पूर्णत सक्रिय हो जाती है । इस अवधि मे माँग बढ़ने पर वस्तु के उत्पादन की नयी क्षमता सृजित कर पूर्ति मे वृद्धि करना और विलोमश क्षमता घटाकर पूर्ति मे कमी करना सम्भव हो जाता है ।

(iv) **अति दीर्घकाल (Very long period)** प्रो मार्शल के अनुसार अति दीर्घकाल ऐतिहासिक समय होता है । कीमत निर्धारण की दृष्टि से इस समय का कोई महत्त्व नही होता क्योकि, इस अवधि मे उत्पादन के ढाचे एव आर्थिक प्रणाली के स्वरूप मे आधारभूत परिवर्तन हो जाते है, अर्थव्यवस्था विकासशील से विकसित एव समाजवादी से पूँजीवादी अथवा पूँजीवादी से समाजवादी अर्थव्यवस्था मे रूपान्तरित हो जाती है और जनसख्या की नयी पीढ़ी आ जाती है अर्थात् इस अवधि मे 'नये घोड़े और नये मैदान' होते है ।

उपर्युक्त स्थितियो के कारण ही प्रो मार्शल ने बताया कि, ''सामान्यतया विचाराधीन समयावधि जितनी छोटी होगी, कीमत निर्धारण मे माग के प्रभाव के प्रति दिया जाने वाला हमारा ध्यान उतना ही ज्यादा होगा और समयावधि जितनी लम्बी होगी उतना ही मूल्य पर उत्पादन लागत का अधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा ।''

(4) **बाजार कीमत एवं सामान्य कीमत (Market price and Normal price)**- प्रो मार्शल ने कीमत के निम्नाकित दो रूप बताये–

प्र (i) **बाजार कीमत (Market price)** प्रो मार्शल ने बताया कि अति
सम ल्पकाल मे माँग और पूर्ति की अस्थायी शक्तियो द्वारा अस्थायी सतुलन बिन्दु
नो कीमत निर्धारित होती है, उसे बाजार कीमत कहते है । यह वास्तविक
एव अप प्रचलित कीमत होती है । अत बाजार मे सभी वस्तुओ का
की शक्ति क्रय इसी कीमत पर होता है । इस कीमत के निर्धारण मे माँग की
त सक्रिय एव पूर्ति की शक्ति एकदम निष्क्रिय रहती है । अत यह

कीमत वस्तु की उत्पादन लागत से बहुत नीची अथवा ऊँची हो सकती है अर्थात् इस कीमत से वस्तु के उत्पादक अथवा विक्रेता को हानि भी हो सकती है और उसे असामान्य लाभ भी मिल सकता है। यह कीमत निरुत्पादनीय एव पुनरुत्पादनीय–दोनो ही प्रकार की वस्तुओ की होती है।

सामान्य कीमत (Normal price) प्रो मार्शल के मतानुसार माँग और पूर्ति की स्थायी शक्तियो द्वारा, दीर्घकाल मे स्थायी सतुलन बिन्दु पर जो कीमत निश्चित होती है उसे सामान्य कीमत कहते है। यह आदर्श एव अवास्तविक कीमत होती है, अत इसका किसी समय विशेष मे प्रचलन मे रहना आवश्यक नही बल्कि, इसके भविष्य मे प्रचलन मे आने की आशा की जाती है। क्योकि, इसके निर्धारण मे माँग की शक्ति के साथ–साथ पूर्ति की शक्ति भी सक्रिय हो जाती है, अत यह ठीक उत्पादन लागत के बराबर होती है और फलत इससे वस्तु के उत्पादक अथवा विक्रेता को केवल सामान्य लाभ ही मिलता है। सामान्य कीमत केवल पुनरुत्पादनीय वस्तुओ की होती है क्योकि इनकी उत्पादन लागत ज्ञात करना सम्भव हो पाता है। प्रो मार्शल ने इस कीमत के निर्धारण मे उत्पत्ति के नियमो की क्रियाशीलता की महत्ता स्वीकार की और बताया कि (a) जब किसी वस्तु का उत्पादन क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि (अथवा लागत ह्रास) नियम के अधीन होता है तो वस्तु की माँग और सामान्य कीमत मे ऋणात्मक सम्बन्ध पाया जाता है। (b) जब उत्पादन क्रमागत उत्पत्ति समता (अथवा लागत समता) नियम के अनुसार होता है तो माँग परिवर्तन से कीमत अप्रभावित रहती है और (c) जब उत्पादन क्रमागत उत्पत्ति ह्रास (अथवा लागत वृद्धि) नियम के अधीन होता है तो वस्तु की माँग एव सामान्य कीमत मे धनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है।

(5) कीमत एव फर्मों का साम्य निर्धारण (Determination of Price and Equilibrium of Firms) प्रो मार्शल ने मुख्यत दो बाजार दशाए स्वीकार की– (i) पर्याप्त प्रतिस्पर्धी (Sufficiently competetive) एव (ii) एकाधिकारी बाजार।

(i) प्रतिस्पर्धी बाजार– प्रो मार्शल ने बताया प्रतिस्पर्धी बाजार मे कीमत का निर्धारण सम्पूर्ण उद्योग की वस्तु की माँग और पूर्ति की सापेक्षित शक्तियो द्वारा होता है और जैसे–जैसे समयावधि लम्बी होती जाती है, पूर्ति की लोच बढ़ती जाती है। फलत माँग मे वृद्धि से कीमत मे अपेक्षाकृत उतनी ही कम वृद्धि एव क्रय–विक्रय की मात्रा मे अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होती जाती है। फर्म के सदर्भ मे उन्होने बताया कि उसकी अपनी कोई कीमत नीति नही होती और वह कीमत–निर्माता न होकर मात्र कीमत–वसूलकर्त्ता होती है। फिर भी, जैसा कि उन्होने बताया, उसका उद्देश्य अपना लाभ अधिकतम करना होता है अत वह भूल एव सुधार की प्रक्रिया द्वारा उस उत्पादन स्तर का पता लगाने का प्रयास करती है जिस पर उसकी कुल [illegible] का कुल

लागत पर आधिक्य अधिकतम होता है । उन्होने यह भी बताया कि जहाँ अल्पकाल मे फर्म को असामान्य लाभ, सामान्य लाभ और हानि मे से किसी भी स्थिति का सामना करना पड सकता है वहाँ दीर्घकाल मे उसे, आवश्यक रूप से सामान्य लाभ ही मिलता है ।

(ii) **एकाधिकारी बाजार**– जब बाजार मे किसी वस्तु की पूर्ति पर किसी एक ही उत्पादक अथवा विक्रेता का नियत्रण होता है, तो उसे प्रो मार्शल ने एकाधिकार बताया और कहा कि एक एकाधिकारी का उद्देश्य भी अपना शुद्ध लाभ अधिकतम करना होता है । एकाधिकारी के साम्य के सदर्भ मे भी उन्होने यही बताया कि जब कुल लागत पर कुल आगम का आधिक्य अधिकतम होता है तो प्राप्त कुल लाभ अधिकतम होता है । अत एकाधिकारी भी भूल एव सुधार पद्धति द्वारा इसी उत्पादन स्तर का पता लगाने का प्रयास करता है । प्रो मार्शल ने बताया कि एकाधिकारी को भी अल्पकाल मे असामान्य लाभ, सामान्य लाभ और शुद्ध हानि मे से किसी भी स्थिति का सामना करना पड सकता है किन्तु, दीर्घकाल मे उसे आवश्यक रूप से शुद्ध एकाधिकारी अर्थात् असामान्य लाभ मिलता है ।

एकाधिकारी के सदर्भ मे प्रो मार्शल ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि उसकी कीमत प्रतिस्पर्धी बाजार की कीमत से ऊँची नही होती । उन्होने बताया कि एक तो वैयक्तिक प्रतिस्पर्धियो को अपनी वस्तु की बिक्री बढ़ाने के लिए अधिक विज्ञापन व्यय करना पड़ता है और दूसरे, उनके उत्पादन का आकार छोटा होता है, अत दोनो ही कारण एकाधिकारी की तुलना मे उनकी उत्पादन लागत बढ़ा देते है फलत उनकी कीमते उससे ऊँची होती है । दूसरे शब्दो मे, प्रो मार्शल ने बताया कि नीची कीमत पर अधिक उपज की बिक्री करके एकाधिकारी भी समाजसेवा का महान कार्य कर सकता है ।

(6) **प्रतिनिधि फर्म (Representative Firm)** प्रो मार्शल ने आर्थिक साहित्य को 'प्रतिनिधि फर्म' का विचार दिया । प्रतिस्पर्धी बाजार दशाओ मे, क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि नियम की क्रियाशीलता की स्थिति मे, सामान्य मूल्य निर्धारण की समस्या हल करने के लिए उन्होने बताया कि ''वह फर्म प्रतिनिधि फर्म होती है जिसका जीवन काफी लम्बा रहा हो, जिसे पर्याप्त सफलता मिल चुकी हो, जिसका प्रबन्ध सामान्य योग्यता द्वारा किया जा रहा हो और जिसे उत्पादन की आतरिक एव बाह्य बचते मिल रही हो ।'' प्रो मार्शल के अनुसार 'यह एक विशेष प्रकार की औसत फर्म होती है जिसको हमे यह पता लगाने के लिए खोजना पड़ता है कि उसे कहा तक बड़े पैमाने की आतरिक एव बाह्य बचते मिल रही है ।'[24] अर्थात् एक प्रतिनिधि फर्म,

---

24 "Representative firm is that particular sort of average firm at which we need to look in order to see how far the economics internal and external, of production on a large scale have extended generally in the industry and country in question." Marshall A

दीर्घकाल मे, सम्पूर्ण उद्योग का प्रतिनिधित्व करती है और एक से अधिक फर्में एक साथ प्रतिनिधि फर्मे हो सकती है । जहा अन्य फर्मों का उत्पादन स्तर घटता–बढ़ता रहता है, वहा प्रतिनिधि फर्म का उत्पादन स्थिर बना रहता है ।

6. वितरण का सिद्धान्त (The Theory of Distribution)-

प्रो मार्शल के वितरण सम्बन्धी विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय है–

(1) राष्ट्रीय आय (National Income)- सन् 1665 मे बोईसग्यूलिबर्ट एव सर विलियम पैटी द्वारा राष्ट्रीय आय की प्रारम्भिक रूपरेखा प्रस्तुत करने पश्चात् सन् 1890 मे इसकी सबसे पहली एव मान्य परिभाषा प्रो मार्शल ने निम्नाकित शब्दो मे दी–

"देश के श्रम तथा पूँजी द्वारा प्राकृतिक ससाधनो के सहयोग से प्रतिवर्ष निश्चित भौतिक एव सभी प्रकार की सेवाओ सहित कुछ अभौतिक वस्तुओ के शुद्ध योग का उत्पादन किया जाता है और विदेशी विनियोजर्न से उत्पन्न शुद्ध आय इसमे जोड दी जानी चाहिये । यही किसी देश की शुद्ध वार्षिक आय अथवा राष्ट्रीय लाभाश कहलाता है ।"[25]

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर प्रो मार्शल ने राष्ट्रीय आय की निम्नाकित विशेषताये बतायी–

(i) राष्ट्रीय आय की गणना वार्षिक आधार पर की जाती है ।
(ii) यह उत्पत्ति के समस्त ससाधनो का सामूहिक प्रयास होती है ।
(iii) इसमे भौतिक एव अभौतिक (अर्थात् सेवाये) दोनो ही प्रकार की वस्तुओ के मूल्यो का योग किया जाता है ।
(iv) इसकी गणना करते समय मशीनो की टूट–फूट, ह्रास आदि की वार्षिक क्षति की राशि घटा दी जाती है ।
(v) इसमे समस्त देशवासियो की उत्पादक क्रियाओ का योग किया जाता है, चाहे वे देश मे की जाये या देश की सीमाओ से बाहर । दूसरे शब्दो मे, इसमे विदेशो से प्राप्त शुद्ध आय (विदेशो से लेनदारिया–विदेशो के देनदारिया) जोड़ी जाती है ।
(vi) राष्ट्रीय आय एव राष्ट्रीय लाभाश दोनो एक ही है ।

प्रो मार्शल ने बताया कि उत्पादन के विभिन्न साधन राष्ट्रीय आय मे से ही अपना–अपना हिस्सा करते है, अर्थात् श्रमिक अपनी मजदूरी, पूँजीपति

---

25 "The labour and capital of the country acting on its natural resources, produce annually a certain net aggregate of commodities material and immaterial, including services of all kinds ....And net income due on account of foreign investments must be added in. This is the true net annual income or revenue of the country, or the national dividend." Marshall A.

अपने विनियोगो पर ब्याज और उत्पादक लाभ अर्जित करते है । अत राष्ट्रीय आय जितनी ज्यादा होगी, उत्पत्ति के साधनो का हिस्सा उतना ही ज्यादा एव विलोमश कम होगा । उन्होने बताया कि राष्ट्रीय आय उत्पत्ति के साधनो के सहयोग पर निर्भर करती है क्योकि ये एक दूसरे के लिए रोजगार के अवसर प्रदान करते है ।

(2) **राष्ट्रीय आय का आवटन (Distribution of National Income)**- प्रो मार्शल ने बताया कि उनके पूर्ववर्ती अर्थशास्त्रियो ने वितरण की समस्या को जैसा एव जितना सरल माना, वास्तव मे, वह वैसी एव उतनी सरल नही है । अत उन्होने इस समस्या का जो सरल समाधान प्रस्तुत किया, वह वास्तव मे उतना सरल नही क्योकि ' स्वतत्र मनुष्यो को मशीनो, घोडो और गुलामो की तरह प्रयोग मे नही लाया जा सकता ।''[26] उन्होने बताया कि यदि ऐसा होता तो विनिमय एव वितरण मे कोई आधारभूत अन्तर नही रह जाता । किन्तु, उत्पत्ति का प्रत्येक साधन उस पर किये व्यय एव घिसावट की पूर्ति के लिए यथेष्ट मात्रा मे आधिक्य प्रतिफल देता है । अत मार्शल के मतानुसार आधारभूत प्रश्न यह है कि इस आधिक्य का आवटन कैसे हो ?

प्रो मार्शल धन के समान वितरण के पक्षधर थे । वे अर्थशास्त्र को मनुष्य जाति की स्थिति सुधारने का एक उपकरण बनाना चाहते थे । इसीलिए उन्होने सुझाव दिया कि उत्पत्ति के प्रत्येक साधन को उत्पादन प्रक्रिया मे सर्वोत्तम प्रयोग मे लेना चाहिये और यदि किसी साधन की मात्रा मे थोड़ी सी वृद्धि से अच्छे परिणाम मिलने की सम्भावना हो तो उसमे वृद्धि की जानी चाहिये । इस सदर्भ मे उन्होने प्रतिस्थापन्न के सिद्धान्त का समर्थन किया जिसे 'सम-सीमात प्रतिफल का सिद्धान्त' (Principle of Equi Marginal Returns) कहते है । दूसरे शब्दो मे, उनका वितरण सिद्धान्त उनके मूल्य सिद्धान्त का विस्तार मात्र है । अत मार्शल ने बताया कि उत्पादन का प्रत्येक साधन माँग और पूर्ति की शक्तियो से शासित होता है और प्रत्येक साधन अपनी लाभदायकता के आधार पर ही उत्पादन प्रक्रिया मे उस बिन्दु तक प्रयुक्त होता है जिस पर उसकी माँग-कीमत अर्थात् सीमात उत्पादकता उसकी पूर्ति-कीमत अर्थात् सीमात लागत के बराबर होती है । प्रो मार्शल ने बताया कि नियोक्ता फर्म साधनो एव उनकी प्रयुक्त होने वाली मात्राओ का इसी आधार पर चयन करती है और किसी साधन की सीमात प्राप्तियो को उस पर लगायी गयी सीमात लागत के बराबर करने का प्रयास करती है । इसके विपरीत साधन-स्वामियो का प्रयास रहता है कि वे साधन को अधिकतम

26. "Free Human beings are not brought up to their work on the same principles as a machine, a horse or a slave." Marshall A

प्रतिफल वाले प्रयोग मे लगाये । इस प्रकार अतत एक साधन का वैकल्पिक प्रयोगो मे इस प्रकार आवटन हो जाता है कि उसे भुगतान की दर एक समान एव सीमात उत्पादकता के बराबर हो जाती है । उन्होने बताया कि यदि प्रत्येक साधन को उसका उचित हिस्सा मिल जाये तो शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद की सम्पूर्ण राशि का उत्पत्ति के विभिन्न साधनो मे न्यायोचित आवटन हो जायेगा। दूसरे शब्दो मे, प्रत्येक साधन को उसकी सीमात उत्पादकता के बराबर प्रतिफल मिल जाता है अथवा राष्ट्रीय आय का विभिन्न साधनो (भूमि, श्रम, पूँजी और साहस) के बीच उनकी सीमात उत्पादकता के अनुपात मे आवटन हो जाता है । *अब हम क्रमश इन साधनो की प्राप्तियो का विवेचन करेगे–*

(i) **मजदूरी** (Wages) प्रो मार्शल ने मजदूरी की 'सामान्य दर' की अवधारणा अस्वीकार कर दी । उन्होने बताया कि यद्यपि, दीर्घकाल मे, मजदूरी श्रम की सीमात उत्पादकता के बराबर होती है किन्तु, अल्पकाल मे इस पर अनेक घटको का प्रभाव पड़ता है । उन्होने बताया कि प्रतिस्पर्धा के कारण, दीर्घकाल मे विभिन्न व्यवसायो मे मजदूरियाँ न केवल समान अपितु श्रम की कुशलता के अनुपात मे होने की प्रवृत्ति रखती है । उन्होने विभिन्न व्यवसायो मे व्यावसायिक खर्चों, प्रशिक्षण व्ययो, अनिश्चितता, जोखिम एव चिता के आधार पर मौद्रिक मजदूरी की दरो मे भिन्नता के कारणो का उल्लेख किया और बताया कि श्रम की विशिष्टताओ का भी उनकी पारिश्रमिक दरो पर गहरा प्रभाव पडता है ।

मजदूरी की सामान्य दर अर्थात् दीर्घकालीन मजदूरी के बारे मे उन्होने बताया कि एक तो यह श्रम की लागत के बराबर होती है (श्रम की लागत मे उन्होने जीवन–निर्वाह व्यय एव शिक्षण–प्रशिक्षण का व्यय सम्मिलित किया) तथा दूसरे, यह श्रम की सीमात उत्पादकता के बराबर होती है । किन्तु, उन्होने यह भी बताया कि दीर्घकाल मे भी श्रम की अपनी कुछ विशिष्टताए बनी रहती है, अत मजदूरी की वास्तविक दर, सामान्य दर से पृथक् बनी रहती है । उन्होने इन विशिष्टताओ को श्रम के लिए अहितकर बताया क्योकि इनसे श्रम की माँग और पूर्ति मे कुसमायोजन हो जाता है जिससे अवाछनीय बेरोजगारी एव अन्य कष्ट बढ जाते है ।

प्रो मार्शल ने बताया कि नियोक्ता फर्मे श्रम–कल्याण की अपेक्षा मशीनो एव उपकरणो पर राशि खर्च करना अधिक पसद करती है क्योकि जहा श्रम–कल्याण पर किये गये व्यय का पूरा अथवा आशिक लाभ उन्हे नही मिलता वहा मशीनो एव उपकरणो पर व्यय का पूरा लाभ वे स्वय प्राप्त करती है । इस सदर्भ मे उन्होने यह भी बताया कि एक उद्योग से दूसरे उद्योग मे श्रम की गतिशीलता भी श्रम–कल्याण पर किये जाने वाले व्ययो को हतोत्साहित करती है । नियोक्ता सहज ही मे यह जोखिम उठाने को तैयार नही होते ।

प्रो मार्शल ने बताया कि गदे एव अरूचिकर व्यवसायो मे पारिश्रमिक ऊचा होता है, इसके साथ उन्होने इस विरोधाभास की ओर भी सकेत किया कि नीची मजदूरिया ही व्यवसायो को गदा एव अरूचिकर बना दती है ।

निष्कर्ष रूप मे, हम कह सकते है कि, भले ही, मार्शल श्रम की मजदूरी का समाधान कभी उसकी सीमात उत्पादकता और कभी रहन–सहन के स्तर की लागत मे ढूढते नजर आते हो, किन्तु वस्तुत उन्होने यही निष्कर्ष दिया कि इसका निर्धारण श्रम की माँग और पूर्ति की शक्तियो द्वारा ही होता है । उन्ही के शब्दो मे, ''हम यह देखते है कि माँग और पूर्ति मजदूरी पर सयुक्त रूप से प्रभाव डालती है मजदूरी मे श्रम की शुद्ध उत्पादकता के बराबर होने की प्रवृत्ति रहती है । इसकी सीमात उत्पादकता, इसका माँग मूल्य और मजदूरी दर कुशल श्रम, जीवन–स्तर प्रशिक्षण आदि से प्रत्यक्ष और स्पष्ट सम्बन्ध रखते हुए पूर्ति मूल्य का निर्धारण करती है ।'' इस प्रकार मार्शल ने प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के मजदूरी लोह अर्थात् जीवन–निर्वाह सिद्धान्त एव समाजवादियो के श्रम उत्पादकता के सिद्धान्त मे समन्वय स्थापित कर दोनो चरम सिद्धान्तो मे सामजस्य स्थापित कर दिया ।

(ii) ब्याज (Interest) प्रो मार्शल ने ब्याज को पूँजी विनियोजन के लिए एक भुगतान बताया और कहा कि यह 'प्रतीक्षा का पुरस्कार' (reward for waiting) है तथा ब्याज दर का निर्धारण पूँजी की माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा सतुलन बिन्दु पर होता है । विभिन्न व्यवसायो मे लगे व्यक्तियो की पूँजी के योग को उन्होने पूँजी की माँग कहा और बताया कि यह विनियोजन की माँग पर निर्भर करती है जो स्वय पूँजी की सीमात उत्पादकता पर निर्भर है । अत , सार रूप मे, उन्होने पूँजी की माँग को उसकी सीमात उत्पादकता के साथ जोड़ा और कहा कि सीमात अत्पादकता ऊची होने पर पूँजी की माँग ज्यादा एव विलोमश कम होती है । इसके साथ–साथ उन्होने यह तथ्य भी उजागर किया कि पूँजी की माँग मे वृद्धि से उसकी सीमात उत्पादकता गिरती है ।

पूँजी की पूर्ति के बारे मे उन्होने बताया कि पूँजी सचय के जरिये इस पर अनेक घटको का प्रभाव पड़ता है जिनमे एक महत्त्वपूर्ण घटक स्वय ब्याज दर है । उन्होने बताया कि बाजार मे प्रस्तुत पूँजी की पूर्ति एक ओर प्रतीक्षा और दूसरी ओर पूँजी की सीमात उत्पादकता पर निर्भर करती है तथा पूजी का पूर्ति मूल्य मुख्यत इस तथ्य से प्रभावित होता है कि अधिकाश व्यक्ति भावी सतुष्टि की तुलना मे वर्तमान सतुष्टि को अधिक पसद करते है । अत ब्याज दर का प्रलोभन देकर ही उन्हे बचत करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है ।

प्रो मार्शल ने सकल ब्याज एव शुद्ध ब्याज के मध्य भी अतर स्पष्ट किया और कहा कि शुद्ध ब्याज सकल ब्याज का एक भाग है जो प्रतीक्षा के

कारण मिलता है। शुद्ध ब्याज मे जब उधार देने की जोखिम एव प्रबन्ध का व्यय सम्मिलित कर दिया जाता है तो सकल ब्याज मिल जाता है। मार्शल ने बताया कि विभिन्न व्यवसायो मे शुद्ध ब्याज की दर तो समान हो सकती है किन्तु सकल ब्याज दर नही।

(iii) लाभ (Profit) प्रो मार्शल ने लाभ को एक मिश्रित एव अनिश्चित आय माना। उन्होने पूँजीपति एव साहसी मे भेद नही किया और लाभ को प्रबन्ध की आय बताया। दूसरे शब्दो मे, उन्होने साहसी को एक पूँजीपति एव व्यावहारिक व्यवसायी बताकर लाभ को पूँजी पर प्रतिफल एव प्रबन्ध की मजदूरी माना। उन्होने लाभ के जोखिम सिद्धान्त को अस्वीकार कर बताया कि जोखिम के कारण नही बल्कि कीमतो मे उच्चावचन के कारण लाभो मे उच्चावचन होते है तथा जिस प्रकार अन्य साधनो का प्रतिफल उनकी माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा निर्धारित होता है, उसी प्रकार लाभ दर का निर्धारण की साहस की माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा सतुलन बिन्दु पर होता है।

प्रो मार्शल ने लाभ की वार्षिक दर एव वार्षिक बिकी पर लाभ की दर का अन्तर स्पष्ट करते हुए बताया कि लाभ–दर उन व्यवसायो मे ऊची होती है जिनका प्रबन्ध कार्य जटिल होता है और जिनमे एक निश्चित सीमा मे अर्थात् सीमित उच्चावचन होते है। इसके विपरीत वार्षिक बिक्री पर लाभ की दर दो बातो– समयावधि की लम्बाई और व्यावसायिक बिक्री के लिए वाछित कार्य की मात्रा पर निर्भर करती है और एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय मे इसमे भारी उच्चावन हो सकते है।

(iv) लगान (Rent)- प्रो मार्शल ने रिकार्डो के लगान सिद्धान्त से सहमति व्यक्त करते हुए उसे शहरी भूमियो पर भी लागू कर दिया। लगान की उत्पत्ति के बारे मे उन्होने बताया कि उसका सबसे प्रमुख कारण पूर्ति की सीमितता है और जिस साधन की पूर्ति दीर्घकाल मे भी स्थिर रहती है, उसे दीर्घकाल मे भी लगान मिलता है। इसका स्पष्ट आशय यही है कि मार्शल के अनुसार अल्पकाल मे साधनो की पूर्ति की सीमितता के आधार पर सभी साधनो को लगान मिल सकता है। उन्होने बताया कि जिस साधन की पूर्ति सीमित होती है, उसके पारिश्रमिक का उसकी पूर्ति पर कोई प्रभाव नही पड़ता। अत उसकी पूर्ति बनाये रखने के लिए साधन के पारिश्रमिक पर जो आधिक्य कीमत चुकानी पड़ती है, उसे उस साधन का लगान कहते है।

प्रो मार्शल ने लगान की व्याख्या दो आधारो पर की। सामाजिक दृष्टि से, उन्होने बताया कि, भूमि की पूर्ति सीमित है। अत उसके प्रयोग के लिए जो कुछ भुगतान किया जाता है, वह लगान है और यह कीमत एव उत्पादन लागत में सम्मिलित नही रहता। इसके विपरीत, वैयक्तिक दृष्टि से, विभिन्न काश्तकार प्रतिस्पर्धा करते है और एक काश्तकार जो कीमत चुकाने को तैयार

होता है, उसी पर भूमि की पूर्ति निर्भर करती है। अत. यह कीमत एव लागत का एक भाग होती है।

प्रो. मार्शल ने दुर्लभता लगान एवं भेदात्मक लगान के बारे मे बताया कि ये एक ही घटना के दो पहलू है। अत. इनमे कोई आधारभूत अन्तर नही है। उन्होने इसे स्पष्ट करते हुए बताया कि रिकार्डो के अनुसार घटिया भूमि की उपज पर बढ़िया भूमि की उपज का आधिक्य भेदात्मक लगान (differential rent) है। इसी घटना को इस प्रकार भी व्यक्त किया जा सकता है कि भूमियो के घटियापन से भूमियो की कुल पूर्ति सीमित हो जाती है और फलत. दुर्लभता लगान (scarcity rent) का उदय होतो है। इस प्रकार उन्होने यह बताया कि गहन कृषि मे रिकार्डो द्वारा की गयी लगान की व्याख्या मूलतः दुर्लभता लगान की व्याख्या है।

(3) आभास लगान (Quasi Rent)- प्रो. मार्शल ने आभास लगान के जिस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, वह उनकी एक मौलिक अवधारणा है। उन्होने बताया कि अल्पकाल मे पूँजीगत संसाधनो को उनकी माँग मे वृद्धि के कारण प्रचलित ब्याज दर पर जो आधिक्य मिलता है, वही आभास लगान है। यह लगान उत्पादन की स्थिर लागत से अधिक, कम अथवा उसके बराबर हो सकता है। जब यह स्थिर लागत से अधिक होता है तो पूँजीगत संसाधनो के स्वामियो को असाधारण लाभ मिलता है और जब यह स्थिर लागत से कम होता है तो फर्म को शुद्ध हानि होती है। बाद मे अर्थशास्त्रियो ने उनकी इसी व्याख्या को उत्पत्ति के शेष साधनो पर फैलाकर लगान के आधुनिक सिद्धान्त की व्याख्या कर दी।

7. मौद्रिक सिद्धान्त (The Theory of Money)- मौद्रिक विषयो पर प्रो. मार्शल ने अनेक मौलिक विचारो का प्रतिपादिन किया। किन्तु, एक लम्बी अवधि मे एव इधर–उधर बिखरे रहने के कारण जब सन् 1923 मे उन्होने 'Money, credit and Commerce' नामक रचना मे इन्हे प्रकाशित किया तो ये बहुत अधिक नये एव चौकाने वाले नजर नही आये। संक्षेप मे, उनके मुद्रा विषयक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(1) मुद्रा का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Money)- प्रो. मार्शल ने मुद्रा को मानव समाज के लिए एक वरदान बताया। उन्होने मुद्रा की सामान्य स्वीकृति पर आधारित परिभाषा दी। उन्ही के शब्दो मे, "मुद्रा मे वे सब वस्तुएं सम्मिलित होती है (किसी समय अथवा स्थान पर) जो बिना सदेह अथवा विशेष जाँच पड़ताल के वस्तुओ तथा सेवाओ को

---

27 "Money includes all those things which are (at any given time or place) generally current without doubt or special enquiry as a means of purchasing commodities or services and of defraying expenses" -Marshall A

खरीदने और व्यय चुकाने के साधन के रूप मे साधारणत प्रचलित होती z?,DD[27]

मुद्रा मूल्य का सिद्धान्त (Theory of the Value of Money)-

प्रो मार्शल ने बताया कि जिस प्रकार वस्तुओ की कीमत उनकी माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा निर्धारित होती है, उसी प्रकार मुद्रा का मूल्य भी उसकी माँग और पूर्ति की सापेक्षिक शक्तियो द्वारा निर्धारित होता है। किन्तु, इस प्रकार निर्धारित मूल्य मे मुद्रा की माँग की शक्ति बहुत सक्रिय एव पूर्ति की शक्ति बिल्कुल निष्क्रिय भूमिका निभाती है। इसीलिए उनके मुद्रा मूल्य सिद्धान्त को 'मुद्रा मूल्य का माँग सिद्धान्त' (Demand theory of the value of money) कहते है। इस सिद्धान्त को मुद्रा मूल्य के परिमाण सिद्धान्त (*Quantity Theory of the Value of Money*) की *नकद–शेष व्याख्या (Cash* balance approach) भी कहते है और क्योकि यह *व्याख्या* मुख्यत कैम्ब्रिज अर्थशास्त्रियो द्वारा की गयी अत इसे मुद्रा मूल्य का कैम्ब्रिज सिद्धान्त और प्रो मार्शल को उनमे एक अग्रणी मुद्राशास्त्री माना जाता है। उन्होने बताया कि मुद्रा की माँग और मूल्य मे धनात्मक एव आनुपातिक सम्बन्ध पाया जता है अर्थात् जब मुद्रा की माँग बढ जाती है तो उसके मूल्य मे समानुपाती वृद्धि एव विलोमश कमी हो जाती है। इसके माप के लिए उन्होने निम्नांकित समीकरण दिया,

$M = KY + K^1A$

उपर्युक्त समीकरण मे M = मुद्रा की मात्रा (यह मुद्रा की पूर्ति का पक्ष है), Y = समाज की मौद्रिक आय, K = Y का वह भाग जिसे समाज के लोग मुद्रा के रूप मे संचित करते है, A = कुल धन का मौद्रिक मूल्य और K^1 = A का भाग वह भाग जिसे उसके स्वामी मुद्रा के रूप मे संचित करते है, के सूचक है। $KY + K^1A$ मुद्रा का माँग पक्ष है। मार्शल ने बताया कि K एव K^1 मे परिवर्तन से मुद्रा मूल्य में परिवर्तन होता है।

(3) मुद्रा-मूल्य का माप (Measurement of the value of Money) प्रो मार्शल ने मुद्रा–मूल्य में परिवर्तनो का माप करने के लिए सूचकांक बनाने की *श्रृखला आधार विधि (Chain Base Method of Index Numbers) आरम्भ की। इस विधि मे आलोच्य वर्ष का निर्देशांक गत वर्ष को आधार मानकर निकाला* जाता है। सूत्र रूप मे,

श्रृखला मूल्यानुपात = आलोच्य वर्ष का मूल्य/गत वर्ष का मूल्य ×100

(4) मुद्रा के बाह्य मूल्य का माप (Measurement of the External Value of Money)- प्रो मार्शल ने सन् 1899 मे Indian Currency Committee के सामने जो विचार प्रस्तुत किये उनसे भली–भाति विदित हो जाता है कि उन्होने मुद्रा के बाह्य मूल्य के निर्धारण मे विनिमय दर निर्धारण के क्रय–शक्ति

समता सिद्धान्त (Purchasing Power Parity Theory) का समर्थन किया था। ज्ञातव्य है कि इस सिद्धान्त के प्रतिपादन का श्रेय मुख्यत स्वीडन के अर्थशास्त्री गस्टव कैसल को दिया जाता है जिन्होने स्वर्ण मान के पतन के (प्रथम महायुद्ध काल) पश्चात् परिवर्तनशील पत्र मुद्रा मान वाले देशो के बीच विनिमय दर निर्धारण के लिए इस सिद्धान्त की विधिवत, वैज्ञानिक एव पूर्ण व्याख्या की।

(5) अन्य मौद्रिक विचार (Other monetary ideas) प्रो मार्शल के अन्य मौद्रिक विचारो मे निम्नाकित मुख्य है–

(i) प्रो मार्शल ने द्विधातुमान के स्थान पर मिश्रित धातुमान पर आधारित पत्र मुद्रा मान के प्रयोग का प्रस्ताव रखा।

(ii) मुद्रा की पूर्ति मे परिवर्तन से सामान्य कीमत स्तर मे होने वाले परिवर्तनो की प्रक्रिया का प्रो मार्शल ने भली भाति विवेचन किया।

(iii) उन्होने मुद्रा को एक धूरी माना जिसके चारो ओर आर्थिक विज्ञान चक्कर लगाता है।[28]

8 आर्थिक विकास का सिद्धान्त (Theory of Economic Development)- आर्थिक विकास के बारे मे प्रो मार्शल के विचारो मे निम्नाकित उल्लेखनीय हैं–

(1) आर्थिक विकास एक धीमी किंतु सतत प्रक्रिया है (Economic development is a gradual and continuous process)- प्रो मार्शल के आर्थिक चितन पर डार्विन के विकासवाद का गहरा प्रभाव पड़ा। फलत उनकी विचारधारा विकासवादी हो गयी। इसीलिए उन्होने आर्थिक समस्याओ के सामधान मे जैविक दृष्टिकोण अपनाया और आर्थिक विकास को एक धीमी एव सतत प्रक्रिया बताया। उनके मतानुसार अर्थशास्त्रियो के लिए शोध का क्षेत्र आर्थिक गतिकी (economic dynamics) नही बल्कि आर्थिक जैविकी (Economic biology) है। इसके स्पष्टीकरण के लिए उन्होने एक उद्योग के जीवन–इतिहास की तुलना जगल से की और कहा कि जिस प्रकार जंगल मे पुराने पेड़ नष्ट होते रहते है और नये पेड़ फलते–फूलते रहते है उसी प्रकार उद्योग मे फर्मे आती व जाती रहती है तथा जिस प्रकार धीरे–धीरे जगल घना होता जाता है उसी प्रकार एक उद्योग मे फर्मों की सख्या बढ़ती रहती है। जिस प्रकार जगल मे कुछ बहुत छोटे और कुछ बड़े पेड़ होते है उसी प्रकार *उद्योग मे कुछ बहुत छोटी और कुछ तुलनात्मक दृष्टि से बड़ी फर्मे होती है* तथा जिस प्रकार जगल मे अनेक तरह के पेड़ होते है उसी प्रकार किसी देश की औद्योगिक अर्थव्यवस्था मे भाति–भाति के उद्योग होते हैं। मार्शल ने अनुकूलतम सीमा से आगे ह्रासमान प्रतिफल की अवस्था मे गतिमान फर्मों की

28. "Money is the pivot around which economic science clusters" Marshall A.

तुलना बड़ी उम्र के पेड़ो से, अनुकूलतम आकार पर सचालित फर्मों की तुलना परिपक्व वृक्षो से और अनुकूलतम आकार से पहले अर्थात् क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि नियम के अधीन सचालित होने वाली फर्मों की तुलना नये पनपे पेड़ो से की। इसी आधार पर उन्होने कहा कि, ''यह कहावत कि प्रकृति इच्छानुसार छलाग नही भरती, मुख्यत आर्थिक विकास के सदर्भ मे लागू होती है।

(2) विकास एक समन्वित सचयी प्रक्रिया है (Development is a harmonious cumulative process)- प्रो मार्शल के मतानुसार आर्थिक विकास एक समन्वित एव सचयी प्रक्रिया है। इससे समाज के सभी वर्गों को लाभ होता है। यह अर्थव्यवस्था को पूर्ण रोजगार की स्थिति की ओर ले जाती है। इसके फलस्वरूप साधन स्वामियो के पुरस्कार बढ़ते है और देश के वैज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति के स्तर मे सुधार होता है। उन्होने बताया कि उत्पत्ति के विभिन्न साधनो के हितो मे इस आधार पर टकराव नही है कि मजदूरी मे वृद्धि से लाभ एव लगान घट जाते है। उनके मतानुसार क्योकि उत्पादन के समस्त साधन परस्पर एक दूसरे के पूरक है अत राष्ट्रीय आय इन सबके समन्वित प्रयास का फल होती है। उनके मतानुसार आर्थिक विकास की प्रक्रिया आरम्भ करने के लिए एक आधारभूत ढाँचे की आवश्यकता पड़ती है।

— **(3) बाह्य मितव्ययिताए आर्थिक विकास की मूल स्रोत हैं (External economies are the Origin of Economic Development)** ज्ञातव्य है कि मितव्ययिताओ के दो रूप– आतरिक एव बाह्य मितव्ययिताये है। आतरिक मितव्ययिताए वे मितव्ययिताए होती है जो किसी फर्म की चारदीवारी के भीतर सृजित होती हैं और मुख्यत श्रम–विभाजन एव विशिष्टीकरण का परिणाम होती है। इसके विपरीत बाह्य मितव्ययिताए उद्योग धन्धो के स्थानीयकरण के कारण सृजित होती है और ये ही आर्थिक विकास की मूल स्रोत होती है। उद्योग–धधो के स्थानीयकरण के मूल मे प्रादेशिक श्रम–विभाजन है, अत जिस प्रकार आतरिक मितव्ययिताए किसी फर्म विशेष का आतरिक ढाँचा सुधार कर उसका कायापलट कर देती है, उसी प्रकार बाह्य मितव्ययिताए सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का कायापलट कर सकती है। दूसरे शब्दो मे, बिना इनके आर्थिक विकास की गति तेज नही हो सकती। इनकी प्राप्ति के लिए उत्पत्ति का बड़ा पैमाना अपनाया जाता है जो, आर्थिक विकास के प्रारम्भिक चरण मे, बहुत सहायक होता है।

प्रो मार्शल ने बताया कि बाह्य मितव्ययिताए आर्थिक विकास की सभी सम्भावनाओ का प्रयोग सम्भव कर देती है। उन्होने, विशेष रूप से, इस सदर्भ मे अवशिष्ट पदार्थों के उपयोग का उदाहरण दिया जिनसे अनेक सहायक उद्योगो एव आर्थिक क्रियाओ के विकास का द्वार खुल जाता है। इससे फर्मों की आर्थिक क्षति बहतु कम हो जाती है। मार्शल के मतानुसार बाह्य

मितव्ययिताओ के कारण लागतो मे अनवरत ह्रास की प्रक्रिया आरम्भ होने से आर्थिक विस्तार का कार्य स्वत ही सुगम हो जाता है ।

बाह्य मितव्ययिताए इस आशय की सूचक है कि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र एव उद्योग एक दूसरे के पूरक एव सहयोगी है । अत जैसे ही अर्थव्यवस्था का एकक्षेत्र विकास पथ पर आगे बढ़ जाता है, दूसरे क्षेत्र के विकास की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है । सामाजिक पूँजी बढ़ाने मे बाह्य मितव्ययिताए अग्रणी भूमिका निभाती है । यह पूँजी ही किसी देश के आर्थिक विकस का आधारभूत ढाँचा तैयार करती है ।

ज्ञातव्य है कि, प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो का विकास के प्रति दृष्टिकोण निराशावादी था । यदि एक ओर वे जनसख्या वृद्धि के भूत के भय से ग्रसित थे तो दूसरी ओर क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की व्यापक क्रियाशीलता से आतकित थे । इनसे भिन्न मार्शल के विचार आशावादी थे । उनका अनवरत विकास की सम्भावनाओ मे विश्वास था । अत उन्होने जनसख्या सिद्धान्त एव क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम को आर्थिक विकास मे बाधक नही माना । किन्तु, इसका यह आशय नही है कि वे विकास की बाधाओ से अनभिज्ञ थे । उन्होने बार–बार अपना यह कथन दोहराया कि वैज्ञानिक एव तकनीकी प्रगति के स्तर मे सुधार से आर्थिक विकास की बाधाएँ दूर कर उसे गति देना सम्भव हो जाता है । इसीलिए उन्होने बताया कि "प्रकृति उत्पादन मे जो भूमिका निभाती है उससे उत्पत्ति ह्रास नियम और मनुष्य जो भूमिका निभाता है उससे क्रमागत उत्पत्ति वृद्धि नियम क्रियाशील होता है ।" अत उनका विश्वास था कि मनुष्य अपने प्रयासो से क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम की क्रियाशीलता स्थगित कर आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकता है ।

उन्होंने आर्थिक विकास के लिए पूँजी–सचय एव बचत को बहुत उपयोगी बताया । उन्ही के शब्दो मे "वर्तमान आय मे से बचत करने की इच्छा समाज के लिए वरदान है ।"

9. अन्य आर्थिक विचार (Other Economic Ideas)- मार्शल के अन्य आर्थिक विचारो मे निम्नांकित उल्लेखनीय है–

(1) पैमाने के प्रतिफल एवं मितव्ययिताएं (Returns to Scale and Economies of Scale)- प्रो मार्शल उत्पत्ति के बड़े पैमाने एव उसकी बचतो से भली भाति परिचित थे । उन्होने मुख्यत अल्पावधि विश्लेषण मे ही अपनी दिलचस्पी रखी तथापि यह स्पष्ट किया कि दीर्घावधि मे साधन–सयोग मे उत्पत्ति के सभी साधन परिवर्तनशील हो जाते है, अत. पैमाने के प्रतिफल क्रियाशील होते है । पैमाने के वर्द्धमान, समता एव ह्रासमान प्रतिफलो का विवेचन कर उन्होने स्पष्ट किया कि अन्तत पैमाने के ह्रासमान प्रतिफल ही क्रियाशील होते है, क्योंकि एक सीमा के पश्चात् उत्पत्ति के बड़े पैमाने की मितव्ययिताए

करवाना सम्भव हो सकेगा । इसके विपरीत मार्शल ने यह भी कहा कि जिन उद्योगो का सचालन क्रमागत उत्पत्ति ह्रास नियम के अन्तर्गत हो रहा है, उन पर करारोपण करना चाहिये । अपने इन्ही विचारो के सहारे उन्होने अपनी 'उपभोक्ता की बचत' एव 'उत्पादक की बचत' की अवधारणाओ की व्याख्या की और वह आधार तैयार कर दिया जिस पर पीगू एव उनके अनुयायियो ने कल्याणकारी अर्थशास्त्र का एक विशाल महल खड़ा कर दिया ।

प्रो. मार्शल का आलोचनात्मक मूल्याकन
(Critical Appraisal of Prof Marshall)

प्रो मार्शल एक युग प्रवर्तक (Pioneer of an era) अथवा एक युगान्तकारी (an epoch making) अथवा एक युगावतार (a man of the age) थे । ऐसे महान् व्यक्तित्व का मूल्याकन करना एक जटिल कार्य है । तथापि, आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनका स्थान निश्चित करने से पूर्व उनका आलोचनात्मक मूल्याकन नितान्त आवश्यक है । अब हम क्रमश उनके समर्थन एव आलोचना मे कही गयी बातो का उल्लेख करेगे—

1 **मार्शल के समर्थन में तर्क (Arguments in favour of Marshall)** प्रो मार्शल की महत्ता के बारे मे निम्नाकित बाते कही जा सकती है--

(1) एक महान व्यावहारिक विचारक, लेखक एव अर्थशास्त्री (A great practical thinker, writer and an Economist) मार्शल एक व्यावहारिक विचारक थे । गणित के प्रतिभावान छात्र होने के कारण वे आर्थिक विश्लेषण एव सिद्धान्त की सीमाओ से भली–भाति परिचित थे, फलत आर्थिक नियमो की सार्वभौमिकता के लिए उन्होने कोई अड़ियल रुख न अपनाकर व्यापक अवलोकन (mass observation) से व्युत्पन्न सामान्यीकरण स्वीकार कर लिये । वे एक उच्चकोटि के लेखक थे । उनकी रचना 'Principles of Economics' प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो की बदले हुए आर्थिक परिवेश मे उच्चस्तरीय रूपान्तरण की एक उत्कृष्ट व्याख्या है । प्रो फ्रैंक नेफ के अनुसार उनकी यह कृति उतनी ही प्रसिद्ध है जितना कोई गौरव ग्रथ[29] एक लेखक के रूप मे उन्होने अपनी कठिनाइयो को बड़ी चतुराई से छुपा लिया और नाजुक समस्याओ के हल पुस्तक के मूल पाठ मे न देकर पाद टिप्पणियो मे दे दिये । उनके लेखन की कला इतनी सुन्दर है कि विचारो के द्वन्द्व से, आसानी से, उसी प्रकार बच निकलते है जिस प्रकार बतख पानी मे आसानी से उपर–नीचे आती--जाती रहती है । एक अर्थशास्त्री के रूप मे, प्रो हैने ने उनकी गिनती उन महान अर्थशास्त्रियो मे की है, 'जिन्होने नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद की व्याख्या की, आर्थिक सिद्धान्तो मे परिवर्द्धन किया और आर्थिक शब्दावली एव

29 Principles enjoys a fame of a classic. Frank Neff

नियमो को समृद्ध बनाया।' डॉ न्यूमैन के मतानुसार, 'प्रो मार्शल वास्तव मे प्रथम विशुद्ध एव महान अर्थशास्त्री थे। प्रो स्कॉट के अनुसार उनकी व्याख्या अधिकृत एव सुस्पष्ट है और उनकी आर्थिक शक्तियो की अन्तर्सम्बन्धो एव अर्न्तक्रियाओ की विवेचना प्रभावशाली एव अकाट्य है। प्रो पीगू ने भी उन्हे महान बताया और कहा कि उनकी तुलना एडम स्मिथ एव रिकर्डो से की जा सकती है।

(2) एक युगान्तरकारी विचारक (An Epoch- making thinker)- ज्ञातव्य है कि आधुनिक अर्थशास्त्र का जन्म सन् 1776 मे हुआ। तब से लेकर सन् 1890 (Principles of Economics के प्रकाशन का वर्ष) तक न केवल अर्थशास्त्र के विकास की गति बहुत धीमी रही अपितु वह आलोचनाओ के घेरे मे आ गया। इससे अर्थशास्त्र नीरस एव महत्त्वहीन बन गया। प्रो मार्शल ने जब अर्थशास्त्र की कल्याण प्रधान परिभाषा दी तो इसके विकास के इतिहास मे एक नये युग का सूत्रपात हुआ। अत उन्हे एक युगान्तरकारी विचारक कहा जाता है।

(3) एक महान सश्लेषणकर्त्ता (A great Synthesist) प्रो मार्शल एक महान् सश्लेषणकर्त्ता थे। उन्होने अर्थशास्त्र की विषय–सामग्री, अध्ययन प्रणालियो, आर्थिक नियमो एव नैतिक अवधारणाओ का सश्लेषण एव समन्वय किया।[30]इस कार्य मे वे किन्ही पूर्वाग्रहो से ग्रसित नही रहे। वे सत्य की खोज मे थे और उन्हे प्रतिष्ठित आर्थिक सिद्धान्तो एव उनकी आलोचनाओ मे जहा कही सत्य नजर आया, उन्होने उसे स्वीकार कर लिया। वस्तुत मार्शल का नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद एक सश्लेषण ही है। उन्होने आस्ट्रियन सम्प्रदायवाद से उपयोगिता, जर्मन ऐतिहासिक सम्प्रदायवाद से आगमन और दार्शनिक आलोचको से मानवतावाद लेकर इन तीनो का प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद के साथ सश्लेषण, कर दिया जिसे नव–प्रतिष्ठितवाद के नाम से जाना जाता है।

प्रो मार्शल ने माँग और पूर्ति की शक्तियो के समन्वय की व्याख्या कर कीमत–निर्धारण के सदर्भ मे वह वाद–विवाद समाप्त कर दिया जो रिकार्डो के समय से चला आ रहा था। इतना ही नही, उन्होने मूल्य सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य मे कीमत सिद्धान्त का विवेचन कर एक सराहनीय कार्य किया।

इस सदर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि प्रो मार्शल की व्याख्या कोई यात्रिक सश्लेषण नही है। वस्तुत उनके सिद्धान्त कलमी (Grafted) नही है। निगमन प्रणाली के समर्थक होने के बावजूद उन्हे आगमन प्रणाली से परहेज

30. "His "greatest contribution was the rehabilitation of economic theory in the public mind especially as he attempted to synthesize economic laws and ethical concepts"
Newman P C

नही था । तथ्यो के सग्रहण मे उनकी गहन रुचि थी और वे उन्हे ज्ञान रूपी महल के निर्माण मे ईंटो की सज्ञा देते थे । वस्तुत उन्होने न तो विशुद्ध रूप से निगमन प्रणाली का प्रयोग किया और न ऐतिहासिक आगमन प्रणाली का बल्कि, एक ऐसी समन्वित पद्धति का प्रयोग किया जिसमे निष्कर्षो की तथ्यो द्वारा पुष्टि की गयी । उन्होने स्वीकार किया कि गणित का प्रयोग सहायक सिद्ध हो सकता है, किन्तु, यह तकनीकी विशिष्टता (technical excellence) का स्थानापन्न नही है । अत निगमन प्रणाली उपयोगी है और वास्तविकता यह है कि चाहे कोई भी प्रणाली अपनायी जाये, निष्कर्ष वास्तविक होने चाहिये ।

एक सश्लेषक के रूप मे मार्शल की भूमिका की सभी ने प्रशसा की है । प्रो हैने के शब्दो, ''हम कह सकते है कि मार्शल का सश्लेषण पूर्ण नही है, किन्तु, फिर भी, यह उत्कृष्ट है और समग्र रूप मे आर्थिक जीवन की व्याख्या मे कोई इससे आगे नही निकल पाया है ।''[31] प्रो कीन्स ने उनके माँग और पूर्ति के सश्लेषण की प्रशसा मे कहा कि, 'उनका यह निष्कर्ष की कीमत माँग और पूर्ति के साम्य द्वारा निर्धारित होती है, ठीक वैसा ही है जैसा कापरनिकस का यह निष्कर्ष कि पृथ्वी सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाती है ।'

(4) एक व्यापक प्रणाली के अग्रगामी (Pioneer of a comprehensive system)- प्रो मार्शल के पूर्ववर्ती विचारक जहा प्रतिष्ठित आर्थिक विचारो मे आशिक सुधार एव प्रतिस्थापना मे लगे रहे वहा मार्शल ने एक व्यापक आर्थिक प्रणाली विकसित की । उन्होने अन्तिम रूप से जो प्रणाली विकसित की, वह उनकी अपनी एव मौलिक थी क्योकि, उन्होने कही पर भी प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो का अन्धानुकरण नही किया । उन्होने वे सब गलतिया नही की जो उनके पूर्ववर्ती विचारक करते आ रहे थे । उनकी व्याख्या मे प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियो के अलावा शेष सभी विचारको एव सम्प्रदायो को भी समुचित महत्ता दी गयी है, किन्तु, एक पूर्ण प्रणाली के विकास मे उन्होने कही पर भी एक समझौतावादी अथवा मात्र सश्लेषण की भूमिका नही निभायी । उनसे पहले तक 'उपभोग' उपेक्षित था । किन्तु, मार्शल ने विस्तृत व्याख्या कर इसका स्थान सुरक्षित कर दिया । प्रो एरिक रोल के मतानुसार मार्शल के वितरण एव मूल्य सिद्धान्तो के गहन अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होने इनके प्रतिपादन मे एक ऐसी प्रणाली अपनायी जो तीन परस्पर सम्बद्ध उद्देश्यो से निकाली गयी– व्यापकता, वास्तविकता और आर्थिक नीतियो के लिए महत्त्व ।

(5) एक पूर्णतावादी (A Perfectionist)- प्रो मार्शल ने अर्थशास्त्र को

31 "Marshall's synthesis, as we may call it, is not perfect, but it is a masterpiece, and as a whole has probably never been surpassed as an explanation of economic life."

Haney L.H

पूर्णता प्रदान की। जे. एस मिल की भाति उन्होने भी प्रतिष्ठित आधार पर अर्थशास्त्र को पूर्ण करने का प्रयास किया जिसकी बहुत बदनामी हो चुकी थी और जो एक कुशल शिल्पी के हाथो पुनर्निर्माण की भारी आवश्यकता अनुभव कर रहा था। 'Principles of Economics' के प्रकाशन के साथ ही उनके ये प्रयास फलीभूत हो गये। उनकी यह रचना अर्थशास्त्र की पहली पूर्ण कृति है क्योकि इसमे उन्होने न केवल उपभोग को आर्थिक क्रियाओ का आदि एव अत बताकर, समस्त आर्थिक क्रियाओ को एक जालसूत्र मे बाध दिया अपितु इस विषय के वैज्ञानिक प्रस्तुतीकरण का एक ऐसा सगठनात्मक ढाँचा तैयार कर दिया जिसको बाद के सभी अर्थशास्त्रियो का भरपूर समर्थन मिला।

'Principles of Economics' मे अध्ययन-अध्यापन के लिए भरपूर सामग्री है। इसीलिए इसे भी आज अनेक विश्वविद्यालयो मे अर्थशास्त्र की एक पाठ्य पुस्तक के रूप मे मान्यता प्राप्त है। इस रचना के जरिये मार्शल ने न केवल अर्थशास्त्र का नामकरण सस्करण पूर्ण किया अपितु उसे राजनीतिशास्त्र से अलग कर ज्ञान की एक स्वतत्र शाखा के रूप मे विकसित होने मे सक्षम बनाया। यही नही जनता के मस्तिष्क मे अर्थशास्त्र की पुनर्स्थापना उनकी सबसे बड़ी देन रही। उन्होने अर्थशास्त्र एव अर्थशास्त्रियो को अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठि वापस दिलवायी। उन्होने जो कुछ लिखा वह आधुनिक अर्थशास्त्र का एक स्थायी अग है। उनके अनुसार अर्थशास्त्र का उद्देश्य सामाजिक समस्याओ के समाधान के उपायो का सुझाव देना था और उन्हे इसमे सफलता मिली। उन्होने अर्थशास्त्र को एक सम्पूर्ण विज्ञान बना दिया और उसकी लोकप्रियता मे आशातीत वृद्धि कर दी। उनकी रचना ने कई पीढ़ियो के आर्थिक चितन एव साहित्य का मार्गदर्शन किया है और इस दृष्टि से आधुनिक अर्थशास्त्र के विकास मे उनका योगदान बहुत ज्यादा है। उन्होने इसे आर्थिक अनुसधान की एक ऐसी मशीन बना दिया जिसका ढाँचा अतिविशाल एव विभिन्न अग गतिशील तथा परस्पर सम्बद्ध एव पूर्ण है।

(6) सूक्ष्म आर्थिक विश्लेषण के प्रणेता (An advocate of Micro Economic Analysis)- प्रो मार्शल ने मुख्यत वैयक्तिक आर्थिक इकाइयो अथवा सूक्ष्म आर्थिक चरो, यथा- व्यक्तियो, उपभोक्ताओ, परिवारो, फर्मों, उत्पत्ति के साधनो एव उनके पुरस्कारो के व्यवहार एव कार्य-सचालन का वैयक्तिक आधार पर विवेचन किया। अत उन्हे सूक्ष्म आर्थिक विश्लेषण का एक प्रमुख प्रणेता माना जाता है। किन्तु, इसका यह आशय नही है कि वे समष्टि चरो से अनिभिज्ञ थे। वस्तुत. उन्होने इस बात की खोज पर बल दिया कि समग्र के विभिन्न अग किस प्रकार कार्य करते है ? इस प्रकार प्रो. मार्शल ने आर्थिक प्रणाली के सामान्य साम्य की अपेक्षा उसके विभिन्न अगो के आशिक साम्य का विवेचन किया।

(7) एक रीतिकार (A Methodologist)- प्रो मार्शल एक रीतिकार थे। उनके रीतिविधान मे सीमात का उपकरण, आशिक साम्य, समय की भूमिका, पूर्ण–प्रतिस्पर्धा, निगमन एव गणित का प्रयोग आदि मुख्य है। अर्थात् इनकी सहायता से उन्होने अपने निष्कर्षों का प्रतिपादन किया। इनके अलावा उन्होने अपनी व्याख्या मे अर्थशास्त्र के सुनहरी नियम (golden rule) 'अन्य बाते समान रहने पर' का ही भरपूर लाभ लिया। इसकी सहायता से उन्होने अपने समय एव शक्ति की काफी बर्बादी बचाली और उनके निष्कर्ष प्रतिनिधि निष्कर्ष बन गये। इससे उनकी ख्याति मे काफी वृद्धि हुयी और वे जन–मानस को भा गये।

(8) विकास की प्रक्रिया के समर्थक (An Advocate to Evolutionary Process)- अन्य सभी सम्प्रदायवादियो ने जहा बौद्धिक क्राति (intellectual revolution) के जरिये आमूलचूल परिवर्तन के सपने देखे वहा मार्शल ने विकास की प्रक्रिया की महत्ता स्वीकार की और कहा कि जो है उसे समाप्त करने की जरूरत नही बल्कि उसका नवीनीकरण ही हमारे उद्देश्य पूरे कर सकता है। उन्होने स्पष्ट शब्दो मे स्वीकार किया कि आगे आने वाले वर्षों मे उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो मे भी परिवर्द्धन एव सशोधन होंगे। उनका इस लैटिन कहावत मे पूर्ण विश्वास था कि 'प्रकृति छलाग नही लगाती' (Nature non facit saltum)

अपनी उपर्युक्त विशिष्टताओ के अलावा मार्शल **आर्थिक प्रणाली की एकता के पक्षधर थे**। जैसा कि **चैपमैन** ने लिखा है, ''सर्वप्रथम मार्शल ने आर्थिक प्रणाली की एकता उद्घाटित की और इसे परस्पर निर्भर अगो की पारस्परिक निर्भरता के साथ कार्यकरण के एक अनुरूप समग्र के रूप मे प्रस्तुत किया।''[32] वे अर्थशास्त्र को वास्तविक जीवन की परिस्थितियो के अनुकूल बनाना चाहते थे, अत ऐसा करना आवश्यक था। वे **श्रम–हितों के भी प्रबल समर्थक** थे। इसीलिए उन्होने मजदूरी–दरो मे वृद्धि एवं श्रम की कार्यदक्षता मे धनात्मक सम्बन्ध बताया। अन्त मे, प्रो मार्शल एक **सम्पन्न विरासत के धनी** रहे। योरोपीय महाद्वीप एव आँग्ल भाषा–भाषी देशो मे उनका व्यापक प्रभाव रहा और वे वहाँ के अर्थशास्त्रियो के प्रेरणा–स्रोत बने रहे। पीगू, एल्सवर्थ, रोबर्टसन, हैरोड, श्रीमती जॉन रॉबिन्सन, कीन्स, मॉरिस डॉब एव टॉजिग के विचारो पर उनका गहरा प्रभाव पड़ा। अर्थशास्त्र की कल्याण प्रधान परिभाषा देकर उन्होने **कल्याणकारी अर्थशास्त्र** की नीव डाली। व्यावहारिक दृष्टि से, उनकी यह परिभाषा आज भी श्रेष्ठ है।

---

32. "Marshall for the first time revealed the unity of the economic system, and presented it as a coherent whole of inter-related parts, functioning in mutual dependence upon one another." Chapman S.J

2. मार्शल के विपक्ष में तर्क (Arguments Against Prof Marshall)- प्रो रोबिन्स एवं उनके समर्थको ने प्रो मार्शल के आर्थिक विचारो मे अनके त्रूटिया खोज निकाली है । सक्षेप मे उनके विपक्ष मे निम्नाकित तर्क दिये गये है–

(1) प्रो मार्शल ने **समष्टि आर्थिक विश्लेषण की अनदेखी** कर दी । उनकी सम्पूर्ण व्याख्या व्यष्टि अर्थशास्त्र एव आशिक सतुलन से सम्बद्ध है । प्रो कीन्स उनकी इस बात से सहमत नही हुए अत उनके शिष्य होने के बावजूद उन्होने उनकी परम्परा से नाता तोड़ लिया और समष्टि आर्थिक विश्लेषण की ओर मुड़ गये ।

(2) प्रो मार्शल ने **अवास्तविक मान्यताओं पर अवास्तविक सिद्धान्तों का प्रतिपादन** किया । उनके सभी सिद्धान्त 'अन्य बाते समान रहने पर' की शर्त पर लागू होते है । आलोचको के अनुसार वास्तविक जगत परिवर्तनशील है । अत ये मान्यताए निराधार हो जाती है । मार्शल ने मानवीय आर्थिक व्यवहार एव उद्देश्यो की शक्ति का माप मौद्रिक मापदण्ड से और इस मान्यता के साथ किया कि 'मुद्रा की सीमात उपयोगिता स्थिर रहती है' । आलोचको के अनुसार एक तो यह मापदण्ड स्वय दोषपूर्ण है और दूसरे, मुद्रा स्वय उपयोगी है, अत इसे खर्च करना अथवा न करना भी वस्तुओ के चयन की भाति एक महत्त्वपूर्ण आथिक चुनाव है । अत मार्शल के तर्कों मे सुनिश्चितता का अभाव है ।

(3) प्रो मार्शल की व्याख्या **वास्तविकताओं का प्रथम अनुमान** मात्र है । वे स्वयं जानते थे कि जो कुछ वे लिख रहे है, वास्तविकता उससे भिन्न है । उन्होने आशिक साम्य की चर्चा की जबकि व्यावहारिक दृष्टि से, सामान्य साम्य अधिक उपयोगी है । उन्होने सूक्ष्म अर्थशास्त्र की व्याख्या की जबकि वास्तव मे मनुष्य के आर्थिक व्यवहार का सामाजिक अथवा राष्ट्रीय पक्ष अधिक महत्त्वपूर्ण है । उन्होने प्रतिस्पर्धी बाजार दशाओ एवं शुद्ध एकाधिकारी स्थिति की चर्चा की जबकि वास्तविक जगत मे मध्यवर्ती बाजार दशाएं प्रचलित है । इसी प्रकार उन्होने वैयक्तिक हानि–लाभ की तो चर्चा की किन्तु, आर्थिक प्रणाली के चक्रीय उच्चावनो को एकदम भुला दिया ।

(4) आलोचको के अनुसार **अर्थशास्त्र केवल मूल्य सिद्धान्त ही नहीं है** जबकि प्रो मार्शल ने सारे अर्थशास्त्र को माँग और पूर्ति के पारस्परिक सम्बन्ध के आधार पर मूल्य सिद्धान्त मे बदल दिया । कुछ आलोचको की शका है कि सम्भवत सम्पूर्ण आर्थिक परिदृश्य को दर्शाने के लिए वे कुछ और लिखना चाहते थे किन्तु, वास्तव मे ऐसा कुछ नही कर पाये ।

(5) प्रो मार्शल का **वितरण सिद्धान्त दोषपूर्ण** है । वे जानते थे कि वितरण की सम्पूर्ण व्यवस्था मे न्याय का अभाव रहता है तथापि वे या तो किन्ही उपायो का सुझाव नहीं दे पाये और यदि दे पाये तो प्रतिस्पर्धी आर्थिक

प्रणाली के सदर्भ मे वे कमजोर एव अस्पष्ट थे । इसीलिए वितरण सिद्धान्त को उनके चितन का सबसे कमजोर पक्ष माना जाता है । उनका सीमात उत्पादकता सिद्धान्त दोषपूर्ण है । वे वितरण का ऐसा सामान्य सिद्धान्त विकसित करने मे विफल रहे जो उत्पत्ति के सभी साधनो के पारिश्रमिक–निर्धारण मे सक्षम हो । वे वितरण सिद्धान्त की मात्रा रूपरेखा ही प्रस्तुत कर पाये । यही नही उन्होने श्रम एव सयत्र के जीवन–निर्वाह के लिए कुछ न्यूनतम आदर्श मान लिये जिन्होने वितरण एव मूल्य सिद्धान्तो की व्याख्या मे अनेक बाधाए उत्पन्न कर दी ।

(6) **प्रो. मार्शल** आर्थिक विश्लेषण के अध्ययन की वैकल्पिक पद्धतियो के प्रयोग मे विफल रहे, अत वे 'कारण' एव 'परिणाम' के बीच सम्बन्ध की समुचित व्याख्या नही कर पाये । उन्होने बजाय वैकल्पिक तकनीको के प्रयोग के, अवास्तविक मान्यताओ का सहारा लेकर वास्तविकताओ से मुह मोड़ लिया । उदाहरणार्थ, एक गणितज्ञ होने के बावजूद उन्होने उपभोक्ता के आर्थिक व्यवहार की व्याख्या मे उदासीनता वक्रो का प्रयोग नही किया और अवास्तविक मान्यताओ पर आधारित परम्परागत सीमातवादी विश्लेषण से चिपके रहे ।

(7) आलोचको के अनुसार नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद मे **मौलिकता का अभाव है।** उनके विचार मे यह केवल आष्ट्रियन सम्प्रदायवाद के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया थी और प्रो मार्शल ने केवल नयी बोतलो मे प्रतिष्ठित सम्प्रदायवादियो के विचारो की शराब भर दी । कुछ आलोचको के मतानुसार उनकी प्रणाली इतनी व्यापक थी कि उसे देखने मात्र से ही ऐसा आभास होता है कि मानो वह उनके पूर्वजो की रचनाओ से प्राप्त टुकड़ो का एक क्रमहीन सकलन मात्र हो ।

(8) कुछ आलोचको के अनुसार प्रो मार्शल के विचारो का प्रभाव केवल इगलैण्ड या उसके उपनिवेशो के अर्थशास्त्रियो पर ही रहा ।

(9) आलोचको के अनुसार मार्शल साहसी की भूमिका एव उसके कार्यों का ठीक–ठीक अनुमान नही लगा पाये । उन्होने एक तो साहस को सगठन का एक भाग मान लिया और दूसरे, उसके कार्यों को अनेक भागो मे बाट दिया । ऐसा करके उन्होने प्रारम्भिक रूपरेखा तो प्रस्तुत कर दी । किन्तु उसकी गहराई मे नही जा सके ।

(10) प्रो. मार्शल पर एक आक्षेप यह भी लगाया जाता है कि उनकी अभिव्यक्ति कमजोर थी । वे ठोस कथनो से बचते थे । इसके लिए उनकी आलोचना मे राबिन्स एव उनके समर्थको ने खूब आवाज उठायी ।

(11) आलोचको के मतानुसार प्रो. मार्शल के विचारो मे विरोधाभास, एव अपूर्णताए हैं और वे कठोर है । उनका सीमात लागत एव सीमात उपयोगिता सिद्धान्त का विश्लेषण अपूर्ण एव दोषपूर्ण है क्योकि अल्पकालीन

साम्य मे सीमात उपयोगिता की महत्ता स्वीकार करने के पश्चात् दीर्घकालीन साम्य की व्याख्या मे उन्हे आवश्यक रूप से सीमात लागत की अवधारणा का सहारा लेना पडता है। आलोचको के मतानुसार उनकी उपयोगिता विषयक व्याख्या एव विचार दोषपूर्ण है क्योकि कही उन्होने उपयोगिता की तुलना इच्छा से तो कही सतुष्टि से कर दी। इसी प्रकार वे अनुपयोगिता के बारे मे भ्रमित रहे। उनकी वास्तविक लागत की अवधारणा भी दोषपूर्ण है और इसी प्रकार उनका समय का विभाजन आलोचना का पात्र बना है। प्रो रोबिन्स ने उनकी कल्याण प्रधान परिभाषा की कटु आलोचना की।

उपर्युक्त आलोचनाओ एव आक्षेपो के बावजूद प्रो मार्शल का आकार छोटा नही हुआ। आलोचक यह भूल जाते है कि उनके पश्चात् आर्थिक सिद्धान्तो मे जो परिवर्तन हुए है उन सबको आधार मार्शल से ही मिला। प्रो हैने के मतानुसार, 'मार्शल आर्थिक विचारो के इतिहास मे अडिग रहेगे। वे एक ऐसे व्यक्ति के रूप मे जाने जाते रहेगे जिन्होने मूल्य एव वितरण के एकीकृत एव सुसगत सिद्धान्त के प्रतिपादन मे अपने किसी भी पूर्ववर्ती लेखक से अधिक अच्छी भूमिका निभायी।'

आर्थिक विचारों के इतिहास में प्रो. मार्शल का स्थान

(Place of Prof Marshall in the History of Economic Thought)

आर्थिक विचारो के इतिहास मे प्रो मार्शल की गणना अग्रणी विचारको, लेखको एव अर्थशास्त्रियो मे की जाती है अत उनका स्थान अग्रिम पक्ति मे एव एडम स्मिथ, कार्ल मार्क्स, शुम्पीटर और प्रो जे एम कीन्स के समकक्ष है। वे एक मौलिक विचारक, उच्च कोटि के लेखक एव व्यावहारिक अर्थ शास्त्री थे और इसीलिए उनकी गणना सर्वाधिक ख्याति प्राप्त अर्थशास्त्रियो मे की जाती है। सन् 1890 से पहले एव बाद के आर्थिक चितन को जोड़ने मे वे एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है।

प्रो मार्शल ने आर्थिक विश्लेषण को अनेक मौलिक सिद्धान्त एव विश्लेषणात्मक उपकरण दिये। इन सिद्धान्तो मे उपभोक्ता की बचत, माँग की लोच, प्रतिनिधि फर्म, आभास लगान, मुद्रा मूल्य का सिद्धान्त (कैम्ब्रिज का नकद शेष समीकरण), क्रय–शक्ति समता सिद्धान्त, वास्तविक लागत, एव ब्याज की वास्तविक दर एव मौद्रिक दर आदि उल्लेखनीय है।

प्रो मार्शल ने अर्थशास्त्री की उपकरण–मजूषा को सीमात उपयोगिता, सीमात लागत, सम–विच्छेद बिन्दु, स्थिर अवस्था, समय तत्त्व, सीमात उत्पादकता आदि उपकरण प्रदान किये जिनके लिए वे सदा याद किये जाते रहेगे।

आर्थिक विचारो के इतिहास मे वे अर्थशास्त्र की परिभाषा, आर्थिक

नियमो की प्रकृति एव अध्ययन पद्धतियो की व्याख्या के लिए भी सदा अमर रहेगे । उन्होने अर्थशास्त्र की कल्याण प्रधान परिभाषा देकर उसे सामाजिक भलाई का एक विज्ञान बना दिया । तकनीकी दृष्टि से भलेही इस परिभाषा मे कुछ त्रुटिया हो किन्तु, व्यावहारिक दृष्टि से यह आज भी सम्मान पाने योग्य है ।

कीमत सिद्धान्त की व्याख्या मे समय तत्त्व एव पूर्ति पर उसके प्रभावो की व्याख्या ने मार्शल को अमर बना दिया क्योकि, यह वास्तव मे ही उनकी एक उल्लेखनीय उपलब्धि थी । उन्होने अर्थशास्त्रियो की कई पीढ़ीयो को प्रभावित किया है । पारसन्स एव मूरे आदि अग्रणी अर्थमितिविदो पर उनके प्रभाव की स्पष्ट झलक दिखायी पड़ती है ।

कैम्ब्रिज स्कूल ऑफ इकॉनामिक्स की स्थापना के लिए भी प्रो मार्शल आर्थिक विचारो के इतिहास मे सुविख्यात रहेगे । सन 1903 से पहले तक अर्थशास्त्र, इतिहास एव आचारशास्त्र के साथ मिला हुआ था । अर्थात् ये तीनो एक ही विभाग मे आते थे । प्रो मार्शल ने अर्थशास्त्र मे कैम्ब्रिज की सर्वोच्च उपाधि शुरू करवायी । वे Economic Journal' के लिए भी जाने जाते रहेगे । Royal Economic Society' की स्थापना के लिए भी उनकी सेवाए याद की जाती रहेगी । प्रो शुम्पीटर ने उन्हे अपूर्ण प्रतिस्पर्धा के सिद्धान्त का जनक बताया । कीन्स ने उन्हे आधुनिक रेखाचित्रो पर आधारित (diagrammatic) अर्थशास्त्र का प्रवर्त्तक बताया । अन्त मे प्रो हैने का यह कथन समीचीन है कि, "हम दृढ़ता के साथ कह सकते है कि उनका प्रभाव कभी समाप्त नहीं होगा । अर्थशास्त्र मे उन्होने जो नये विचार जोड़े वे आज उसके स्थायी अंग बन चुके है । उन्होने इसकी शब्दावली, अध्ययन विधियो एवं नियमो को समृद्ध किया है ।" वास्तव मे प्रो मार्शल के बिना न केवल आर्थिक विचारो का इतिहास अपितु स्वय अर्थशास्त्र अधूरा है ।

प्रश्न

1. **प्रो. मार्शल के आर्थिक विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये ।**
   संकेत : सक्षेप मे मार्शल का परिचय देकर उनके मुख्य–मुख्य सिद्धान्तो का विवेचन कर दे ।
2. **नव-प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद से आप क्या समझते हैं ? इसका विकास क्यों हुआ और इसकी प्रमुख विशेषताएं कौन–कौन सी हैं ?**
   संकेत · इस प्रश्न के तीन भाग है, प्रथम भाग मे नव–प्रतिष्ठित सम्प्रदायवाद का अर्थ समझाये । द्वितीय भाग मे प्रो मार्शल को प्रभावित करने वाले घटको का उल्लेख कर अन्त मे, उनके प्रमुख सिद्धान्तो का संक्षेप मे विवेचन कर दे ।

3. **प्रो. मार्शल के सिद्धान्तों की मौलिकता का परीक्षण कीजिये।**
   संकेत : प्रो. मार्शल के सिद्धान्तो के आधार को समझाते हुए बताये कि उनके सिद्धान्त मौलिक है।

4. **"मूल्य एवं वितरण के सिद्धान्त प्रो. मार्शल की व्याख्या के केन्द्र बिन्दु हैं" समझाइये।**
   संकेत : प्रो. मार्शल के विनिमय एव वितरण के सिद्धान्तो की सविस्तार व्याख्या करे।

5. **प्रो. मार्शल का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर आर्थिक विचारों के इतिहास में उनका स्थान निश्चित कीजिये।**
   संकेत : मार्शल के विभिन्न सिद्धान्तो एव विचारो का आलोचनात्मक विवेचन कर अन्त मे, आर्थिक विचारो के इतिहास मे उनकी भूमिका सुनिश्चित करे।